UNIVERSAL
LIBRARY
OU_176256
UNIVERSAL
LIBRARY

शेठ हरिवल्लभदास बाळगोविंददास ग्रंथावली नं. ५२

# ॥ अपभ्रंशपाठावली ॥

मूलपाठनी संस्कृतछाया,
अपभ्रंशव्याकरण, संस्कृतनिवेदन, गूजराती उपोद्घात,
टिप्पणी, शब्दकोश सहित.

सामान्य तंत्री,
दी. बा. केशवलाल हर्षदराय ध्रुव, बी. ए.

. संपादक,
मधुसूदन चिमनलाल मोदी. एम. ए.; एलएल. बी.

छपावी प्रसिद्ध करनार,
गुजरात वर्नाक्युलर सोसायटी तरफथी
हीरालाल त्रिभुवनदास पारेख, बी. ए.
आसि. सेक्रेटरी, अमदावाद.

किम्मत अण रुपिया.

मुद्रक : मगनलाल बकोरभाई पटेल, धी सूर्यप्रकाश प्रिन्टिंग प्रेस
पानकोरनाका : अमदावाद.

# निवेदन

गुजराती भाषानो पद्धतिसर अभ्यास करवा सारु अपभ्रंश साहित्यनुं ज्ञान परम उपकारक छे, एवुं सूचन घणां वर्षोथी दी. बा. केशवलाल हर्षदराय ध्रुव करता आव्या छे; पण ते साहित्य घणुंखरुं भंडारोनी हाथप्रतोमां केटलीक वार अज्ञात अने अप्रसिद्ध पडेलुं होवाथी बहु ज थोडा अभ्यासीओ तेनो लाभ लई शकेछे.

सोसाइटीना प्रमुख तरीके दी. बा. केशवलालभाइ छेल्लां पंदर वर्षथी प्रतिवर्ष निमाय छे; अने तेमनी प्रेरणाथी सोसाइटीए जे अनेक प्रवृत्तिओ नवी ऊपाडेली छे, तेमां प्राचीन काव्यसाहित्यनुं प्रकाशन मुख्य छे.

मुंबाइ युनिवर्सिटी तरफथी वसनजी माधवजी व्याख्यानो, छंदो विषे तैओ तैयार करता हता, ते अरसामां श्रीयुत मधुसूदन चिमनलाल मोदीनो तेमनो प्रो. बळवन्तराय ठाकोरद्वारा परिचय थयो. श्रीयुत मधुसूदनभाइ, एम. ए. एलएल. बी थयेला छे; एटलुज नहि पण संस्कृत पाली, प्राकृत तथा अपभ्रंश साहित्यना सारा ज्ञाता छे; अने अपभ्रंश तथा प्राकृतनां केटलांक पुस्तको तेमणे संपादित पण करेलां छे.

दी. बा. केशवलालभाइ लांबा समयथी अपभ्रंशपाठावली तैयार करावववानो अभिलाष सेवता हता, अने श्रीयुत मोदी साथेनो परिचय वधतां, एमना हाथे ते पुस्तक तैयार करावववानो निर्णय तेमणे कर्यो.

सोसाइटीनी कमिटी समक्ष ते विचार रजु करतां, सौए ते योजना पसंद करी हती; अने दी. बा. केशवलालभाइनी सलाह, सूचना अने देखरेख नीचे श्रीयुत मोदीने अपभ्रंशपाठावलीनुं संपादनकार्य सोंपवानो ठराव करवामां आव्यो.

श्रीयुत मोदीए ए कार्यमां पोतानो घणो किंमती समय व्यतीत करेलो छे.

खुशी थवा जेवुं ए छे के ए पुस्तक प्रसिद्ध थवा पामे ते आगमचं ज अर्धमागधीमां बी. ए. ना वर्ग माटे ते एक पाठ्यपुस्तक तरीके मंजुर थयुं छे.

आम सोसाइटीनो आशय अनायासे फळीभूत थई जाय छे.

ते बदल खरे श्रीयुत मधुसूदन मोदीने धन्यवाद घटे छे.

गु. व. सोसाइटी,
अमदावाद,
ता. २५—१२—१९३५

हीरालाल त्रि. पारेख
मानि. सेक्रेटरी.

## शेठ हरिवल्लभदास बाळगोविंददास ग्रंथमाळानो

# उपोद्घात

सुरतना वतनी अने धंधार्थे मुंबाई निवासी स्वर्गवासी शेठ हरिवल्लभदास बाळगोविंददासे ता, १६ मी सप्टेम्बर सने १८७७ ने रोज वील कर्युं छे. ते अन्वये प्रथम सन १८८० मां रु. २०००)–सोसाइटीने मळ्या, एवी शरतथी के तेना व्याजमांथी सामाजिक सुधारो थाय एवां पुस्तको तैयार करी छपाववां.

सदरहु वीलथी शेठ हरिवल्लभदासे अमुक प्रसंग बन्या पछी बाकी रहेली पोतानी तमाम मिल्कत, पुस्तकप्रचारने माटे सोसाइटीने अर्पण करेली छे. ते अन्वये १८९४ मां रु. १८०००) नी सरकारी नोटो सोसाइटीने मळी छे. आ रीते कुल रु. २००००) नी नोटो पुस्तक तैयार करावबा माटे सदरहु विद्याबिलासी अने परोपकारी उदार गृहस्थ तरफथी मळी छे. सदरहु वीलनी रइए एमनी मिल्कतनी छेवटनी रकम रु. ५०००) सरकारी लोनो सन १९३३ मां सोसाइटीने वधु मळी छे. एटले ए फंड वधीने रु २५०००)नुं थयुं छे. आजपर्यंत नीचेनां पुस्तको 'शेठ हरिवल्लभदास बाळगोविंददास ग्रंथथाळा' तरीके प्रसिद्ध थयां छे.

| नं. | नाम | किंमत |
|---|---|---|
| (१) | कयी कयी नातो कन्यानी अछतथी नानी थती जाय छे, तेनां कारणो तथा सुधारो करवाना उपाय विषे निबंध | ०—७—० |
| (२) | माने शिखामण | ०—६—० |
| (३) | नीतिमंदिर | ०—१२—० |
| (४) | बाळलग्नथी थती हानि | ०—६—० |
| (५) | पुर्नविवाहपक्षनी पूरेपूरी सोळेसोळ आना फजेती | ०—५—८ |
| (६) | भोजन व्यवहार त्यां कन्या व्यवहार | ०—४—० |
| (७) | धार्मिक पुरुषो | ०—४—० |
| (८) | उद्योगी पुरुषो | ०—४—० |
| (९) | बेन्जामीन फ्रेन्कलिन | २—०—० |
| (१०) | बोधक चरित्र | ०—४—० |

(११) सद्वर्तन २—•—०
(१२) रघुवंश काव्य १—०—•
(१३) जादवजी दादाजी चोधरीनुं जीवनचरित्र ०—२—०
(१४) गुजरातनो प्राचीन इतिहास भा. १ १—०—०
(१५) गुजरातनो अर्वाचीन इतिहास भा. २ १—८—०
(१६) नीतिसिद्धांत १—०—•
(१७) फ्रान्सिस बेकननुं जीवनचरित्र १—४—०
(१८) शेठ हरिवल्लभदास बाळगोविंददासनुं जीवनचरित्त •—६—०
(१९) परोपकार ०—१२—०
(२०) ढोरनुं खातर ८—४—०
(२१) जगतनो अर्वाचीन इतिहास २—०—०
(२२) किरातार्जुनीय काव्यनुं मूळ साथे गुजराती भाषान्तर १—०—०
(२३) विविध प्रकारना हुन्नरोपयोगी तेजाबो •—१२—०
(२४) वार्निश १—•—०
(२५) जीवननो आदर्श ०—१२—•
(२६) कीर्तिकौमुदी ०—१२—०
(२७) शिशुपाळवध-पूर्वार्ध-( सर्ग १ थी १२ ) १—८—•
(२८) हिन्दुस्तानमां इंग्रेजो राज्यनो उदय ०—६—०
(२९) रसायनशास्त्र ०—१२—०
(३०) ब्रिटिश हिन्दुस्ताननो आर्थिक इतिहास भा. २ जो ०—१२—०
(३१) जापाननी केळवणीपद्धति ०—१२—०
(३२) शिशुपाळवध—उत्तरार्ध-( सर्ग ११ थी २० ) १—०—०
(३३) लेन्डोरना काल्पनिक संवादो भा. १ ०—१२—•
(३४) खगोळविद्या ०—१२—०
(३५) लेन्डोरना काल्पनिक संवादो भा. २ ०—१२—०
(३६) मानसशास्त्र १—०—०
(३७) शिक्षित आर्य संतानोनुं आरोग्य १—०—०
(३८) सहकार प्रवृत्ति ०—१२—०
(३९) इंग्रेजी राज्यबंधारण १—०—०
(४०) उदारमतवाद ०—१२—०
(४१) सचित्र शरीरविद्या १—०—०

| | |
|---|---|
| (४२) हिन्द तत्वज्ञाननो इतिहास–पूर्वार्ध | १—०—० |
| (४३) ,, ,, ,,—उत्तरार्ध | १—०—० |
| (४४) बंगाळी साहित्यनो इतिहास | १—०—० |
| (४५) संरक्षणवाद | ०—१२—० |
| (४६) हिन्दी साहित्यनो इतिहास | १—०—० |
| (४७) उपनिषद् विचारणा | १—०—० |
| (४८) हिन्दुराज्यव्यवस्था | १—०—० |
| (४९) सगोळशा आख्यान | १—०—० |
| (५०) वहीणवटानी परिभाषा | ०—८—० |

गु. व. सोसाइटी
अमदावाद
ता. २१–९–१९३५

हीरालाल त्रि. पारेख
आसि. सेक्रेटरी

# अनुक्रमणिका

## १. प्रास्ताविक


| विषय | पान. |
|---|---|
| निवेदनम् | ८. |
| उपोद्घात | २१. |
| अपभ्रंशव्याकरण | ६२. |
| उपसंहार | ६४. |


## २. छायासमेत मूल


| उद्धरणांक | विषय | कर्ता | पान |
|---|---|---|---|
| १. | जलकीलावण्णणु. | चउमुहु सयंभु. | १६. |
| २. | सीयदिव्वकहाणउ. | तिहुयण सयंभु. | ३५. |
| ३. | विराडनयरि पंडवहं अण्णायवासु. | चउमुहु सयंभु. | ५२. |
| ४. | बलपण्हु | तिहुयण सयंभु. | ८०. |
| ५. | वसुएवघरच्चाउ | पुप्फयंतु | १०५. |
| ६. | बंधुयत्तें चत्तहो भविसत्तहो तिलयदीवि हिंडी. | धणवाल. | ११९. |
| ७. | परमप्पपयासदोहासमुच्चउ | जोइंदु | १२०. |
| ८. | दोहापाहुड | जोइंदु (?) | १३२. |
| ९. | सावयायार | जोइंदु (?) | १३६. |
| १०. | सुजणदुज्जणसहावविवेयणु | उज्जोयणसूरि | १४१. |
| ११. | पुरुरवस्स उम्मायवयणाइं | (?) | १४७. |
| १२. | दोहाकोसोद्धरियगीयाइं | काण्ह | १५०. |
| १३. | दोहाकोसोद्धरियगीयाइं | सरह | १५४. |
| १४. | पइण्णछंदाइं | | १५६. |
| ३. | टिप्पणी | | १–११२. |
| ४. | शब्दकोश | | १५०. |
| | संकेतसूचि | | १५२. |
| | शुद्धिपत्र | | १५६. |

| | |
|---|---|
| (४२) हिन्द तत्वज्ञाननो इतिहास–पूर्वार्ध | १—०—० |
| (४३) ,, ,, ,,—उत्तरार्ध | १—०—० |
| (४४) बंगाळी साहित्यनो इतिहास | १—०—० |
| (४५) संरक्षणवाद | ०–१२—० |
| (४६) हिन्दी साहित्यनो इतिहास | १—०—० |
| (४७) उपनिषद् विचारणा | १—०—० |
| (४८) हिन्दुराज्यव्यवस्था | १—०—० |
| (४९) सगोळशा आख्यान | १—०—० |
| (५०) वहोणवटानी परिभाषा | ०—८—० |

गु. व. सोसाइटी
अमदावाद
ता. २१–५–१९३५

हीरालाल त्रि. पारेख
आसि. सेक्रेटरी

# अनुक्रमणिका

## १. प्रास्ताविक


| विषय | पान. |
|---|---|
| निवेदनम् | ८. |
| उपोद्घात | २१. |
| अपभ्रंशव्याकरण | ६२. |
| उपसंहार | ६४. |


## २. छायासमेत मूल


| उद्धरणांक | विषय | कर्ता | पान |
|---|---|---|---|
| १. | जलकीलावण्णु. | चउमुहु सयंभु. | १६. |
| २. | सीयदिव्वकहाणउ. | तिहुयण सयंभु. | ३५. |
| ३. | विराडनयरि पंडवहं अण्णायवासु. | चउमुहु सयंभु. | ५२. |
| ४. | बलपण्हु | तिहुयण सयंभु. | ८०. |
| ५. | वसुएवघरच्चाउ | पुप्फयंतु | १०५. |
| ६. | बंधुयत्तें चत्तहो भविसत्तहो तिलयदीवि हिंडी. | धणवाल. | ११९. |
| ७. | परमप्पपयासदोहासमुच्चउ | जोइंदु | १२०. |
| ८. | दोहापाहुड | जोइंदु (?) | १३२. |
| ९. | सावयायार | जोइंदु (?) | १३६. |
| १०. | सुजणदुज्जणसहावविवेयणु | उज्जोयणसूरि | १४१. |
| ११. | पुरुरवस्स उम्मायवयणाइं | (?) | १४७. |
| १२. | दोहाकोसोद्धरियगीयाइं | कण्ह | १५०. |
| १३. | दोहाकोसोद्धरियगीयाइं | सरह | १५४. |
| १४. | पइण्णछंदाइं | | १५६. |
| ३. | टिप्पणी | | १–११२. |
| ४. | शब्दकोश | | १५०. |
| | संकेतसूचि | | १५२. |
| | शुद्धिपत्र | | १५६. |

# निवेदनम् ।

सर्वमिदं नामरूपात्मकं जगत्प्रायो वाचायाः प्रभावेण समुद्द्योतितं भवति । तस्मादेव वाचाया महिमा श्रुतिभिरपि गीयते । तथा ह्येतरेयाण्यके " वाचा वै वेदाः संधीयन्ते, वाचा छंदांसि वाचा मिश्राणि संदधति वाचा सर्वाणि भूतान्यथो वागेवेदं सर्वं " मिति[1] । संसारव्यवहारायावश्यकं जनानां पारस्परिकं संधानं वाचैव क्रियत इत्येतत्सत्यममुष्याः श्रुतेः प्रादुर्भवति । एष एवाभिप्रायो दण्डिनाऽपि काव्यादर्शे समुपदर्शितः;

" इह शिष्टानुशिष्टानां शिष्टानामपि सर्वथा
वाचामेव प्रसादेन लोकयात्रा प्रवर्तते ॥

इदमन्धं तमः कृत्स्न जायेत भुवनत्रयम्
यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरा संसारान्न दीप्यते ॥ " इति[2]

देशजनसमूहपरिच्छिन्ना एकाऽपि वाग् विविधासु भाषासु संविभक्ता भवति । प्रत्येकं भाषा तत्तद्देशजनसमूहसंस्कारलक्षणान्याविष्करोति । यथा यथा कस्याश्चित् प्रजायाः संस्कृतिः समुपबृंहते तथा तथा तस्या भाषासमृद्धिरपि विपुलतां वैविध्यं सौक्ष्म्यं चावाप्नोति । प्रजायाः संस्कार एव भाषायाः परा शक्तिः । भाषापारंपर्यस्य सर्वाङ्गं गवेषणं तद्भाषाभाषिण्याः प्रजायाः संस्कृतेरितिहासं व्यनक्ति । तस्मादेव भारतवर्षे प्राचीनतमा ऋषयः निरुक्तव्याकरणे वेदाङ्गकक्षायां न्यदधुः । गीर्वाणभाषासत्त्वान्वेषणपरेण भगवता पतञ्जलिना भारतवर्षीयसंस्कृतिसौष्ठवरिरक्षुणा तस्मादेव कंचिद्ब्राह्मणग्रन्थमवतार्य समुद्घोषितम् । " एकः शब्दः सम्यग्ज्ञातः शास्त्रान्वितः सुप्रयुक्तः स्वर्गे लोके कामधुग्भवती " ति[3] ॥

---

१. ऐतरेयारण्यक. ३. १. ६.

२. दण्डिन्–काव्यादर्श–अ० १. श्लो० २–३.

३. पतञ्जलि–व्याकरणमहाभाष्य–अ० १. पा. १. आह्निक १–पत्र ६५. (निर्णयसागरावृत्तिः)

अधुना भारतवर्षे विविधाभिर्देश्यभाषाभिस्तत्संस्कारव्यक्तित्वं समासादितं यत्तासां पारंपर्येतिहासाध्ययने पुराविदः पण्डितान् नेष्यति । भारतवर्षस्य उदीच्यप्रान्तीयानां विविधानां देश्यभाषाणां सम्यगैतिहासिकमध्ययनं तदैव खलु सिध्यति यदा संस्कृतप्राकृतयोर्विविधानां देश्यभाषाणां चान्तराले स्थितस्यापभ्रंशस्य सूक्ष्मदृष्ट्या समवलोकनं क्रियते । सामान्यतस्त्वार्यावर्तस्य पश्चिमदिग्देशेषूच्यमानानामर्वाचीनदेश्यभाषाणां, विशेषतश्च गुर्जरत्रायां प्रयुज्यमानाया अर्वाचीनगुर्जर्याः सर्वाङ्गपर्यालोचनमपभ्रंशस्य सूक्ष्माध्ययनं विना दुःशकमेव । बहवोऽपभ्रंशकृतयो जैनैर्न रक्षितेषु हस्तलिखितपुस्तकागारेषु संलभ्यन्ते । चतुःपञ्चा अपभ्रंशकृतयोऽद्यापि कश्चित्पण्डितैर्यथार्थं संपादितमुद्रिताः । प्राकृतार्वाचीनदेश्यभाषाऽन्तरालवर्त्यपभ्रंशविषयेऽर्वाचीनगुर्जरीभाषामुद्दिश्य प्रभूतमध्येयमवशिष्यते । तदध्ययनं तु तदैव सुशकं यदा प्रसिद्धाप्रसिद्धापभ्रंशग्रन्थेभ्यो यथाकालक्रममुद्धरणानि संकलय्यैक एव ग्रन्थो विदुषां करकमले निधीयते । एतत्प्रयोजनमवधार्यास्माभिरेषाऽपभ्रंशपाठावली संयोजिता । अयं त्वपभ्रंशपाठावल्याः प्रथमोंऽशो विक्रमार्कीयसप्तमशताब्द्या आरभ्य दशमशताब्दीपर्यन्तं यथालब्धप्रसिद्धाप्रसिद्धापभ्रंशवाङ्मयं यथाशक्त्यालोच्य चतुर्दशसूद्धरणेषु संकलितः । अस्याः खलु द्वितीयेंऽशेऽवशिष्टापभ्रंशवाङ्मयपर्यालोचनं कर्तुमाशास्महे ॥

को नामाऽपभ्रंशः । भगवता पतञ्जलिना गदितं "भूयांसोऽपशब्दाः, अल्पीयांसः शब्दा इति । एकैकस्य हि शब्दस्य बहवोऽपभ्रंशाः तद् यथा गौरित्यस्य शब्दस्य गावी गोणी गोता गोपोतालिकेत्यादयो बहवोऽपभ्रंशा "[४] इति । दण्डिना काव्यादर्शेऽपभ्रंशशब्दस्य द्विविधोऽर्थोऽभिहितः । यथा,

आभीरादिगिरः काव्येष्वपभ्रंश इति स्मृताः ।
शास्त्रे तु संस्कृतादन्यदपभ्रंशतयोदितम् ॥

---

४. महाभाष्य–अ० १. पा. १. आह्निक १. पत्र ५०

५. दण्डिन्–काव्यादर्श–अ. १. ३६.

प्रथमपङ्क्तौ दण्डिना तत्कालीनदेश्यभाषाभ्यः समासादित-वाङ्मयविषयपरमोत्कर्षा काश्चिदाभीरादिगिरोऽपभ्रंशाभिधाप्रदानेन दृष्टिकक्षीकृताः । द्वितीयपङ्क्तौ तु पतञ्जलिविहितः संस्कृतापेक्षोऽपभ्रंशार्थः संनिहितः । 'आभीरादिगिरः' इत्यनेन शब्दसमूहेनार्यावर्तस्य पश्चिमप्रदेशमधिवसतां जनानां गिर उद्दिश्यैवोक्तमिति पुराविद्भिप्रायानुसारमस्मभ्यं प्रतिभाति । कैश्चिदालंकारिकैरपभ्रंशशब्दः सामान्यभूतं तस्य यौगिकार्थं निमित्तीकृत्य व्याख्यायते । यथा रुद्रटः,

षष्ठोऽत्र भूरिभेदो देशविशेषादपभ्रंशः ॥

इदं खल्वपभ्रंशलक्षणं न साधु, रूढार्थावमानत्वात्, संस्कृतशब्दयौगिकार्थवदपभ्रंशशब्दस्य केवलं यौगिकार्थप्रदानेनार्थानुपपत्तेः । यत्तु विक्रमार्कीयसप्तमशताब्दीभाविना दण्डिना समवालोकि तत्तु नवमशताब्दीयेन रुद्रटेनानवलोकितमिति दुष्प्रतर्कमेव । तस्मादेव रुद्रटेन तं चानुसृत्यान्यैः कैश्चिदालंकारिकैरुपनिबद्धमपभ्रंशलक्षणं न स्वीकारार्हम् । द्वादशशताब्दीयेन वाग्भटेन किंचित्संस्कृत्यापभ्रंशलक्षणमुपनिबध्यते । यथा,

अपभ्रंशस्तु यच्छुद्धं तत्तद्देशेषु भाषितम् ॥[७]

'शुद्ध' मित्यनेन शब्देन ता देश्यभाषाः सूच्यन्ते यास्तत्कालीनलौकिकवाङ्मये परमोत्कृष्टत्वात्समापन्नप्रतिष्ठा आसन् । वाग्भटस्त्वेवं सर्वा देश्यभाषा अपभ्रंशपक्षे न निक्षिपति । आलंकारिकवचनानुगामिन उपरितनविवेचनस्य निष्कर्षं वयमुपसंहरामः । काश्चिद् देश्यभाषाः काव्यादिषूपनिबद्धत्वाद्विद्वज्जनप्रयुज्यमानत्वात्परां शुद्धिमाप्नुवन् । तासां च विशेषत आभीरादीनां गिरः अपभ्रंशतया स्मर्यन्त इति ॥

यथा महाराष्ट्राश्रया भाषा प्रकृष्टप्राकृतपदं समारूढा सामाम्यतः प्राकृताभिधयैव ज्ञायते तथैव राजस्थान-मरुदेश-गुर्जरत्रा-

६. रुद्रट–काव्यालंकार, २–१२.

७. वाग्भट–काव्यालंकार. २–३.

दिष्वार्यावर्तस्य पश्चिमदिक्प्रदेशेषु प्रयुज्यमानाभ्यो गीर्भ्यः शुद्ध-स्वरूपा कविभिराद्रता लब्धप्रकर्षा खल्वेका भाषाऽऽपभ्रंशाभिधयैव ज्ञायते। साऽपभ्रंशभाषा तत्कालीनदेश्यभाषाभ्यो भिन्नाऽऽसीत्। एषोऽभिप्रायः समधिगतसकलापभ्रंशसाहित्यनिदर्शनाद्, दाक्षिण्यचिह्नराजशेखरादीनां कथनाद्, अपभ्रंशस्य राजस्थानगुर्जरत्रादिप्रदेशप्रवर्तमानदेश्यभाषाणां च व्याकरणशब्दसमूहादिविषये पारम्पर्यगतसाम्यदर्शनात्प्रमाणपदवीमारोहति। वि. सं. ८३५ वर्षे दाक्षिण्यचिह्नोऽष्टादशदेश्यभाषाऽतिरिक्तामपभ्रंशभाषामुपदर्शयति। तस्याभिप्राये संस्कृतं 'दुर्जनहृदयमिव विषमं' प्राकृतं च 'सज्जनवचनमिव सुखसंगतं' किं त्वपभ्रंशस्तु ताभ्यामपि शोभनतरः 'प्रणयकुपितप्रियप्रणयिनीसमुल्लापसदृशो मनोहरः'।[८] एवं च गुर्जरत्रातिलकभूतं भिन्नमालं परितो विहरन् दाक्षिण्यचिह्नोऽपभ्रंशे परं भावमाविष्करोतीति न चित्रम्। अपि च, स कुवलयमालाकथायां गुर्जरपथिकमुखादपभ्रंशदोहकमुपवाचयतीति सुसंगतमेव[९]। विक्रमार्कीयदशमशताब्द्या आदिमे विभागे प्रवर्तमानो राजशेखरस्तदुक्तमित्युल्लिख्य काव्यमीमांसायां दशमाध्याये अपभ्रंशं प्रयुञ्जानान्देशान्निर्दिशति यथा,

सापभ्रंशप्रयोगाः सकलमरुभुवष्टक्कभादानकाश्च।[१०]

तस्मिन्नेव ग्रन्थेऽन्यत्र च,

सुराष्ट्रत्रवणाद्या ये पठन्त्यर्पितसौष्ठवम्।
अपभ्रंशवदंशानि ते संस्कृतवचांस्यपि॥ इति।[११]

अपरत्र च तस्मिन्नेव ग्रन्थे राजासनसमीपमपभ्रंशिनां कवीनां निवेशनस्थानं व्यवस्थापयिष्यन् राजशेखर उद्गिरति '[ राजासनस्य च ] पश्चिमेनापभ्रंशिनः कवय [ निविशेरन् ]'[१२]

---

८. अपभ्रंशपाठावली-टिप्पणी पत्र. ६६.

९. अ. पा. उद्धरण १४.

१०. राजशेखर-काव्यमीमांसा। पत्र. १५. (गायकवाड-प्राच्य-ग्रंथमाला.१.)

११. राजशेखर-का. मी. पत्र ३४.

१२. राजशेखर-का. मी. पत्र. ५४-५५

इति । सर्वे चेम उल्लेखा अपभ्रंशस्थानविषयेऽस्मदीयाभिप्रायमेव द्रढयन्ति । एकादश्यां विक्रमशताब्द्यां विद्यमानो भोजराजः सरस्वतीकण्ठाभरणे,

पठन्ति लटभं लाटाः प्राकृतं संस्कृतद्विषः
अपभ्रंशेन तुष्यन्ति स्वेन नान्येन गुर्जराः ॥ [13]

इत्यभिप्रायमाविष्कुर्वाणो राजशेखराभिप्रायमेव समर्थयति । एवं च सापभ्रंशप्रयोगाः प्रदेशा आर्यावर्तस्य पश्चिमाशावर्तिन इत्यप्रत्याख्येयोऽयं सिद्धान्तः ॥

अत्रापभ्रंशस्य विविधाः पारंपर्यसमाम्नाताः शाखा इति केषांचिन्मतम् । तत्त्वत्र समुपस्थापितमपभ्रंशैकत्वपक्षं न व्यावर्तयति । साहित्ये प्रयुज्यमानस्यैकस्याप्यभ्रंशस्य प्रादेशिकविशेषत्वाल्लोकोक्तिगताः बहवः शाखा भवेयुरिति नास्मदीयसिद्धान्तबाधकमनुभवविरुद्धं वा । वि. सं. ११२५ वर्षे रुद्रटीयकाव्यालङ्कारटीकायां नमिसाधुरभिधत्ते । " पाणिन्यादिव्याकरणोदितशब्दलक्षणेन संस्करणात्संस्कृतमुच्यते । तथा प्राकृतभाषैव किंचिद्विशेषलक्षणान्मागधिका भण्यते । तथा प्राकृतमेव किंचिद्विशेषात् पैशाचिकम् । शौरसेन्यपि प्राकृतभाषैव । तथा प्राकृतमेवापभ्रंशः । स चान्यैरुपनागराभीरग्राम्यावभेदेन त्रिधोक्तस्तन्निरासार्थमुक्तं भूरिभेद इति । कुतो देशविशेषात् । तस्य च लक्षणं लोकादेव सम्यगवसेय " मिति [14] । एवं च रुद्रटमतसमर्थनपरो नमिसाधुरपभ्रंशस्य त्रीन् भेदान्न स्वीकरोति । प्राच्यपरंपरासमाम्नायमनुसृत्य मार्कण्डेयेन प्राकृतसर्वस्वे नागरोपनागरव्राचडसंज्ञा अपभ्रंशस्य त्रयो भेदा अभिहिताः । अस्माभिः प्रस्तुतग्रन्थस्य चतुर्थोद्धरणस्य प्रस्तावे टाक्कयपभ्रंशस्य शाखैवेति प्रतिपिपादयिषद्भिः प्रा-

१३. भोजदेव-सरस्वतीकण्ठाभरण. २-१३.

१४. रुद्रट-काव्यालङ्कार १-११. नमिसाधु-टीका.

१५. मार्कण्डेय-प्राकृतसर्वस्व पाद. १७-१८. देश्यभाषाणामपभ्रंशे समावेशनायोक्तेषु बहुष्वपभ्रंशप्रकारेष्वपि मुख्यतया वर्तमानानामपभ्रंशस्य त्रयाणां प्रकाराणां विवेचनं मार्कण्डेयेन विस्तरतो कृतमपरे तु केवलं निर्दिष्टाः ।

कृतसर्वस्वे ' हरिश्चन्द्रस्त्विमां भाषामपभ्रंश इतीच्छती "[१८]ति मार्कण्डेयनिराकृताऽभिप्रायः स्वीकृतः । एवं चैकस्यापभ्रंशस्य देशयविशेषैः परिच्छिन्नं शाखाभिन्नत्वमस्मन्मतं न बाधते ॥

साहित्यभाषापदमारूढैकाऽपभ्रंशभाषा दक्षिणापथवर्तिमान्यखेटनिवासिना महाकविपुष्पदन्तेन, कामरूपवसतिना महासिद्धसरोरुहेण, वंगदेशवास्तव्येन कृष्णपादेन,[१९] विविधदेशनिवासिभिश्चैवमनेकैः कविभिः संस्कृतप्राकृतवत्प्रयुज्यमानैकस्मिन् समये समस्ते भारतवर्षे लब्धप्रचाराऽऽसीदित्यत्र न भवति संशयलवस्याप्यवकाशः। एतस्यापभ्रंशस्य यथाकालं द्विविधः प्रवाहः समवतीर्णो दृश्यते । एकस्तु परंपरया साहित्ये प्रयुज्यमानोऽपभ्रष्टसंज्ञां प्राप्नुवन् पश्चाच्च डिंगलाभिधया चारणैरद्यापि राजसभासु प्रयुज्यमानायां भाषायामखण्डतयाऽवतीर्णोऽवगम्यते ।[२०] मैथिलकविविद्यापतिना विक्रमार्कीयपंचदशशताब्दीवर्तिना ' कीर्तिलते ' ति ख्याते काव्येऽपभ्रष्टभाषैव प्रायुङ्क्त । यथा तेन भण्यते,

सक्कअवाणी बहुअ न भावइ
पाउअरस को मम्म न पावइ ।
देसिलवअना सवजनमिट्ठा
तें तैसन जंपउं अवहट्ठा ॥ [२१]

---

१६. अ. पा. टिप्पणी. पत्र. ३६.

१७. कारंजा-जैन-ग्रन्थमालायां ' जसहरचरिउ ' (सं. पी. एल. वैद्य) ' णायकुमारचरिउ ' (सं. हीरालाल जैन ) इत्येतौ ग्रन्थौ मुद्रितौ । ' महापुराणं ' तु वैद्यमहाशयेन संपाद्यते तस्यामेव ग्रन्थमालायां ।

१८. अ. पा. उद्धरण. १३. टिप्पणी.

१९. अ. पा. उद्धरण. १३. टिप्पणी.

२०. सुनीतिकुमार चेटरजीः O. D. B. L Part I Intro. P. 113-115.

२१. कीर्तिलता ( सं. बाबुराम सक्सेना ) पत्र. ७. (मूल.)

प्राकृतपिंगलेऽप्युदाहरणपद्यान्यपभ्रष्टभाषायामेवोपनिबद्धानीति भाषालक्षणात्तट्टीकाकारस्य लक्ष्मीनाथभट्टस्य वचनाच्च प्रसिद्धमेव ।[२२] एवं च विक्रमार्कीयपञ्चदशशताब्द्यां विरचिते संदेशकरासकाख्येऽप्रसिद्धाऽपभ्रष्टकाव्ये यथा,

अवहट्टय-सक्कय-पाइयं च पेसाइयंमि भासाए ।
लक्खणछंदाहरणे सुकइत्तं भूसियं जेहिं ॥

एवं च लोकैः प्रयुज्यमानाभिर्देश्यभाषाभिः संपृक्तस्ताभिश्च विकृतोऽप्यपभ्रंशपारम्पर्यमनुकुर्वाणश्चारणविरचितेषु काव्येष्वद्याप्यखण्डतया प्रवर्तमानोऽपभ्रष्टसंज्ञः प्रवाहो दरीदृश्यते । द्वितीयश्च प्रवाह उक्तिप्रधानो लोकभाषास्ववतीर्णः स्वातन्त्र्येण विकृतिमापद्यमानो विवर्धमानश्च पश्चिमहिंदो-राजस्थानी-गुर्जरी-प्रभृतिष्ववर्वाचीनदेश्यभाषास्वन्तर्गतो दृग्गोचरीभवति । यत्त्वपभ्रंश-गुर्जर्योर्व्याकरणादिसंबंधविवेचनं टेसीटरी-ग्रीअरसन-दिवेटिआ-ध्रुव-टनरादिभिर्विद्वद्भिर्विविधेषु प्रबन्धेष्वकारि तत्प्रज्ञावद्भिर्वाचकैस्तत्र तत्रावलोकनीयम् ॥

यत्कैश्चित्पण्डितप्रवरैरपभ्रंशानेकत्वं प्रत्यपादि तदत्र प्रत्याख्येयम् । अस्मिन् पक्षे प्राचीनपरंपरायां रुद्रट-मार्कण्डेय-रामतर्कवागीशादय आलंकारिकवैयाकरणा अर्वाचीनपरंपरायां च पीशल-ग्रीअरसनादयो भाषापण्डिताः । अपभ्रंशैकत्वयाथार्थ्यमस्माभिरुपरि साधितम् । प्राकृतानन्तरवर्त्यर्वाचीनदेश्यभाषापुरोभवमन्तरालवर्तिं तत्कालीनदेश्यभाषास्वरूपमपभ्रंश इति पूर्वपक्षिणां पण्डितानां पक्षः । तस्याऽपि वैतथ्यमस्माभिरदर्शि । यत्तु ' बलपण्हो ' इत्यस्मिंश्चतुर्थोद्धरणे टाक्कोमागध्योः कडवकानि दृश्यन्ते तत्केवलं विदग्धतावेश्श्रिकीर्षया । द्वादशत्रयोदशोद्धरणयोर्भाषा देश्योक्ति-

---

२२. Pischel. G. P. Ein. § 28. अत्र तु पीशलमहाशयेन सविस्तरमपभ्रष्टशब्दप्रयोगस्थानानि समवतारितानि । तथा हि, प्रा. पिं. पत्र. ३. ( लक्ष्मीधरटीकायाम् ) ।

२३. संदेशकरास ( अप्रसिद्ध ) गाथा. ६.

विकृतः प्रायशः प्रयुज्यमानोऽपभ्रंश इति तत्र प्रस्तावनायां प्रदर्शितम् ॥

सति प्रभूतेऽपि वक्तव्ये विस्तरभिया दिङ्मात्रं खल्वत्राभिधीयते । आशास्महे भविष्यत्येतद्विवेचनं विदुषां तोषायेति । एतस्य ग्रन्थस्य संस्करणकर्मण्यस्माभिः प्रचुरमवधानमवाधारि । तथापि मुद्रणाव्यवस्थाया अस्मत्प्रामादाद्वा याः कश्चित्त्रुटयोऽवशिष्यमाणा विद्येरंस्ताः संशोधनीयाः सूचनीया वाऽस्मभ्यं परोपकारप्रवणैः प्रेक्षावद्भिर्वाचकैरिति सप्रश्रयं विज्ञाप्यते । अस्य ग्रन्थस्य संपादनकर्मणि प्रचुरं साहाय्यमनुष्ठितवद्भिः दि० ब० केशवलाल हर्षदराय ध्रुवेत्येतैः पण्डितधुरीणैर्महाशयैर्महाराजश्री-पुण्यविजयेतिमुनिवरैश्च वयमत्यर्थमुपकृताः ॥

मोदीत्युपाह्वो मधुसूदनः ।

# उपोद्घात

अंग्रेजीनो मूळगत संबंध ॲंग्लो-सेक्सन साथे छे; लेटिने तेने ओप अने अलंकारो अर्प्या छे. तेवी ज रीते गूजराती, राजस्थानी अने पश्चिम हिंदुस्तानीनो मूळगत संबंध अपभ्रंश साथे छे; संस्कृते तो आ बधी य अर्वाचीन देश्य-भाषाओने ओप अने अलंकारो आप्या छे. एटले के गूजरातीना शास्त्रीय अभ्यास माटे संस्कृतना अभ्यासनी आवश्यकता खरी; परंतु तेनी चिकित्सा, तेना आत्मानी ओळख तो अपभ्रंशना अभ्यासथी थई शके. परंतु आश्चर्यनी वात छे के गूजरातीना उच्चतर अभ्यासमां तेने हिं जेवुं ज स्थान आपवामां आव्युं छे. अपभ्रंशना अभ्यास विना गूजरातीनी भाषाचिकित्सा असंभवित ज छे. घणा य गूजराती शब्दोनां मूळ अपभ्रंशमां दीठामां आवे छे. व्याकरणनां रूपो पण झीणवटथी तपासीए तो तेमांथी ज अवतीर्ण थतां दृष्टिगोचर थाय छे. डॅा. टेसीटरी, श्री. नरसिंहराव, प्रो. टर्नर, दी. बा. केशवलाल ध्रुव के सर ज्यार्ज ग्रीअर्सननां लखाणो तपासीशुं, तो आ बाबतनी आपणने सचोट प्रतीति थशे. हिंदनी परंपरामां ऊछरेला स्व० व्रजलाल शास्त्रीए पण अपभ्रंश-गूजरातीना संबंध उपर भार मूक्यो हतो. (सं. १९२२)[1] दि. बा. केशवलाल ध्रुवे इ. स. १९०७मां गूजराती-साहित्य-परिषदना बीजा अधिवेशनना प्रमुख तरीकेना भाषणमां अपभ्रंश अने गूजरातीना संबंध विषे विस्तारथी चर्चा करी हती.[2] अपभ्रंशना शास्त्रीय अभ्यास प्रत्ये गूजरातना विद्वानोए घणुं ओछुं लक्ष आप्युं छे तेनो अभ्यास सारा प्रमाणमां थशे नहि तो गूजरातीने सारो शब्दकोश के व्याकरण सांपडशे नहि.

'अपभ्रंश' नी अर्थव्याप्ति विषे प्राचीन समयथी ज भिन्नभिन्न मत दृष्टि-गोचर थता आवे छे. जूनामां जूनो अपभ्रंश शब्दनो प्रयोग आपणने पतञ्जलिना

---

१. शास्त्री व्रजलाल कालिदास विरचित 'गुजराती भाषानो इतिहास' (सं. १९२२), प्रसिद्ध करनार-गुजरात वर्नाक्युलर सोसायटी, अमदावाद डॅा. सर रामकृष्ण भांडारकर 'Wilson Philological Lectures.' Lec. III ने छेडे अपभ्रंश-गूजरातीना संबंधे स्व. शास्त्रीजीनो उल्लेख करे छे.

२. बीजी गूजराती साहित्य परिषदनो अहेवाल अने निबंधो (१९०७) मां दि बा. केशवलाल हर्षदराय ध्रुवनुं आखुं य भाषण आ विषयना रसिके वांची जवा जेवुं छे.

व्याकरणमहाभाष्यमां[३] मळे छे. तेमां तो संस्कृतना हिसाबे जे कोई भाषाभ्रष्टता होय, तेने अपभ्रंश तरीके ओळखावेलां आवी छे. पतञ्जलि इ. स. पूर्वे २०० नी आसपास प्रवर्तमान थया एम विद्वानोनो अभिप्राय छे. त्यार पछी भामहे[४] (आशरे इ. स. छठ्ठो सैको) अपभ्रंशनो उल्लेख कर्यो छे; परंतु तेनो उल्लेख अपभ्रंशनी अर्थव्याप्ति पर झाझो प्रकाश पाडतो नथी. अपभ्रंशना अर्थ पर दण्डीनां वचन[५] (आशरे इ. स. सातमो सैको) ठीक प्रकाश आपे छे. संस्कृत प्रत्येना अभिनिवेशवाळा वैयाकरण अने आलंकारिकोनो मत पण तेणे नोंध्यो छे; अने अपभ्रंश नामे रूढ भाषानो पण तेणे उल्लेख कर्यो छे. शास्त्रोमां तो संस्कृतथी जे कोई भिन्न भाषा होय ते अपभ्रंश, ए पहेलो अर्थ; अने आभीर इत्यादिनी भाषाओ काव्योमां वपराई होय ते अपभ्रंश, ए बीजो अर्थ. आभीर इत्यादि जातिओनो वसवाट पश्चिम हिंदुस्तानमां हतो ए विद्वन्मान्य बाबत छे. त्यार पछीनो उल्लेख रुद्रटनो[६] छे. तेना मते तो देशविशेषे करीने जे अनेक भाषाओ होय, ते अपभ्रंशने नामे ओळखवी; एटले के दरेक देश्यभाषा तेने अभिप्राये तो अपभ्रंश ज केवाती जोईए. आ अभिप्राय अर्थाभासरूप छे; कारण के रूढार्थनी अवगणना करी, केवळ यौगिकार्थने प्राधान्य आपी, तेणे आलंकारिकोनी विभाग-

---

३. पतंजलि–महाभाष्य. अ.१.पा.१.आह्निक. १.पान.५०.

४. भामह-काव्यालंकार–१.३६.

शब्दार्थौ सहितौ काव्यं गद्यं पद्यं च तद् द्विधा
संस्कृतं प्राकृतं चान्यदपभ्रंश इति त्रिधा ॥

५. दण्डिन्–काव्यादर्श.–१.३२.३६.

तदेतद्वाङ्मयं भूयः संस्कृतं प्राकृतं तथा ।
अपभ्रंशश्च मिश्रं चेत्याहुरार्याश्चतुर्विधम् ॥
आभीरादिगिरः काव्येष्वपभ्रंश इति स्मृताः ।
शास्त्रे तु संस्कृतादन्यदपभ्रंशतयोदितम् ॥

६. रुद्रट–काव्यालंकार. २–११. १२.

भाषाभेदनिमित्तः षोढा भेदोऽस्य संभवति ॥
प्राकृतसंस्कृतमागधपिशाचभाषाश्च शौरसेनी च ।
षष्ठोऽत्र भूरिभेदो देशविशेषादपभ्रंशः ॥

प्रियताने ज तोषी छे. बाकी सातमा सैकाना दण्डीने जे अर्थ सूझ्यो, ते शुं नवमा सैकाना रुद्रटने न सूझे ? बारमा सैकाना वाग्भटनो अभिप्राय[७] दण्डी अने रुद्रटना अभिप्रायनी वचटनो छे. ते रुद्रटनी माफक बधी देश्यभाषाओने अपभ्रंश कहेतो नथी; तेम पश्चिममां वसता आभीरादिनी भाषाओने ज अपभ्रंश तरीके उल्लेखतो नथी. तेने मते तो कोई पण देश्यभाषा शुद्धस्वरूपे पहोंची होय, एटले के साहित्यमां वपराई होय, तेने अपभ्रंश कहेवी, बीजोने नहि. आ प्रकारनां शास्त्रप्रिय आलंकारिकोनां दलीली विवेचनो जवा दई, मुद्दा पर आवीए. आगळ पाछळना पूरावा परथी एम आपणे कही शकीए के केटलाक नजीवा अपवादो बाद करतां, हेमचंद्रे जे भाषानी चर्चा सिद्धहैमना आठमा अध्यायने छेडे करी छे, ते भाषाने अपभ्रंश समजवी.[८] बीजा प्राकृत वैयाकरणोने पण आ ज अभिप्रेत छे. आ भाषामां ज आर्यावर्तना पश्चिम दिशाना देशोनी अर्वाचीन भाषाओनुं मूळ विद्वानो जुवे छे. आ बाबतमां राजशेखर काव्यमीमांसामां कहे छे, के " मारवाड, टक्क अने भादानक प्रदेशोमां भाषाप्रयोगो अपभ्रंशमिश्र होय छे."[९] अपभ्रंश कविओनुं ते पश्चिममां स्थान स्थापे छे;[१०] अने जणावे छे के " सुराष्ट्र अने त्रवण आदि प्रदेशना जनो सौष्ठव अर्पीने संस्कृत वचनोने पण अपभ्रंशवत् बोले छे."[११] भोज सरस्वतीकंठाभरणमां कहे छे के " गुर्जरो पोताना अपभ्रंशथी संतोषाय छे; नहि के बीजाथी. " जो सिद्धहैमनी अपभ्रंश साथे गूजराती सरखावीए तो मालम पडशे के बन्ने वच्चे मा-दीकरीनो संबंध छे. मारवाडी तथा पश्चिम हिंदुस्तानीने पण अपभ्रंशनी साथे आ प्रकारनो ज संबंध छे. आथी जे अपभ्रंशनी वात भोज अने राजशेखर करे छे, ते अपभ्रंश सिद्धहैमनुं ज अपभ्रंश छे, ए वात दीवा जेवी चोक्खी छे. विक्रमना

---

७. वाग्भट–काव्यालंकार. २. ३.

अपभ्रंशस्तु यच्छुद्धं तत्तद्देशेषु भाषितम् ।

८. हेमचंद्र—सि. हे. ८. ४. ३२९–४४६; मार्कण्डेय–प्राकृतसर्वस्व १७। १–७८. लक्ष्मीधर-षड्भाषाचन्द्रिका (सं. कमळाशंकर प्राणशंकर त्रिवेदी) पृष्ठ २६४–२६८. इ. मां अपभ्रंशनी चर्चा करवामां आवी छे.

९. राजशेखर—का. मी. पान. ३४.

१०. राजशेखर—का. मी. पान. ५४–५५

११. राजशेखर—का. मी. पान. ३४.

१२. भोजदेव—सरस्वतीकण्ठाभरण. २. १३.

नवमा सैकानी प्राकृतकथा कुवलयमालामां उद्द्योतनसूरि गूर्जरापथिकने म्होंए अपभ्रंश दुहो बोलावे छे[१३] आ परथी प्रतीत थाय छे के अपभ्रंश नामे साहित्यमां ओळखाती भाषा एक होई, पश्चिम आर्यावर्तनी अर्वाचीन भाषाओनुं ते मूल छे.

आ मतमंडननो केटलाक विद्वानो अंशतः विरोध करे छे प्रो. पीशल, ग्रीअरसन[१४] इ० नुं मानवुं एम छे जे अत्यारनी लोकभाषानुं पूर्वरूप तत्तद्देशीय अपभ्रंश हतुं; अने तत्तद्देशीय अपभ्रंशनुं पूर्वरूप तत्तद्देशीय प्राकृत हतुं प्रो. पीशल अपभ्रंशनी अनेकता कल्पी; नीचे प्रमाणे मतस्थापना करे छे:[१५] "आपणे आम शौरसेनी अपभ्रंश जुदुं पाडवुं जोईए–जे अपभ्रंश शूरसेन प्रदेशनी जूनी लोकभाषा हती; तेनी विकृति गूजराती अने मारवाडी छे. ते ज प्रमाणे आपणे शौरसेनी प्राकृत पण जुदुं पाडवुं जोईए. + + + + हेमचंद्र खोटी रीते अपभ्रंशने शौरसेनी प्राकृत एकलीने ज अनुसरनारुं कहे छे. महाराष्ट्र अपभ्रंश हतुं (सरखावो Hoernle. Com. Gram. P. xxii), जेनी साथे मराठी संबद्ध छे; जने ते ज प्रमाणे महाराष्ट्रनुं प्राकृत जेने महाराष्ट्री तरीके ओळखवामां आवे छे, ते विषे आपणे जाणीए छीए ते ज प्रमाणे मागधी अपभ्रंश हतुं, जे लाटभाषा मारफत अर्वाचीन बिहारी अने पश्चिम बंगालीमां जीवंत छे; अने ते प्रमाणे मगधनुं प्राकृत नामे मागधी पण आपणे जाणीए छीए." डॉ. सुनीतिकुमार चेटरजी आ मतने अनुसरी एक स्थळे कहे छे,[१६] "At the confluence of the second period (i. e. Middle Indo-Aryan Period) and the third period (i. e. New Indo-Aryan Period), we have the literary Apabhrans'as; and these Apabhrans'as of literature are mainly based on hypothetical spoken Apabhrans'as in which the earlier Prakrits die and the Bhāsās or modern Indo-Aryan languages

---

१३. अपभ्रंशपाठावली. उद्धरण. १४.

१४. Grierson: Art. on 'Prakrit' Encyclo. Britt. Vol. XXII P. 251.

१५. Pischel: G. P. Eint. § 7.

१६. Chatterji: O. D. B. L. Intro. P. 17.

have their birth."[17] आज प्रमाणे डॉ.हर्नल,[17] प्रो. पीशल, ग्रीअरसन इत्यादि विद्वानो जूनी देश्यभाषाओने अपभ्रंश तरीके लेखावी तेनी व्याप्तिने बहलावे छे; अने तेम करी अपभ्रंशनी अनेकता स्थापे छे; तेम ज आ मतमे अनुकूळ करवा हेमचंद्रना अपभ्रंशने शौरसेनी अपभ्रंश नाम आपे छे.

जूना वैयाकरण अने आलंकारिकोनी परंपरामां रुद्रटनो टीकाकार नमिसाधु,[18] रामचंद्र,[19] मार्कण्डेय[20] इत्यादि अपभ्रंशनी अनेकता स्थापे छे; परंतु तेमणे कहेला अपभ्रंशनुं वाङ्मय मळतुं नथी. जे अपभ्रंशवाङ्मय आपणी समक्ष छे, ते उपरथी जो निर्णय बांधवानो होय, तो अपभ्रंश एक भाषा हती, एम कहेवामां कांई बाध नथी. देश्य भाषाओनी अपभ्रंश नाम आपी, अपभ्रंशनो अनेकता संबंधे मतस्थापना कराय; पण एकली मतस्थापनाए शुं वळ्युं ? बीजां अपभ्रंशोनुं साहित्य क्यां छे ? तेमना खास व्याकरणविशेषोनी चर्चा पण क्या वैयाकरणे करी छे ? मार्कण्डेय के रामतर्कवागीशे जे चर्चा करी छे, ते तो जूना शास्त्रीओनी विभागप्रियताने आभारी छे; नहि तो शुं बन्ने सूत्रो ज एकएक अपभ्रंशने वर्णवी शके ? बीजुं के, अपभ्रंशनी अनेकताना उल्लेखो अपभ्रंश बोलाती बंध पडया पछीना छे. प्रस्तुत अपभ्रंशपाठावलीना चोथा उद्धरणमां त्रिभुवन

---

१७. Hoernle: Grammer of Gaudian languages. Intro. xi–xii.

१८. नमिसाधु—रुद्रट. २. १२. उपर टीका.

१९. रामचंद्र—नाटयदर्पण. पान. २०९. कारिका. १९५ना प्रथम चरण उपर टीका.

२०. मार्कण्डेय—प्राकृतसर्वस्व. पान. २ टीका

ब्राचडो लाटवैदर्भावुपनागरनागरौ
बार्बरावन्त्यपाञ्चालटाक्कमालवकैकयाः ॥
गौडौद्रवैवपाश्चात्यपाण्ड्यकौन्तलसैंहलाः
कालिङ्ग्यप्राच्यकार्णाटकाञ्च्यद्राविडगौर्जराः ॥
आभीरो मध्यदेशीयः सूक्ष्मभेदव्यवस्थिताः
सप्तविंशत्यपभ्रंशाः वैतालादिप्रभेदतः ॥

अने पोताना अभिप्राये पाद. १. सूत्र. ७. पान. ३:—

नागरो ब्राचडश्चोपनागरश्चेति ते त्रयः
अपभ्रंशाः परे सूक्ष्मभेदत्वान्न पृथङ्मताः ॥

स्वयंभूए रचेला हरिवंशपुराणना भागमांथी एक संधि लेवामां आव्यो छे. तेमां तेणे टाक्की अने मागधी भाषाने अनुसरता अपभ्रंशनां कडवक आप्यां छे[२१] तेमां पण विदग्धता बतावबानो ज यत्न छे.

आपणने अत्यारे मळतुं साहित्य, अपभ्रंश, प्राकृतनी माफक, साहित्यनी प्रकृष्ट भाषा थई त्यार पछीनुं छे; तो पण तेनुं दूध पी ऊछरेली अर्वाचीन देश्यभाषाओनुं स्वरूप तेने अवलंबीने ज विकस्युं, एने माटे पूरावा आपी शकाय एम छे. अपभ्रंश प्रकृष्ट भाषा थयानो उल्लेख धरसेन बीजाए (इ स. ५५२–५६२) पोताना बाप गुहसेन संबंधी लेखमां कर्यो छे. तेमां गुहसेनने " संस्कृत, प्राकृत,अपभ्रंश ए त्रणे य भाषाना प्रबन्धोनी रचनाथी जेनुं अंतःकरण वधारे निपुण थयुं छे, " एम वर्णव्यो छे.[२२] आ बतावे छे के इ. स. ना छट्ठा सैकामां ते साहित्यभाषा बनेली हती. वळी त्रण ज भाषा तरीके संस्कृत, प्राकृत अने अपभ्रंशने वर्णवेलां होई, अपभ्रंश ए एक ज साहित्यभाषा हती एम ठरे छे. आ पहेलांनो अपभ्रंशना प्रयोगनो एक दाखलो मळे छे ते वसुदेवहिंडी जे इ. स. ५८९ पहेलांनो ग्रन्थ छे, तेमां छे.[२३] आथी जूनो अपभ्रंशनो प्रयोग दृष्टिगोचर थतो नथी. भरतना नाटयशास्त्रमां अपभ्रंश गीत छे एम बतावबा एक विद्वाने यत्न कर्यो छे; परंतु ते गीतने झीणवटथी तपासतां ए अपभ्रंशभाषानां होवानी प्रतीति थती नथी.[२४] आपणने मळतुं अपभ्रंशसाहित्य नवमा दशमा सैकानुं छे; एटले के ते बोलाती बंध पडी, अने साहित्यमां स्थिर थई त्यार पछीनुं छे. मळी आवता बधा अपभ्रंश-साहित्यमां सामान्यतः जुदापणुं छे ज नहि. जो ए लोकोनी बोलाती भाषा होत तो रूपरचनामां क्यांक खास फेरफारो जुदाजुदा प्रदेशमां रही लखता कविओमां आव्या होत. बीजुं के जो अपभ्रंश साहित्यभाषा न होत तो, निझाम राज्यमां

---

२१. अपभ्रंश–पाठावली–उद्धरण. ४. कडवक. १–४. मागधी. कडवक. ११. टाक्की.

२२. Indian Antiquary Vol. 10. P. 284. संस्कृतप्राकृतापभ्रंशभाषात्रयप्रतिबद्धप्रबन्धरचनानिपुणतरान्तःकरणः । आ प्रमाणे वल्लभीराज गुहसेननुं विशेषण आपवामां आव्युं छे.

२३. अपभ्रंशपाठावली. उद्धरण. १४.

२४. डॉ. याकोबी अने तेने अनुसरी डॉ. गुणे ए भविसत्तकहानी प्रस्तावनामां आ प्रमाणे यत्न कर्यो छे. तेनो निरास Indian Historical Quarterly Vol.VIII.No.4.M.Ghosh:Prakrit verses in Bharata-Nāṭya S'astra. के. ह. ध्रुव 'पद्यरचनानी ऐतिहासिक आलोचना' पान.२८३–२८६.

आवेला मान्यखेटमां रही दशमा सैकामां महाकवि पुष्पदन्ते त्यांना सचिवकुलने संतोषवा अपभ्रंशमां जैनपुराणो ऊतार्यां न होत; वळी महासिद्ध सरहे आसाममां रही ए ज साहित्यभाषा अपभ्रंशमां 'दोहाकोश' रच्यो न होत; तेम ज कृष्णपादे बंग प्रदेशमां वसी ते ज अपभ्रंशमां पोताना 'दोहाकोश' नी संकलना न करी होत. आथी एम मानवाने कारण मळे छे के संस्कृत अने प्राकृत (=महाराष्ट्री) नी हारोहार अपभ्रंश एक काळे संस्कृत अने प्राकृत जेवी ज विद्वन्मान्य हती; अने धरसेने तेथी ज तेना संस्कारी बापने संस्कृत अने प्राकृतनी साथे अपभ्रंशना प्रबंध रचवामां निपुणतर कह्यो छे; उद्द्योतने अपभ्रंशने देश्यभाषाथी जुदी पाडी, संस्कृत अने प्राकृतना करतां य तेनी अदकी तारीफ करी छे;[२५] राजशेखरे तेने भव्य कह्यो छे.[२६] एक काळे अपभ्रंश आखा हिंदुस्तानमां संस्कृत अने प्राकृतनी जेम ज काव्यमां वपराती. डॉ. सुनीतिकुमार चेटरजीना शब्दोमां, "A kind of Mainland or S'aurseni Apabhrans'a was a sort of literary speech of Northern India in the closing centuries of the Ist millennium A. C. and some centuries later. The power and prestige of the Rajput courts which had their centres in the midland and the Ganges valley, was responsible for it. The Jainas of Gujarat cultivated it a great deal; and often it became a mixed dialect."[२७] आगळ जतां ते ज जणावे छे के "The Western or S'aurseni Apabhrans'a became current all over Aryan India from Gujarat and Western Punjab to Bengal; probably as a *Lingua franca*, and certainly as a polite language, as a bardic

---

२५. जुओ अ. पा. उद्धरण. १० उपर टिप्पणी. पान. ८६ उपर आने लगतुं टांचण आप्युं छे.

२६. राजशेखर-बालरामायण अं. १. श्लोक. ११.

गिरः श्रव्या दिव्याः प्रकृतिमधुराः प्राकृतधुरः
सुभव्योऽपभ्रंशः सरसरचनं भूतवचनम् ।

२७. Chatterji: O. D. B. L. Intro P. 90.

speech which alone was rgarded as suitable for poetry of all sorts."[२८]

उपरना डॉ. सुनीतिकुमार चेटरजीना शब्दो परथी एम तो तरी आवे छे के अमुक भाषा अमुक एक काळे संस्कृत अने प्राकृतनी जेम अखिल आर्यावर्तमां वपराती हती, अने ते अपभ्रंश हती.[२९] डॉ. चेटरजी, पश्चिमना अन्य विद्वानोने अनुसरी, तेने शौरसेनी अपभ्रंश कहे छे. अत्यारे आपणने उपलब्ध थता साहित्यने आपणे शौरसेनी अपभ्रंश कही शकीशुं ? डॉ. चेटरजी आपणा अपभ्रंशने शूरसेन प्रदेशनुं होवाथी शौरसेनी कहे छे; एटलुं ज नहि परंतु अपभ्रंशनुं पृथक्करण करी कहे छे के "Nagara Apabhrans'a also cultivated by the Jainas, is probably based on the late Middle Indo-Aryan source-dialects of Rajastani-Gujarati, strongly tinged with S'aurseni."[३०] एम लागे छे के 'शौरसेनीनी मजबुत असरवाळी' ए शब्द टीकापात्र छे. आमां प्रो. पीशल, ग्रीअरसन इत्यादिए आ अपभ्रंशने शौरसेनी अपभ्रंश कहेवानी प्रथा चलावी तेने घटित ठरावता ज प्रयास छे. आ अपभ्रंशने कोइ प्राचीन आलंकारिक के वैयाकरणे शौरसेनी अपभ्रंश नाम आप्युं नथी. सिद्धहैमनां केटलांक सूत्रो आने माटे जवाबदार होवा संभव छे. दा. त. सि. हे. ८. ४. ३२९. (टीका) **प्रायो ग्रहणात् यस्यापभ्रंशे विशेषो वक्ष्यते तस्यापि क्वचित्प्राकृतवत् शौरसेनीवच्च भवति;** सि.हे. ८.४.३९६. (उ. ३.) **सवधु करेप्पिणु कधिदु मइं तसु परसभलउ जम्मु । जासु न चाउ न चारहडि न य पम्हट्ठउ धम्मु ॥**; आना करतां य वधारे, सि. हे. ८. ४. ४४६. **शौरसेनीवत् ॥** सूत्रनुं उदाहरणः **सोसि सेहरु खणु विणिम्मविदु, खणु कण्ठि पालम्बु किदु, रहिदु खणु मुण्डमालिए जं पणएण**

---

२८. Chatterji: O. D. B. L. Intro P. 161.

२९. Chatterji: O. C. P. 91 "In the Apabhrans'a period, eastern poets employed the S'aurseni Apabhrans'a to the exclusion of their local *patois*. This tradition that of writing in a Western S'aurseni literary speech was continued in the east even after the eastern languages had come to their own."

३०. Chatterji O. C. P. 90.

**तं नमहु कुसुमदामकोदण्डु कामहो** । आ छेल्ला उदाहरणने निमित्त बनावी, प्रो. पीशल कहे छे, " ( शौरसेनी अपभ्रंशना ) उदाहरण तरीके, सि. हे. ८. ४. ४४६. **कण्ठि पालम्बु किदु रदिए** । शौरसेनी प्राकृतमां **कण्ठे पालम्बं किदं रदिए** । अने आ ज दृष्टान्त महाराष्ट्री प्राकृतमां **कण्ठे पालम्बं कअं रइए** । थशे. एटले शौरसेनी अपभ्रंश एकलुं ज हतुं, ए हेमचंद्रनुं मन्तव्य बरोबर नथी."[३१] हेमचंद्रने अनुसरी, सिंहराज. १२. १. पान. ९५ उपर शौरसेनी प्राकृतने अपभ्रंशनी भित्तिरूप माने छे. मार्कण्डेय प्रा स. १७. १. पान. ११२. उपर **नागरं तु महाराष्ट्रीशौरसेन्योः प्रतिष्ठितम्** अने ते ज प्रमाणे षड्भाषाचन्द्रिका पान.२७६.पंक्ति १-२. मां अभिप्राय दर्शाने छे. आ प्रकारना प्राचीन उल्लेखो परथी अने देशानुसारी प्राकृत अने तेमांथी अवतीर्ण थता अपभ्रंशोना सिद्धांतने रोचक बने एम होवाथी, अपभ्रंशने शौरसेनी अपभ्रंश नाम अर्पवानो पूर्वग्रह बंधायो होय तो कांइ नवीन नथी. हेमचंद्रनुं व्याकरण बारमा सैकानुं छे; अने तेनां दृष्टान्तो अने नियमोमां लौकिक बोलीओ (Local dialects) नी छांट छे.[३२] हेमचंद्रे पोतानां उदाहरणोने सूत्रानुरूप बनाववा घटता फेरफार कर्या होय, तो य नवाई न कहेवाय.[३३] वळी आपणे कुवलयमालानां देश्यभाषानां उदाहरण परथी जोई शकीए छीए के सि. हे. ८. ४. ३९६ मां अपभ्रंश माटे विहित करेली मार्दवप्रक्रिया ( Softening ) देश्यभाषामां वधारे प्रमाणमां मळे छे. प्रकृष्ट अपभ्रंशमां ते देश्यभाषा विशिष्टता

---

३१. Pischel: G. P. Eint. §. 5.

३२. J. R. A. S. 1913. P. 882. Grierson " Apabhrans'a according to Markandeya and Dhakki Prakrit."— 'A great deal of Hem.'s Apabhrans'a is,as is well-known, Old Gujarati, and this shows that his S'aursena or standard Apabhrans'a ( really a mixture of several dialects ) was spoken or at least some of it was spoken in Gujarat. '

३३. हेमचंद्रनां सूत्रो परनां उदाहरणो परथी आ देखाई आवे छे. दा. त. सि. हे. ८. ४. ४३४. परनुं उदाहरण. २.

तरीके आवे छे; परंतु नियमे करीने तो नहि ज.[३४] अपभ्रंशनी स्वरप्रक्रिया अने रूपरचनानुं पृथक्करण करी समजवाथी मालम पडे छे के राजस्थान अने गूजरात बाजुनी देश्यभाषाओमांथी उद्भूत थई, साहित्यमां वपरावानी योग्यता मेळवी, तेना मूलस्थानमांथी आखा उत्तर आर्यावर्तमां ते भाषा प्रसरी. प्रकृष्ट साहित्यभाषा बनतां महाराष्ट्री प्राकृतनो आदर्श पोतानी समक्ष तेणे राख्यो, अने संस्कृतनी असरथी पण ते विमुक्त रही नहि. ज्यां ज्यां ते साहित्यमां वपरावा लागी, त्यां त्यां तेणे त्यांनी लौकिक बोलीओमांथी, पोतानुं मूळ स्वरूप साचवी, अणजाणे असर मेळवी; कारण के संस्कृत जेवी व्याकरणबद्धता अने शास्त्रीयता अपभ्रंश साहित्यभाषा बनी छतां य तेमां हती ज नहि. हेमचंद्रनुं अपभ्रंश, पुष्पदन्तनुं अपभ्रंश अने दोह्राकोशनुं अपभ्रंश[३५] एक ज अपभ्रंश छे; छतां य तेमां प्रान्तीय बोलीओनी असर कांइ ओछा प्रमाणमां नथी आ लौकिक बोलीओनी असरने कारणे तेमां जुदां जुदां अपभ्रंशनुं कचुंबर छे, ए मान्यता खोटी छे.

कोइ पण अपभ्रंश लखाणनो अभ्यास भाषाशास्त्रनी दृष्टए करवो होय, तो आदर्श–अपभ्रंशना अंशो अने देश्यभाषाना अंशो जुदा पाडवा आवश्यक छे. प्रस्तुत ग्रन्थमां एवो व्यापक अभ्यास थवो असंभवित छे; कारण के देश्यभाषाना अंशो तो अणजाणे अने अपवादात्मक रीते ज लखाणमां आवे छे. आ ज प्रमाणे नीचे सिद्धहैममां आपेलां दृष्टान्तोमांथी देश्यभाषाना अंशोनुं तारण आपीने ज अत्रे वीरमीशुं. आ मुद्दा उपर प्रो. पीशलनुं वक्तव्य नीचे प्रमाणे छे,[३६] " सि. हे. ८.४.३२९–४४६. मां हेमचंद्र अपभ्रंशने स्वतंत्र भाषा तरीके चर्चे छे. पण तेना नियमो परथी मालम पडे छे के ते अपभ्रंशना अभिधान हेठळ विविध अपभ्रंश बोलीओने भेगी लावे छे. सि. हे. ४. ३६०. **धुं, त्रं**; ४. ३२७. **तुभ्र**; ४. ३९३. **प्रस्सदि**; ४. १९१. **ब्रोप्पिणु, ब्रोप्पि**; ४. ३४१, ३९४, ४३८ **गृह्णन्ति, गृहेप्पिणु**; ४. ३९९. **व्रासु**. छेल्ला बे दाखलामां ऋ नो विकाराभाव अने वधाराना र्नो आगम ए, सूत्रोमां चर्चेला

---

३४. कुवलयमालानां देश्यभाषानां दृष्टान्तो माटे जुओ **अ. का. त्र.** नी प्रस्तावना पा. १०४–११०; मार्दवप्रक्रिया माटे. जुओ आगळ निम्ननोंध. ३६. Gune. **भ. क.** Intro. पान. १३. §.१३. इ०

३५. **अ. पा.** टिप्पणी. पान. १००–१०१

३६. Pischel: G. P. Eint. §.29.

सामान्य अपभ्रंश जेना नियमो बांधवामां आव्या छे, तेनाथी जुदी भाषानां रूप छे. सि. हे. ४.३९६. **अनादौ स्वरसंयुक्तानां कखतथपफां गघदधबभाः** । नो नियम बीजा घणा नियमो अने दाखलाओनो विरोधी छे. ते ज प्रमाणे सि. हे. ४. ४४६ **शौरसेनीवत्** । नो नियम पण उपर प्रमाणे ज अव्यापक छे. " आ उपरांत रूपरचनामां अने स्वरप्रक्रियामां देश्यभाषानी असरवाळां रूप सि. हे. मां दृष्टिगोचर थाय छे. ते जुदां पाडवा प्रो. याकोबी अने तेमने अनुसरी प्रो. गुणेए[३७] यत्न करेलो छे. छेवटमां प्रो. गुणे एम अभिप्राय दर्शावे छे के हेमचंद्र महाराष्ट्र अने शौरसेन ए बे अपभ्रंशनी भेगी चर्चा करता होय.[३८] परंतु आ अभिप्राय एटलो व्याजबी नथी, शौरसेनो असर जेवी लागती असर, केटलांक विचित्र रूपो ए बधी देश्यभाषानी असर छे; ज्यारे स्वरप्रक्रियामां तो अपभ्रंश मोटे भागे आदर्श महाराष्ट्रीने ज अनुसरे छे. ज्यारे आदर्श अपभ्रंशनुं बाकीनुं घडतर तो शौरसेनी य नहि अने महाराष्ट्री पण नहि एवी त्रीजी कोइ अज्ञात प्राकृतमांथी होय एम लागे छे.[३९]

केटलाक विद्वानो अपभ्रंशनी विविध शाखाओ पाडे छे खास करीने मार्कण्डेय नागर, उपनागर अने व्राचड अपभ्रंशनी मुख्यत्वे चर्चा करे छे. व्राचडना संबंधे ते कहे छे के ते सिंधु देशनो अपभ्रंश छे.[४०] उपनागर[४१] ए तेने अभिप्राये नागर अने व्राचडनो योग थतां थएल अपभ्रंश छे. नागर अपभ्रंश ते मूळगत अपभ्रंश छे. [२] आ ज प्रमाणे नमिसाधु उपनागर, आभीर अने ग्राम्य

---

४२. सदर. पा. १७. सू. १. उपर टीका **अथापभ्रंशभाषासु मूलत्वेन प्रथमं नागरमाह** । जुओ आ उपोद्घातनी निम्ननोंध. २०.

३७. Gune: भ. क. Intro. P. 64.

३८. Gune: भ. क. Intro. P. 64. " Thus side by side with the Mahārāstra (?) Apabhrans'a, he may be said to be treating partially of S'aursena Aprbhrans'a"

३९. खास करीने हेत्वर्थ, अव्ययभूत कृदंत इत्यादिनी रचना; नामनां अने क्रियापदनां रूपो; तेम ज निपातोनो अभ्यास आ ज बतावे छे. वळी जुओ Grierson: Art. on 'Prakrit' Encyclo. Brit. XXII P. 251.

४०. मार्कण्डेयः प्रा. स. पा. १८. सूत्र. १. उपर टीकाः **सिन्धुदेशोद्भवो व्राचडोऽपभ्रंशः** ।

४१. सदर. पा. १८. सू. १८, **अनयोर्यत्र सांकर्यं तद्विष्टमुपनागरम्** । टीका. **अनयोर्नागरव्राचडयोः** ।

ए त्रण शाखाओने उल्लेखी, तेनो निरास करे छे.[४६] टाक्की ए अपभ्रंशनी शाखा हती, एम मार्कण्डेये नोंधेलो पण नहि स्वीकारेलो हरिश्चन्द्र नामे वैयाकरणनो अभिप्राय हतो. राजशेखर टाक्क प्रदेशने अपभ्रंशनो प्रयोग करनार जणावे छे. आम टाक्कीने अपभ्रंशनी शाखा तरीके गणवी सयुक्तिक छे.[४४] आ प्रमाणे देश्य-भाषाओनी असरने लीधे मूळगत अपभ्रंशनी जुदी जुदी शाखाओ पडे, ते स्वाभाविक छे. आथी अपभ्रंशना एकत्वने कोइ रीते बाध आवतो नथी. परंतु प्राचीन देश्यभाषाओने अपभ्रंश तरीके गणवाथी, अपभ्रंशनो विशिष्ट अर्थ लक्षित करी शकातो नथी.

अपभ्रंशनो बे प्रकारनो प्रवाह आपणी भाषाना इतिहासमां देखा दे छे. एक प्रवाह चारणी भाषामां ऊतर्यो छे; ज्यारे बीजो प्रवाह आपणी बोलाती अर्वाचीन भाषाओमां ऊतर्यो छे. जे देश्य बोलीओना प्रतीकरूप अपभ्रंश भाषा हती, तेमांथी हिंदना पश्चिम प्रदेशनी अर्वाचीन देश्यभाषाओ ऊतरी आवेली छे. अने साहित्यमां ते अपभ्रंशनो ज आदर्श लई विकसेली छे.

चारणी भाषा अपभ्रंशना स्वरूपने टकाववा यत्न करवा लागी; पण ते भाषा बीजा समजी शके तेवी चारणोने बनाववी तो रही ज. आ प्रमाणे ते विकृत थई. अपभ्रंशनुं आ विकृत स्वरूप 'अवहट्ठ' तरीके ओळखावा लाग्युं. मैथिल कवि विद्यापतिए 'कीर्तिलता' नामे काव्य अवहट्ठ' भाषामां लख्युं छे.[४५] प्राकृत पिंगलनां दृष्टांतो 'अवहट्ठ' भाषामां छे.[४६] संदेशकरास नामे पंदरमा सैकानी आसपास लखाएलुं काव्य 'अवहट्ठ' भाषामां छे.[४७] विद्यापतिनी भाषा पर टीका करतां डॉ. सुनीतिकुमार चेटरजी लखे छे. "The practice of employing this western literary speech in the eastern tracts continued in Mithila at least as late as the time of Vidyāpati. Vidyapati's compositions in Avahattha have been mentioned before (See. P. 104.); and in his Avahattha, naturally there is a considerable mingling with contemporary early Braja-bhakha forms, as well as Maithili forms; and frequently the influence of Maithili phonology and orthography is

---

४३. नमिसाधुः रुद्रटना काव्यालंकार. २. १२. उपर टीका.

४४. जुओ अ. पा. टिप्पण पा. ३५-३८.

४५. कीर्तिलता (सं. बाबुराम सक्सेना) नागरी प्रचारिणी सभा. पा. ७.

४६. Pischel: G. P. Eint. §. २८.

४७. जुओ अ. पा. संस्कृत निवेदन पा. ७. निम्ननोंध. २३.

noticeable, and at times, the influence also of the classical Prakrit as used in the Sanskrit drama. Here, with Vidyapati, the Avahattha dialect is more or less restticted to court poetry of a formal panegyrical character "[४८] आ प्रमाणे अवहट्ट भाषाने राजदरबारमां उत्तरहिंदुस्तान, बंगाळ, अने गूजरातमां साहित्यभाषा तरीके चारणोए टकाववा यत्न कर्यो. आजनी चारणी भाषा ए अवहट्टनुं ज विकृत रूप छे. जूनां काव्योमां श्रीधरनो 'रणमल्ल छंद',[४९] त्रिभुवनदीपकप्रबंधनो केटलोक भाग,[५०] शालिसूरिना 'विराटपर्व'[५१] (अप्रसिद्ध) नो केटलोक भाग आ प्रकारनी विकृत अवहट्ट भाषामां छे

उक्तिप्रधान देश्यभाषाओ अपभ्रंशनो आदर्श सेवी विकसवा लागी. जे बोलाय तेने आदर्शस्वरूपे लखवुं ए ज आ भाषाओना साहित्यनो मुद्दो होवाथी समयना प्रवाह साथे अपभ्रंशथी ते जुदी पडो अने स्वतंत्र रीते विकसवा लागी. विक्रमना पंदरमा सैकानी आसपास देश्यभाषानुं स्वरूप स्पष्ट थयुं. गुजराती, मारवाडी अने राजस्थानी आ समयनी आसपास ज छूटी पडी.[५२] परंतु अर्वाचीन गूजराती अने बीजी पश्चिमहिन्दुस्तानती देश्यभाषाओनो आत्मा तो अपभ्रंशनो ज रह्यो.

अपभ्रंशे गुजरातीने कडवाबद्ध काव्यशैली आपी; छप्पा, दोहा, चोपाई इत्यादि छंदो आप्या; आख्यानशैलीना रूढिप्रकार आप्या; पोताना अलंकार आप्या; गद्यनो एक प्रकार आप्यो.[५३] गुजरातीनी भाषाबांधणीए पण अपभ्रंश भाषानुं स्तन्यपान कर्युं छे. गूजरातीनो अने अपभ्रंशभाषानो दीकरी अने मानो संबंध छे. आथी ज गूजरातीनी गंगोत्रीनां झरणां अपभ्रंशमां शोधवा साचा भाषाजिज्ञासुने संशोधनना दुर्लंघ हिमालय चडया विना बीजो कोइ आरो नथी.

---

४८. Chatterji. O. D. B. L. Intro. P. 114.

४९. के. ह. ध्रुव 'पंदरमा सैकानां प्राचीन गुर्जर काव्यो (गु. व. सो. नुं प्रकाशन)

५०. पं. लालचंद गांधी संपादित 'त्रिभुवनदीपकप्रबंध' पान. ४५.

५१. आ काव्य 'गुर्जररासावली' (G. O. S.) मां प्रसिद्ध थशे; हजु ए अप्रसिद्ध छे.

५२. Indian Antiquary 1914. Tessitory: Notes on Old Western Rajasthani' Intro. P. 22

५३. जुओ 'बुद्धिप्रकाश' एप्रील-जुन १९३३. पा. १८८–१९६; जुलाइ-सप्टेंबर पा. २३३–२४६; जुलाइ–सप्टेंबर. १९३४. पा. २६७–२६९.

# अपभ्रंशव्याकरण

## १. वर्णमाला

अपभ्रंशभाषामां नीचे प्रमाणे स्वरो अने व्यंजनो वपराय छेः—

§ १. **स्वर**—**अ, इ, उ, ऍ, ओ** (ह्रस्व)
**आ ई ऊ ए ओ** (दीर्घ)

(क) **ऋ** – सि. हे. ८ । ४ । ३२९ । **तृणु, सुकृदु** नोंधे छे; परंतु प्रस्तुत ग्रंथमां तेवां उदाहरणो देखा देतां नथी.

(ख) ं — प्रस्तुत ग्रंथमां अनुस्वारना बे प्रकार मालम पडे छे. एक वर्णात्मक अने बीजो ध्वन्यात्मक. वर्णात्मक. अनुस्वार अपभ्रंशमां अनुनासिकमांथी आव्या छे. एटले करीने तेवा अनुस्वारयुक्त स्वर द्विमात्रिक गणाय छे; ज्यारे ध्वन्यात्मक अनुस्वारयुक्त स्वर एकमात्रिक होय छे दा. त. **वसंतहो** (१.२१.) **भुंभल** (१ २२.) **गंठिवाल** (१.१७.) इ०मां अनुस्वार द्विमात्रिक छे; ज्यारे **मिहुणइं**, (१.८.) **सिहरेहिं** (१.१६.) इ०मां एकमात्रिक अनुस्वार छे.

**सृ** अने **हृ** नी पूर्वे आवेला अनुस्वारो, अनुनासिकमांथी ज आवेला होई, वर्णात्मक अनुस्वार गणवा ज योग्य छे, अने ते द्विमात्रिक छे; जो के आवा अनुस्वारोनो उच्चार पछी आवता ऊष्माक्षरना रागथी ऊष्मित थई जाय छे, एटले ध्वन्यात्मक अनुस्वार जेवो तेनो उच्चार लागे छे.

(ग) **ऍ अने ऑ** (ह्रस्व), इ अने उ ना उच्चारनी लढणथी अस्तित्वमां आव्या छे अने ते एकमात्रिक छे.संस्कृतमां **ए,ऐ केओ,औ** होय अने तेना पछी संयुक्त व्यंजन आवे, तो ते **ए, ऐ** अने **ओ औ** नो **ऍ** अने **ऑ** थई जाय छे. दा. त. **जंतिऍ, तुरंतिऍ** (१. २३.) **निउडॅवि. अवरुंडॅवि** (१. ४६.) **घरॅ, करॅ** ( ३. १८२. परनी निम्ननोंध; २. १२६. परनी निम्ननोंध. ) **दुमयहॉ** (१. ५७.) **पॅक्ख** (इक्ख पण लखाय छे) **सॉक्ख, जॉव्वण** (१. ९७.) इ०

§ २. **व्यंजन** — **क. ख, ग, घ.** ( **कंठय** ) । **च, छ, ज, झ.** (**तालव्य**) । **ट, ठ, ड, ढ, ण.** (**मूधन्य**)। **त, थ, द, ध, न**.(**दन्त्य**) । **प, फ, ब, भ, म.** (**औष्ठ्य** )। **य, र, ल, व** ( **अंतःस्थ** )। **स, ह.** ( **ऊष्माक्षर** ) ।

(क) **ण** अने **न** अनुनासिको हाथप्रतोमां कांई पण भेद वगर लखाया छे; उच्चारणदृष्टिए कयो अनुनासिक ते काळे प्रचलित हशे, ते नक्की करवुं विषम छे. आ पाठावलीमां मुख्यत्वे करीने **ण** योजवामां आव्यो छे.

## २. स्वरविकार

§ ३. ह्रस्वस्वरनुं दीर्घीकरणः—

(क) **र्** + व्यंजन, खास करीने ऊष्माक्षर; ऊष्माक्षर + **य, र, व** के ऊष्माक्षर – थी बनता संयुक्त व्यंजन पूर्वे रहेलो ह्रस्व स्वर घणी वार दीर्घ करवामां आवे छे अने संयुक्त व्यंजनने सादा व्यंजनमां फेरवी नाखवामां आवे छे. दा त. **णीसारिउ**=सं **निःसारित**; (१.५) **कासु**=प्रा. **कस्स**; (५.९८.) **पेक्खीहिमि**=**प्रेक्षिष्ये**, (११.५) **सहोहिमि**=**सहिष्ये**, (११.६), **वीसास**=**विश्वासः** इ०

(ख) केटलीक वार दीर्घीकरण मात्र भाषाविशिष्टताने ( Dialectal Peculiarity) अंगे ज होय छे. **दाहिण**=**दक्षिण**. (६.५३.) **धूय**=**दुहित्**, (५.२७१.) **जीह**=**जिह्वा**. (१.१२२.) **पईहर**=**प्रतिगृह**, (१.१३.) **सूहव**=**सुभग**. (५.८८.)

(ग) अपभ्रंशमां केटलीकवार छंदने अंगे ह्रस्व स्वरनुं दीर्घीकरण थाय छे; तेम ज संबोधनविभक्ति एकवचनना अंतनो स्वर दीर्घ कराय छे. दा. त. **कुसुमामंजरिधय साहारहिं** ( १. १७. ) **रे रे हंसा किं गोविज्जइ** ( ११. १९. )

(घ) अनुस्वारयुक्त ह्रस्व स्वर पछी **र् म्, श्, ष्** के **ह्** आवे तो ह्रस्व स्वरनुं दीर्घीकरण थाय छे: अनुस्वारनो लोप थाय छे. **वीस**=सं.**विंशति**, अने (५.२५२. ) **सीह**=सं. **सिंह**. (२.५७)

दीर्घीकरणमां मूळगत सिद्धांत स्वरमात्रानुं प्रमाण जाळववानो होय छे. काव्यमां छंदोमेळ खातर मात्रानी तूट पूरी लेवा पण दीर्घीकरण अपभ्रंशमां थाय छे. एटले के उपर जणावेला नियमो उपरांत पण दीर्घीकरण अपभ्रंशमां देखा दे छे.

§ ४. दीर्घस्वरनुं ह्रस्वीकरणः—

(क) सि. हे. ८ । १ । ६७. मां केटलाक शब्दो गणावे छे जेमां दीर्घस्वरनो ह्रस्व थाय छेः—प्रो. पीशलने अभिप्राये तेनो शास्त्रीय नियम वैदिक स्वरभारने अवलंबे छे. [१] जो स्वरभार दीर्घस्वरनी पूर्वना स्वर पर होय तो–

**उक्खय**=सं. उत्खात ( सि.हे.८.१.६७. ) **विरुअ**=सं. **विरूप** (२.११०) इ० [१] जो पछी आवता स्वर पर स्वरभार होय तो **ठविय**=सं. **स्थापित**, (५.१७८) **कुमर**=सं. **कुमार** ( सि.हे. ८.१.६७ ) **गहिय**=सं. **गृहीत**, (४.२२६.) **गहिर**=सं. **गभीर** (३.१५२) इ. [विस्तृत चर्चा माटे जुओ§३२.]

(ख) केटलीक वार अपभ्रंशमां दीर्घ स्वरनुं ह्रस्वीकरण मात्रामेळ खातर के कोइ अज्ञात उच्चारपरंपराने अनुसरीने पण करवामां आव्युं होय छे.

(ग) संयुक्त व्यंजननी पूर्वे आवेला दीर्घस्वरो सामान्य रीते ह्रस्व थाय छे; अने **ए** नो इ अने **ओ** नो उ थाय छे. दा.त. **रज्ज**=सं. **राज्य**(१.३०) **फग्गुण**=सं. **फाल्गुन** ( १.५. ), **अप्पा**=सं. **आत्मा** (६.१४.),**नरिंद**=सं. **नरेन्द्र** (६.१४६.), **अत्थाण**= सं. **आस्थान** (३.१४६.).

(घ) संयुक्त व्यंजन पूर्वेना **ए** अने **ओ** ह्रस्व थाय छे. दा. त. **लए-प्पिणु** (१.१०६) **परोप्परु** ( ३ ३४ ); परंतु आ ह्रस्व **ए** अने **ओ** तेनी पछी आवता संयुक्ताक्षरना अन्वये द्विमात्रिक ज थाय छे.

(च) [१] सामान्य रीते स्त्रीलिंग आकारांत अने इकारांत नामोना **आ** अने **ई** ह्रस्व थइ जाय छे.दा.त. **सीय**=**सीता** (२.२४.), **तियड**=**त्रिजटा** (२ ३४.), **दोवइ**=**द्रौपदी** (३.६१.), **चिंत**=**चिन्ता** (३.६.). **कह**=**कथा** (३.८.), **वेणि**=**वेणी** (३.२४.), **समि**=**शमी** (३.३५.),[२] छंदोमेळ खातर कोइ वार **आ** के **ई** राखवामां आवे छे; पण आनां दृष्टान्तो ओछां छे. [३] केटलाक निपातोना अंत्य दीर्घ स्वर ह्रस्व करवामां आवे छे: दा त. **म**=**मा**, (१३.१२.) **विण**=**विना**, (९.४.) **व**=**वा** (९.४.) इ.

(छ) कोइ वार अन्तोदात्त शब्दोमां असंयुक्त व्यंजननो पूर्ववर्ती दीर्घ स्वर ह्रस्व थई जाय छे अने व्यंजन द्वित्व पामे छे. दा. त. **जोव्वण**=**यौवन** (१.९७.) **पेम्म**=**प्रेमन्** , (५.२२.) **दिज्जइ**=**दीयते**, **तेल्ल**=**तैल**. (९.४२.) आ नियमने अनुसरी **इक्क** के **एक्क**=**एक** समजावी शकातो नथी. [जुओ § ३२ ]

§ ५. **ह्रस्वस्वरनुं सानुस्वारत्वः**—

[§ ३ (क)] मां दर्शावेला संयोगोमां कोइ वार ह्रस्वस्वर दीर्घ थवाने बदले सानुस्वारत्व प्राप्त करे छे. **दंसण**=**दर्शन** (७.६०.), **फंस**=**स्पर्श**, (६.८०), **अंसु**=**अश्रु** (६. १०४.) इ०

§ ६. सं अ=अपभ्रंश. इ, उ, ए

(क) अ=इ । दा. त. किविण=सं. कृपण (१.१२८.) चरिम=सं. चरम, पिक्क=सं. पक्व (६.८२.), इंगाल=अङ्गार, गग्गिर < गग्गर= गद्गद (२.५५.) [§ २८. (छ)] ईसि=ईषत् ;किह, जिह, तिह=कथा, * यथा, तथा; वरि=वरम् (४.१९४.)

(ख) अ=उ । पूर्वे के पश्चात् औष्ठ्य होय तो दा. त. वुत्त=वक्त * (१. ९५.), मुणइ=मनुते (४.२२३.) झुणि=ध्वनि (४.१२०)

(ग) अ=उ । [१] अकारांत नामने तथा केटलांक सर्वनामना षष्ठी एकवचनने अंते: दा त. सुअणस्सु, पिअस्सु (सि. हे. ८ । ४ । ३३८, ३५४); तासु, मज्झु, तुज्झु, महु, तहु [२] आज्ञार्थ बीजो पुरुष एकवचन अने बहुवचनः दा. त. एकवचन भणु, लग्गु, छंडु; बहुवचन, करहु. [३] ते ज प्रमाणे वर्तमानकाळ बीजो पुरुष बहुवचन करहु=कुरुथ [४] केटलांक क्रियाविशेषण अने निपातोने अंते छुड्ड, पुणु, जेत्थु, तेत्थु, अज्जु, जिमु, तिमु ( ७, ५९—६० ).

(घ) अ=ए । आ फेरफारमां अ नो देखीती रीते ए थाय छे; परंतु ए ना मूळतत्त्व तरीके अ नथी. एत्थु=अत्र (खरी रीते इत्था); वेल्लि=वल्ली (४.२६६.) [ खरी रीते विल्ली * (५.९९.) जुओ G P 107 ]; हेट्ठा= अधस्तात् (४.१०३) इ०

§ ७. आ=अ, उ, ए

(क) आ=अ । [ § ४ (च) ]

(ख) आ=उ । उल्ल=आर्द्र; आमां खरी रीते उ < आ नथी. (सदर ग्रंथ टिप्पणी. १. ८२. )

(ग) आ=ए । मेत्त=°मात्र, परिहेसमि=परिधास्यामि (३. २२.) देइ< √दा(२.११); लेइ< √ला (१.२).

§ ८. इ=अ, उ, ए, ँ.

(क) इ=अ । इच्छउ=इच्छिक (१.७९.) पडिवत्त=प्रतिपत्ति (१.१०६) (सि. हे. ८ । १ । ८८-९१)

(ख) इ=उ । उच्छु=इक्षु ( १. ९. )

(ग) इ=ए । संयुक्त व्यंजननो पूर्वगत इ. दा. त. चेन्ध=चिह्न, एत्थु=इत्था (१२.३०), बेल्लु=बिल्व (सि.हे. ८.१.८४.)

(घ) इ=ॲ । लेखनना प्रकार इप ज दा. त. करेवि के करिवि, जयहरे सप्तमी एकवचन, के जयहरि=जगद्गृह इ०

§ ९. ई=अ, आ, इ, ऊ, ए, ॲ

(क) ई=अ । हरडइ=हरीतकी (सि.हे.८.४.९९)

(ख) ई=आ । कम्हार काश्मीर (सि.हे.८.४.१००)

(ग) ई=इ । [जुओ § ४]

(घ) ई=ऊ । विहीन=विहूण (१. १३१)

(च) ई=ए । एरिस, एरिसिअ=ईदृश (४.२६८)

(छ) ई=ॲ । खेॅडुअ=क्रीडा(३.१९४.)

§ १०. उ=अ, इ, ओॅ, उ

(क) उ=अ । जो शब्दना प्रथम अक्षर अने बीजा अक्षरमां उ स्वर होय तो सामन्यतः प्रथम उ नो अ २इ जाय छे. दा. त. गरुअ=गुरुक (४.१३१), मउड=मुकुट (६.१०३)मउलइ=मुकुलयति (६.४०) सोमाल <सउमार*<सं. सुकुमार (६.९७);

(ख) उ=इ । पुरिस=पुरुष (५.९.)

(ग) उ=ओॅ । उ ने अनुवर्ती जो संयुक्त व्यंजन होय तो उ नो ओॅ थाय छेः दा. त. मोॅग्गर=मुद्गर, पोॅत्थय=पुस्तक, कोॅन्त=कुन्त (५.७०.)

§ ११. ऊ=ए, ओॅ, ओ

(क) ऊ=ए । णेउर=नूपुर (१.१४.)

(ख) ऊ=ओॅ । मोॅल्ल=मूल्य

(ग) ऊ=ओ । थोर=स्थूर* (सं. स्थूल) (३.१०६) तंबोल=ताम्बूल (१.५९)

§ १२. ऋ=अ, इ, उ, ए, रि, ऋ

(क)=अ । कसण=कृष्ण(३.२४), कइढ=कृष्ट (१.१३४); वइढ=वृद्ध(१.१३५), कय=कृत (५.३४) अच्छइ=ऋच्छति ( २.९३. )

(ख) ऋ=इ । किय=कृत (१. १.) दिट्ठि=दृष्टा (१.७१.) हिअअ=हृदय (१.२८) सिंग=शृंग (४.६०)

(ग) ऋ=उ । पुहवि=पृथ्वी (११.५), कुणइ=कृणोति * (१० २४) पाउस=प्रावृष्, (६.१५९) मुणाल=मृणाल (१०.५५.) वुड्ढत्त=वृद्धत्व (१.१३१)

(घ) ऋ=ए । गेह=गृह; गेण्हइ=गृह्णाति (१४ २)

(च) ऋ=रि । रिच्छ=ऋक्ष (२.५८), रिद्धि=ऋद्धि (१.९८)रिसि =ऋषि (२.१८३)

(छ) ऋ=ऋ । [§ १. (क)]

§ १३. ल=इल

ल=इल । किलित्त=क्लप्त (सि. हे. ८ । १ । १४५ ।) किलिन्न= क्लिन्न * ( सि. हे. ८ । १ । १४५)

§ १४. ए=इ, ऍ [ जुओ § १. (ग) ] ई

(क) ए=ई । लीह=लेखा (३. १२१.); परन्तु लिह (२.९४)

§ १५. ओ=उ. [जुओ § १. (ग)]

(क) अपभ्रंशमां शब्दान्तगत ओ नो उ थई जाय छे एटलुं ज नहि पण मध्यगत ओ नो उ थई जाय छे. दा. त. रामु< प्रा. रामो <सं. रामः । विउएं=सं. वियोगेन (सि. हे । ८ । ४ । ४१९ उदाहरण. ५.)

§ १६. ऐ=ऍ [जुओ § १. (ग)], ए, अइ

(क) ऐ=ऍ । अवरेक्क=अपरैक (३. ४५.)

(ख) ऐ=ए । णेमित्तिय=नैमित्तिक (५.९२.) पेसुण्णउ=पैशुन्य (५.८२)

(ग) ऐ=अइ । दइव=दैव (३. १०२) कइकइ (३.६६)

§ १७ औ=ऑ [जुओ § १. (ग)], ओ, अउ.

(क) औ=ऑ । जोव्वण=यौवन, (१.९७)सोक्ख=सौख्य (२.२६)

(ख) औ=ओ । ओसहि=औषधि (५.११८)

(ग) ओ=अउ । पउर=पौर(५. ३८), कउरव=कौरव ( ५.२१७ ) रउद्द=रौद्र (५.५६.) कउल=कौल (५. ६२). सउरी=शौरि (५.२८२.)

§ १८. विप्रकर्षस्वर [Anaptyxis]

(क) अ । दीहर=दीर्घ (५.१०१), समसाण=श्मशान (३.३७) सलहइ=श्लाघते

(ख) इ [१] संयुक्त व्यंजनमां एक अनुनासिक होय तो सिविण=स्वप्न (५.३३)

[२] संयुक्त व्यंजनमां एक य् होय तो दा. त. आरिय=आर्य, अच्छरिय=आश्चर्य

[३] संयुक्त व्यंजनमां एक र् होय तो दा. त. किरिया=क्रिया, फरिस=स्पर्श, वरिस=वर्ष (५.९१.), सिरि=श्री (१.१३.), अमरिस=अमर्ष (२.६१.), तम्बिर=ताम्र, (६.३८) हरिसिय=हृष्ट (१.४१)

[४] संयुक्त व्यंजनमां एक ल् होय तो दा. त. किलेस=क्लेश (१.४), किलिण्ण=क्लिन्न(५.२२.) अम्बिल=आम्ल

(ग) उ। संयुक्त व्यंजनमां एक ओष्ठ्य के ब् होय तो दा. त. सुमरइ=स्मरति (४.३१५)

§ १९. स्वरलोप

(क) आदिस्वरलोप [Aphaeresis]—[१] स्वरभार विनानो आदि स्वर सामान्यतः लुप्त थाय छे. दा. त. हउं= अहकम्* (३.१५.) हिट्ठा=अधस्तात् (४.१०३.),वलग्ग=अवलग्न (१.७५),रण्ण=अरण्ण (५.१८४) रविंद=अरविंद (६.४०) बइसइ=उपविशति (१३.६) वरि=उपरि (७.१२३)

[२] केटलाक निपातोनो आदिस्वर लुप्त थाय छे: दा. त. तो=अतः (३.१४.) वि=अपि (३.६८.), व=इव (६.१०१)

[३] संधिने कारणे आदिस्वरनो लोप [जुओ §२३.(छ)] छन्दना कारणे पण तेनो लोप थाय छे [जुओ. अ.पा. (टि.) १.३६.]

(ग) अन्त्यस्वरलोप तृतीया एकवचनना इन=अपभ्रंश एँ थतां अन्तनो अ लुप्त थाय छे. रामें=रामेण

(घ) मध्यस्वरलोप [Syncope] मध्यगत स्वरभार विनाना स्वर—विशेषतः अ लुप्त थई जाय छे. दा. त, पोप्फल=सं. पूगफल [जुओ टिप्पणी १. ३६. सदर ग्रंथ] समुण्णोण्ण=समुण्णओण्णअ [६. ३१] भविसत्त=भविस्सअत्त (६.२)

§ २०. आदिस्वरागम [Prothesis of Vowels]

**इत्थि=स्त्री** । आदिस्वरागम जूनी गूजरातीमां अने अर्वाचीन बोलाती गूजरातीमां वधारे प्रमाणमां देखा दे छे.

## § २१. स्वरव्यत्यय [Epenthesis]

**केर** (२.२९)<**काइर** * -**काइरिअ** * -**कारिअ**<सं. **कार्य** ।
**पेरंत** <**पइरंत**-**पइरिअंत**-**परिअंत** <सं **पर्यन्त** ।
**बंभचेर** <**बंभचइर** * -**बंभचरिय** <सं. **ब्रह्मचर्य**।

गूजरातीमां 'घेर'=**घरइ** नो दाखलो आज प्रकारनो छे.

## § २२. स्वरराग [Umlaut]

'स्वरराग' एटले शब्दमां अग्रे आवेला स्वरने तेनी पछी आवता स्वरनो राग-असर लागे; आ विकारनां दृष्टान्तो जूनी गूजरातीमां बहु मोटा प्रमाणमां छे. अपभ्रंशमां दा.त. **करिमि=करमि** (११.५१), **करिइ=करइ**, **उच्छु=इक्षु**(१.९.) **सिविण=स्वप्न** ( ५. ३३.) **साहार=सहकार** ( १. १७ ) **अप्पुणु=आत्मानं** (५. ६८.)

## § २३. स्वरसंधि

(क) बे समान स्वरोनी संधि थतां एक दीर्घ स्वर बने छे दा. त. **कल्लोल+आवासहिं=कल्लोलावासहिं** (१. १८.) **केस+आवलिउ=केसा-वलिउ=केसावलिउ** (१. ३३)

(ख) सामान्यतः **अ** (ह्रस्व के दीर्घ) + **इ=ए**; **अ** ( ह्रस्व के दीर्घ ) +**उ=ओ** दा. त. **थणोवरि** (१. ७३.)

अपवादः—परंतु **इ** के **उ** पछी संयुक्त व्यंजन आवे तो **अ** नो लोप थाय छे दा. त. **कुसुमणहु+उज्जलु=कुसुम-णहुज्जलु** (१. १२) **अध्धुम्मीलिउ** (१. ४७) **सुरिन्दु** (१. ४५) **वण्णुज्जलु** (१. ६५.)

(ग) **अ+ए** के **ओ** मां **अ** नो लोप थाय छे. दा. त. **कीर+ओलिउ कीरोलिउ** (१. ३८.)

(घ) **इ, उ** (ह्रस्व के दीर्घ)=असमान स्वर होय तो सामान्यतः अप-भ्रंशमां संधि थती नथी. (सि. हे. ८ । १ । ६ ।) दा त. **तरंगिणीउ अवर -उहच्च** (१.३१.)इ०

अपवाद—उपसर्गना इ के उ नी संधि संस्कृतने अनुसरीने ज थाय छे. **पज्जत=पर्याप्त** (१. ८१.)

**(च)** व्यंजनलोप पछी अवशिष्ट स्वरने **उद्वृत्त स्वर** कहेवामां आवे छे. आ प्रकारना उद्वृत्त स्वरनी संधि पूर्वे आवेला स्वर साथे थती नथी. (सि. हे. ८। १। ८।) दा. त. **महुअर, बउल,**

अपवादः—परंतु आवा उद्वृत्तस्वरोनी क्वचित् संधि पण थाय छे (सि. हे. ८। १। ८। टीका) दा. त. **साहार** <**सहआर** <सं. **सह·कार**(१.१७); **दवणा** <**दवणअ** <सं. **दमनक** (१. १७) **मोर** <**मऊर** <सं. **मयूर** (११. ५३) **अंधार** <**अंधआर** <सं.**अंधकार**. (२.१२३)

**(छ)** अ+असमान स्वर होय तो केटलीक वार अ नो लोप थाय छे दा.त. **राउल** <**राअउल** <**राउल**(३.१९६.) **देउल=देवकुल** (७.८३.)

**(ज)** सामान्यतः वाक्यनां मूलगत के उद्वृत्त स्वरोनी संधि थती नथी.

अपवादः—**णत्थि** <सं. **न अस्ति** (३. १२४)

**(झ)** आ बधा संधिना नियमो सामान्य छे; अने अपभ्रंशमां छंद भाषानी लढण, अने एवी अनेक असरोने परिणामे संधिमां शिथिलता व्यापे छे.

## § २४. य अने व श्रुति

सि. हे. ८। १। १८०। **अवर्णो यश्रुतिः** टीका उपरथी एम प्रतीत थाय छे के व्यंजनलोप पछी अवशिष्ट **अ** अने **आ** नी मध्ये **य** श्रुति मूकवामां आवती; जो के **क्वचिद् भवति** कही इ अने अ वच्चे पण ते मूकवामां आवे छे. **पियइ=पिबति. प्राकृतसर्वस्व** मां **मार्कण्डेय** एक अवतरण टांके छेः **अनादौ अदितौ वर्णौ पठितव्यौ यकारवदिति पाठशिक्षा**। परंतु हाथप्रतो अने खास करीने जैनहाथप्रतो सि. हे. ना आदेश करतां य आगळ जाय छे. अने उद्वृत्त स्वर देखतां ज लुप्तता (hiatus) ढांकवा **य** मूकी दे छे. दा. त. **उयय** (उ+अय)=**उदय**(१.१.), **किय** (कि+अ) =**कृत**, (१. १) **केयार** (के+आर)=**केदार** (१. १७) **चूय** (चू+अ) =**चूत** (१. ३७) इत्यादि वळी एम पण नथी के आ नियम नियमित रीते अळवाय छे; कोइ कोइ वार एमने एम उद्वृत्त स्वर श्रुति विना पण मालम पडे छे.

अपभ्रंशमां **व** श्रुति देखा दे छे. सामान्य रीते उ अने ओ पछी अ

आ आवतां व श्रुति मूकाय छे. स्वरराग (Umlaut) नो सिद्धांत पण व श्रुतिना आगमनमां कारणभूत होय तो एमां कांइ शंका जेवुं नथी. खूबीनी वात ए छे के य के व श्रुतिनो खास मेळ ज रहेतो नथी. लेखकना छंद पर ज ते अवलंबे छे. **लायइ** (२. १०.) **लावइ** (३. ५३.) **रुवंति** (२. ५६) **सूहव=सुभग** (५.१५.) **लायणु=लोचन** (६ ५४) **सभूव=सभूत** (३ ३६), **सभुवंगमिय=सभुजंगा** (३. ३६) **मल्लिव=मल्लिका** (१.१०१) धणवालनी भविसत्तकहामां पण आम ज छे. (जुओ **भविसत्तकहा** G.O.S. XX Intro.P. 12); Les Chants Mystique de Kanha et de Saraha (Ed. Shahidulla Intro. Chapitre III)

## ३. असंयुक्तव्यंजनविकार

§ २५. सामान्य रीते बधा य आदि व्यंजनो अविकृत रहे छे.

अपवादः—परंतु केटलीक वार भाषानी विशिष्टता तरीके केटलीक वार फेरफार थाय छे. दा. त. **दिहि=धृति** (३. १६) **धूय=दुहिता** (५.२७१) आदि यनो अपभ्रंशमां ज थाय छे. **जाइ=याति**(२.६३), **जमल=यमल**(३.२७.)

§ २६. **स्वरीभवन** (Vocalization)

एक ज शब्दमां स्वरद्वयान्तर्गत क्, ग्, च्, ज्, त्, द्, प्, ब्, य्, व् नो प्रायः लोप थाय छे. (सि. हे। ८ । १ । १७७) **गअ=गत, जाइ=याति, णउल=नकुल** इ०

आ प्रमाणे लुप्त थएल व्यंजननी लुप्तता ढांकवा य, व, श्रुतिनो उपयोग करवामां आवे छे. (जुओ § २४.)

§ २७. **महाप्राणकरण** (Aspiration)

एक ज शब्दमां स्वरद्वयान्तर्गत ख्, घ्, थ्, ध्, फ्, भ् नो प्रायः ह् थइ जाय छे. दा. त. **साहा=शाखा, जयहरे=जगद्गृहे, पिहुल=पृथुल, अहर=अधर, मुत्ताहल=मुक्ताफल, सोह=शोभा.** आ प्रमाणे Disaspiration (**महाप्राणत्याग**) पण क्वचित् दृष्टिगोचर थाय छेः दा. त. **विच्छोअ** <**विच्छोह=विक्षोभ** (४.१७४;५.७७) **उच्चिट्ठ=उच्छिष्ट** (६.२०८)

§ २८. **मार्दवप्रक्रिया** (Softening)

शब्दमां स्वरद्वयान्तर्गत क्, त्, प् नो ग्, द्, ब् थाय छे. (अनादौ

**स्वरसंयुक्तानां कखतथपफां गदधबभाः** । सि. हे. ८ । ४ । ३९६ ।) आज प्रमाणे ट् नो ड् अने ट् नो द् थाय छे. दा. त. **मयगल=मदकल**, (५.११७) **विप्पियगारउ=विप्रियकारक** (२.१२१) **सावराह=सापराध**, **पव=प्रपा** (१.९), **मंडव=मंडप** (१.९) इ०

(अ) त्=द् शौरसेनीनी असर होय तो ज देखा दे छे; परंतु साहित्यनुं प्रकृष्ट अपभ्रंश सामान्यतः प्रकृष्ट प्राकृत–महाराष्ट्रीने अनुसरे छे. सि. हे. ८ । ४ । ३९६ । **कधिदु=कथित** । सि. हे. ८ । ४ । ४५५, ३७२ । **आगदो** सि. हे. ८ । ४ । ३६० **करदि चिट्ठदि** । इ० सि. हे. ना अपभ्रंशना दृष्टांतमां आ प्रकारनी शौरसेनीनी छाया तेम ज तत्कालीन बोलीनी छाया प्रकृष्ट अपभ्रंशमां भळेली आवे छे तेनुं कारण ए ज छे के लौकिक प्रचारमां आवेला दुहा इत्यादिमांथी आ उदाहरणो हेमचन्द्रे लीधेलां छे. **ख्=घ्**, **थ्=ध्**, **प्=ब्**, **फ्=भ्** नी बाबतमां तेम ज समजवुं. हेमचंद्रे आपेलां उदाहरण सिवाय बीजे आवा विकारनां दृष्टांत दुर्लभ छे.

प्रकृष्ट अपभ्रंश शौरसेनी के लौकिक बोली करतां महाराष्ट्रीने वधारे अनुसरे छे; एटले softening (§ २८.) करतां § २६. अने § २७ ने वधारे अनुसरे छे. गूजरातीमां स्वरीभवननी साथे साथे मार्दवप्रक्रिया देखा दे छे; अने एम कहीए तो पण चाले के मार्दवप्रक्रियानां उदाहरणो कदाच स्वरीभवन करतां वधारे प्रमाणमां नीकळे.

(ब) ट्=ड् । **तड=तट** (१.९२), **कवड=कपट**(५.२८), **सुहड=सुभट** (३.९७.) **कडक्ख=कटाक्ष** (१.५०), **पडिजंपइ=प्रतिजल्पति**

ठ=ढ् । **मढ=मठ** (५. २३०) **वीढ=पीठ** (६.१४०.) इत्यादि.

(क) प्=व् । **दीव=द्वीप** (६. २.) **पाव=पाप** (६. १४.) इत्यादि.

§ २८. **सोष्मव्यञ्जननिधान** (Aspiration of Mutes)

(अ) क्=ख् । **नोक्खि** <**नवक्खी=नव+क** (स्वार्थे) (३.१८४); **खेलइ=क्रीडति**; **खप्पर=कर्पर** (६. ४२.)

त=थ् आ प्रमाणे बनता थ् नो ह थाय छेः **भारह** <**भारथ** * <**भारत**, (५.९९)**वसाह** <**वसथि** * <**वसति**

प्=फ् । फासुय=स्पार्शुक (१.३६.);फंसइ=स्पृशति(६.८०); फरसु=परशु

(आ) तृतीय व्यंजनने बदले चतुर्थ सोष्मव्यैजन प्रायः मूकातो नथी; अपवादः—

[१] केटलांक दृष्टांतो हू व्यजनना स्वरभारने अंगे थता विचलनने लीधे बने छे. दा. त. धूय (५. २७१.) <दुहिय (३. ९३.) <दुहित्; परंतु दिहि <धृति (३.१६.) अथवा बहिणि <भगिनी; घेप्पइ< √गृह् (१०. ६०.); चिंध=चिह्न (५. ७.) फंदइ=स्पंदते (६. ५४.) घरिणि= गृहिणी (४. ३१५.)

[२] केटलीक वार विस्मृत स्वरभारने लीधे उदभवे छे दा. त. भिसिणि= बिसिनी (१. ५३.)

§ ३० दन्त्य व्यंजनने बदले कोइ वार मूर्धन्य व्यंजन मूकवामां आवे छे.

त्=ट्=ड् [§ २८. (ब)] । पडिउ=पतित ( २ १८०. ) पडाय= पताका (२. ८९.) पडिवत्त=प्रत्तिपत्ति (१. १०६.)

थ्=ढ् । गंठिवाल=ग्रंथिपाल (१. १७.)

द्=ड् । डहइ=दहति (२. २७.) खुडिय=क्षुदित ( ६. १५१. ) डोलइ=दालायते (४. २४९.) डुक्कर=दुष्कर (२. ६२.)

ध्=ढ् । दिवड्ढ=द्वयर्ध (६. ६०.) वियड्ढ=विदग्ध (१. ९१.) वीसढ <विस्सड्ढ * <विस्सिड्ढ * =विस्रब्ध (५. ५५.)

§ ३१. नीचे प्रमाणे व्यंजनोना खास फेरफारो ध्यानमां लेवाः—

(क) छ्=च्छ् । स्वरद्वयान्तर्गत छ् नो च्छ् थाय छे; परंतु शब्दनो आदि छ् अविकृत रहे छे. दा. त. छण्ण (१. ३.) छत्तिय (५. १२४)

(ख) ज्=य् । याणिमो=जानीमः (६. ९४) मागधीनी असर.

ज्=ञ् । (षि. हे. ४ । ४ । ३९२ ।) वुञ्चइ=व्रजति; खास बोलीमांथी हेमचंद्रे लीधेलो होवो जईए; कारण के अपभ्रंश साहित्यमां एनो प्रयोग देखा देतो नथी.

(ग) ट=ड् [§ २८. (ब)]=ल, कडियलि=कटीतटे ( ५. १६. )

(घ) ड्=ळ् । क्रीडा=कील (५. ४२.) सोलस=षोडश, तलाउ= तडाग (१. ११८.) नियल=निगड (१. ८.) पीलिय=पीडित (१. ९.)

(च) त्=ड् [§ ३०.]=ल्। अलसी=अतसी (सि.हे. ८। १। २११।) विज्जुल्लिआ = विद्युतिका * (२.१२४), फुल्लइ <फुड्डइ <फुट्टइ=स्फुटति (१३. ५२.)

त्=ड्=र्। सत्तरी=सप्तति (सि. हे. ८। १। २१०)

(छ) थ्=द् [§ २८]=ढ [§ २८. (ब)]। सिढिल=शिथिल. (सि. हे. ८. १. १२५.) पढम=प्रथम (२. ७१.)

(ज) [१] द्=ड्=र्। एयारह=एकादश (१. ५१.) बारह=द्वादश (१. ५२.); (सि. हे. ८। १। १२०) मां करली=कदली, गग्गर=गद्गद (२. ७९) परन्तु (२. ५४.) मां गग्गिर [§ ६. (क)] (सि. हे. ८। १। २१९।)

[२] द्=ड्=ल। मलिउ=मृदितं (५. १८८) मलइ=मृद्नाति (३. १००) पलित्त=प्रदीप्त (सि. हे. ८। १। २२०।) (६. १०४). पलिप्पंत=प्रदीप्यमान (५. ५८.) कालंबिणि=कादंबिनी (५. १३.)

(झ) प्=व् [§ २८.] = म् सुमिण<सुविण=स्वप्न; पामइ <प्राप्नोति; मि <वि [§ १९. (क) [१] ]=अपि (१. ५७.) दुमय=द्रुपद (३. ४९).

(ट) ब्=म्। बोलीने अनुस्वरी, सि. हे. ८। १। २३९ कमंध=कबंध; तंमालु<तंबोलु=ताम्बूल (१. ३०.)

(ठ) म्=वँ के व्। स्वरद्वयान्तर्गत म नो वँ थाय छे (सि. हे. ८। ४। ३९७।) जिव <जिवँ <जिम (३. १०.); सँवारिउ=समारचित (६. १५.) केम्व (५. २१८.) परंतु रवण्ण=रमण्य* (१.३.) दवणा=दमनक (१.१७) पणविवि=प्रणम्य (५.१०७.) सवण=श्रमण (५. २०८.) ध्वन्यात्मक अनुस्वारनी केटलीक हाथप्रतोमां अवगणना थवाने परिणामे वँ ने बदले व् मालम पडे छे; अने आ अवगणना एटले सुधी पहोंचे छे के म् मांथी आ प्रमाणे परिणत थएला व् नो उ थई जाय छे दा. त. अवरउहउ=अपरमुखिन्यः (१. ३१.) भउहउ <भ्रमुकाः * (१. ३१.) णाउं=नाम (६. १८.)

अपवादः—केटलीक वार आदि म् नो व् थई जाय छेः दा. त. **वम्मह=मन्मथ** (५. १४.) **वम्म=मर्मन्** (५. १४; १. १९.)

(ड) [१] **य=ज्** । शब्दना आदि य् नो ज् थाय छे. दा. त. **जइ=यदि** (२. ३७.) **जसु=यस्य** (७. ७९.) **जूह=यूथ** इ०

[२] य्=ज्ज् कर्मणि प्रयोगनो य=ज्ज् (पूर्वे जो दीर्घ स्वर होय तो ह्रस्व करी) करवामां आवे छेः दा. त. **किज्जइ=क्रीयते**; (५.३५.) **दिज्जइ=दीयते**

[३] **य्=व्**, अ. य् अने व् श्रुतिने परिणामे य् नी केटलीक वार अ के व् जेवी ज प्रक्रिया थाय छेः दा. त. **आयइं** (३. ७.) **आविज्जइ** (३. १३२.) **मऊर=मयूर** (६. ३२.) **हियउ=हृदय** (२. ५६.)

[४] **य=इ** संप्रसारण प्रक्रियाने लीधे तो आ विकार थाय छे एटलुं ज नहि, परंतु उच्चारणनी समानताने लीधे लहियाओ य ने स्थाने इ मूकतां खचकाता नथी. दा. त. **पइंपिउ=प्रजल्पितं** (२. १९७.) केटलीक वार लहियाओ आवा इ ने स्थाने ए पण मूके छे **देवए** (२. ७०) **आणए** (५. २६७)

(ढ) **र्=ल्** । **चलण=चरण** (६. ५.) **सालण=स्मरण** (६. १२.) **चालीस=चत्वारिंशत्** (५. २५०.) **सामिसाल=स्वामिसार** (६. १३९.)

(ण) **ल्=ण्** । **णिडाल=ललाट** (१.४८)
**ल्=र** । **किर=किल** (६. २०.)

(त) **व=वँ** । अने **वँ=म** । [ § ३१. (ठ) ] नां जणावेली प्रक्रियानी आ प्रतिगामी प्रक्रिया छे. जे हाथप्रत परथी सदर ग्रंथमां उद्धरण लेवामां आव्यां छे, तेमां वँ लखवानी प्रथा नथी. परंतु आ प्रकारनुं उच्चारण व्=म् थवानी वच्चे संभवित छे. दा. त. **पिहिमि=पृथिवी** (१. ५३.), **एम** (२. ४४.) <**एव** (२. ४२.)=**एवम्**; **परिमिय=परिवृत** ( २. ६५. ); **जाम** ( ६. ५. ) <**जाव** (२. १८१.) <**यावत्** ; **ताम** (६. ६.) <**ताव** (२. १८२.) <**तावत्**.

व=अ, य, इ। संभउ=संभव; दीउ <दीव=द्वीप (६. २.) जिउ=जीव (६. ६६.) पयट्ट=प्रवृत्त (२. ४६.) परंतु पइट्ठ=प्रवृत्त (३. ८७) पइट्ठ=प्रविष्ट (१. ७०) (२. ६५.) दिअह =दिवस (२. ५१.). आ प्रकारना विकार माटे उच्चारण अने तेने अंगे आवती य अने व श्रुति ज जवाबदार छे.

(थ) श्=ह्। एह=ईदृश (२. २१.) ते ज प्रमाणे तेह, जेह; साह= शाश्वत् (सि. हे.८.४.३६६)

श्=स्। आ तो सामान्य ज प्रक्रिया छे. दा त. देस=देश; उपरनी एटले श्=ह् नी प्रक्रियामां आ अवान्तर प्रक्रिया थएल होवी जोईए. महाराष्ट्रीमां ईदृश नुं एरिस (४. २६८.) अने ते ज प्रमाणे जारिस अने तारिस रूपो छे, अने आ प्रमाणे प्राकृतमांथी आगळ आवतां स् नो अपभ्रंशमां ह थयो.

(द) ष्=ह्। आ प्रक्रिया पण अवांतर स् थईने थएलो होवी जोईए. एह, एहो, एहु <एसो <एषः।

ष्=छ्। छ<छह्=षष् (५.२५१.);पाहाण=पाषाण (५.१३७)

(ध) स्=ह्। दिअह=दिवस (२. ५१.) छाहत्तरि=षट् सप्तति जहिं, तहिं <जस्मिं, तस्मिं <यस्मिन्, तस्मिन् जणहं, जणाहं (<°साम् * षष्ठी बहुवचननो प्रत्यय) =जनानाम् जाणहि=जानासि

(न) ह्। ह् नी विचलनक्रियाथी केटलाक अल्पप्राण स्पर्शो(=व्यंजनो) सोष्म व्यंजनो बने छे. [§ २९. (ब) [१] ]

केटलीक वार स्=ह् बनी अल्पप्राण स्पर्श सोष्म व्यंजन बने छे: दा. त.

स्पंदते <ह्पंदए * व्यत्ययथी पृहंदए=फंदइ (६ ५१.)

स्पर्शति <ह्पस्सइ * व्यत्ययथी पुहस्सइ=फंसइ (६. ८०.)

केटलीक वार स्पर्शनुं सोष्मत्व वैदिक काळनुं गूजरातीमां मालम पडे छे: दा. त स्पशति (वैदिक धातु; संस्कृत पाशः)=गू. फांसवुं

केटलीक वार सोष्म स्पर्शनुं कारण ह् मां होतु य नथी; अने ते इंडो-आर्यन सोष्म स्पर्श होय छे: दा. त इध=अहं, दाघ-दाह [सरखावो निदाघ] घात-घाय [सरखावो इन्, इ, घन् योगिकरूप] [जुओ Bloch: L'Indo -Aryan. P. 64-61.]

[१] अनुस्वारयुक्त स्वर पछी ह् आवे तो ह्=घ थाय छे; [२] अने ह् पछी जो अनुनासिक व्यंजन आवे तो ह् नो व्यत्यय थई, जे वर्गना अनुनासिक पछी ते आव्यो होय ते वर्गना चतुर्थ वर्णमां (सोष्म व्यंजनमां), फेरवाई जाय छे. आवां उदाहरणोमां पण सोष्म व्यंजन ह् नो पूर्वकालीन पण कोइ वार होय. दा. त. [१] **संघारण=संहारण** (४. ३८.) **सिंघ=सिंह** (सि. हे. ८ । १ । २६४.) इ० [२] **चिंध=चिह्न**, **बंभ=ब्रह्मन्** (५. ७) **बंभण=ब्राह्मण**, (७. ९६.) (स =१३. २४ ) **आसंघइ < आसंहइ * < आशंसते** (५. १४०.), **संभरइ < सम्हरइ * < संस्मरति** इ०

## § ३२. व्यंजनद्विर्भाव (Doubling of Consonants)

**सि. हे ८ । २ । ९८-९९** मां व्यंजन द्विर्भावनां दृष्टान्तो आपेलां छे. **सदर** ग्रन्थनी टिप्पणी (१. ५१)मां पण आनी विवेचना करी छे.

प्रो. पीशलना अभिप्राये केटलांक व्यंजनद्विर्भावनां दृष्टान्तोमां वैदिक स्वरनी असर रहेली छेः दा त. **जित्त=जित** (५. १७१.) **केत्थु=कथा**, (४. १६४.) **फुट्टइ=स्फुटति**, **उज्जु=ऋजु** इ० आ ज नियमने आधारे स्वार्थ तद्धित इल्ल. **उल्ल** इ० ने ते समजावे छे. केटलीक वार काव्यमां छंदनी आवश्यकताने अनुसरी द्विर्भाव करवामां आवे छे. केटलीक वार व्यंजनतत्त्व टकाववा तथा शब्दनी मात्रा साचववा पण आ प्रकारे द्वित्व करवामां आवे छे. दा. त. **अड्डवि** (५. २०६.).

दीर्घ स्वर पछीना व्यंजनने बेवडावी दीर्घ स्वरने ह्रस्व बनाववानी प्रक्रिया पण दृष्टिगोचर थाय छेः दा. त. **पुज्ज=पूजा** (१. ९०.) **जोव्वण=यौवन** (१. ९८.) **अल्लीण=आलीन** (१. ३३ ) **पहुत्त=प्रभूत** (१. ७४.) **दुक्कइ ढौकते** (१. ४९ ) इ०

केटलाक विद्वानो प्रो पीशलना अभिप्रायनो अस्वीकार करे छे; अने द्विर्भावने भ्रान्तानुकृति (False Analogy) इत्यादिथी समजावे छेः दा. त. **उप्परि < उपरि** (१. ५१ ) भ्रान्तानुकृति-**परुप्पर=परस्पर** जेमां प्प यथास्थान छे. **सुक्किउ < सुकृत** (६. २) भ्रान्तानुकृति-**दुक्किउ=दुष्कृत** जेमां क्क यथास्थान छे. **पविस्समाणद्धण=प्रविशता** (६. ७४.) मां स्स छंदोमेळ खातर अथवा कर्मणि अने कर्तरि प्रयोगनी भ्रान्तिथी उद्भूत छे. **बिण्णि < द्वौ** ए **तिण्णि < त्रीणि** नी भ्रान्तानुकृति छे. प्रो. पीशलना अभिप्राय करतां आ अभिप्राय वधारे ठीक छे.

§. ३३. व्यत्यय (Metathesis) [ सि. हे. ८ । २ । ११६—१२४ ]

ह्र ना विचलनथी व्यत्यय केम परिणमे छे ते आपणे जोयुं. ते उपरांत नीचेना केटलांक दृष्टान्तोमां व्यत्यय देखा दे छे: दा. त. **ससिह** <**सहस्स** =**सहस्र** (१. ४९.) **णिडाल**=**ललाट** (१. ४८.) **दह**=**ह्रद** (२. १९३.) **दीहर**=**दीर्घ** (५. १०१.)

§ ३४. वर्णप्रक्षेप

**द्** । **अल-अर** >**न्दल-न्दर** । **बिंहदल**=**बृहन्नला** (३. २२.) गूजरातीमां वंदर < वानर; पंदर < **पण्णरह**; अपभ्रंशमां आ प्रक्रिया मात्रये ज देखा दे छे. प्राकृतमां सि. हे. मां तेने माटे एक्के य सूत्र नथी.

**ब्** । **म्र** >**म्ब-म्बिर** । (सि. हे. ८ । २ । ५६ ।) (जुओ टिप्पणी. १. ३०.) **तम्बिर**=**ताम्र** (६. ३८.) **तंब**=**ताम्र**, **अंब**=**आम्र** इ०

**म्** । **म्** संधि व्यंजन तरीके । **चक्कमेक्क** (२. ८.) **कंकु मत्थाणयरु** (३. १४६.) **म्** ने संधिव्यंजन तरीके मूकवानी पद्धति कोइ कोइ वार वैदिक संस्कृतमां देखा दे छे, अने अर्धमागधीनां तो घणी वार दृष्टिगोचर थाय छे.

**र्** । सि. हे. ८ । ४ । ३९८. मां व्यंजन+**र्** मां **र्** विकल्पे त्यजवानुं जणावे छे ज्यारे ३९९ मां न होय तो पण कोइ वार ऊमेरवो, एम जणावे छे, आ देश्यभाषानो विशेष छे, जे हेमचंद्रे अपभ्रंशमां अपनाव्यो छे. आपणां उद्धरणोमां ते देखा देतो नथी; गूजरातीमां ते विपुल प्रमाणमां देखा दे छे (जुओ N. B. Divatia: G. L. & L. Vol. I P. 433) **व्रासु**=**व्यासः** ।

**ह्** । **घूहड** <**घूअ+ड** स्वार्थे=**घूकः** (९. ३२.); **ठाहरइ** <**स्था-अइ** * (९. ३६.) **भूंहडी**=**भूमि** (सि. हे. ८ । ४ । ३९५. उ. ५.); **चिहुर**=**चिकुर** (३. ७२.) **स्फटिक** नो **फलिह** थवामां **स्**=**ह्**, **फ** मां नहि भळतां अन्तमां नबळा **अ** मां भळे छे **फलिह** <**हफडिअ** * <**स्फटिक** (१. ६९.)

§ ३५. संप्रसारण

**य्**=**इ** । **तिरिच्छ**=**तिर्यञ्च** *; **अच्छेरय** <**अच्छइरअ** * =**अच्छ-रिअ**=**आश्चर्य**.

व्=उ । णाउ < णाव < नामन् (७. ७.) अवर-उहउ < अवर-वुहउ=अपरमुखिन्यः (१. ३२.) भउहउ=भ्रमुकाः * (१.३२.) विउस=विदुष* < विद्वस् (५.१६७.)

य् अने इ अने तेवी ज रीते व् अने उनुं परस्पर स्थानान्तर अपभ्रंश हाथप्रतोमां मळी आवे छे. आ संप्रसारणनी समीपवर्तिनी स्थिति कही शकाय दा. त. मयलिवि (१. १०.) मइलिउ (१. ३१.) देवल (७. ३३.) देउल (७. ८३.) पयंपिउ ने स्थाने पइंपिउ (२. १९७) कइवय ने स्थाने कयवय (५. ४६.) इ अने उ ने स्थाने घणीवार ए अने ओ हाथप्रतोमां देखा दे छे. दा. त. देवइ=देवय (२. ७०.) आणय हाथप्रतमां, जे सुधारी आणए (५. २६७.)

अय् >अइ=ए । तेरह, तेइस, एत्तिय (=अयत् * < अयत्य * )
अव् >अउ=ओ । ओसरिउ (३. ७६. ) ओलग्गिउ (५. २००.) ओयरियउ (३. ४०.) ओली=आवली (१. ३८.)

## ४. संयुक्त व्यंजनविकार

§ ३६. शब्दमां आदि, अन्तर्गत के अन्तिम संयुक्त व्यंजनो होई शके छे. आ त्रणे संयुक्तव्यंजनोना प्रकारमांना प्रत्येकनी प्रक्रिया विभिन्न छे.

§ ३७. आदि संयुक्त व्यंजन कोइ पण अपभ्रंश शब्दमां टकी शकतो नथी; एटले के शब्दना आदिमां तो अपभ्रंशमां असंयुक्त व्यंजन ज होय. नियममां अपवाद ए छे जे शब्दना आदिमां ण्ह, म्ह, ल्ह टकी शके छे ;अने देश्यतत्त्वप्रकार तरीके सि. हे. ८ । ४ । ३९८-३९९ मां जणावे छे तेम र् विकल्पे टके या न होय तो कोइ वार क्वचित् रहेवामां पण आवे छे. ण्ह, म्ह, ल्ह ना दृष्टांत तरीके ण्हाहु=स्नात (१. ४९) ल्हसिउ (५. १७.) म्हो=स्मः; र् ना दृष्टांत तरीके व्रासु=व्यासः, द्रेहि=दृष्टि इ० सि. हे. मां मालम पडे छे, पण आपणां उद्धरणोमां ते विशेष नथी.

आदि संयुक्त व्यंजनोमां त्रण प्रकारनी प्रक्रिया थाय छेः (१) प्रथम व्यंजन राखी द्वितीयनो लोप करवो (२) संयोजन (Assimilation) (३) विप्रकर्षस्वरनो प्रक्षेप (Anaptyxis).

सामान्यतः आदि संयुक्त व्यंजनो बे प्रकारना दृष्टिगोचर थाय छेः (१) जेनो द्वितीय व्यंजन य्, र्, ल्, व् होय (२) जेनो प्रथम व्यंजन स् होय.

(१) जे आदि संयुक्त व्यंजननो द्वितीय व्यंजन य्, र्, ल्, व् होय तेमां प्रथम व्यंजन राखी द्वितीयनो लोप करवामां आवे छे.

य् । जोइसिउ=ज्योतिषिन् (३. २९.) चुक्की=च्युता (३. ६९.) वावारउ=व्यापार (१. ७८.) चयइ=त्यजति. (४.२२४.) वामोह=व्यामोह (१. ६६.)

र् । कील=क्रीडा (१. ५६.) पडिवत्त=प्रतिपत्ति (१. १०६.) सुव्वइ=श्रु+अति (१. ११०.) पेम्म=प्रेमन् (५.२३) इ०

व् । जालइ=ज्वालयति (५. ४०.) सर=स्वर (५. २४९.) दीव=द्वीप (६. १.)

(२) र् नी पूर्वे स् के कोइ बीजा व्यंजन, व् नी पूर्वे स् तो केटलांक उदाहरणोमां विप्रकर्ष स्वरनो प्रक्षेप करवामां आवे छे; अने ल् नी पूर्वे कोइ पण व्यंजन आव्यो होय तो पण आ ज प्रक्रिया थाय छे. (जुओ §१८.)

(३) संयोजन (Assimilation): सामान्य रीते आदि संयुक्त व्यंजनोना प्रकारोमां आदि स् युक्त संयुक्त व्यंजनोमां संयोजन थाय छे.

(क) स्+कोइ पण वर्गनो प्रथमाक्षर (तालव्य अने मूर्धन्य वर्गना प्रथमाक्षर विना)=ते ज वर्गनो द्वितीयाक्षर (आ प्रक्रियामां स्=ह् थई तेनो व्यत्यय थाय छे अने स्पर्शने सोष्मत्व अर्पे छे) दा. त. खंध=स्कंध (३. २०१) खलिय=स्खलित (५. १८.) थंभ=स्तंभ (६. १०६.) थुइ=स्तुति (६. १५६.) थण=स्तन (१. ७४) फंसइ=स्पृशति (६. ८०) फंसइ=स्पंदते (६. ५४.) थोव=स्तोक (६. ५५.) [जुओ § ३०(न)]

(ख) स्+तालव्य अने मूर्धन्य सिवाय कोइ पण वर्गनो द्वितीयाक्षर=ते ज वर्गनो द्वितीयाक्षर दा. त. खलइ=स्खलित (१. २६.) थिअ=स्थित (३. ५०.) फार=स्फार (५. ५८.)

—परंतु सामान्यतः उपरनो नियम होवा छतां कोइक दृष्टांतोमां स्=ह् नी असर सोष्म व्यंजन पर निष्फळ जतां बीजा अक्षरो उपर संक्रमे छे. दा. त. फडिय=स्फटिक भविसयत्तसहामां व्यापृत छे; छतां वधारे प्रचलित रूप फलिह=स्फटिक (१. ६०) मां अंतिम अ=ह् ते आदि स् ने लीधे. ते ज प्रमाणे थाइ <ह्+थाअ=स्थात*(५. १२२.) चिहुर <श्चिकुर*=चिकुर

(ग) स्न्=ण्ह । ण्हाइवि=स्नात्वा (५. ९०.) परन्तु णेह्=स्नेह (५. १६.) स्म्=स । सरइ=स्मरति (६.१२.) अने सुमरइ (४.१३५.)

## शब्दान्तर्गत संयुक्तव्यंजन.

§ ३८. शब्दान्तर्गत संयुक्त व्यंजन नीचे प्रमाणे अपभ्रंशमां होई शके:—

[१] बन्ने य एक ज प्रकारना व्यंजन होय; दा त. **वुत्त, मुक्क खग्ग** इ० के प्रथम व्यजन + द्वितीय ( ते ज वर्गना ) सोष्म व्यंजन = संयुक्त व्यंजन दा. त. **अक्खर, वग्घ, अच्छ, वज्झ, अट्ठ, अड्ढ, अत्थ, अद्ध, पुप्फ, सब्भाव** इ०

[२] **ण्ह, म्ह, ल्ह** दा. त. **कण्ह, पम्ह, पल्हत्थ** (सि. हे. ८ । ४ । २००; जो के अपभ्रंशमांथी **ल्ह** अदृश्य थतो जाय छे.)

[३] व्यंजन+**र** (सि. हे. ९ । ४ । ३९८-९९. जुओ § ३७. ) केवळ बोलीमां, प्रकृष्ट अपभ्रंशमां नहि.

[४] अनुनासिक व्यंजन + व्यंजन, हाथप्रतोमां अनुनासिक व्यंजनने पूर्व स्वर पर अनुस्वार मुकी बतावामां आवे छे दा. त. **सिंचइ. छंमुह** के **छम्मुह** इ०

§ ३९. संस्कृतने प्रकृति लेखी, नीचे जणावेली प्रक्रिया अपभ्रंशमां मालम पडे छे:

[१] **संयोजन** (Assimilation)

(अ) प्रगामी संयोजन (Progressive Assimilation).

(ब) अनुगामी संयोजन (Regressive Assimilation).

(क) विशिष्ट संयोजन (Special Assimilation).

संयोजन थतां संयुक्त स्वरनी पूर्वे दीर्घ स्वर होय तो ते ह्रस्व थाय छे.

[२] **प्रतिसंयोजन** ( Simplification ) आ प्रक्रिया संयोजनथी उलटी ज छे तेथी तेने प्रतिसंयोजन एवुं अभिधान आपेलुं छे.

(अ) संयुक्त व्यंजननी संयुक्तता दूर करवी होय तो तेनी पूर्वेना ह्रस्व स्वरने दीर्घ करवो अने संयुक्त व्यंजनने असंयुक्त करवो; दा. त. **सहस्स** <**सहस्र** (संयोजन); **सहास** <**सहस्स** (प्रतिसंयोजन) (३. ६१.) आ

प्रकारनां दृष्टान्तो अपभ्रंशमां बहुले छे. प्राकृतमां आ प्रक्रियानां परिमित स्थानो सि. हे. ८ । २ । ९२ । मां नोंध्यां छे.

(ब) संयुक्त व्यंजननी संयुक्तता दूर करवा, पूर्वेना स्वरने अनुस्वार अर्पी तेने दीर्घ बनाववो अने संयुक्त व्यंजनने असंयुक्त करवो. दा. त. मंत <मत्त (१. २१.) जुओ सि. हे. ८ । २ । ९२ ।

§ ४०. (प्रगामी संयोजन) (Progressive Assimilation).

क् + त = त्त । जुत्त=युक्त, रत्त=रक्त ।

क् + प = प्प । बप्पइराअ=वाक्पतिराज ।

ग् + ध = द्ध । मुद्ध=मुग्ध ।

ट् + क = क्क । छक्क=षट्क ।

ट् + त = त्त । छत्तीस=षट्त्रिंशत् ।

ट् + प = प्प । छप्पय=षट्पद ।

ड् + ग = ग्ग । खग्ग=खड्ग ।

ड् + ज = ज्ज । सज्जो=षड्ज ।

ड् + व = ब्ब । छब्बीस=षड्विंशति ।

त् + क = क्क । उक्क=उत्क ।

त् + प = प्प । उप्पल=उत्पल ।

त् + फ = प्फ । उप्फुल्ल=उत्फुल्ल ।

द् + ग = ग्ग । उग्गीरइ=उद्गीरति ।

द् + ब = ब्ब । उब्बोह=उद्बोध ।

द् + भ = ब्भ । सब्भाव=सद्भाव ।

प् + त = त्त । सुत्त=सुप्त ।

ब् + ज = ज्ज । खुज्ज=कुब्ज ।

ब् + द = द्द । सद्द=शब्द ।

ब् + ध = द्ध । लद्ध=लब्ध ।

§ ४१. अनुगामी संयोजन (Regressive Assimilation)

(क) सामान्य व्यंजन+अनुनासिक व्यंजन=सामान्य व्यंजननुं द्वित्व

ग् + न = ग्ग । अग्गि=अग्नि ।

त् + न = त्त । सवत्ति=सपत्नी ।

ग् + म = ग्ग । जुग्ग=युग्म ।

क् + म = प्प । रुप्पिणि=रुक्मिणी ।

त् + म = प्प । अप्पा=आत्मन् ।

परंतु, ज् + ञ (ञ्ञ) = ण्ण । आण<अण्णा=आज्ञा (५.२६७)

साण=संज्ञा (५.५५.)

(ख) सामान्य व्यंजन+अन्तःस्थ=सामान्य व्यंजननुं द्वित्व :—

क् + य = क्क । वक्क=वाक्य ।

क् + र = क्क । चक्क=चक्र ।

प् + ल = प्प । विप्पव=विप्लव ।

क् + व = क्क । पिक्क=पक्व ।

अपवादः—द् + व = ब्ब । उव्विग्ग=उद्विग्न । उव्वरिय = उद्वृत (१.७०.)

(क) अनुनासिक व्यंजन+अन्तःस्थ=अनुनासिकव्यंजननुं द्वित्व.

न् + य = ण्ण । कण्ण=कन्या । (३. २०.)

ल्ल अने म्र माटे तो वर्णप्रक्षेप करवामां आवे छे. [§ ३४.]

§ ४२. अन्तस्थमां स्वतः द्वित्वने पामता ल् अने व् छे. य् द्वित्वने पामतां ज् मां फरी जाय छे. र् नुं द्वित्व थतुं ज नथी. अन्तस्थनो अंदर अंदर संयुक्तव्यंजन बने, तो द्वित्वप्रक्रियामां प्रधानत्वनो अनुक्रम ल्, व्, य् छे,

दा. त. कल्ल=कल्य (३. ११४.) कव्व=काव्य (४. २.)

दुल्लुलिय=दुर्ललित (३. २२.) सव्व=सर्व (३. १७६.)इ.

§. ४३. केटलांक संयुक्तव्यंजनोनी विकारप्रक्रिया खास होय छे; जेमांना मुख्यथी मार्गदर्शी प्रक्रियानो उल्लेख ज संक्षेपमां नीचे आपवामां आव्यो छे.

(क) क्ष्=आदिमां ख्, छ्, झ्, घ् । खार=क्षार (२. ८२.)
खवण=क्षपणक (१३. १५.) छण=क्षण (६. १४८.)
छार=क्षार (७. १४२.) झिज्जइ=क्षीयते (३. ५६.)
घित्त=क्षिप्त (५. २०८.)

शब्दान्तर्वर्ती होय तो, **क्ख**, **च्छ**, **ज्झ**। **कडक्ख**= **कटाक्ष** (२. ७५) **विक्खेव=विक्षेप** (२. ७५.); **रिच्छ**= **ऋक्ष** (२. ५८) **तच्छ=तक्ष** (२. ५८.) **विच्छोइअ**= **विक्षोभित** (५. ७७.); **उज्झर=उत्क्षर*** (१. १०३.) कोइक वार ह्‌ पण थाय छे [**क्ख** > **ख** > **ह**] दा. त. **निहित्त=निक्षिप्त** (५. ११८.) [सि. हे. ८. २. १७-१०.]

(ख) **श्च**, **त्स**, **प्स=च्छ**। **मिच्छत्त=मिथ्यात्व** (५. १६३.) **अच्छेरय=आश्चर्यक** (६ ११६.) **मच्छर=मत्सर** (२. १९३.) **उच्छव=उत्सव** (४. २८४) **अच्छर=अप्सरस्** (१. ४५.) इ० [सि. हे. ८. २. २१.]

(ग) ऊष्माक्षर+ प्रथम अघोष व्यंजन एम बनेलो संयुक्त व्यंजन आदिमां आवतां द्वितीय सोष्म अघोष व्यंजन थई जाय छे; स्वरद्वयान्तर्गत एवो संयुक्त व्यंजन आवतां प्रथम अघोष अने द्वितीय सोष्म व्यंजननो बनेलो संयुक्त व्यंजन थाय छे. [§३१ (न)]

(घ) दन्त्य व्यंजनने स्थाने तालव्यनो आदेशः— **त्य**, **थ्य**, **द्य**, **ध्य**= **च्च**, **च्छ**, **ज्ज**, **ज्झ**। **अच्चंत=अत्यन्त** (३. ६) **पच्चक्ख=प्रत्यक्ष** (२. ४१), **मिच्छत्त=मिथ्यात्व** (५. १६३); **अज्जु=अद्य** (१. ९५.) **उज्जाण=उद्यान** (१ १४.); **मज्झ=मध्य** (१. ३४) **जुज्झहो=युध्यत** (१. ४७.); सि हे. ८. २ १५. **त्व-थ्व-द्व-ध्वां च-छ-ज-झाः क्व-चित्**। नां उदाहरणो भाग्ये ज मळे छे एटले नोंध्या नथी.

(च) दन्त्य व्यंजनने स्थाने मूर्धन्यनो आदेशः-**पइट्ट=प्रवृत्त** (३. १८७.) **मट्टी=मृत्तिका** (१३. १) **पट्टण=पत्तन** (१. ७.) **वट्टि=वर्ति** (२. ८७.) **विच्छड्ड=विच्छर्द** (२. १०५) **छिड्ड=छिद्र**(११. ६५) **वियड्ढ=विदग्ध** (१ ९१.) **वड्ढिय=वर्धित** (१. १३५.) **थड्ढ=स्तब्ध** (१०. २४.) **गंठिवाल=ग्रन्थिपाल** (१ १७.) इ [सि. हे. ८. २. ३५-४१.]

(छ) संयोजन (Assimilation) अथवा भाषाविशिष्टता (dialectal peculiarity) थी बनेला **त्त**, **प्प**, **क्क** केटलीक वार एकबीजाने स्थाने फेरबदल थाय छे. दा. त. **चुक्क** < **चुत्त** < **च्युत** (३. ६९.); **जुप्पइ**< **जुत्तइ**< भूतकृदंत युक्तमांथी क्रियापद. (३ ८२.); **लुक्क** < **लुत्त** < **लुप्त** (४. २७८.); **बुक्क** अथवा **वुक्क** < **वुत्त** < **वक्त** * (५. २७१=बोक्क; सि.

हे. ८. ४. ९८=बुक्कइ); **सवक्कि** <**सवत्ति** <**सपत्नी** (जुओ लक्ष्मण-गणिन्-सुपासनाहचरिय, प्रस्तावना. सं. पं. हरगोविंददास. आ शब्द ते ग्रंथमां व्यापृत छे.) **कप्पइ** <**कत्तइ** <सं. √कृत् (सि. हे. ८. ४. ३५७)

(ज) ष्ण=ट्ठ । **विट्ठु** <**विण्हु** <**विष्णु** (५. २१४)

(झ) ह्म=म्भ । **जिंभा=जिह्वा** (३. ८.), जो के **जीहा** (१. १२२) पण रूप छे. **विंभिउ** <**विम्हिउ** <**विस्मित** (१. ६.)

## रूपरचना

### १. नामरूप.

§ ४४. व्यंजनान्त नाम अपभ्रंशमांथी वस्तुतः अदृश्य ज थई गयां छे; तो पण कोइ वार वपरायलां दीठामां आवे छे. त्, न्, स्-व्यंजनान्त नामोना अवशेष कदीक दृष्टिगोचर थाय छे. दा. त. **बंभाण=ब्रह्माणः** (२. १०७.) **रायाणो=राजानः** (४. २२५.) **वइणो=व्रतिनः** (४. २२८.). आवा अवशेषो अर्धमागधीमां अने तेना पछी प्राकृतमां वधारे छे. अपभ्रंशमां तो लगभग लुप्त ज छे.

व्यंजनान्त नामोमां बे प्रकारना फेरफार करवामां आवे छेः [१] केटलीक वार अन्त्य व्यंजन दूर करवामां आवे छेः दा. त. **मण=मनस्** (१. ९२.) **जग=जगत्** (६. ४३.) **अप्प=आत्मन्** (७. ६०.) **मणहारि=मनोहारिणी** (५. १७९.) [२] केटलीक वार अन्त्य व्यंजनमां अ ऊमेरी अकारान्त नाम प्रमाणे तेनी गणना थाय छे; स्त्रीलिंगे **आ** के **इ** ऊमेरवामां आवे छे. दा. त. **जुवाण=युवन्** (५. ११०), **आउस=आयुष्** (२. १९.) **अप्पण=आत्मन्** (७. ५६.) इ. [३] ऋकारान्त नामना **ऋ=अर** करवामां आवे छे. दा. त. **पियर=पितृ** (४. ८९.) **भायर=भ्रातृ** (५. १.) इ०; पण **भत्तार=भर्तृ** (५. ११.) **सस=स्वसृ** (३. ६६.); **माय, माइ=मातृ** (३. १०७); **भाइ=भ्रातृ** (१. १४५.) इ० संस्कृतानुसारी विकृति छे. [४] **अत्**-अन्ती वर्तमानकृदन्तो अने **वत्**-अन्ती नामना अन्त **अन्त** अने **वन्त** थई जाय छे. **मत्** नो **मन्त** के **वन्त** थई जाय छे. कोइ वार प्राकृतने अनुसरी **त्** एकलो पण त्यजी देवामां आवे छे दा. त. **भयव=भगवत्** [५] स्त्रीलिंगी आकारान्त अने ईकारान्त नामनो अन्त्य स्वर ह्रस्वित करवामां आवे छे. दा. त. **कील=**

**क्रीडा, सियय=सिकता** (१. ८६.) **पडिम=प्रतिमा** (१. ८७.) **पुज्ज =पूजा** (१. ९०); **वेणि=वेणी** (३. २४.) **मालइ=मालती** (१. ३१) **सयलिंघि=सैरन्ध्री** (३. ३२.) **किंकरि=किंकरी** (३. ३३.) जवल्ले ज दीर्घ स्वर राखवामां आवे छे. दा. त. **जिभा=जिह्वा** (३. ८.) कोइ वार आकारान्त ह्रस्वित करी तेमां इ छमेरी, इकारान्त करवामां आवे छे. दा. त. **णिसि=निशा** (१. २.) **कहि=कथा** (३. १८७.).

आ प्रमाणे पुल्लिग, स्त्रीलिंग अने नपुंसकलिंगमां, **अ**, इ अने उ–अन्तनां ज नाम होय छे.**आ, ई**, ऊ—अन्तमां स्त्रीलिङ्गी नामो विकल्पे आवे छे.

§ ४५. अपभ्रंशमां बे ज वचन होय छे-एकवचन अने अनेकवचन. **दो, बे** ए बे द्विवचननां रूप सिवाय अपभ्रंशमां द्विवचन नथी.

§ ४६. सामान्य रीते अपभ्रंशमां जाति संस्कृतने अनुसरे छे. परंतु तेमांय अव्यवस्था तो छे ज. तेटला ज माटे सि. हे. ८. ४. ४४५ मां लिंगने अपभ्रंश विषये अतन्त्र कह्युं छे. दा. त. **कडक्खइं=कटाक्षान्** (६. ९९.), **देसइं=देशान्** (६. १००), **आरंभइं=आरंभान्** (६. १०७.) इ.

§ ४७. संस्कृतनी सरखामणीमां पाली अने प्राकृतमां विभक्तिओनो ह्रास थएलो छे. पालीमां पण चोथी अने छट्ठी विभक्तिओनो भेद अदृश्य थतो जाय छे. अपभ्रंशमां तो विभक्तिओनो ह्रास एथी पण अधिक छे. प्राकृतमां देखा देतो चतुर्थी अने छट्ठीनो भेदाभाव (वररुचि. प्राकृतप्रकाश ६. ६४. चंड. २. १३.) अपभ्रंशमां तो छे ज. चतुर्थी अने द्वितीयानो भेद कोइ वार नष्ट थाय छे. (जुओ अ. पा. टिप्पणी. १. ९४–९७–१०७). सप्तमी अने तृतीयानां एकवचन अने अनेकवचननां रूप केटलेक दरज्जे सरखां बनी जाय छे. प्रथमा अने द्वितीयानो भेद पण झाझो रहेतो नथी. कोइवार पंचमी अने षष्ठीनां एक वचन पण सरखां थई जाय छे. आ बधी बाबतो नीचेनां रूप उपरथी स्पष्ट थशे.

§ ४८. **अकारान्तनामनां रूप** (पुल्लिंग)

नीचे एक ज नाम लईने सुगमता खातर रूप आपवामां आवेलां छे.

**पुत्त** ( पुल्लिंग )

**एकवचन:—**

प्रथमा. **पुत्तु** (१. ४.) **पुत्त** (१. ६.) **पुत्तो** (५. ५३.) **पुत्तउ** (१.६२.) **पुत्तउं** (१. ३.)

द्वितीया. **पुत्तु** (१. ८७.) **पुत्त** (२. ८.) **पुत्तहो** (१. १०७.) **पुत्तं** (६. २९.)

तृतीया. **पुत्तेण** (१. १०२.) **पुत्तिण** (१. ११५.) **पुत्तें** (१. ८०.) **पुत्ते** (१. १०.) **पुत्ति** (६. १६.) **पुत्ति** (५. ९६.) **पुत्तइं** (५. १००) **पुत्तेणं** (४. १६९)

पंचमी. **पुत्तहें** (१. ११३) **पुत्तहु** (५. ३४) **पुत्तहो** (७. १७५)

चतुर्थी-षष्ठी. **पुत्तस्स** (६. १६४) **पुत्तस्सु** (१४.गीत.५) **पुत्तहो** (१.१०४. १०५.) **पुत्तहु** (९. ३६.)

सप्तमी. **पुत्ति** (६. ५.) **पुत्ते** (१. ११४.) **पुत्तइं** (४.२७४.) **पुत्तइ** (७. ७८.) **पुत्तए** (१. १.) **पुत्तम्मि** (६. १५८.)

संबोधन. **पुत्त** (३. १८२.) **पुत्ता** (७. २८.)

**अनेकवचन:—**

प्रथमा. **पुत्त** (१. ७.) **पुत्ता** (१. ९६.)

द्वितीया **पुत्त** (२.९.) **पुत्ता** (२. ९.)

तृतीया **पुत्तहिं** (१. ६९) **पुत्तहि** (१. ५८.) **पुत्तेहि** (१. ५७.) **पुत्तेहिं** (१. ५७.) **पुत्तिहिं** (१. १२०.) **पुत्तिहि** (१. ५८.)

पंचमी [**पुत्तहुं**], **पुत्तहं** (९. १९.)

चतुर्थी-षष्ठी **पुत्ताणं** (४. २३१.) **पुत्ताण** (६. १६५.) **पुत्तहं** (१. ७३) **पुत्तह** (७. ६.) **पुत्ताहं** (७. ९.)

सप्तमी **पुत्तहिं** (५. १५३.) **पुत्तेसु** (६. ७८.) **पुत्तिहिं** (३.२३.)

संबोधन **पुत्तहो** (१. ९४.) **पुत्तहु** (१३. ३९; ३. १८१.)

(क) उपरमां रूपाख्यानोमां **पुत्तो, पुत्तं, पुत्ताणं, पुत्तम्मि** चोक्खां महाराष्ट्री प्राकृतनां रूप छे.

(ख) पांचमी, षष्ठी विभक्ति वच्चे पण संभ्रम थई गयो छे. विभक्ति-व्यापारनी निरंकुशता जोवी होय तो प्रस्तुत ग्रंथमां घणे स्थळे मळी आवशे, दा. त. उद्धरण १. कडवड. १२. वपरायलां रूपाख्यानो पण ते ज बतावे छे.

(ग) अनादर षष्ठीना प्रयोगनुं उदाहरण: **पेक्खंतहं रायहं मुच्छ गय** । (३. ७२.) सति सप्तमी: **विमले विहाणए कियए पयाणए उययहरिसिहरे रवि दीसइ** । (१. १.). बीजे स्थळे **पइं जीवंतएण**

**महु एही भइय अवत्था** । (३. ९०.) अहिं सप्तमीने स्थाने तृतीया योजी छे, जे बतावे छे के तृतीया अने सप्तमी वच्चे बहु ज संभ्रम थएलो होवो जोईए.

(घ) उपरनां रूपाख्यानोमां नासिक्यता (Nasality) प्रत्येना दुर्लक्षथी तथा ँ अने इ, तेम ज ओं अने उ नी भ्रामकताथी नूतन रूपो अस्तित्वमां आव्यां छे.

(च) उद्धरण १२. अने १३. अनुक्रमे कण्ह अने सरहना दोहाकोशमांथी लेवामां आव्यां छे. तेमां केटलांक खास रूपाख्यानो देखाय छे. ते मुख्यत्वे करीने बोली विशेषो (Dialectal Peculiarities) अने अर्वाचीनतानां चिह्न छे. आ संबंधी चर्चा प्रस्तुत उद्धरणनी टिप्पणीमां आपेली प्रस्तावनामां करवामां आवेली छे ते जोवी.

(छ) केटलीक वार छंदनी खातर विभक्ति प्रत्ययोनो त्याग करवामां आवे छे. दा. त. **जिणजम्मण अमर पराइय** (२. १८.) **सरिपवाह मिहुणइं णासंतइं** (१. ८.) **वाहि मिच्छ तं जणं दुरक्खसेणं खद्धयं** (६. ९१.) इ०

## § ४९. अकारान्त नपुंसकलिंगी नामनां रूप.

### फल.

| | एकवचन | अनेकवचन |
|---|---|---|
| प्रथमा-द्वितीया. | **फलु** (१. ३६.) | **फलाइं-इ** (१. १२७.) |
| | **फल** (१३. १९.) | **फलइं-इ** (१. ३७.) |

अवशिष्ट रूप अकारान्त पुल्लिंगी नामनां रूप प्रमाणे थाय छे.

## § ५०. इकारान्त अने उकारान्त नामनां रूप (पुल्लिंग अने नपुंसकलिंग)

पुल्लिंग अने नपुंसकलिंग वच्चे कांइ पण फेर नथी. नपुंसकलिंगमां **वारिइं-वारीइं** के **महुइं-महूइं** प्रथमा, द्वितीया अनेकवचनमां शास्त्रीय दृष्टिए होय; परन्तु प्रस्तुत ग्रन्थमां ते प्रयोजित नथी.

मूळे य इ अने उ अन्तवाळां नामो ज ओछां वपरायलां दृष्टिगोचर थाय छे; अने वळी तेमां पण ते नामोने घणी वार **य** < **क स्वार्थ** प्रत्यय लगाडी अकारान्त नाम जेवां रूपाख्यानो तेनां करवामां आवे छे. दा. त. **सम्माइट्ठिउ** (७. ५४.) **जोइया** (७. ५९.) **जोइय** (७. ६४.) **णाणियहं**

(७.८१.) अग्गियए (७. १. इकारान्त स्त्रीलिंगी नामना रूपनी भ्रान्तानुकृति) जोइसियहिं (५. १०७.). आ उपरांत ए पण मालम पड़े छे के रूपाख्यानोना ज्यां प्रत्ययो छे, त्यां लगभग सरखा ज प्रत्ययो छे. प्रथमा, द्वितीया अने संबोधन विभक्तिने तो प्रत्ययो ज नथी. इन् अन्तवाळां नामोमां न् घणीवार त्यजी देवामां आवे छे. त्यार पछी तेनां रूपो इकारान्त नाम जेवां ज करवामां आवे छे.

| | एकवचन | अनेकवचन |
|---|---|---|
| प्रथमा | गिरि (२. १००)<br>गुरु (८. १.) | परमेट्ठि (३. ५०.)<br>रविंदु (४. २७८.) |
| द्वितीया | गिरि (३. ९७.)<br>सिसु (५. २५.) | परमिट्ठि (६. ४७.)<br>गुरु (७. ७.) |
| तृतीया | करिणा (५. १३७.) बहुपं (७.११२)<br>बलिणा (५. १९३.) बहुयइं (८.१५)<br>पहुणा (५. २९२.) मंतिइं (५. १८८.)<br>बहविं (४. १५.) | णाणिहिं (५.१४९.)<br>भाइहिं (५. २७७.) |
| पंचमी | [गिरिहे] महुणो (४. २२९.) | [गिरिहु] |
| चतुर्थी–षष्ठी | रहुवइहे (२. २२.)<br>करिहो (३. ८७.)<br>पंडुहि (३. १४९.)<br>हरिहि (४. १६२.)<br>भाणुहिं (४.१८५.) जगावइणो (४.२३८.)<br>कुलसामिहिं (५.४५.) विट्ठुहिं (५.२३१.) | जोइहिं (७. ३७.)<br>णाणिहिं (७. ११२.)<br>भाईणं (४. २३१.)<br>रिसिहिं (५. २०६) |
| सप्तमी | सुहिहिं (५. १९६.) | [गिरिहुं] |
| संबोधन | सिहि (२. १२५.) | [गिरि] |

## § ८१. आकारान्त स्त्रीलिंगी नामनां रूप

आपळ आपणे जोई गया ते प्रमाणे आकारान्त स्त्रीलिंगी नामनो अन्तिम आ ह्रस्व करी देवामां आवे छे. आ प्रमाणे प्रत्यय लगाडवा लायक बे मूलरूप बने छे. दा. त. माल अने माला.

## माला

| | एकवचन | अनेकवचन |
|---|---|---|
| प्रथमा | माला (१. ३६.)<br>माल (१. २२.) | मालाउ (१. ३२.)<br>मालउ (१. ४०.) |
| द्वितीया | [माला] माल (१. ५६.) | मालाउ (२. १८८.)<br>मालउ (३. २१.) |
| तृतीया | मालाइ (१. २३.)<br>मालइ (३.१९४.) मालाए (१.८१.)<br>मालए (१.६७.) मालहे (२.८३.) | [मालाहिं] मालहिं (४.२१८.) |
| पंचमी | [मालहे-मालाहे] | [मालाहु-मालहु] |
| चतुर्थी-षष्ठी | मालहे (२. २४.)<br>मालहें (२.१३७.) मालहि (२.७३.)<br>मालहिं (३.११०.) मालहो (३.१९५.) | मालहं (३. ७७) |
| सप्तमी | मालहे (३. ११४.)<br>मालए (४. १९२.) | [मालहिं-मालाहिं] |
| संबोधन | माल (२. ५२.) | [मालउ-मालाउ] |

### § ५२. ईकारान्त स्त्रीलिंगी नामनां रूपः—

केटलांक स्त्रीलिंगी आकारान्त नामनो अन्त्य आ ह्रस्वित करवामां आवे छे ते आपणे जोयुं. (§ ५१.) आवां नामोने अन्ते ई कोइवार लगाडवामां आवे छे. दा. त. बाली (१. २२.) णिसि (१. २.) वसुंधरी (२. ६४.) परमेसरी (२. ७१.) इ० विशेषणनां स्त्रीलिंगी रूप पण ई लगाडीने करवामां आवे छे. दा. त. जुओ उद्धरण २. कडवक ३. स्त्रीलिंगी इकारान्त नामनां रूपो ईकारान्त स्त्रीलिंगी नामनां रूपथी जुदां नथी. ऊकारान्त स्त्रीलिंगी नाम आमे य संस्कृतमां तो ओछां छे ज; प्रस्तुत ग्रंथमां वहु (१.४६.) अने वहूहिं (२.१४०) ए बे रूपो ज वपरायलां छे. आकारान्त स्त्रीलिंगी नामनां रूप जेवां ज ईकारान्त नामनां रूप छे.

| | एकवचन | अनेकवचन |
|---|---|---|
| प्रथमा | तरुणि (५. १४.)<br>रिद्धी (५. ६६.)<br>भडारी (५. ७५.) | तरंगिणीउ (१. ३२.)<br>णारिउ (३. ७५.)<br>कुमारिउं (५. १७९.) |
| द्वितीया | महि (५. ९३.)<br>अवक्खडी (७. ७१.) | जणदिट्ठिउ (५. ८६.)<br>गाहिणीउ (६. १३२.) |
| तृतीया | घरिणिए (५. १५७.)<br>विलासिणिआए (५. १२१.) | विरहंतिहि (५. ३२.) |
| पंचमी | [तरुणिहे] | [तरुणिहु] |
| चतुर्थी-षष्ठी | महएविहे (३. ४८.)<br>पुत्तिहिं (५.१०८.) भूमिहिं (५.२२८.) | पाणियहारिहु (६. ११२.) |
| सप्तमी | पहरंतिहिं (५. १६२.)<br>मुट्ठिए (५. २८७.)<br>सिद्धिहि (७.२५.) रयणिहे (३.११४.)<br>तुंगिहे (३. ११६.) | वाविहिं (५. ४५.)<br>कामिणिहिं (३. १२८.) |
| संबोधन | माइ (३.१०७.)<br>पंचालि (३. १०९.) | [तरुणिहो] |

## २. सर्वनामरूप

§ ५३. प्रथमपुरुषवाचक सर्वनामः—

| | एकवचन | अनेकवचन |
|---|---|---|
| प्रथमा | हउं (२. २१८.) मइ (२. १७५.) | [अम्हे] अम्हइ (२. ५१.) |
| द्वितीया | मइ (१.२.) मइं(३.६४.) मं (११.११.) | [अम्हे,अम्हइ] |
| तृतीया | मइं (२. १७१ ) मइ (१ ११६.)<br>मए (६. १६६.) | [अम्हेहिं] अम्हहिं (६.१४०.) |
| पंचमी | मइु (३. ११६.) [मज्झु] | [अम्हहं] |
| चतुर्थी-षष्ठी | मइु (२. ३२.) मज्झु (६. १७.)<br>मइुं (५. २९५) | अम्हाण (६. १६७.)<br>[अम्हहं] |
| सप्तमी | [मइं] | [अम्हासु] |

§ ५४. द्वितीयपुरुषवाचक सर्वनामः—

| | एकवचन | अनेकवचन |
|---|---|---|
| प्रथमा | तुहुं (३. १९६.) तुहु (२. २१.) | [तुम्हइं, तुम्हे] |
| द्वितीया | पई (३. ६०.) | [तुम्हइं, तुम्हे] |
| तृतीया | पइ (२. ८९.) पइं (३. ६२.) तईं (३. १४५.) | [तुम्हेहिं] तुम्हइं (५.२७४.) |
| पंचमी | [तउ, तुज्झु, तुध्र *] | [तुम्हहं] |
| चतुर्थी–षष्ठी | तउ (२. १६८.) तुह (४. १५१.) तुज्झ (४. २७०.) तुज्झु (५. ४७.) [तुध्र *] | तुम्ह (३. ९४.) तुम्हइ (२. ६३.) तम्हाण (१. १६६.) तुम्हह-हं (३.४६.) |
| सप्तमी | तुह (५. ४८.) [तइं] | [तुम्हासु] |

§ ५५. दर्शक सर्वनामः—

| | एकवचन | अनेकवचन |
|---|---|---|
| प्रथमा | [पु] सो (१. २९.) सु (६. ८९.) स (५.१४८.) | [पु.] ते (१. २४.) |
| | [स्त्री.] सा (१. १०९.) स (३. ६८.) | [स्त्री.] ताउ (१. ३२.) ति (२. ७६.) |
| | [न] तं (१. ३६.) तं तु (११.६.) | [न.] ताइं (१. २५.) |
| द्वितीया | [पु] तं (१. ५०.) | [पु.] [ते] |
| | [स्त्री.] तं (१. ७६.) | [स्त्री.] [ताउ] |
| | [न] तं (१.१३४.) | [न.] [ताइं] |
| तृतीया | [पु.] तेण (१.११३.) तें (२. २०१.) तइं (३. १८.) तेणं (६. १६६.) तिं (९.८.) | [पु.] तेहिं (१. १३३.) ताहं (२. १७.) तेहि (३. ५१.) |
| | [स्त्री.] ताइं (३. १७८.) [तिए, तीए, ताए, तए] | [स्त्री.] तेहि (२. ५०.) |
| पंचमी | [पु] तहे (४.१५८) तउ (४.१७६) | [पु.] [तहु] |
| | [स्त्री.] [ताहे-तहे] | [स्त्री.] [ताहिं] |

| | | |
|---|---|---|
| षष्ठी | [पु.] तासु (१.१११.) तहो (१.६०.) तहु (१.१५.) तहि (२. ८४.) तसु (७. ७९) तहु (५. ९.) तहिं (५.१८.) | [पु.] तहु (१. १५.) |
| | [स्त्री.] तिह (२. १४४.) ताहि (५. २६६.) | [स्त्री.] ताहि (१. ११२.) |
| सप्तमी | [पु.] तहिं (१. १०६.) तहि (२. ११२.) | [पु.] तहिं |
| | [स्त्री.] तहि (२. १४१.) तहिं (७. १०१) | [स्त्री.] [ताहिं] |

§ ५६. संबंधी सर्वनामः—

| | एकवचन | अनेकवचन |
|---|---|---|
| प्रथमा | [पु.] जो (१.२९.) जु (७.१३५.) | [पु.] जे (१. २४.) |
| | [स्त्री.] जा (१. १०९) | [स्त्री.] जाउ (१. ३२.) |
| | [न.] जं (१. २६.) | [न.] जाइं (७. १०६.) |
| द्वितीया | [पु.] [जं] | [पु.] [जे] |
| | [स्त्री.] [जं] | [स्त्री.] [जाउ] |
| | [न.] जं जु (११. ६.) | [न.] [जाइं] |
| तृतीया | [पु.] जेण (१.५.) जिं (४.२६९.) जें (५. ९.) | [पु.] जेहिं (४. ११०.) |
| | [स्त्री.] [जाइं, जाएँ, जिध इ०] | [स्त्री.] जेहिं (१. ४९.) |
| पंचमी | [पु.] जउ (३. ५७.) [जहे] | [पु.] जहु |
| | [स्त्री.] [जाहे] | [स्त्री.] [जाहिं] |
| चतुर्थी-षष्ठी | [पु.] जासु (१.१०.) जसु (१.८०.) जस्स (६. ६२.) [जहो] | [पु.] जाहं-जाह (४.१०८.) |
| | [स्त्री.] जाहि (२. ४८.) | [स्त्री.] [जाहिं] |
| सप्तमी | [पु.] जहिं (७. १०४.) जम्मि (५.२६.) | [पु.] [जहिं] |
| | [स्त्री] [जहि] | [स्त्री.] [जाहिं] |

§ ५७. प्रश्नार्थ अने अनिश्चित सर्वनामः—

| | एकवचन | अनेकवचन |
|---|---|---|
| प्रथमा- | [पु.] को (२. १३.) कु (७. ६९.) | [पु.] के (१. ५४.) |
| द्वितीया. | [स्त्री] का (१. ६६.) क (५. ११) | [स्त्री.] कायउ(९.१८)[काउ] |
| | [न.] किं (१. ९५.) | [न.] काइं (५. २६८.) |
| तृतीया. | [पु.] केण (१.११६.) कइं (११.२१.) | [पु.] केहिं (४. १२५.) |
| | [स्त्री.] काइं (२. ११ ) [काए] | [स्त्री.] केहि(४.२३४.)[काहि] |
| पंचमी. | [पु ] कउ (४. १९७.) [कहे] | [पु.] [कहु] |
| | [स्त्री.] [काहे] | [स्त्री.] [कांहि] |
| चतुर्थी-षष्ठी. | [पु.] कहो(३.९२.) कहु (४.१५९.) | [पु.] काहं-ह (४. १९३.) |
| | कस्स (६. ९५.) कासु (५. ९८.) | |
| | [स्त्री.] कांहि (५. १४.) काहि (५.१५.) | [स्त्री ] काहि (४. २९३) |
| सप्तमी | [पु.] कहि (३.१७२.) कहिं (६.२८.) | [पु ] [कहिं] |
| | [स्त्री.] [कांहि] | [स्त्री.] [कांहि] |

(क) अनिश्चित सर्वनाम पि, वि, मि, इ <सं. अपि, चि <सं. चित् लगाडवाथी बने छे. दा. त. १. ६६; १.५७.;७ ११; ६. २६-२८. इ०

(ख) किं अने काइं (५. २६८.) अव्यय तरीके पण वपराय छे.

(ग) कवण (गू. कोण) प्रश्नार्थ सर्वनाम तरीके वपराय छे. दा. त. कवणु (३. ११०) कवण [स्त्री ] (२. १२२.) इ०

§ ५८. 'ए, एअ <सं. एतद्; एह <सं. एषः ।' नां रूपः—

| | एकवचन | अनेकवचन |
|---|---|---|
| प्रथमा- | [पु.] एउ (१.१३३.) इउ (२.१६९.) | [पु ] एहा |
| द्वितीया | एहु (२.१२६.) एहउ (५.१४९.) | [स्त्री.] [एहोउ] |
| | एह (२.८९.) एउ (१. १७८.) | [न.] [एहइं, एयइं, |
| | [स्त्री.] एहो (३. ९०.) | एहाइं, एयाइं] |
| तृतीया | [पु.] एण (१. ११५.) | [पु.] [एहिं, एएहिं, |
| | एएं (५. १९४.) एँ (११. १४.) | एणहिं] |
| | एणइ (६. १२. | [स्त्री.] [एयाहिं] |

| | | |
|---|---|---|
| पंचमी | [एयहे] | [पु.] [एयहुं]<br>[स्त्री.] [एयाहिं] |
| चतुर्थी-षष्ठी | [पु.] एयहो (४. १७४.)<br>[स्त्री.] [एयहे] | [पु.] [एयाहं]<br>[स्त्री.] [एयाहिं] |
| सप्तमी | [पु.] एहइ (६. ४५.) | [पु] [एयहिं]<br>[स्त्री.] [एयाहिं] |

§ ५९, आअ, अ=इदम्

आ सर्वनामनां थोडांक रूप प्रस्तुत ग्रन्थमां वपरायलां छे. दा. त. तृतीया आएं (४. १७१.); षष्ठी-आयहो [पु.] (२. ३०.); आयहे [स्त्री.] (३. ६६.)-अनेकवचन आयहं [पु.] (९. १०.); द्वितीया अनेकवचन [न.] आयइं (२. २१०).

§ ६०. स्ववाचक सर्वनाम अप्पण, अप्प < सं. आत्मन् मांथी बने छे; अने तेनां रूप अकारान्त नामना जेवां थाय छे.

बीजां सर्वनाम जेवां के सव्व, अण्ण, एक्क इ०नां रूप सामान्यतः ज ( यद् ) अने त (तद् )ना जेवां ज थाय छे.

§ ६१. सर्वनाममांथी बनतां विशेषणो अने अव्ययोना प्रकारो नीचे प्रमाणे छे.

(क) [१.] परिमाणवाचक विशेषण:—

(अ) एत्तिउ (१.१०७), तेत्तिउ, जेत्तिउ, केत्तिउ (३.१०८.)

(आ) एत्तडउ ( १. १०७. ) तेत्तडउ, जेत्तडउ, केत्तडउ (३. १२९.)

(इ ) एवडउ (=एवड्डु २. १३१.) तेडवउ (=तेवड्डु ५. २१४) जेवडउ, केवडउ (सि. हे. ८. ४. ४०७ )

( ई ) एत्तुल, तेत्तुल, जेत्तुल, केत्तुल (सि. हे. ८. ४. ४०७.)

[२.] गुणवाचक विशेषण:—

(अ) अइसउ (१२. १३.) तइसउ, जइसउ ( १०. ९. ) कइसउ (१७. ९.)

(आ) एहउ (५. १४९.) तेहउ, (७.२६.) जेहउ (५. ९४.) केहउ (५. ९४.)

(इ ) एरिस (४. २६८.), अम्हारिस (४.१९९.), तुम्हारिस (३. १२.)

(ख) [१.] स्थानवाचक अव्ययः—

(अ) इत्थु (९. ६८.), जित्थु, जेत्थु, तित्थु (६. ६.) तेत्थु, केत्थु; वळी जेत्थहो (=जत्थहो २. ६०.) तेत्थहो (३. १३३.)

(आ) इह (षष्ठीनुं रूप; २.१९०. ) जहिं, तहिं, कहिं जे सर्वनामनां सप्तमीनांरूप छे ते पण अव्ययो तरीके वपराय छे.

(इ) जउ (३.५७.) तउ (३.५७.) कउ (षि. हे. ८. ४. ४१६.)

(ई) एत्तहे, जेत्तहे (१. ४२), तेत्तहे (१. १४२.), केत्तहे अण्णेत्तहे (३. १७३.)

[२] समयवाचक अव्ययः—

(अ) जाम (६. ५.) ताम (६. ५१.) जाव (२. १८१.) ताव (२. १८२.) जा. ता (१३. ११.) जावहिं (१.९०.) तावहिं (१. ९०.) जव्वे (१३. २३.) तव्वे (१२. २४.)

(आ) तो (=ततः १. ४२.) जो (१३. ११.)

[३] रीतिवाचक अव्ययः—

(अ) अह (९. ४.), किह (३. १९२), जिह (३. १९२.), तिह (२. २०१.)

(आ) एम्व (१. २०), केम्व (२. ७८.) जेम्व (२. ५३.), तेम्व (४. १३५.) आ रूपोमां ए नो विकल्पे इ थाय म्व, म, व नो पण विकल्प छे.

(इ) जह ( २. २०० ), तह कह (१. ५.)

(ग.) अस्मद् अने युष्मद् नां षष्ठीनां रूपने आर <कार लगाडी संबंध साधित करवामां आवे छे. महार, अम्हार, तुहार (५. २३०), तुम्हार. तणउ अने केरउ नो प्रयोग नाम के सर्वनामना षष्ठीना रूप साथे करीने पण संबंध दर्शावाय छे.

§ ६२. तद्धितप्रत्ययः—

अ-कड्ढियउं (१. १३५.), वड्ढियउं (१. १३५.) इ०

अण-चिराण (५. १८०.) विशेषण.

**अण-बुज्झण** (३. १८.) **जुज्झण** (३. १८.) **जणण** (५. २११.) क्रियापदमांथी नाम.

**अल्ल-नवल्ल** (१. ४० ) स्वार्थप्रत्यय

**आर-गरुयार** (१. ३६.) **लहुयार** (५. १८३.) **उच्चार** (२. ९२.) स्वार्थ प्रत्यय.

**आल-सोहाल** (५. १५ ) **भुक्खाल** (३. १८.) नाममांथी विशेषण.

**आवण-भयावण** (४. २६४.) विशेषण.

**इक्क-तिडिक्क** (९ १२.), **पाइक्क** (५. २४६.).

**इर विवरेर** (२. १२.) (स्वार्थ प्रत्यय) **नमिर** (३. १५५.) **पसाहिर** (५. १६३) **भमिर** (६. ८४.) क्रियापदमांथी विशेषण.

**इल्ल-सोहिल्ल** (१. ४७.) **कडिल्ल** (६. २४९.) **खडिल्ल** (७. १३६ ) **पहिल्ल** (२. ७२.) **कुंभिल्ल** (१. २८.) नाममांथी विशेषण.

**ईल-समील** (६. ४३.) स्वार्थप्रत्यय.

**उण-अज्जोणिय** (=अद्यतन ३. ११४.) **कल्लोणिय** (=कल्यतन ३. ११४ )

**उल्ल-मडउल्ल** (५. ६४.) **कडउल्ल** (१ ५२.) **अहरुल्ल** (२. ११.) **सुणहुल्ल** (४. २२९.) **हियउल्ल** (५.११८.) स्वार्थप्रत्यय.

**एर-जणेरी** (=जननी २. १९ )

**क्क-गुरुक्क** (७. ३२ ) स्वार्थप्रत्यय.

**क्ख-नोक्ख** (३. १८४ ) स्वार्थप्रत्यय.

**ड, डिय** [स्त्री.]-**अवक्खडी** (७. ७२.) **जालडिय** (२ १११.) **दिवहडा** (७. १३३.) **धाहडिय** (२. ११२.) **हियवड** (७. ७९.) स्वार्थप्रत्यय.

**त्त-थिरत्त** (४. १९८.) **वुड्ढत्त** (१. १३१.) भाववाचक नाम.

**त्तण-नीयत्तण** (५.१००.) **खलत्तण** (५.१९६.) **सुहित्तण** (५.१९६.)

**ल, लिय-अंधल** ( ५. ४८. ) **असमल** ( १३. २०. ) **थक्कलिय** (१४. ३) **जमल** (३. २७ ) **नग्गल** (१३. ९.) **विज्जुल** (२. १२४.) स्वार्थप्रत्यय.

§ ६३. संख्यावाचक शब्दो

**बे**=सं. द्वे (१. २४.) एकलुं ज द्विवचननुं रूप अपभ्रंशमां छे. छतां य **तिण्णि** (७. ६.) नी भ्रान्तानुकृतिए करीने त्रिण्णि (१. २६.) **बेण्णे** (१. ११२)=सं. **द्विनि** *

संख्याक्रमपूरक शब्द—**पढम** (२. ७१.) **पहिल्ल** (२. ७२.) **बीय** (२. ६.) **तइय** (५. २३३.), **चउत्थ** (६. १५८.) **पंचम** इ०

क्रियासंख्यावाचक शब्दः-**एक्कवार, दुवार, तिवार, बहुवार**

क्रियारीतिसंख्यावाचक शब्दः-**एक्कविह, दुविह, तिविह** इ०

**एक्कसि** (=एकशः टि. पान. ११२. उपर शीलांकमांथी उदाहरण)

§ ६४. विशेषणनां तुलनावाचक रूप संस्कृतनी माफक **तर** अने **तम** लगाडवाथी थाय छे. केटलोक वार सादां ज विशेषणो तुलना माटे वपराय छे. केटलीक वार तुलनावाचक रूप सीधां ज संस्कृतमांथी लेवामां आवे छे. दा. त. **कणिट्ठ** (४.१७२), **पाविट्ठ** (५.२०३) इ०

## ३. क्रियापदरूप

§ ६५. संस्कृतमां दृष्टिगोचर थता क्रियापदना सूक्ष्म अने बहुविध रूप-भेदो अपभ्रंशमां अदृश्य थाय छे. आपणे नामनां रूपोमां जोयुं के अकारान्त नाम ज अपभ्रंशमां प्राधान्य भोगवे छे, ज्यारे बीजा स्वर के व्यंजनना अन्त-वाळां, संस्कृतमां भिन्न भिन्न विभक्तिरूपो धारण करतां नामो अपभ्रंशमां लगभग अदृश्य ज थाय छे अने रह्यांसह्यां अकारान्तने ज अनुवर्ते छे. ते ज प्रमाणे अपभ्रंशमां अ विकरणप्रत्ययथी युक्त प्रथमगण प्राधान्य भोगवे छे, ज्यारे क्रियापदना बीजा गण अदृश्य थाय छे. आत्मनेपद लुप्त थई जाय छे; कोइ वार संस्कृतना अनुकरणमां वपराय ए वात जुदी. दा. त. **पिच्छए, लुब्भए, लक्खए** इ० (६. ७४–८८.). ते ज प्रमाणे कृदंतोमां कोइ वार आत्मनेपद देखा दे छे. दा. त. **वट्टमाण** (६. १५८) **पविस्समाण** (६. ७४.) इ० उपरना दाख-लाओ परथी ए पण जणाशे के केटलोक वार आत्मनेपदनी भ्रान्तानुकृति पण आवां रूपोमां देखाय छे.

§ ६६. अपभ्रंशमां केटलाक काळ पण देखा देता नथी. भूतकाळ–अद्यतन, ह्यस्तन अने श्वस्तन त्रणे य गूम थाय छे. क्रियातिपत्त्यर्थ (conditional) पण

अदृश्य थाय छे **आसि** < **आसीत्** (६. ९३.) एकलो देखा दे छे. त्रणे य पुरुषमां **आसि** नो ज प्रयोग थाय छे. दा. त. **हउं आसि घित्तु विवाए जिणेप्पिणु** । (५. १९४.); **णउ जक्खहं रक्खहं किन्नराहं लइ इत्थु आसि संचरु नराह** । (६. ५७.) इ० भूतकाळ कर्मणि भूतकृदंतनी मददथी दर्शावाय छे, जेनां दृष्टांतो तो सामान्य छे.

§ ६७. क्रियापदना गणोना अवशेष क्यांक क्यांक अपभ्रंशमां रह्या छे. दा. त. **जिणइ** (५. १९४.) **कुणइ** (१०. ४०.) **थुणइ** (=*स्तुनोति* * ६. १६८.) **विहेइ** (१०.७.) **णासइ** (५. २१८.) **णच्चइ** (१. १०२ )इ० केटलीक वार भूतकृदंतने ज बारोबार धातु बनाववामां आवे छे. दा. त. **कड्ढइ** (३. ११०.) **ओलग्गइ** (५. २००) **उल्लुक्कइ** (१.४९.) इ.

§ ६८. प्रत्ययान्त धातु (Derivative Roots) अपभ्रंशमां अस्तित्व धरावे छे. प्रेरकरूप (णिजन्तः), पौनःपुन्यदर्शक धातुरूप (यङन्तः) अने नाम-धातु अपभ्रंशमां मालम पडे छे ते उपरांत ध्वनिक्रियापदो पण देखा दे छे. इच्छादर्शकधातुओ खास मालम पडता नथी.

[१] प्रेरकधातुओ–**पइसारइ** (२. १.) **विउज्झावइ** (३. ८८.) **पहा-वइ** (२. १३१.) **नच्चावइ** (३. २१.) इ०

[२] पौनःपुन्यदर्शक धातु—**मरुमारइ** (३. ७४; ३. १४९ ); **जाजाहि** (३. १९६); **मुसुमूरइ** (४. १२३.) इ०

[३] नामधातु—**सुहावइ** ( ६. ७. ); **धंधइ** ( १३. ७. ); **जगडइ** (१३. २०.); **हक्कारइ** (३. १४९.); **जयजयकारइ** (१. ७.) **बहिरइ** (६. ६७.) इ०

[४] च्वि–प्रकारना नामधातु—**समरसिंहुवाहं** (७. ८६.) **बंधिकिउ** (१३. ४८.) **गोअरिहोइ** (१४. गीत. ५.)

[५] ध्वनिधातु—**किलिकिंचइ** (६. ५३.) **खुसखुसइ** (१३. ७.) **गिणगिणइ** (१०. ३२.) **गुमगुमइ** (२. १३५.) **घवघवइ** (१. २४.) **रुहवुहइ** (५. ११५.) **रुहुरुहइ** (६. ५२.) **कुलु-कुलइ** (६. ५२.) **करयरइ** (१२. १३.) इ०

§ ६९. सामान्यतः धातुना जुदा जुदा कालनां रूप नीचे प्रमाणे छेः—

(क) वर्तमानकाल

| | एकवचन | अनेकवचन |
|---|---|---|
| प्रथम पुरुष. | करउं (७. ३.) करमि (२. २४.) करिमि (३. ८१.) करेमि (२. १९६.) करेवि (७. १४.) | करहुं (३. १३२.) करिमो (६. ९४.) |
| द्वितीय पुरुष. | करसि (४. १७४.) करहि (३. १०७.) करहिं (५. ४१) [करेसि] | करहु (१. १३.) |
| तृतीय पुरुष. | करइ (१. २.) करेइ (७. ३२.) | करन्ति (१. २४.) करहिं (७. ४.) |

(ख) भूतकाल (जुओ §६६.)

(ग) भविष्यत्काल

| | एकवचन | अनेकवचन |
|---|---|---|
| प्र. पु | करेसमि (३. २२.) करिसु (३. १४५.) करीहिमि (११. ५.) | करेसहुं (३. १४.) |
| द्वि. पु. | [करेसहि, करेससि] करीहिसि (११. १४.) | करेसहु (३. १९९.) करेसहो (३. २००.) |
| तृ. पु. | करेसइ (३. १४.) करेहिइ (१४. गीत २.) [करेसहिं, करेहिन्ति] | |

उपरनां रूप उपरथी जणाशे के संस्कृतनी माफक अपभ्रंशमां भविष्यत्काल, वर्तमानकाल पर ज अवलंबे छे.

(घ) आज्ञार्थः—

| | एकवचन | अनेकवचन |
|---|---|---|
| प्र पु. | [०] | [०] |
| द्वि. पु. | करहि (२. २३.) करिहि (५. ४२.) करि (२. १२६.) कर (२. ४८.) करु (२. ५२.) करह (११. २०.) | करहो (१. ४९.) करहु (१. ४९) करह (८. १४.) |
| तृ. पु. | करउ (२. ९०.) | [०] |

आज्ञार्थनां प्र. पु. नां रूप वर्तमानकाळ जेवां ज समजवां, जो के वैयाकरणो करमु अने करिमो एम प्र. पु. नां एकवचन अने अनेकवचननां

रूप बतावे छे. ते ज प्रमाणे तृ. पु. ना अनेकवचनमां **करंतु, करहुं** एम रूप समजवां; परंतु वपराशमां तो वर्तमानकालनां रूप ज प्राधान्य भोगवे छे.

**(च) विध्यर्थः—**

| | एकवचन | अनेकवचन |
|---|---|---|
| प्र. पु. | **करिज्जउ** (५.२२६.) **किज्जउं** (७.१३५.) [०] | |
| द्वि. पु | **करिज्जहि** (२.१००) **करिज्जइ** (३.१३२.) **करेज्ज** (४. २७५.) **करेज्जसु** (५. ९०.) | **करिज्जहु** (२. १०९) |
| तृ. पु. | [**करिज्जउ**] | [**करिज्जंतु, करिज्जहुं**] |

उपरनां रूपोमां देखाशे के **ज्ज** (सं. **याम्, याव** इ. विध्यर्थना प्रत्ययोना **या** समान **ज्ज** छे)+आज्ञार्थना प्रत्ययोना मेळथी विध्यर्थना प्रत्ययो बनेला छे.

सामान्य रीते विध्यर्थनो अर्थ दर्शाववा विध्यर्थ कृदंत, वर्तमानकाळनुं रूप अथवा √**हो** प्रयुक्त होय तो तेनुं वर्तमान कृदंत वापरवामां आवे छे. दा. त. **जइ पंचहं इक्कु वि होन्तु पुरि तो जुप्पइ रणभरधरणधुरि** (३. ८२.); **जइ एवहिं घल्लिय कह वि पइं तो पुरु घाएवउ सयलु मइं** (३. १९८.) प्राकृतमां पण √**हो** धातुनुं वर्तमान कृदंतनुं रूप वपराय छे.

**(छ.) कर्मणिप्रयोगः**—[ १ ] **इज्ज** लगाडी परस्मैपदना प्रत्यय दा. त. तृतीय पुरुष एकवचन **गणिज्जइ** (२. ८३.) **एहाइज्जइ** (२. ८३.) [२ ] **इय** लगाडवाथी **पिट्टियइ** (७. १२२.) [३] संस्कृतनी अनुकृति **वुच्चइ** (८.४०.) **किज्जइ** (२.५५.) **दीसइ** (१. १.)

**§ ७०. कृदंतविचारः—**

[१] वर्तमानकृदंत—**पइसंत** (१. ४.) **णासंत** (१. ८.) **एंत** (१. २१.) **जंत** (१. २३.) **उग्गमंत** (१. ४७.) **करंत** (२. १४.) **वज्जंत** (२. ४.) **संत** (२. ९.) **पविस्समाण** (६. ७४.) **वट्टमाण** (६. १५०) **आसीण** (५. १०१.) इ०

[२] भूतकृदंत—**गय** (१. २.) **किय** (१. १.) **धूमाविय** (१. ७.) **पइट्ठ** (१. १३.) **दिण्ण** (१. १३.) **लइअ** (१. २३.) इ०

[३] विध्यर्थ कृदंत—**वंचेवाइं** (३. १०.) **खंचेवाइ** (३. १०) **अच्छेवउ** (३. ५.) **करिव्वउ** (६. १९.) **होइव्वउ** (६. १९.) इ.

[४] संबंधक भूतकृदंतः—

पि-गंपि (५. १७२.)

एप्पि-गेण्हेप्पि (१४. गीत.१.)

एप्पिणु-मेल्लेप्पिणु (१ २.) लेप्पिणु (१. २.) इ०

इवि-अहिसिंचिवि (१. ८८.) अंचिवि (१. ८८.) मयलिवि (१. १०) इ०

एवि-पेक्खेवि (१. २२.) निउड्डेवि (१. ४६.) इ०

एविणु-करेविणु (७. ८.) मारेविणु (१४. गीत. २.) इ०

इ-छड्डि (१३. १७.) कप्पि (१४. गीत. १.) इ०

इय-थिय (१. ४३.) आरक्खिय (१. ४३ ) इ०

ई-बइसी (६. १९.) इ०

ऊण-पुज्जिऊण (६. ७९ ) गिण्हिऊण (६. ८१.) नमिऊणं (४ २२२.) इ०

उं-खरी रीते आ प्रत्यय हेत्वर्थ कृदंतनो छे, छतां पण संबंधक भूत कृदंतनो अर्थ बतावबा तेने वापरवामां आवे छे दा. त. सोउं (४. २२२.) तोडिउं (६. ८७ ) इ०

[५] हेत्वर्थ कृदंतः--

इउं-संस्कृतनी अनुकृतिथी देसिउं (६. १६५.) णिएउं (६. २९.) विहावउं (३. १२०.)

इवि-संबंधक भूतकृदंत हेत्वर्थ कृदंत तरीके वापरवामां आवे छे. दा. त. डहिवि (२. १३३.)

आ कृदंत, अण तद्धितथी क्रियापदमांथी बनेला नामने षष्ठीनो प्रत्यय लगाडवाथी बने छेः दा. त. अच्छणहं (४. २६८.) मुणहु (७. २१.) णासणहं (२. १७०.)

# उपसंहार

प्रस्तुत ग्रन्थ अपभ्रंश-पाठावलीनो प्रथम अंश छे. तेमां आशरे इ. स. सातमाथी ते अगीआरमा सैका सुधीना अपभ्रंश-साहित्यमांथी उद्धरणो लेवामां आव्यां छे. आ ग्रन्थमां कुल चौद उद्धरणो छे. तेमांथी छ उद्धरणो अप्रसिद्ध ग्रन्थोमांथी लेवामां आव्यां छे. आ अप्रसिद्ध ग्रन्थोनी बधी हाथप्रतो भांडारकर प्राच्यविद्यामंदिरमांथी मेळववामां आवी हती. ते माटे ते संस्थानो, हुं ऋणी छुं. तेम ज गुजरात वर्नाक्युलर सोसाइटीए आ ग्रन्थना संपादनने उत्तेजन आपी, ते हाथप्रतो मेळवी आपवा प्रबंध कर्यो हतो; ते माटे ते संस्थाना प्रमुख अने संचालकनो हुं आभार मानुं छु. बाकीनां उद्धरणो लेवामां, एक या बीजी रीते मुद्रित ग्रन्थो ज उपयोगमां आव्या छे. आ बधा य मुद्रित अने अमुद्रित ग्रन्थोनो सविस्तर उल्लेख प्रत्येक उद्धरणनी टिप्पणीमां आपेली प्रस्तावनामां करवामां आवेलो छे.

आ उद्धरणोनी समज माटे मूलपाठनी साथे तेनी संस्कृतछाया आपवामां आवेली छे. केटलाक विद्वानो संस्कृतछाया आपवानी पद्धतिथी विरुद्ध छे. तेमनी दलील ए होय छे जे संस्कृतछायाथी अभ्यासक संस्कृतछायाने प्रधान गणी अपभ्रंशमूलपाठने गौण गणे छे तेथी अपभ्रंशनुं प्रधानत्व लुप्त थाय छे. परंतु आ दलील भ्रान्तिमूलक छे; कारण के अभ्यासक अपभ्रंशनी ज जिज्ञासाथी अभ्यासमां प्रवर्ते छे, ते कारणे तेनी दृष्टि आगळथी अपभ्रंशनुं प्रधानत्व लुप्त थतुं ज नथी. बीजुं, वाक्यसंकलना ( Syntax ) अन्य कोइ भाषा करतां संस्कृतमां संपादक सुस्पष्ट रीते बतावी शके छे, अने वाचक सरळ अने स्पष्ट रीते तेने समजी पण शके छे.प्रस्तुत पाठावलीनी संस्कृतछाया अपभ्रंशनी वाक्य संकलनाने बहुधा अनुसरे छे. अपभ्रंशनी वाक्यसंकलना शिथिल अने स्वच्छंदी होवाथी तेनी छायानी संस्कृत-भाषा एटली सुदृढ अने चोटदार न होय ए स्वाभाविक छे. अपभ्रंशमूलमां समासना पदनो विग्रह बतावबा विग्रहचिह्न (dash) नो प्रयोग करवामां आव्यो छे; ज्यारे उपसमासना पदोना विग्रह बतावबा पूर्णविराम जेवुं चिह्न योजवामां आव्युं छे. प्रत्येक उद्धरणनी टिप्पणीनी प्रस्तावनामां कर्ता, कृति, छंद, वस्तुनो सार इत्यादि बाबतोनो विचार करवामां आव्यो छे. टिप्पणीमां पाठपाठान्तरो, शुद्धि इत्यादिनी खास चर्चा करवामां आवी छे. शब्दकोशनी रचना अर्वाचीन देश्यभाषाओ जेवी के गूजराती, हिंदी, मराठी इ. ने अनुलक्षी करवामां आवी छे. देश्यशब्दोनी खास नोंध लेवामां आवी छे. अपभ्रंशव्याकरणनी रचना तारण-

पद्धति (Inductive Method) प्रमाणे करवामां आवी छे; छतां य तेनी सुश्लिष्टता अने उपयोगिता साचववा बीजा व्याकरणग्रन्थो के साहित्यमांथी निर्देश करी अथवा [ ] चिह्न करी रूप लेवामां आव्यां छे. आवां स्थानो अल्प छे. आदिनुं निवेदन संस्कृतमां आपवामां आव्युं छे. तेनुं कारण ए ज छे के परप्रान्तीय विद्वानोने प्रस्तुत ग्रन्थ उपयोगी थाय. गूजराती उपोद्घात पण अपभ्रंशसंबंधी मारुं मन्तव्य विद्वानो अने अभ्यासको समक्ष व्यक्त करी शकशे.

दि. बा. केशवलाल हर्षदराय ध्रुवे तेम ज महाराजश्री पुण्यविजजीए आ कार्यमां पगले पगले साहाय्य करी, तेमना अगाध ज्ञाननो निरर्गल लाभ मने आप्यो छे. ते माटे हुं तेमनो अत्यन्त ऋणी छुं. डॉ. पी. एल. वैद्य एम. ए. डी. लीट. एमणे त्रीजा अने पांचमा उद्धरण माटे पाठान्तरो अने सूचनो करी मने उपकृत कर्या छे. पांचमा अने बारमा उद्धरणने माटे पुष्पदन्तना महापुराणनी भांडारकर इन्स्टीटयुटनी प्रत उपरथी करेली नकल, तेम ज तेमना तरफथी संपादित थती उद्द्योतननी कुवलयमालानुं आदिनुं फॉर्म तथा भांडारकर इन्स्टीटयुटनी ते ग्रन्थनी प्रतनो लाभ, श्री जिनविजयजीए मने आप्यो हतो. तेने माटे तेमनो हुं उपकार मानुं छुं. आ उपरांत, प्रो. ए. एन. उपाध्येनो 'जोइंदु' परनो लेख, तेम ज प्रो. हिरालाल जैननां अपभ्रंशप्रकाशनो मने उपयोगी थयां हतां. तेम ज रायचंद्रग्रन्थमालामां प्रकाशित थएलो 'परमात्मप्रकाश' ग्रन्थ पण मने खास उपयोगी थई पड्यो हतो. स्व. डॉ. हरप्रसाद शास्त्री तेम ज डॉ. शहिदुल्लानां कण्ह अने सरहना दोहाकोशनां संपादननो पण उपयोग करवामां आव्यो छे. श्री. भोगीलाल सांडेसराए शब्दकोश बनाववामां मने मदद करी हती. ते माटे ते सर्वेनो हुं उपकार मानुं छुं.

गूजरातीना शास्त्रीय अभ्यासमां आ ग्रन्थ उपयोगी थई पडशे, तो मारो श्रम हुं सफल थएलो मानीश.

**ननु वक्तृविशेषनिःस्पृहा गुणगृह्या वचने विपश्चितः ।**

मधुसूदन चिमनलाल मोदी.

# ॥ अपभ्रंशपाठावली ॥

। संस्कृतछायासमेतं मूलम् ।

# ॥ प्रथममुद्धरणम् ॥

## [ चउमुहु सयंभु । ]

## ॥ जल-कीला-वण्णणु ॥

( १ )

विमले विहाणए कियए पयाणए [1]उयय-इरि-सिहरे रवि दीसइ
"मइ मेल्लेप्पिणु निसि-यरु लेप्पिणु कहि गय णिसि" णाइ गवेसइ॥
सु-प्पहाय-दहि-अंस-रवण्णउं कोमल-कमल-किरण-दल-छण्णउं
जय-हरे पइसारिउ पइसंतें णावइ मंगल-कलसु वसंतें
फग्गुण-खलहो दूउ णीसारिउ जेण विरहि-जणु कह व ण मारिउ ५
जेण वण-प्फइ-पय विब्भाडिय फल-दल-रिद्धि-मडप्फर साडिय
गिरि-वर गाम जेण[2] धूमाविय वण-पट्टण-णिहाय संताविय

---

१ उयइरिसिहरे । २ जेम ।

## [ चतुर्मुखः स्वयंभूः । ]

## ॥ जलक्रीडावर्णनम् ॥

( १ )*

विमलेन विभानकेन कृते प्रयाणे उदयगिरिशिखरे रविः दृश्यते
'मां मुक्त्वा निशाकरं लात्वा कुत्र गता निशा'यथा गवेषयति ॥
सुप्रभातदधिअंशरमणीयः कोमलकमलकिरणदलछन्नः
जगद्गृहे[2] प्रवेशितः प्रविशता यथा मंगलकलशः वसंतेन
फाल्गुनखलस्य शासनं निःसारितं येन विरहिजनः कथमपि न मारितः
येन वनस्पतिपयः नाशितं फलदलऋद्धिअभिमानः शाटितः
गिरिवरा ग्रामाः येन धूमापिताः वनपट्टनसमुदायैः[4] संतापितः

---

* आ छाया नीचे नोंधेली टीप, ते मूळ हाथप्रतना हांसियामां कोई वाचके नोंधेली टिप्पणी जे अभ्यासकना तटस्थ विचार माटे जेमने तेम ज आपवामां आवी छे. आ टिप्पणी अपभ्रंश मूळ साथे सरखावबी.

१ शोभनप्रभसैवातिशयेन दधिस्थंसक आदित्यकलशश्चाभूत् । २ जगदगृहे । ३ पालयः । ४ समुदायः ।

सरि-पवाह मिहुणइं णासंतइं जेण वरुण-घण·णियलेहिं घित्तइं
जेण उच्छु-विड जंतेहिं पीलिय पव-मंडव-णिरिक्क आचेलिय
जासु रज्ज[1] पर-रिद्धि पलासहो तहो मुहु मयलिवि फग्गुण-मासहो
॥ घत्ता ॥ पंकय-वयणउ कुवलय-णयणउ केयइ-केसर-सिर·सेहरु
पल्लव-कर·यलु कुसुम-णहुज्जलु पइसरइ वसंत-णरेसरु ॥१२

( २ )

दोला-तोरण-वारे पई-हरे पइट्ठु वसंतु वसंत·सिरि[2]-हरे
सर·रुह-वास·हरेहिं रव-णेउरु[3] आवासिउ महु·अरि-अंते·उरु
कोइल-कामिणीउ उज्जाणेहिं सुय-सामंत[4] लया·हर-थाणेहिं
पंकय-छत्त·दंड सर-नियरेहिं सिहि-साहुलउ मही·हर-सिहरेहिं
कुसुमा·मंजरि-धय साहारहिं दवणा-गंठि·वाल केयारिहिं १७

१ रज्जु। २ -सिराहरे ३ नेउरु ४-मासंत

सरित्प्रवाहं मिथुनानि धावन्ति येन वरुणघननिगडेषु[1] क्षिप्तानि
येन इक्षुसमूहः यंत्रैः पीडितः प्रपामंडपचौराः[2] निर्वस्त्रायिताः
यस्य राज्ये परऋद्धिः पलाशस्य तस्य मुखं मलिनयित्वा फाल्गुनमासस्य
॥घत्ता॥ पंकजवदनः कुवलयनयनः केतकीकेसरशिरःशेखरः
पल्लवकरतलः कुसुमनखोज्ज्वलः प्रविशति वसंतनरेश्वरः ॥

( २ )

दोलातोरणद्वारे प्रतिगृहे प्रविष्टः वसंतः वसंतश्रीगृहे
सरोरुहवासगृहेषु रवनूपुरं आवासितं मधुकरी-अंतःपुरं
कोकिलाकामिन्यः उद्यानेषु शुकसामंताः लतागृहास्थानेषु
पंकजछत्रदण्डाः सरोनिकरेषु शिखिअवचूलं[3] महीधरशिखरेषु
कुसुम-मञ्जरीध्वजाः सहकारेषु दमनकँग्रंथिपालाः केदारेषु

१ नदी। मेघ। जलबन्धः॥ २ रिक्कनी नीचे नीशानी करी चौराः नोंध हांसियामां छे. ३ सिगिरिका। ४ भंडारपलकाः।

वाणर-मालिय साहा-वंदिहिं[1] महु-अर-मत्त-माल-मयरंदिहिं[2]
[3]मंतोल्लव-कल्लोलावासहिं भुंजा अहिणव-फल-महणासहिं
एम पइट्ठउ विरहि विद्धंतउ गय-वइ-वम्मेहि अंदोलंतउ
॥ घत्ता ॥ पेक्खेवि एंतहो रिद्धि वसंतहो महु-ईषु-सुरा-रस-मंती
णम्मय बाली मुंभल भोली णं भमइ स-लोणी ऽहो-रत्ती ॥२२

( ३ )

णम्मयाइ मयर-हरहो जंतिए णाइ पसाहणु लइउ तुरंतिए
घवघवंति जे जल-पब्भारा ते जि णाइ णेउर-झंकारा
पुलिणइ बे वि जासु सच्छायइं ताइं जि ऊढणाइ[4] णं जायइं
जं जलु खलइ वलइ उल्लोलइ रसणा-दाम-भंति[5] णं घोलइ

---

१ पानानां बाजुमां नोंधेलुं पाठांतर:—वंदरसाहियमालावंदेहि पाठे । मूळ प्रतनो पाठ स्वीकार्यो छे. २ मयरंदिहि ३ मंतोलकल्लोलावासाहि।
४. उढणाइ । आ पाठनी चर्चा माटे टीकामां जुओ. ५ रसणा-दामुभंति इ०

वन्दनमालिकाः शाखावृन्देषु मधुकरमत्तमालामकरन्देषु
मंत्रोल्लापकल्लोलावासेषु अग्रेभोजकाँ अभिनवफलमहानसेषु
एवं प्रविष्टः विरहेन विध्यन् मन्मथगजपतौ आंदोल्यमानः
॥घत्ता॥ प्रेक्ष्य आयातः ऋद्धिं वसंतस्य ईषन्मधुसुरारसमत्ता
नर्मदा बाला विह्वलँ मुग्धाँ इव भ्रमति सलावण्या अहोरात्रं ॥

( ३ )

नर्मदया मकरधरं यान्त्या इव प्रसाधनं लातं त्वरयन्त्या
घवघवरवं कुर्वन्ति ये जलसमूहाः ते एव यथा नूपुरझंकाराः
पुलिने द्वे अपि यस्याः सच्छाये ते एव उपरितनवस्त्रे इव जाते
यज्जलं स्खलति वलति उल्लोलयति रसनादामभ्रांतिं इव घूर्णयति

---

१ बंदरसाहियतालावंदेहि पाठे । २ अग्रेभोजकाः स्तितिषुः । ३ अभिनवा। ४ अकुटिला ।

जे आवत्त समुट्ठिय चंगा ते जि णाइ तणु-ति-वलि-तरंगा २७
जे जल-हत्थि स-यल-कुंभिल्ला ते जि णाइं थण अध्धुम्मिल्ला
जो डिंडीर-णियरु[1] अंदोलइ णावइ सो जि हारु रंखोलइ
जं जल-यर-रण-रंगिउ पाणिउं तं जि णाइ तंमोलु स-वाणिउ
मत्त-हत्थि-मय-मइलिउ जं जलु तं जि णाइ किउ अक्खिहु कज्जलु
जाउ तरंगिणीउ[2] अवर-उहउ ताउ जि भंगुराउ णं भउहउं
जाउ भमर-पंतिउ अल्लीणउ केसावलिउ ताउ णं[3] दिण्णउ
॥घत्ता॥ मज्झे जंतिए मुहु दरिसंतिए माहेसर-लंक-पईयहु
मोहु-प्पाइउ[4] मणे-जरु लाइउ तहु सहस-किरण[5]-दस-गीवहु ॥ ३५

( ४ )

सो वसंतु सा रेवा तं जलु सो दाहिण-मारुउ ऽमिय-सीयलु
ताइं असोय-णाय-चूय-वणइं महुअरि महुर-सरइ लय-भवणइ

१. डिंडीरुणियरू । २. तरंगिणिउ । ३. नं । ४. मोहु उप्पाइउ । ५. ससकिरणु ।

ये आवर्ताः समुत्थिताः चंगाः ते एव यथा तनुत्रिवलितरंगाः
यौ जलहस्तिसकलकुंभौ तौ एव यथा स्तनौ अर्धोन्मीलितौ
यः डिंडिरनिकरः आन्दोलयति यथा स एव हारः दोलायते
यज्जलचरवर्णरंजितं पानीयं तदेव यथा तांबूलं सवर्णकं
मत्तहस्तिमदमलिनितं यज्जलं तदेव यथा कृतं अक्ष्णोः कज्जलं
याः तरंगिण्यः अवर-मुखिन्यः ताः एव भंगुराः यथा भ्रुवः
याः भ्रमर-पंक्तयः मत्ताः केशावल्यः ताः यथा उक्ताः
॥घत्ता॥ मध्ये यान्त्या मुखं दर्शयन्त्या माहेश्वरलंकापतिभ्यां
मोहः उत्पादितः मनसिजः लायितः ताभ्यां सहस्रकिरण-दशग्रीवाभ्यां ॥

( ४ )

सः वसंतः सा रेवा तद् जलं सः दक्षिण-मारुतः अमृतशीतलः
तानि अशोकनागचूतवनानि मधुकरेण मधुरस्वराणि लताभवनानि

१ विलसति

ते धुयगाय ताउ कीरोलिउ ताउ कुसुम-मंजरि-रिंछोलिउ
ते पल्लव सो कोइल-कलयलु सो केयइ-केसर-रय-परिमलु
ताउ णवल्लउ मल्लिय-कलियउ दवणा-मंजरियउ णव-फलियउ ४०
ते अंदोला सो[1] जुवइ-यणु पेक्खेवि सहस-किरणु हरिसिय-मणु
सहु अंते-उरेण गउ तेत्तहे णम्मय पवर महा-णइ[2] जेत्तहे
दूरे थिय आरक्खिय णिय-बलु जलु जंतिअहि[3] णिरुद्धउ णिम्मलु
॥ घत्ता ॥ वड्ढिय-हरिसिउ जुवइहिं सरिसउ माहेसर-पुर-परमेसरु
सलिल-ऽब्भंतरे माणस-सर-वरे णं पइट्ठु सुरिंदु स-अच्छरु ॥ ४५

( ५ )

सहस-किरणु सहसत्ति निउड्डेवि आउ णाइ महि-वहु अवरुंडेवि
दिट्ठु मउड्ड छुड्ड अद्धुम्मीलिउ रवि व दरुग्गमंतु सोहिल्लउ
दिट्ठु णिडालु वयणु वच्छ-त्थलु णं चंदद्धु कमल णह-मंडलु

---

१. तं । २. नइ । ३. जंतिअए ।

ते भ्रमराः ताः कीरपंक्तयः ताः कुसुममंजरीपंक्तयः
ते पल्लवाः सः कोकिलकलकलः स केतकीकेसररजःपरिमलः
ताः नवाः मल्लिकाकलिकाः दमनकमंजर्यः नवफलिताः
ते आन्दोलाः सो युवतिजनः [एतानि] प्रेक्ष्य सहस्रकिरणः हृष्ट-मनाः
सह अंतःपुरेण गतः तावत् नर्मदा प्रवरा महानदी यावत्
दूरे स्थित्वा आरक्ष्य निजबलं जलं यान्त्रिकैः निरुद्धं निर्मलं
॥घत्ता॥ वर्धित-हर्षः युवतिभिः सहितः माहेश्वरपुर-परमेश्वरः
सलिलाभ्यंतरे मानस-सरोवरे यथा प्रविष्टः सुरेन्द्रः साप्सराः ॥

( ५ )

सहस्रकिरणः सहसा निमज्ज्य आयातः यथा महीवधूं आश्लिष्य
दृष्टः मुकुटः शीघ्रं अर्धोन्मीलितः रविः इव ईषत्उद्गच्छन् शोभावान्
दृष्टं ललाटं वदनं वक्षःस्थलं यथा चंद्रार्धः कमलं नभोमंडलं

---

१. जले बुडयित्वा । २. ईषत् ।

पभणइ ससिह-रासि "लइ दुक्कहो जुज्झहो रमहो ण्हाहु उलुक्कहो"
तं णिसुणेवि कडक्ख-विक्खेवउ बुड्डउ उक्क [1]राय-मह-एविउ ५०
उप्परिं[2] कर-यल-नियरु परिट्ठिउ णं रत्तुप्पल-संडु समुट्ठिउ
णं केयइ-आरामु मणोहरु णक्ख-सूइ कडउल्ला-केसरु
महु-अर सर-भरेण अलीणा कामिणि भिसिणि भणेवि णं लीणा
॥घत्ता॥ सलिल तरंतहु उम्मीलंतहु मुह-कमलहु केइ पधाइय
" आयइ स-रसइ किय तामरसइ " नर-वइहे भंति उप्पाइय ॥ ५९

( ६ )

अवरोप्परु जल-कील करंतहु घण-पाणिय-पहयर[3] मेल्लंतहुं
कहि मि चंद-कुंदुज्जल-तारेहिं धवलिउ जलु तुट्टंतिहिं[4] हारेहि
कहि मि रसिउ णेउरहिं रसंतिहि कहि मि फुरिउ कुंडलहि फुरंतहि
कहि मि स-रस-तंबोलारत्तउ कहि मि बउल-कायंबरि-मत्तउ

---

१. राउ । २ उप्परे । ३ प्पहर । ४ तदंतिहे

प्रभणति सहस्ररश्मिः " ननु ढौकध्वं, युध्यत, स्नात, उल्लिनीत "
तं निश्रुत्य कटाक्षविक्षेपकाः निमग्नाः उत्कोः[3] राजमहादेव्यः
उपरि करतलनिकरः परिस्थितः यथा रक्तोत्पलखंडः समुत्थितः
यथा केतकीआरामः मनोहरः नखसूचिः कटककेसरैः[3]
मधुकराः स्वरभरेण मत्ताः कामिन्यः बिसिन्यः भणित्वा यथा लीनाः
॥घत्ता॥ सलिले तरत्सु उन्मीलत्सु मुखकमलेषु केचित् प्रधाविताः
'आगतानि सरसानि किं तामरसानि[3] नरपतये भ्रान्तिः उत्पादिता ॥

( ६ )

परस्परं जल-क्रीडां कुर्वतां घन-पानीय-प्रकरैः[4] मुञ्चतां
कुत्र अपि चंद्रकुन्दोज्ज्वलतारैः[5] धवलितं जलं त्रुट्यद्भिः हारैः
कुत्र अपि रसितैः नूपुरैः रसद्भिः कुत्र अपि स्फुरितं कुण्डलैः स्फुरद्भिः
कुत्र अपि सरसताम्बूलारक्तं कुत्र अपि बकुलकादंबरीमत्तं

---

१ रश्मयः। २ आमस्तकः। समस्ताः ३ सेहरु पाठे । ४ जलच्छटा । ५. शुभैः।
६. शब्दं कृतं जलेन । ७ मदिरा ।

कहि मि फलिह-कप्पुरेहिं वासिउ कहि मि सुरहि-मिग-मय-वामोसिउ ६०
कहि मि विविह-मणि-रयणुज्जलियउ कहि मि धोय-कज्जल-संवलियउ
कहि मि बहल-कुंकुम-पंजरिअउ कहि मि मलय-चंदण-रस-भरिअउ
कहि मि जक्ख-कद्दमेण करंबिउ कहि मि भमर-रिंछोलिहिं चुंबिउ
॥ घत्ता ॥ विद्दम-मरगय-इंदणील-सय-चामियर-हार-संघायहिं[1]
बहु-वण्णुज्जलु णावइ णह-यलु सुर-धणु-घण[2]-विज्ज-बलायहिं ॥६॥

( ७ )

का वि करंति केलि सहु राएहिं पहणइ कोमल-कुवलय-घाएहिं
का वि मुद्ध-दिट्ठिए सु-विसालए[3] का वि णवल्लए मालइ-मालए
का वि सु-गंधेहिं पायड-हुल्लेहि का वि सु पूय-फलेहिं वउल्लेहिं
का वि ज्जुण-पण्णहिं पट्टवियहिं[4] का वि रयण-मणि-अबलंबियहिं
का वि विलेवणेहिं उव्वरियहिं का वि सुरहि-दवणामंजरियहिं ७

१. विद्दममरगयइं इंदणीलसयइचामीयरहारसंघायहिं २ घणु । ३ सुविसालइं । ४ ज्जुण्णपण्णहिं पट्टणिहिं ।

कुत्र अपि स्फटिककर्पूरैः वासितं कुत्र अपि सुरभिमृगमदं-व्यामिश्रितं
कुत्र अपि विविधमणिरत्नोज्ज्वलितं कुत्र अपि धौतकज्जलसंवलितं
कुत्र अपि बहलकुंकुमपिञ्जरितं कुत्र अपि मलयचंदनरसभरितं
कुत्र अपि यक्षकर्दमेन कर्बूरितं कुत्र अपि भ्रमरपंक्तिभिः चुंबितं
॥ घत्ता ॥ विद्रुममरकतइन्द्रनीलशतचामीकरहारसंघातैः
बहुवर्णोज्ज्वलं यथा नभस्तलं सुरधनुःघनविद्युद्बलाहकैः ॥

( ७ )

का अपि करोति केलीं सह राज्ञा प्रहन्ति कोमलकुवलयघातैः
का अपि मुग्धदृष्ट्या सुविशालया का अपि नवीनया मालतीमालया
का अपि सुगन्धैः पाटलपुष्पैः का अपि सुपूगफलैः वर्तुलैः
का अपि अर्जुनपर्णैः प्रस्थापितैः का अपि रत्नमणिअवलंबितैः
का अपि विलेपनः उद्वृत्तैः का अपि सुरभिदमनकमञ्जरीभिः

कहि वि गुज्झु जले अद्धुम्मीलउ[1] णं मयर-हर-सिहरु सोहिल्लउ
कहि वि कसण-रोमावलि दिट्ठी काम-वेणि[2] णं गलेवि पइट्ठी
कहि[3] वि थणोवरि ललइ अहोरणु णाइ अणंगहो केरउ तोरणु
॥घत्ता॥ कहि वि स-रुहिरइं दट्ठइं णहरइं थण-सिहरोवरि सु-पहुत्तइ
वेग्गि[4] वलग्गहो मयण-तुरंगहो णं पयइ छुडु छुडु खित्तइं ॥ ७९

( ८ )

तं जल-कील णिएवि पहाणहुं जाय बोल्ल णह-यले गिव्वाणहं
एभणइ एक्कु हरिस-संपण्णउ "ति-हुअणे सहस-किरणु पर-धण्णउ
जुवइ स-हासु जासु स-वियारउ विब्भम-हाव-भाव-वावारउ
णलिणि-वण व दिण-यर-कर-इच्छउ कुमुय-वणु व ससहर-किरणिच्छउ[5]
कालु जाइ जसु मयण-विलासें माणिणि-पत्तिज्जवणायासें[6] ८०

१. आद्धमिल्लउ –२. वेणी ३. कहे वि; कहे वि राख्युं होत तो चालत; परंतु उपरना प्रयोग साथे मेळ लाववाना हेतुए संस्कार कर्यो छे. ४ वेग्गेण ५. तणिच्छउ ६ पत्तेज्जवणायासें ।

कस्याः अपि गुह्यं जले अर्धमीलितं यथा मकरधरशेखरं शोभायुक्तं
कस्याः अपि कृष्णरोमावलिः दृष्टा कामवेणी यथा गलित्वा प्रविष्टा
कस्याः अपि स्तनोपरि ललति उपरितनवस्त्रं यथा अनंगस्य तोरणं
॥घत्ता॥कस्याःअपि सरुधिराणि दष्टानि नखराणि स्तनशिखरोपरि सुप्रभूतानि
वेगेन विलग्नस्य मदनतुरंगस्य यथा पदानि ईषत् ईषत् क्षुण्णानि ॥

( ८ )

तां जलक्रीडां दृष्ट्वा प्रधानानां जातः शब्दः नभस्तले गीर्वाणानां
प्रभणति एकः हर्षसंपन्नः "त्रिभुवने सहस्रकिरणः परमधन्यः
युवत्यः यस्य सहासाः सविकाराः विभ्रमहावभावव्यापारिताः
नलिनीवनं इव दिनकरकरइच्छिन्यः कुमुदवनं इव शशधरकिरणेच्छिन्यः
कालः याति यस्य मदनविलासेन मानिनीप्रतायनायासेन

१ कामस्य २ उपरितनवस्त्रं.

अच्छउ[1] सु-रउ जेण जगु मत्तउ जल-कीलए किन्न पज्जत्तउ"
तं णिसुणेवि अवरेक्कु पबोल्लिउ "सहस-किरणु केवल सलिलोल्लिउ
इत्थु पवाहु[2] मणो-हर-वत्तउ जो जुवईहिं[3] गुज्झंतु वि पत्तउ
॥घत्ता॥ जेण खणंतरे सलिल-ब्भंतरे गलियंसु-धरण-वावारए
स-हरसु दुक्कउ माणेवि मुक्कउ अंते-उरु एक्कए वारए ॥ ८५

(९)

रावणो वि जल-कील करेप्पिणु सुंदर सियय-वेइ विरएप्पिणु
उप्परि जिण-वर-पडिम चडावेवि विविह-विताण-णिवहु बंधावेवि
तुप्प-खीर-सिसिरेहिं अहिसिंचिवि णाणा-विह-मणि-रयणिहि अंचिवि[4]
णाणा-विहहिं विलेवण-भेयहिं दीव-धूव-बलि-पुप्फ-णिवेयहिं
पुज्ज करेवि किर गायइ जावहिं[5] जंतिएहिं जलु मेल्लिउ[6] तावहिं ९०

१ अछउ २ पहाउ ३ जुवईहिं ४ अंचेहिं ५-६ जावेहिं-तावेहिं

अच्छं सुरतं येन जगत् मत्तं जलक्रीडया किं न पर्याप्तम्"
तत् निश्रुत्य अपरः एक उक्तवान् सहस्रकिरणः केवलं सलिलार्द्रः
अत्र प्रवाहेः मनोहरवृत्तः यः युवतीनां गुह्यान्तः अपि प्रविष्टः
॥ धत्ता ॥ येन क्षणांतरे सलिलाभ्यन्तरे गलितांशुकधरणव्यापारे
सहर्षं ढौकितं भुक्त्वा मुक्तं अंतःपुरं एकस्मिन् वारे ॥

(९)

रावणः अपि जलक्रीडां कृत्वा सुंदरां सिकतावेदीं[3] विरच्य
उपरि जिनवरप्रतिमां आरोह्य विविधवितानिवहं बन्धयित्वा
घृतक्षीरदधिभिः अभिसिंच्य नानाविधमणिरत्नैः अर्चित्वा
नानाविधैः विलेपनभेदैः दीपधूपबलिपुष्पनैवेद्यैः
पुजां कृत्वा किल गायति यावत् यान्त्रिकैः जलं मुक्तं तावत्

१. प्रवाहः २. शिथिलितवस्त्राणां ३. वालुकावेदि

पर-कलत्तु संकेयहो दुक्कउ णाइ वियड्ढहिं मण्णेवि मुक्कउ
धाइउ उभय-तडइं धोवंतउ जिण-वर-पवर-पुज्ज रेलंतउ
दह-मुहु पडिम लेवि विहडप्फडु कह वि कह वि णोसरिउ विवावडु
॥घत्ता॥ भणइ " णरेसहो, तुरिय गवेसहो किउ जेण एउ पिसुणत्तणु
किं बहु वुत्तें तासु णिरुत्तें[1] दक्खवमि अज्जु जम-सासणु "॥ ९९

( १० )

तो एत्थंतरे लद्धाएसा गय मण-गमणा ऽणेय गवेसा
रावणेण सरि दिट्ठ वहंती मुय-महु-यर-दुक्खेण व विजंती[2]
चंदण-रसेण व बहल-विलित्ती जल-रिद्धिए णं जाव्वण-इत्ति
मंथर-वाहेण व विस्सत्थी[3] जं च पट्ट-वत्थइं व णियत्थी
पुलिणाहोरणाइं व पगुत्ती[4] वालाहिव-णिद्दाए व सुत्ती १००

१. वुत्तेण-णिरुत्तेण । २. दुक्खेणवजंती । ३. वोसत्थी । ४. वीणाहो-रणाइंवपंगुत्ती ।

परकलत्रं संकेताय ढौकितं यथा विदग्धैः भुक्त्वा मुक्तं
धावितं उभय–तटे धावत् जिनवरप्रवरपूजां प्लावयत्
दशमुखः प्रतिमां लात्वा झटिति कथमपि कथमपि निःसृतः व्याकुलः[1]
॥ घत्ता ॥ भणति "नरेशाः त्वरया गवेषयत कृतं येन एतत् पिशुनत्वं
किं बहु उक्तेन तस्मै निश्चयेन दर्शयामि अद्य यमशासनं "॥

( १० )

तावत् अत्रान्तरे लब्धादेशाः गताः मनोगमनाः अनेके गवेषकाः
रावणेन सरित् दृष्टा वहन्ती मृतमधुकरदुःखेन इव विज्यमाना
चन्दनरसेन यथा बहलं विलिप्ता जलऋध्या यथा यौवनवृत्ता
मन्थरवाहेन यथा विश्वस्ता यत् च पट्ट–वस्त्रेण यथा निर्वासिता[2]
पुलिनउपरितनवस्त्रेण[3] यथा प्रावृता व्यालाधिपनिद्रया यथा सुप्ता

१. जलप्रवाहेन व्याकुलीकृतचित्तः । २. साटिकायुक्ता । ३. उपरितनवस्त्रेन ।

मल्लिव-दंतेहि व विहसंती णीलुप्पल-णयणहिं व णिएंती
बउल-सुरा-गंधेण व मत्ती केयइ-हत्थेहि व णच्चंती
महु-अर-महुर-सरिं[1] व गायंती उज्झर-मुरयाइं[2] व वायंति
॥घत्ता॥ अ-रमिय-रामहो णिरु णिक्कामहो आरुसेवि परम-जिणिंदहो
पुज्ज हरेप्पिणु पाहुडु लेप्पिणु गय णावइ पासु समुद्दहो ॥ १०९

( ११ )

तहिं अवसरे जे किंकर धाइय ते पडिवत्त लएप्पिणु आइय
कहिय सुणंतह खंधावारहो " लइ एत्तडउ सारु संचारहो[3]
माहेसर-णर-वइ परमेसरु सहस-किरणु नामेण नरेसरु
जा जल-कील तेण उप्पाइय सा अमरेहिं मि रमिवि ण णाइय
सुव्वइ कासु को वि किर सुंदरु सुर-वइ भरहु सयरु चक्केसरु ११०
भद्दउ[4] सणँ-कुमारु ते सयल वि णउ पावंति तासु एक्क-यल वि

१. सरू । २. मुखाइ । ३. संसारहो । ४. हाथपोथीमां मय्यउ जेवुं वंचाय छे; शालिभद्रने उल्लेखी भद्दउ सुधारो कर्यो छे.

मल्लिकादन्तैः इव विहसंती नीलोत्पलनयनैः इव पश्यन्ती
बकुलसुरागंधेन इव मत्ता केतकीहस्तैः इव नृत्यन्ती
मधुकरमधुरस्वरेण इव गायन्ती निर्झरमुरजान् इव वादयन्ती
॥घत्ता॥ अरमितरामायै खलु निष्कामाय आरुष्य परमजिनेन्द्राय
पूजां हृत्वा प्राभृतं लात्वा गता यथा पार्श्वं समुद्रस्य ॥

( ११ )

तस्मिन् अवसरे ये किंकराः धाविताः ते प्रतिपत्तिं लात्वा आयाताः
कथितं श्रुण्वते स्कन्धावाराय " ननु एतावान् सारः संचारस्य
माहेश्वरः नरपतिः परमेश्वरः सहस्रकिरणः नाम्ना नरेश्वरः
या जलक्रीडा तेन उत्पादिता सा अमरैः अपि रन्तुं न ज्ञाता
श्रूयते कस्य कः अपि किल सुन्दरः सुरपतिः भरतः सगरः चक्रेश्वरः
भद्रः सनत्कुमारः ते सकलाः अपि न खलु प्राप्नुवन्ति तस्य एककलां अपि

१. न रमिताः रामाः येन सः परमेश्वरेण । २ खंडमेकं ।

का वि अ·उव्व लील विम्माणिय धम्मु अत्थु वेण्णे वि परिणामिय,
काम-तत्तु पुणु तेण जि णिम्मिउ अण्ण रमंति पसव कोदूमिउ
॥घत्ता॥ 'मइ पवहंतिण भुयणे तवंतिण[1] गयण-त्थ पयंगु ण णावइ'
एण पयारिण पिय-वावारिण[2] थिउ सलिले पइसेवि णावइ "॥११९

( १२ )

अवरि वुत्तु केण "मइ लक्खिउ सव्वउ सव्वु एण जं अक्खिउ
जं पुणु तहो केरउ अंते·उरु णं पच्चक्खु जि मयर·द्धय-पुरु
णेउर-मुयरहु पेक्खणया-हरु लावण्णंभ-तलाउ मणो·हरु
सिर·मुह·कर·कमल महा·सरु मेहल-तोरणाहं छण-वासरु
थण-हत्थिहिं साहारण-काणणु हार-सग्ग-वच्छहो गयणंगणु १२०
अहर·पवाल-पवाला·आयरु[3] दंत·पंति-मोत्तिय-सद्दंण·यरु
जीहा-कल·यंठिणिहिं[4] णंदणवणु कण्णंदोलयाहं चित्तत्तणु

१. महिपवहंतएणभुयणेतवंतएण २. एणपयारेणपियवावारेण ३. यायरू ४. यंट्ठिणिहिं ।

का अपि अपूर्वा लीला विभुक्ता धर्मः अर्थः द्वौ अपि परिणामिताः
काम-तत्त्वं पुनः तेन एव निर्मितं अन्ये रमन्ते पशवः सुरतं[1]
॥घत्ता॥ 'मया प्रवहता भुवने तपता गगनस्थः पतंगः न ज्ञायते[2]'
एतेन प्रकारेण प्रियव्यापारेण स्थितः सलिले प्रविश्य इव" ॥

( १२ )

अपरेण उक्तं केन " मया लक्षितं श्रव्यं सर्वं अनेन यद्आख्यातं
यत् पुनः तस्य अन्तःपुरं यथा प्रत्यक्षं एव मकरध्वजपुरं
नूपुरमुरजैः प्रेक्षनकगृहं लावण्यांभःतडागं सुमनोहरम्
शिरःमुखकरकमकमलं महासरः मेखलातोरणैः क्षणवासरः
स्तनहस्तिभिः साधारणैकाननं हारस्वर्गवृक्षस्य गगनांगनं
अधरप्रवालप्रवालाकरः दंतपंक्तिमौक्तिकस्यंदनकरः
जिह्वाकलकंठिनीभिः नंदनवनं कर्णआन्दोलकैः चित्रत्वं

१. सुरतं । २. न शोभते । ३. साधारण नाम देशः ।

लोयण-भमरहुं केसर-सेहरु स-मुहाभंगउ [1]णट्ठव्वय-हरु
॥घत्ता॥ काइं बहुत्तेण पुणुरुत्तेण मयणग्गि-डमरु संपण्णउं
णरहुं अणंतहुं मण-धणवंतहु धुउ चोरु चंडु उप्पण्णउं ॥ १२५

( १३ )

अवरेक्केण वुत्तु " मइ जंतइ दिट्ठइ णिम्मल-सलिले खंतइ
अइ-सुंदरइ सु-किय-कम्माइ व सु-घडियाइ अहिणव-पेम्माइं व
णिग्गलाइं सु-किविण[2]-हियया इ व णिउ ण-समासिय सु-कइ-पयाइ व
संचारिमइं कु-पुरिस-धणाइं व कारिमाइं कुट्टणि-वयणाइं व
पइरिक्कइं सज्जण-चित्ताइ व वद्धइ [3]अत्थ-इत्ति वुत्ताइ व १३०
दुल्लंघणियइं सु-कलत्ताइं व चेट्ठ-विहूणइं बुड्ढत्ताइ व
वारि वमंति ताहि सिर-णासेहिं उरु-कर-चरण[4]-कण्ण-णयणासेहिं
तेहिं एउ जलु थंभिवि मुक्कउ तेण पुज्ज लोइंतु पदुक्कउ "

१. णट्ठव्वय । २ किविण्ण । ३ अच्छ । ४ करण

लोचनभ्रमराणां केसरशेखरं सहमुखभंगं नाट्यगृहं
॥घत्ता॥ किं प्रभूतेन पुनरुक्तेन मदनाग्निडमरः संपन्नः
नरेभ्यः अनंतेभ्यः मनोधनवद्भ्यः धूर्तः चौरः चंडः उत्पन्नः

( १३ )

अपरेण एकेन उक्तं "मया यन्त्राणि दृष्टानि निर्मलसलिले खातानि
अतिसुंदराणि सुकृतकर्माणि इव सुघटितानि अभिनवप्रेमाणि इव
निर्गलानि सुकृपणहृदयानि इव निपुणसमासितानि सुकविपदानि इव
संचारीणि कुपुरुषधनानि इव कृत्रिमानि कुट्टिनीवदनानि इव
प्रगुणानि सज्जनचितानि इव बद्धानि अर्थचित्रेण वृत्तानि इव
दुर्लंघनीयानि सुकलत्राणि इव चेष्टाविहीनानि वृद्धत्वानि इव
वारि वमन्ति तासां शिरःनासिकाभ्यां उरुचरणकर्णनयनास्यैः
तैः एतज्जलं स्तब्ध्वा मुक्तं तेन पूजां लुब्धता प्रढौकितं "

१ काष्ठानां परस्परकलशिका अन्यत्र विशिष्टपदन्यासः । २ लोचनमुखे च ।

**॥घत्ता॥ तं णिसुणेप्पिणु लेहु भणेप्पिणु असि-वरु सयं भुइं कड्ढियउं[1]**
**सहइ समुज्जलु ससि-किरणुज्जलु णं पत्त-[2]दाण-फलु वड्ढियउं॥१३५**

---

१ असिवरू सयंभुवेणए कड्ढियउ । २. दाणु

आ संधिने छेडे मूळ हाथ-प्रतमां संधिनो अंक भूकी नीचेनी गाथा लखी छेः—

जल-कीलाए सयंभू-चउमुह पवंग गो-ग्गह-कहाए
भद्दं च मच्छ-वेहें अज्ज वि कइणो ण पावंति ॥

आ पछी तरत ज नवी संधिनी शरुआत थाय छे.

॥घत्ता॥ तत् निश्चित्य 'लात' भणित्वा असिवरः स्वयं भुजेन कृष्टः
शोभते समुज्ज्वलः शशिकिरणोज्ज्वलः यथा पात्रदानफलं वर्धितं ॥

---

पुष्पिकानी छाया

जलक्रीडायां स्वयंभुवं चतुर्मुखं पतंगं गोग्रहकथायां
भद्रं च मत्स्यवेधे अद्यापि कवयो न प्राप्नुवन्ति ॥

# ॥ द्वितीयमुद्धरणम् ॥

[ तिहुयण सयंभु । ]

## ॥ सीयदिव्वकहाणउ ॥

( १ )

लवणंकुसु पुरे पइसारेवि जिय-रयणि-यर-महाहवेण
वइदेहिहे दु-ज्जस[1]-भीअएण दीउ समोडिउ राहवेण ॥

लवणंकुस-कुमार बलहद्दें पुरि पइसारिय जय-जय-सद्दें
झल्लरि-पडह-भेरि-दडि-संखेहि वज्जंतेहिं अवरेहिं अ-संखेहि
रामु अणंग-लवणु रहे एक्कहिं लक्खणु मयणंकुसु अण्णेक्कहिं
वज्ज-जंघु थिउ दु-द्दम-वारणे बीया-यदु णाइ गयणंगणे
जय-जय-कारिउ भड-संघाएं रामहो सुअ-मेलावि अ आएं
जण-वउ रहसें अंगे न माइउ एक्कमेक्क चूरंतु पधाइउ

---

१. दुजस

[ त्रिभुवनः स्वयंभूः । ]

## ॥ सीतादिव्यकथानकम् ॥

( १ )

लवणांकुशौ पुरे प्रवेश्य जितरजनिचरमहाहवेन
वैदेह्याः दुर्यशोभीतकेन दिव्यं संव्यूढं राघवेण ॥

लवणांकुशकुमारौ बलभद्रेण पुरे प्रवेशितौ जयजयशब्देन
झल्लरीपटहभेरिदडिशंखैः वाद्यमानैः अपरैः असंख्यैः
रामः अनंगलवणः रथे एकस्मिन् लक्ष्मणः मदनांकुशः अन्यदेकस्मिन्
वज्रजंघः स्थितः दुर्दमवारणे द्वितीयाचन्द्रः इव गगनांगने
जयजयकारितं भटसंघातेन रामस्य सुतमेलापे च आयातेन
जनपदः रभसा अंगे न मायितः एकैकं चूरयन् प्रधावितः

पेक्खेवि ते कुमार पइसंता णारिउ णवि गणंति पइ सन्ता
सीया-णंदण-रूवालोयणे लायइ का वि अलत्तउ[1] लोयणे
का वि देइ अहरुल्लए कज्जलु काइ[2] वि घत्तिउ वच्छए अंचलु
॥घत्ता॥ विवरेरउ नायरिया-यणु किउ लवणंकुस-दंसणेण
जगे कामें को वि न विद्धउ स-सरें कुसुम-सरासणेण ॥ १३

( २ )

आयल्लउ करंत तरुणी-यणे लवणंकुस पइसारिय पट्टणे
तहि तेहए पमाणे विज्जा-हर लंकाहिव-किक्किंध-पुरेसर
भा-मंडल-नल-नीलंगंगय-जणय-कणय-मरु-तणय समागय
जे पट्ठविय गाम-पुर-देसहु गय हक्कार ताहं अ-सेसहं
णाणा-जाण-विमाणेहि आइय णं जिण-जम्मण अमर पराइय १८
दिट्ठु रामु सोमित्ति महाउसु दिट्ठु अणंग-लवणु मयणंकुसु

---

१. अलित्तउ. २. काय...पच्छए.

प्रेक्ष्य तौ कुमारौ प्रविशन्तौ नार्यः नापि गणयन्ति पतीन् सतैः
सीतानंदनरूपालोकनेन लाययति कापि अलक्तकं लोचने
कापि ददाति अधरे कज्जलं कया अपि क्षिप्तं वक्षसि अञ्चलं
॥धत्ता॥ विपरीतः नागरिकाजनः कृतः लवणांकुशदर्शनेन
जगति कामेन कः अपि न विद्धः स्वशरेण कुसुमशरासनेन ॥

( २ )

व्यग्रतां कुर्वन्तौ तरुणीजने लवणांकुशौ प्रवेशितौ पट्टने
तत्र तादृशाः प्रमाणभूताँः विद्याधराः लंकाधिपकिष्किन्धापुरेश्वरौ
भामंडल-नल-नीलांग-अंगद-जनक-कनक-मरुत्तनयाः समागताः
ये प्रस्थापिताँः ग्रामपुरदेशेभ्यः गतं आकरणं तेषां अशेषानां
नानायानविमानैः आयाताः यथा जिनजन्मनि अमराः आगताः
दृष्टः रामः सौमित्रिः महायुः दृष्टः अनंगलवणः मदनांकुशः

---

हाथप्रतनां टिप्पण नीचे नोंध्यां छे.

१. पतथः विद्यमानाः । २. परिधानवस्त्रं । ३. आरार्तिकं । कामपीडा वा । ४. प्रघघके (?) ५ प्रेषिताः ।

सत्तु-हणो वि दिट्ठु तहिं सुन्दर एक्कहिं मिलिय पंच णं मंदर
पुणरवि रामहो किय अहिणंदण[1] "धण्णउ[2] तुहु जसु एहा णंदण
॥घत्ता॥ एत्तडउ दोसु पर रहु-वइहे जं परमेसरि णाहि घरि
म पमायहि लोयहु छंदेण आणेवि का वि परिक्ख करि" ॥ २३

( ३ )

तं णिसुणेवि चवइ रहु-णंदणु "जाणमि सीयहे तणउ सइत्तणु
जाणमि जिह हरि-वंसुप्पण्णी जाणमि जिह वय-गुण-संपण्णी
जाणमि जिह जिण-सासणे भत्ती जाणमि जिह महु सोक्खुप्पत्ती
जाणमि अणुगुण-सिक्खा-धारी जाणमि संम-रयणमणि-धारी
जाणमि जिह सायर-गंभीरी जाणमि जिह सुर-महीहर-धीरी २८
जाणमि अंकुश-लवण-जणेरी जाणमि जिह सुय जणयहो केरी
जाणमि [3]स सहा-मंडल-रायहो जाणमि सामिणि रज्जहो आयहो

१. अहिवंदण. २ धन्नउ. ३. सभा.

शत्रुघ्नः अपि दृष्टः तत्र सुंदरः एकत्र मीलिताः पंच यथा मंदराः
पुनः अपि रामाय कृतं अभिनन्दनं "धन्यः त्वं यस्य इदृशौ नंदनौ
॥घता॥ एतावान् दोषः परं रघुपतेः यत्परमेश्वरी नास्ति गृहे
मा प्रमार्ध लोकानां छंदेन आनीय कामपि परीक्षां कुरु" ॥

( ३ )

तद् निश्रुत्य वदति रघुनंदनः "जानामि सीतायाः सतीत्वं
जानामि यथा हरिवंशोत्पन्ना जानामि यथा व्रतगुणसंपन्ना
जानामि यथा जिनशासने भक्ता जानामि यथा मम सौख्योत्पत्तिः
जानामि अनुगुणशिक्षाधारिणी जानामि सम्यक्त्वरत्नमणिधारिणी
जानामि यथा सागरगंभीरा जानामि यथा सुरमहीधरधीरा
जानामि अंकुशलवणजनयित्री जानामि यथा सुता जनकस्य
जानामि ससभामंडलराजस्य जानामि स्वामिनी राज्यस्य अमुष्य

१. मा त्यज। २. सम्यक्त्व।

जाणमि जिह अंते·उर–सारी जाणमि जिह महु पेसण–गारी
॥ घत्ता ॥ मेल्लेप्पिणु णायर–लोइण[1] महु घरे उब्भा करेवि कर
जो दु·ज्जसु उप्परे घित्तउ एउ ण जाणमि एक्कु पर" ॥ ३३

( ४ )

तहि अवसरे रयणासव·जाएं [2]कोक्किय तियड विहीसण·राएं
बोल्लाविय एत्तहें वि तुरंतें लंका·सुन्दरि तो हणुवंतें
बिन्नि वि विन्नवंति पणमंतिउ सीय–सइत्तण–गव्वु वहंतिउ
" देव देव जइ हुअ·वहु डज्झइ जइ मारुउ पड·पोट्टले वज्झइ
जइ पायाले णहंगणु लोट्टइ कालंतरे कालु जइ तिट्ठइ ३८
जइ उप्पज्जइ मरणु कियंतहो जइ णासइ सासणु अरहंतहो
जइ अवरें उग्गमइ दिवा·यरु मेरु·सिहरे जइ णिवसइ सायरु
एउ अ·सेसु वि संभाविज्जइ सीअहे सीलु ण पुणु मइलिज्जइ

१. लोएण । २. कोत्थिय ।

जानामि यथा अंतःपुरभारभूता जानामि यथा मम प्रेषणकारिणी
॥घत्ता॥ मिलित्वा नागरलोकेन मम गृहे ऊर्ध्वं कृत्वा करान्
यद् दुर्यशः उपरि क्षिप्तं एतद् न जानामि एकं परं" ॥

( ४ )

तस्मिन् अवसरे रत्नास्रवजातेन आहूता त्रिजटौ विभीषणराजेन
आहूता अत्रान्तरे अपि त्वरमाणेन लंकासुंदरी ततः हनुमता
द्वे अपि विज्ञापयतः प्रणमन्त्यौ सीतासतीत्वगर्वं वहन्त्यौ
"देव देव यदि हुतवहः दह्यते यदि मारुतः पटपिण्डके बध्यते
यदि पाताले नभःअंगनं लुठ्यति कालांतरे कालः यदि तिष्ठति
यदि उत्पद्यते मरणं कृतान्तस्य यदि नाश्यते शासनं अर्हतः
यदि अपरदिशिं उद्गच्छति दिवाकरः मेरुशिखरे यदि निवसति सागरः
एतद् अशेषं अपि संभाव्यते सीतायाः शीलं न पुनः मलिनीक्रियते

१. तृजट ( ? त्रिजटा ) । २. पश्चिमदिशायां ।

॥घत्ता॥ जइ एव वि णउ पत्तिज्जहि तो परमेसर एउ करि
तुल-चावल-विस-जल-जलणहं पंचहं एक्कु जि दिव्वु धरि" ॥४३

( ५ )

तं णिसुणेवि रहु-वइ परिओसिउ 'एम होउ' हक्कारउ पेसिउ
गउ सुग्गीउ विहीसण अंगउ चंदोयर-णंदणु पवणंगउ
पेसिउ पुप्फ-विमाणु पयट्टउ णं णह-यले सर-कमलु विसट्टउ
पुंडरीय-पुर-वर संपाइय दिट्ठ देवि रहसेण न माइय
"णंद वड्ढु जय होहि चिराउस बिण्णि वि जाहि पुत्त लवणंकुश ४८
लक्खण राम जेहि आयामिय सीहहिं जिह गयंद ओहामिय
रक्खिय णारएण समरंगणे तेहि मि ते पइसारिय पट्टणे
अम्ह इ आया तुम्ह हक्कारा दिअहा होन्तु मणोरह-गारा
॥घत्ता॥ चडु पुप्फ-विमाणे भडारिए मिलु पुत्तहं पइ देवरहं
सुह-अच्छणि[1] मज्झे परिट्ठिय पिहिमि जेम चउ-सायरहं"॥ ५३

---

१. सुहं अच्छामि.

॥घत्ता॥ यदि एवं अपि न खलु प्रतीयते तर्हि परमेश्वर एतत् कुरु
तुल-तण्डुल-विष-जल-ज्वलनानां पंचानां एकमेव दिव्यं धर" ॥

( ५ )

एतद् निश्चित्य रघुपतिः परितुष्टः 'एवं भवतु' आकरणं प्रेषितं
गतः सुग्रीवः विभीषणः अंगदः चंद्रोदरनन्दनैः पवन-अंगजः[2]
प्रेषितं पुष्पविमानं प्रवृत्तं यथा नभस्तले सरःकमलं विकसितं
पुंडरीकपुरवरं संप्राप्ताः दृष्टा देवी हर्षेण न मायिताः
"नंद वर्धस्व जय भव चिरायुः द्वौ अपि यस्याः पुत्रौ लवण-अंकुशौ
राम-लक्ष्मणौ याभ्यां आयामितौ सिंहाभ्यां यथा गजेन्द्रौ आक्रान्तौ
रक्षितौ नारदेन समरांगणे ताभ्यामपि तौ प्रवेशितौ पट्टने
वयं अपि अयाता युष्माकं आकारकाः दिवसाः भवन्तु मनोरथकाराः
॥घत्ता॥ आरोह पुष्पविमाने भट्टारिके मीलय पुत्राभ्यां पतिदेवृभ्यां
सुखासने मध्ये परिस्थिता पृथिवी यथा चतुःसागरान्तां"॥

---

१. विराहोः । २. हनूमंतु ।

( ६ )

तं णिसुणेवि लवणंकुस-मायए वुत्तु विहीसणु गग्गिर-वायए
" णिट्ठुर-हिययहो अ-लइय-णामहो जाणमि तत्ति न किज्जइ रामहो
घल्लिय जेण रुवंति वणंतरे डाइणि-रक्खस-भूय-भयंकरे
जहिं सद्दूल-सीह-गय-गंडा बब्बर-सवर-पुलिंद पयंडा
जहिं बहु-तच्छ-रिच्छ-रुरु-संवर स-उरग-खग-विग जहिं सिव-सूयर ५८
जहिं माणुसु जोवंतु वि लुञ्चइ[1] विहि कलि-कालु वि पाणह मुंचइ
तहिं वणे घल्लाविय अण्णाणें एवहि किं तहो तणेण विमाणें
॥घत्ता॥ जो तेहिं डाहु उप्पाइउ पिसुणा-भावामरिसिइण[2]
सो डु-क्करु उल्हाविज्जइ मेह-सएण वि वरिसिएण ॥ ६२

( ७ )

जइ वि ण कारणु राहव-चंदें तो वि जामि लइ तुम्हइ छंदें "
एम भणेवि देवि जय-सुन्दरि कम-कमलहिं अच्चंति वसुंधरि

---

१. जि वधारानो छोडी दीधो छे. २. पिसुणाभावमरिसिएण ।

( ६ )

तद् निश्रुत्य लवणांकुशमात्रा उक्तः विभीषणः गद्गदवाचा
"निष्ठुरहृदयस्य अगृहीतनाम्नः जानामि चिन्ता न क्रियते रामस्य
क्षिप्ता येन रुदती वनांतरे डाकिनीराक्षसभूतभयंकरे
यत्र शार्दूलसिंहगजगण्डाः बर्बरशबरपुलिंदाः प्रचंडाः
यत्र बहुतक्षऋक्षरुरुसंवराः सहउरगखगवृकाः यत्र शिवाशूकराः
यत्र मानुषः जीवन् अपि लुंच्यते[1] विधिं[2] : कलिकालः अपि प्राणेभ्यः मुच्यते
तत्र वने क्षेपिता अज्ञानेन एतादृशस्य किं तस्य विमानेन
॥घत्ता॥ यः तैः दाहः उत्पादितः पिशुनभावामर्षितेन
सः दुष्करं आर्द्र्यते मेघशतेन अपि वर्षितेन ॥

( ७ )

यदि अपि कारणं न राघवचन्द्रेण तर्ह्यपि यामि खलु युष्माकं छंदेन"
एवं भणित्वा देवी जगत्सुंदरी क्रमकमलाभ्यां अर्चन्ती वसुन्धरां

---

१. लञ्च्यते । २. विधिः । ३. भवतां दाक्षिण्येन ।

पुप्फ-विमाणे चडिय अणुरायं परिमिय विज्जाहर-संघायं
कोसल-णयरि पराइय जावहिं दिण-मणि गउ अत्थ-वणहो तावहिं
जत्थहो पिययमेण णिव्वासिय तहो उववणहो मज्झे आवासिय ६७
कह वि विहाणु भाणु णहे उग्गउ अहि-मुहु सज्जण-लोउ समागउ
दिण्णइ तूरइ मंगलु घोसिउ पट्टणु णिरवसेसु परिओसिउ
सीय पइट्ठ णिविट्ठ वरासणे सासण-देवए णं जिण-सासणे
॥घत्ता॥ परमेसरि पढम-समागमे झत्ति णिहालिय हल-हरेण
सिय-पक्खहो दिवसे पहिल्लए चंद-लेह णं सायरेण ॥ ७२

( ८ )

कंतहि तणिय कंति पेक्खेप्पिणु पभणइ पोम-णाहु विहसेप्पिणु
"जइ वि कुलग्गयाउ णिरवज्जउ महिलउ होंति अ-सुद्धु[1] णि-लज्जउ
दर-दाविय-कडक्ख-विक्खेवउ कुडिल-मइउ वङ्किअ-अवलेवउ
बाहिर-धिट्ठउ गुण-परिहीणउ किह सय-खंडु न जंति ति हीणउ
णउ गणंति णिय-कुलु मइलंतउ ति-हुअणे अ-यस-पडहु वज्जंतउ ७७

---

१. सुद्धु.

पुष्पविमाने आरूढा अनुरागेण परिमिता विद्याधरसंघातेन
कोशलनगरीं प्रयाता यावत् दिनमणिः गतः अस्तमनि तावत्
यस्मात् प्रियतमेन निर्वासिता तस्य उपवनस्य मध्ये आवासिता
कथमपि विभातः भानुः नभसि उद्गतः अभिमुखं सज्जनलोकः समागतः
दत्तानि तूराणि मंगलं घोषितं पट्टनं निरवशेषं परितोषितं
सीता प्रविष्टा निवेशिता वरासने शासनदेवता इव जिनशासने
॥घत्ता॥ परमेश्वरी प्रथमसमागमे झटिति निभालिता हलधरेण
सितपक्षस्य दिवसे प्रथमे चंद्रलेखा यथा सागरेण ॥

( ८ )

कांतायाः कांतिं प्रेक्ष्य प्रभणति पद्मनाथः विहस्य
"यद्यपि कुलाग्रकाः निरवद्याः महिलाः भवन्ति अशुद्धाः निर्लज्जाः
ईषद्दापितकटाक्षविक्षेपाः कुटिलमतयः वर्धितावलेपाः
बहिर्धृष्टा गुणपरिहीणाः कथं शतखंडं न यान्ति ताः हीनाः
न खलु गणयन्ति निजकुलं मलिनीभवत् त्रिभुवने अयशःपटहं वाद्यमानं

अंगु समोडेवि धिद्धिक्कारहो वयणु णिएंति केम भत्तारहो"
सीय ण भीय सइत्तण-गव्वें वलेवि पवोल्लिय गग्गर-सद्दें
"पुरिस णिहीण होंति गुणवंत वि तियहे ण पत्तिज्जंति मरंत वि
॥घत्ता॥ खडु लक्कडु सलिलु वहंतिहे[1] पउराणियहे कुलग्गयहे
रयणायरु खार इ देंतउ तो वि ण थक्कइ णं णइहे[2] ॥ ८२

( ९ )

साणु ण केण वि जणेण गणिज्जइ गंगा-णइहे तं जि ण्हाइज्जइ
ससि स-कलंकु तहि जि पह णिम्मल कालउ मेहु तहि जि तडि उज्जल
उवलु[3] अ-पुज्जु ण केण वि छिप्पइ तहि पडिम चंदणेण वि लिप्पइ
घुज्जइ पाउ पंकु जइ लग्गइ कमल-माल पुण जिणहो वलग्गइ
दीवउ होइ स-हावें कालउ वट्टि-सिहए मंडिज्जइ आलउ ८७
णर-णारिहिं एवड्डउ अंतरु मरणे वि वेल्लि ण मेल्लइ तरु-वरु

१. वहंतेअहे. २. मयहे. ३. उव्वलु.

अंगं समावृत्य धिक् धिक् कुवतः वदनं पश्यन्ति कथं भर्तुः"
सीता न भीता सतीत्वगर्वेण वलित्वा उक्तवती गद्गदशब्देन
"पुरुषाः निहीनाः भवन्ति गुणवन्तः अपि स्त्रीषु न प्रतियन्ति म्रियमाणाः अपि
॥घत्ता॥ तृणं काष्ठं सलिलं वहन्तीभ्यः पौराणिकाभ्यः कुलागताभ्यः
रत्नाकरः क्षारं अपि ददन् तदपि न विरमति इव नदीभ्यः ॥

( ९ )

श्वा न केन अपि जनेन गण्यते गंगा-नद्या स एव स्नाप्यते
शशी सकलंकः तस्य एव प्रभा निर्मला श्यामः मेघः तस्य एव तडित् उज्ज्वला
उपलैः अपूज्यः न केन अपि स्पृश्यते तस्य प्रतिमा चंदनेन अपि लिप्यते
ग्रस्यते पादः पंकः यदि लगति कमलमाला पुनः जिनं विलगति
दीपकः भवति स्वभावेन श्यामः वर्तिशिखया शुभ्यते आलयं
नरनार्योः एतावदन्तरं मरणे अपि वल्ली न मुञ्चति तरुवरं

१. सतीत्वमहत्त्वेन। २ मूळ हाथप्रतमां पाठ मच्छरगव्वें । हतो; परन्तु हांसियामां लखेलो पाठ स्वीकार्यो छे. ३. पवित्राभिः चिरंतनाभिर्वा। ४. नद्यां। ५. पाषाणाः-पंकजाः।

एह पइ कवण बोल्लु पारंभिय सइ-वडाय मइ अज्जु समुब्भिय
तुहु पेक्खंतउ अच्छु विसत्थउ[1] डहउ जलणु जइ डहिवि समत्थउ
॥घत्ता॥ किं किज्जइ अण्णइं दिव्वें ण विसुज्झहो महु मणहो
जिह कणय-लोलि डाहुत्तर अच्छमि मज्झे हुआसणहो ”॥ ९२

( १० )

सियहे वयणु सुणेवि जणु हरिसिउ उच्चारउ रोमंचु पदरिसिउ
महुर-णराहिव-जस-लिह-लुहणें हरिसिउ लक्खणु सहु सत्तु-हणें
तिण्णि वि विप्फुरंत-मणि-कुंडल हरिसिय जणय-कणय-भा-मंडल
हरिसिय लवणंकुस दु-स्सील वि हरिसिय वज्ज-जंघु णल णीलु वि
तार-तरंग-रंभ-विस-सेण वि दहि-मुह-कुमुय-महिंद-सु-सेणु वि ९७
गवय-गवक्ख-संख-सक्कंदणु-चंद-रासि चंदोयर-णंदणु
लंकाहिय-सुग्गीवंगंगय जंबव-पवणंजय-पवणंगय

१. वीसत्थउ ।

एषः त्वया कः शब्दः प्रारब्धः सतीपताकां[1] मया अद्य समुद्भाविता
त्वं प्रेक्षमाणः आस्स्व विश्वस्तैः[2] दहतु ज्वलनः यदि दग्धुं समर्थः
॥धत्ता॥ किं क्रियते अन्येन दिव्येन येन विशुद्धस्य मम मनसः
यथा कनकलोष्टिका दाहोत्तरं भवामि मध्ये हुताशनस्य” ॥

( १० )

सीतायाः वचनं श्रुत्वा उच्चत्तरैः[3] रोमाञ्चः प्रदर्शितः
मधुरनराधिपयशःलेखामार्जनेन हर्षितः लक्ष्मणः सह शत्रुघ्नेन
त्रयः अपि विस्फुरन्मणिकुण्डलाः हर्षिताः जनक-कनक-भामंडलाः
हर्षितौ लवणांकुशौ दुःशीलौ अपि हर्षिताः वज्रजंघः नलः नीलः अपि
तारतरंगरंभविश्वसेनाः अपि दधिमुख-कुमुद-महेन्द्र-सुषेणाः अपि
गवय-गवाक्ष-शंख-शक्रार्दनाः चंद्ररश्मिः चंद्रोदरनंदनः
लंकाधिप-सुग्रीव-अंग-अंगदाः जाम्बवत्-पवनंजय-पवनांगजाः

१. सतीपताका । २. विस्रब्धः । ३. उर्ध्वाकारः ।

लोय-वाल गिरि णइउ समुद्द वि विस-हरिंद अमरिंद णरिंद वि
॥घत्ता॥ तइ-लोक्कह भंतरि[1] वत्तिउ[2] सयल वि हरिसियउ
पर हिअवए कलुसु वहंतउ रहु-वइ एक्कु ण हरिसिअउ ॥ १०२

( ११ )

सीअए वुत्तु जं जि अवलेवें तं जि समत्थिउ पुणु बल-एवें
कोक्किय खणय खणाविय खोणी हत्थ-सयाइं तिण्णि चउ-कोणी
पूरिय खड-लक्कड-विच्छड्डेहि कालागरु-चंदण-सिरि-खंडहिं
देवदारु-कप्पूर-सहासेहिं कंचण-मंच रइय चउ-पासेहि
चडिय-राय आया गिव्वाण वि इंद-चंद-रवि-हरि-बंभाण वि १०७
इंधण-पुंजे चडिय परमेसरि णं संठिय वय-सीलह उप्परि
" अहो देवहो महु तणउ सइत्तणु जोइज्जहु[3] रहु-वइ-दुट्ठत्तणु
अहो वइसा-णर तुहु मि डहिज्जहि जइ विरुआरी तो म खमिज्जहि"

१. ब्भंतरि। २. वत्तियउ। ३. जोएज्जहु। एनी पछीनी पं. ११०मां डहेज्जहि; खमेज्जहि.

लोकपालाः गिरयः नद्यः समुद्राः अपि विषधरेन्द्राः अमरेन्द्राः नरेन्द्राः अपि
॥घत्ता॥ त्रिलोकस्याभ्यंतरे वृत्तं सकलं अपि हर्षितं
परं हृदये कलुशं वहन् रघुपतिः एकः न हर्षितः ॥

( ११ )

सीतया यदेव उक्तं अवलेपेन तदेव समर्थितं पुनः बलदेवेन
आहूताः खनकाः खनिता क्षोणी हस्तशतानि त्रीणि चतुष्कोणा
पूरिता तृणकाष्ठसमूहैः[2] कालागुरुचंदनश्रीखंडैः
देवदारुकर्पूरसहस्रैः काञ्चनमञ्चः रचितः चतुष्पार्श्वैः
गृहीतरागाः आयाताः गिर्वाणाः अपि इन्द्रचन्द्ररविहरिब्रह्माणः अपि
इन्धनपुञ्जे आरूढा परमेश्वरी यथा संस्थिता व्रतशीलस्योपरि
" अहो देवाः मम सतीत्वं पश्यत रघुपतिदुष्टत्वं
अहो वैश्वानर त्वम् अपि दहेः यदि विरूपकारिणी त्वं मा क्षाम्येः "

१. गर्वेण। २. काष्ठसमहैः।

॥घत्ता॥ किउ कलयलु दिण्णु हुआसणु महि जि[1] जाय सम जालडिय
सो णाहि को वि तहि अवसरे जेण ण मुक्की धाहडिय॥ ११२

( १२ )

खड-लक्कड-विच्छड्डु[2] पलित्तइ धाहाविउ कोसलइ सुमित्तइ[3]
धाहाविउ सोमित्ति-कुमारें "अज्जु माय मुअ महु अ-विआरें[4]"
धाहाविउ लंकालंकारेहिं धाहाविउ हणु-वंत-कुमारेहिं
धाहाविउ सुग्गीव-णरिंदहिं धाहाविउ णल-णील-महिंदहिं ११७
धाहाविउ सव्वहिं सामंतिहिं रामहो धिद्धिक्कारु करंतेहिं
धाहाविउ वइदेहि-कएहिं वि लंका-सुन्दरि-तियडा-एविहि
उद्ध-मुहेण पवड्ढिय-सोएं धाहाविउ णायरिएं लोएं
॥घत्ता॥ "णिट्ठुरु दुरासु मायारउ दु-क्किय-गारउ कूर-मइ
णउ जाणमि सीअ वहेविणु रामु लहेसइ कवण गइ"॥ १२२

१. जे। २. विछड्ड। ३. पलित्तए...कोसलए सुमित्तए। ४. अविचारे।

॥घत्ता॥ कृतः कलकलः दत्तः हुताशनः महती एव जाता समं ज्वाला
सः नास्ति कः अपि तस्मिन् अवसरे येन न मुक्तः आर्तनादः॥

( १२ )

तृणकाष्ठसमूहे प्रदीप्ते आर्तनादः कृतः कौशल्यया सुमित्रया
आर्तनादः कृतः सौमित्रिकुमारेण "अद्य माता मृता मम अविचारेण"
आर्तनादः कृतः भामंडलजनकाभ्यां आर्तनादः कृतः लवणांकुशतनयाभ्यां
आर्तनादः कृतः लंकालंकारेण आर्तनादः कृतः हनुमत्कुमारेण
आर्तनादः कृतः सुग्रीवनरेन्द्रैः आर्तनादः कृतः नलनीलमहेन्द्रैः
आर्तनादः कृतः सर्वैः सामन्तैः राघवस्य धिक्-धिक्-कारं कुर्वद्भिः
आर्तनादः कृतः [1]वैदेहीकृते अपि लंकासुंदरीत्रिजटादेवीभ्यां
ऊर्ध्वमुखेन प्रवर्धितशोकेन आर्तनादः कृतः नागरिकेन लोकेन
॥घत्ता॥ "निष्ठुरः दुराशः मयारतः दुष्कृतकरः क्रूरमतिः
न खलु जानामि सीतां वधित्वा रामः लप्स्यते कां गतिं"॥

१. सीतानिमित्ते.

( १३ )

थिउ यत्थंतरे कारणु भारिउ णिरवसेसु जगु धूमंधारिउ
जालउ विप्फुरंति तहि अवसरे णं विज्जुलउ जलण-जालंतरे
सीय सइत्तणेण णउ कंपिय "दुक्कु दुक्कु सिहि" एम पजंपिय
"एहु देहु गुण-गहण-णिवासणु डहि[1] डहि जइ सच्चउ जि[2] हुआसणु
डहि डहि जइ जिण-सासणु छड्डिउ डहि डहि जइ णिय-गोत्तु ण मंडिउ
डहि डहि जइ हउं केण वि ऊणी डहि डहि जइ चारित्त-विहूणी
डहि डहि जइ भत्तारहो दोही डहि डहि जइ पर-लोय-विरोही
डहि डहि सयल-भुवण-संतावणु जइ मइ मणिण वि इच्छिउ रावणु"
तं एवडु धीरु को पावइ सिहि सीयलउ होइ ण पहावइ
॥घत्ता॥ तहि अवसरि मणि परितुट्ठउ कहइ पुरंदरु सुर-यणहो
"सिहि संकइ डहिवि ण सक्कइ पेक्खु पहाउ सइत्तणहो"॥ १३३

१. मूळ हाथप्रतमां आ तेम ज नीचेनी केटलीक पंक्तिमां डहे अने डहि विकल्पे वापर्यो छे. डहे ए पाछळनो उच्चारविकारात्मक फेरफार छे अने तेनो डहि उच्चार तो करवो ज पडे छे; एटले में सरखो डहि ज स्वीकारी डहे ने बहिष्कृत करेलो छे. २ जे।

( १३ )

स्थितं अत्रान्तरे कारणं भारि निरवशेषं जगत् धूमांधकारितं
ज्वालाः विस्फुरन्ति तस्मिन्नवसरे यथा विद्युतः ज्वलनज्वालान्तरे
सीता सतीत्वेन न कंपिता "ढौकस्व ढौकस्व शिखिन्" एवं उक्तवती
"एषः देहः गुणगहननिवासनं दह दह यदि सत्यः एव हुताशनः
दह दह यदि जिनशासनं त्यक्तं दह दह यदि निजगोत्रं न मंडितं
दह दह यदि अहं केनापि ऊना दह दह यदि चारित्रविहीना
दह दह यदि भर्त्रे द्रोहिनी दह दह यदि परलोकविरोधिनी
दह दह सकलभुवनसंतापनः यदि मया मनसा अपि इच्छितः रावणः"
तद् एतावद् धैर्यं कः प्राप्नोति शिखी शीतलः भवति न प्रभवति
॥घत्ता॥ तस्मिन् अवसरे मनसि परितुष्टः कथयति पुरंदरः सुरजनेभ्यः
"शिखी शंकते दग्धुं न शक्नोति प्रेक्ष्वध्वं प्रभावं सतीत्वस्य ॥

( १४ )

ताम तरुण-तामरसिहि छण्णउ सो ज्जि जलणु सर-वरु उप्पण्णउ
सारस-हंस-कोंच-कारंडिहि गुमगुमंत-छप्पय-विच्छंडिहि
जलु अ-त्थक्कु पुणु कहि मि ण माइउ मंच-सयइं रेल्लंतु पधाइउ
णासइ सव्वु लोउ सहु रामें सलिलु पवंदिउ सीयहें णामें
अण्णु वि सहस-पत्तु उप्पण्णउ देवहिं[1] आसणु णं अवइण्णउ १३८
तासु मज्झि मणि कणय-रवण्णउ दिव्वासणु समुच्चु उप्पण्णउ
तहि जाणय[2]-जण-साहु-क्कारिय सइ सुर-वर-वहूहिं बइसारिय
तहि वेलहिं सोहइ परमेसरि णं पच्चक्ख लच्छि कमलोवरि
आहय दुंदुहि सुर-वइ-सत्थें मेल्लिउ कुसुम-वासु सइ हत्थें
॥ घत्ता ॥ तहिं [3]जय-जय-कारु पवुड्डउ सुह-वयणावण्णण-भरिउ
णाणा-विह-तूर-महारउ जाणइ तिह जसु वित्थरिउ ॥ १४४

१. देवए। २ जाणइ। ३. घत्ता आखीमां फेरफार करवो पड्यो छे; कारण के मात्राओ तुटे छेः मूळमां १२×१४ ( पं. १) तेम १४×१२ ( पं.२ ) छे. सळंग घत्ता जोतां, १४×१३नी मालम पडे छे; एटले ते प्रमाणे मारे फेरफार करवो पडयो छे. मूळ जयजयकारु पवुड्ढउ सुहवयणावण्णणभरियउ। णाणाविहतुरमहारउ जाणइ जसु वित्थरिअउ ॥

( १४ )

तावत् तरुणतामरसैः[1] छन्नं स एव ज्वलनः सरोवरं उत्पन्नं
सारसहंसक्रौञ्चकारण्डैः गुञ्जत्षट्पदसमूहैः
जलं अस्ताघं पुनः कुत्रापि न मायितं मंचशतानि प्लावयत् प्रधावितं
विद्रवति सकलः लोकः सह रामेण सलिलं प्रवंदितं सीतायाः नाम्ना
अन्यद् अपि सहस्रपत्रं उत्पन्नं देवैः आसनं यथा अवतारितं
तस्य मध्ये मणिकनकरम्यं दिव्यासनं उच्चं उत्पन्नं
तत्र जानपदजनसाधूकृता सती सुरवरवधूभिः उपवेशिता
तस्यां वेलायां शोभते परमेश्वरी यथा प्रत्यक्षा लक्ष्मी कमलस्य उपरि
आहता दुंदुभिः सुरवरसार्थेन मुक्तः कुसुमवर्षः स्वयंहस्तेन
॥घत्ता॥ तत्र जयजयकारः प्रवृद्धः शुभवचनावर्णनभरितः
नानाविधतूरमहारवः यथा तस्याः यशः विस्तृतं ॥

१. कमलैः ।

( १५ )

तो एत्थंतरे निरु दीहाउस सीयहे पासु दुक्क लवणंकुस
जिह ते तिह बिण्णि वि हरि बल-हर तिह भा·मंडल णव-वेलंधर
तिह सुग्गीव णील मिय-सायर[1] तिह सुसेण विससेण जसायर
तिह स·विहीसण कुमयंगंगय जणय-कणय-मारुइ-पवणंजय
तिह गय गवय गवक्ख विराहि य वज्ज·जंघु सत्तु·हणु गुणाहिय १४९
तिह महिंदि माहिंद स·दहिमुह तार तरंग रंभ पहु दुम्मह
तिह मह-कंत[2] वसंत रवि-प्पह चंद-मरीचि हंस-प्पहु दिढ-रह
चंद·रासि संताण णरेसर रयण-केसि पीयं·कर खे·यर
तिह जंबव जंबवि इंदाउह मंद-हत्थि ससि-पह ताराउह
तिह ससि-वद्धण सेय-समुद्द वि रइ-वद्धण णंदण कुंदेंदु वि
लच्छि·भूय[3] कोलाहल सरल वि णहुस-कियंत-वत्त-बल-तरल वि
॥घत्ता॥ अवर वि एक्केक्क-पहाणा उर-रोमंच-समुच्छलिय
अहिसेय-समए णं लच्छिहे सयल दिसा-गयद मिलिय ॥ १५७

---

२. मइसागर। २. मे प्रतमां मइ वांच्यु हतुं; पण इ=ह घणी फेरो सरखा थइ जाय छे; एटले सुधारो. ३. भुत्त।

( १५ )

तावत् अत्रान्तरे खलु दीर्घायुः सीतायाः पार्श्वं ढौकितौ लवणांकुशौ
यथा ते तथा द्वौ अपि हरिः बलधरः तथा भामंडलः नववेलंधरः
तथा सुग्रीवः नीलः मितसागरः तथा सुषेणः विश्वसेनः यशःआकरः
तथा सविभीषणौ कुमुदांगदौ जनककनकमारुतिपवनंजयाः
तथा गजः गवयः गवाक्षः विराधिः च वज्रजंघः शत्रुघ्नः गुणाधिकः
तथा महा-इन्द्रियः महेन्द्रः सदधिमुखः तारः तरंगः रंभः प्रभुः द्रुमाणां
तथा महाकान्तः वसंतः रविप्रभः चंद्रमरीचिः हंसप्रभः दृढरथः
चंद्ररश्मिः संतानः नरेश्वरः रत्नकेशी प्रोतिंकरः खेचरः
तथा जाम्बवान् जाम्बवतिः इन्द्रायुधः मंदहस्ती शशिप्रभः तारायुधः
तथा शशिवर्धनः श्वेतसमुद्रः अपि रतिवर्धनः नंदनः कुन्देन्दुः अपि
लक्ष्यीभूतः कोलाहलः सरलः अपि नहूषकृतांतवृत्रबलतरलः अपि
॥घत्ता॥ अपरे अपि एकैकेभ्यः प्रधानाः समुन्नतउरःरोमाञ्चाः
अभिषेकसमये इव लक्ष्म्याः सकलाः दिशागजेन्द्राः मीलिताः ॥

( १६ )

तो बोलिज्जइ राहव-चंदें "णि-क्कारणें खल-पिसुणहं छंदें
जइ अ वियप्पें मइ अवमाणिय अण्णु वि दुहु एवड्डु पराणिय
तं परमेसरि महु मरुसिज्जहि एक्क-वार अवराहु खमिज्जहि
आउ जाहु घर-वासु णिहालहि सयलु वि णिय-परियणु परिपालहि
पुप्फ-विमाणि चडहि सुर-सुंदरि [ ]१९२
उववण-णइउ-मह-द्दह-सर-वरे खेत्तइ कप्प-दुम[1]-कुल-गिरि-वरे
णंदण-वण-काणणइ महायर जण-वय[2] वेहि[3] दीव रयणायर
॥घत्ता॥ मणि धरहि एउ महु वुत्तउ मच्छरु सयलु वि परिहरहि
सइ जिह सुर-वइ-संसग्गें[4] णि-स्सावण्णु रज्जु करहि "॥ १९६

( १७ )

तं णिसुणेवि परिचत्त-सणेहिए एव पइंपिउ पुणु वइदेहिए

---

१. दुम । २. जणवइ । ३. वेई । ४. संसग्गीए ।

प्रत लखनारना मनमां संस्कृत रमतुं होवुं जोइए; दा. त. पं. १५१ सं. मरीचि = अप० मरिइ, पं. १६२ सं. पुष्प = अप० पुप्फ.

( १६ )

तावत् ब्रूयते राघवचन्द्रेण "निष्कारणेन खलपिशुनानां छंदेन
यद्यपि विकल्पेन मया अवमानिता अन्यत् अपि एतावत् दुःखं परानीतं
तद् परमेश्वरि मां मर्षयेः एकवारं अपराधं क्षाम्येः
आयाहि गच्छ गृहवासं निभालय सकलं अपि निजपरिजनं परिपालय
पुष्पविमाने आरोह सुरसुंदरि [ ]
उपवन-नदी-महाह्रद-सरोवराणि क्षेत्राणि कल्पद्रुमकुलगिरिवरान्
नंदनवनकाननानि महाकरान् जनपदान् प्रेक्षस्व द्वीपान् रत्नाकरं
॥घत्ता॥ मनसि धर एतद् मम उक्तं मात्सर्यं सकलं अपि परिहर
शचिः इव सुरपतिसंसर्गेण निःसापत्न्यं[1] राज्यं कुरु ॥

( १७ )

तद् निश्रुत्य परित्यक्तस्नेहया एवं उक्तं पुनः वैदेह्याः

---

१. समस्तं.

"अहो राहव मं जाहि विसायहो ण वि तउ दोसु ण जण-संघायहो
भव-भव-सएहिं विणासिय-धम्महो सव्वु दोसु इउ दु-क्किय-कम्महो
को सक्कइ णासणहं पुराइउ जं अणुलग्गउ जीवहु आइउ
बल मइं बहु-विह-देस-णिउत्ती तुज्झु पसाएं वसु-मइ भुत्ती १७१
बहु-वारउ तंबोलु समाणिउ इह-लोइउ सुहु सयलु वि माणिउ
बहु-वारउ पयडिय-बहु-भोग्गी पइ सहु पुप्फ-विमाणि वलग्गी
बहु-वारउ भवणंतरे हिंडिउ अप्पउ बहु-मंडणेहिं पमंडिउ
एमहि तिह करेमि पुणु रहु-वइ जिह ण होमि पडिवारें [1]तिय मइ
॥घत्ता॥ महु विसय-सुहेहि पज्जत्तउ छिंदमि जाइ-जरा-मरणु
णिविण्णी भव-संसारहो लेमि अज्जु धुअ तव-चरणु" ॥ १७७

( १८ )

एम ताइं एउ वयणु चवेप्पिणु दाहिण-करेण समुप्पाडेप्पिणु
णिय-सिर-चिहुर ति-लोयाणंदहो पुरउ पघल्लिय राहव-चंदहो

---

१. पडिवारो

"अहो राघव मा गच्छ विषादं नापि तव दोषः न जनसंघातस्य
भवभवशतैः विनाशितधर्मस्य सर्वः दोषः अयं दुष्कृतकर्मणः
कः शक्नोति नाशयितुं पुराकृतं यद् अनुलग्नं जीवस्य आयातं
बलं मया बहुविधदेशनियुक्ता तव प्रसादेन वसुमती भुक्ता
बहुवारं ताम्बूलं भुक्तं इह—लौकिकं सुखं सकलं अपि भुक्तं
बहुवारं प्रकटितबहुभोग्या त्वया सह पुष्पविमाने विलग्ना
बहुवारं भवनान्तरे हिंडितं आत्मा बहुमंडनैः प्रमंडितः
एवं तथा करोमि पुनः रघुपते, यथा न भवामि प्रतिवारं स्त्रीः अहं[2]
॥घत्ता॥ मम विषयसुखैः पर्याप्तं[3] छिनद्मि जातिजरामरणं
निर्विण्णा भवसंसारात् लामि अद्य ध्रुवं तपःचरणं" ॥

( १८ )

एवं तयाँ एतद् वचनं उक्त्वा दक्षिणकरेण समुत्पाटच
निजशिरःचिकुरः त्रिलोकानन्दस्य पुरः प्रक्षिप्तः रोघवचन्द्रस्य

---

१. हे रामचंद्र । २. पुनः स्त्री न भवामि । ३. पूर्यतां ।

केस णिएवि सो वि मुच्छं गउ पडिउ णाइ तरु-वरु मरु-आहउ
महिहि णिसण्णु सुट्ठु णिच्चेयणु जाव कह वि किर होइ स-चयणु
ताव णियंतहं जिण-पय-सेवहं विज्जा-हर-भू-गोयर-देवहं १८२
सीयए सील-तरंडए थाइवि लइअ दिक्ख रिसि-आसमि जाइवि
पासि सच्च-भूसण-मुणि-णाहहो णि-म्मल-केवल-णाण-सहावहो
जाय तुरिउ तव-भूसिअ-विग्गहु मुक्क-सव्व-पर-वत्थु-परिग्गहु
॥घत्ता॥ एत्थंतरि बलु उम्मुच्छिउ[1] जो रहु-कुल-आयास-रवि
तं आसणु जाव णिहालइ जणय-तणय तहि ताव ण वि ॥ १८७

(१९)

पुणु सव्वाउ दिसाउ णियंतउ उट्ठिउ ' केत्तहे सीय ' भणंतउ
केण वि स-विणएण तो सीसइ " पवरुज्जाणु एउ जं दीसइ
इह णिय सुरिहिं सु-सीलालंकिय मुणि-पुंगमहो पासु दिक्खंकिय "
तं णिसुणेवि रहु-णंदणु कुद्धउ जुअ-खए णाइ कियंतु विरुद्धउ
रत्त-णेण्णु भउहा-भंगुर-मुहु गउ तहो उज्जाणहो सवडं-मुहु १९२

१. उम्मुच्छियउ ।

केशं दृष्ट्वा सः अपि मूर्च्छां गतः पतितः यथा तरुवरः मरुदाहतः
मह्यां निषण्णः नितरां निश्चेतनः यावत् कथमपि किल भवति सचेतनः
तावत् पश्यतां जिनपदसेवकानां विद्याधरभूगोचरदेवानाम्
सीतया शीलतरंडके स्थित्वा लाता दीक्षा ऋषिआश्रमे गत्वा
पार्श्वे सत्यभूषणमुनिनाथस्य निर्मलकेवलज्ञानस्वभावस्य
जाता त्वरितं तपःभूषितविग्रहा मुक्तसर्वपरवस्तुपरिग्रहा
॥घत्ता॥ अत्रान्तरे बलः उन्मूर्च्छितः यः रघुकुलाकाशरविः
तद् आसनं यावत् निभालयति जनकतनया तत्र तावत् नापि ॥

(१९)

पुनः सर्वाः दिशाः पश्यन् उत्थितः ' कुत्र सीता ' भणन्
केनापि सविनयेन ततः शिष्यते " प्रवरोद्यानं एतद् यद् दृश्यते
इह नीता सुरैः सुशीलालंकृता मुनिपुंगवस्य पार्श्वे दीक्षांकिता "
तद् निश्रुत्य रघुनंदनः क्रुद्धः युगक्षये यथा कृतांतः विरुद्धः
रक्तनयनः भ्रूभंगुरमुखः गतः तस्य उद्यानस्य सम्मुखं

गइ आरूढउ मच्छर-भरियउ बहु-विज्जा-हरेहिं परियरिउ
उब्भिय-ससि-धवलायव-वारणु दाहिण-करि कय-सीर-विप्पहरणु[1]
" जं किउ चिरु मायइ[2] सु-ग्गीवहो जं लक्खणिण समरि दह-गीवहो
तं करेमि वड्ढिय-अवलेवहं वासव-पमुह अ-सेसहं देवहं "
सहु णिय-भिच्चेहिं एव चवंतउ तं महिंद-णंदण-वणु पत्तउ
पेक्खवि णाणुप्पण्णु मुणिंदहो वियलिउ मच्छरु सयलु णरिंदहो
॥घत्ता॥ ओयरेवि महा-गय-खंधहो प-यहिण देवि स णर-वरेण
कर मउलि करेवि मुणि वंदिउ णय-सिरेण सिरि-हल-हरेण ॥ २००

( २० )

जिह तें तिह वंदिउ साणंदिहि लक्खण-पमुह-असेस-णरिंदेहिं
दिट्ठ सीय तहि राहव-चंदें णं ति-हुयण-सिरि परमाणंदें
ससि-धवलांबर-जुवलालंकिय महि णिविट्ठ छुडु छुडु दिक्खंकिय
पुणु णिय-जस-भुवण-त्तय-धवलें सिर-सिहरोवरि[3] किय-कर-कमलें

१. विप्पहरणु । २. माया । ३ सिहरोवल ।

गजे आरूढः मत्सरभृतः बहुविद्याधरैः परिवृतः
ऊर्ध्वीकृतशशिधवलातपवारणः दक्षिणकरे कृतसीरविप्रहरणः
" यत् कृतं चिरं मायया सुग्रीवस्य यत् लक्ष्मणेन समरे दशग्रीवस्य
तत् करोमि वर्धितावलेपानां वासवप्रमुखाणां अशेषाणां देवानां "
सह निजभृत्यैः एवं वदन् सः महेन्द्रनंदनवनं प्राप्तः
प्रेक्ष्य ज्ञानं उत्पन्नं मुनीन्द्रं विगलितः मत्सरः सकलः नरेन्द्रस्य
॥घत्ता॥ अवतीर्य महागजस्कन्धात् प्रदक्षिणां दत्त्वा सः नरवरेण
करौ मौलौ कृत्वा मुनिः वंदितः नतशिरसा श्रीहलधरेण ॥

( २० )

यथा तेन तथा वंदितः सानन्दैः लक्ष्मणप्रमुखाशेषनरेन्द्रैः
दृष्टा सीता तत्र राघवचन्द्रेण यथा त्रिभुवनश्रीः परमानन्देन
शशिधवलांबरयुगलालंकृता मह्यां निविष्टा बाढं बाढं दीक्षांकिता
पुनः निजयशःभुवनत्रयधवलेन शिरःशिखरोपरि कृतकरकमलेन

पुच्छिउ बलिण " अणंग-वियारा परम-धम्मु वज्जरहि भडारा " २०५
तेण वि कहिउ सव्वु संखेवें भरहेसरहु जेव पुर-एवें
तव-चरित्त[1]-वर-दंसण-णाणइं पंच वि गइउ जीव-गुण-थाणइं
खम-दम-धम्माहम्म-पुराणइं जग-जीवाउ-च्छेअ[2]-पमाणइं
समय-पल्ल-रयणायर-पुव्वइं बंध-मोक्खु लेसाउ अणुव्वइ
॥घत्ता॥ आयइं अवरइं वि अ-सेसइं कहियइ मुणि-वरि सारइण[3]
परमागमि जह उद्दिट्ठइ आसि सयंभु-भडारइण ॥ २११

१. चरित्तु । २. च्छेउ। ३.सारएण...भडारएण ।

आ संधि–परिच्छेदने अंते नीचे प्रमाणे पुष्पिका आपी छे.

इय पउमचरियसेसे सयंभु-एवस्स कह वि उव्वरिए
तिहुवण-सयंभु-रइये समाणियं सीय-दिव्व[4]-पव्वमिणं ॥
वंदइ-आसिय तिहुअण-सयंभु-कइ-कहिय-पोम-चरिअस्स
सेसे भुवण–पगासे तेआसीमो इमो सग्गो ॥
कइ-रायस्स विजय–सेसियस्स वित्थारिओ[5] जसो भुवणे
तिहुअण-सयंभुणा पोम-चरिय–सेसेण णिस्सेसो ॥

५. दीवा ६.वित्थारिउ ।

पृष्टः बलेन " अनंगविदारक, परमधर्मं वद भट्टारक "
तेन अपि कथितः सर्वः संक्षेपेण भरतेश्वराय यथा पुरोदेवेन
तपःचारित्रवरदर्शनज्ञानानि पंच अपि गतयः जीवगुणस्थानानि
क्षमादमधर्माधर्मपुराणानि जगज्जीवायुःछेदप्रमाणानि
समयपल्यरत्नाकरपूर्वाणि बंधमोक्षौ लेश्याः अणुव्रतानि
॥घत्ता॥ एतानि अवराणि अपि अशेषाणि कथितानि मुनिवरेण सारकेण
परमागमे यथा उद्दिष्टानि आसीत् स्वयंभूभट्टारकेण ॥

पुष्पिकानी संस्कृतछाया,

इति पद्मचरितशेषे स्वयंभूदेवस्य कथमपि उद्वृते
त्रिभुवनस्वयंभूरचितं समाप्तं सीतादिव्यपर्व इदं ॥
'वन्दइ'–आश्रितत्रिभुवनस्वयंभूकविकथितपद्मचरितस्य
शेषे भुवन–प्रकाशे व्यशीतितमः अयं सर्गः ॥
कविराजस्य विजय–शेषितस्य विस्तारितं यशः भुवने
त्रिभुवनस्वयंभुवा पद्मचरितशेषेण निःशेषं ॥

# ॥ तृतीयमुद्धरणम् ॥

[ चउमुहु सयंभु । ]

॥ विराड-नयरि पंडवहं अण्णाय-वासु ॥

( १ )

हिंडिवि वण-गहणें पडिवक्ख-मडप्फर-सारहो
जण्णसेण-सहिय गय पंडव णयरु विराडहो ॥
तो भणइ जुहिट्ठिलु भायरहो स·ब्भाव[1]·णेह-गुण-सायरहो
"बहु·दुक्ख·किलेसुप्पायणइं वणि गमियइं बारह हायणइं
अज्ज वि भमरेहि व कमल-सरे अच्छेवउ वरिसु विराड-घरे ५
अच्चंत महंत चिंत तहि मि पहु-सेव सु·दु·क्कर सव्वह मि
आयइं लहुयाइं णिकारणइं[2] णिट्ठीवण-पाय·पसारणइं
कर·मोडण-जिंभा·मेलणइं कह·कहण-परासण·पेल्लणइं
अंतेउर-रूव-णिहालणइं उवहसियइं हत्थुप्फालणइं

---

१. सब्भाय । २. णकारणइं ।

[ चतुर्मुखः स्वयंभूः ]

॥ विराटनगरे पाण्डवानामज्ञातवासः ॥

( १ )

हिंडित्वा गहनवने प्रतिपक्षगर्वदलनस्य
याज्ञसेनीसहिताः गताः पाण्डवा नगरं विराटस्य ॥
ततो भणति युधिष्ठिरो भ्रातॄन् सद्भावस्नेहगुणसागरान्
" बहुदुःखक्लेशोत्पादनानि वने गमितानि द्वादश हायनानि
अद्यापि भ्रमरैरिव कमलसरसि आसितव्यं वर्षं विराटगृहे
अत्यंता महती चिंता तस्मिन्नपि प्रभुसेवा सुदुष्करा सर्वेषामपि
आयान्ति लघुकानि निकारणानि निष्ठीवनपादप्रसारणानि
करमोटनजिह्वामीलनानि कथाकथनपराशनपीडनानि
अंतःपुररूपनिभालनानि उपहसितानि हस्तास्फालनानि

आयइं सव्वइं वंचेवाइं इंदियइं पंच खंचेवाइं १०
॥घत्ता॥ वड्ढी चिंत महु जो जोगि-गणहो वि अ-गम्मु
किह तुम्हारिसिहि सो सेवउ सेवा-धम्मु ॥

( २ )

जं जाणहुं तं चिंतवहु लहु णिय-णिय-विण्णाणइं कहहु महु
को कवणु करेसइ रूउ तहिं अच्छेसहुं पुरें पच्छण्ण जहिं
हउं होमि पुरोहिउ सासणिउ णामेणं कंकु अग्गासणिउ १५
जूवारिउ जाणमि जूव-विहि तिह रमणि तासु जिह देइ दिहि "
तो बग-हिडंब-जम-गोयरहो वयणुग्गय वाय विओयरहो
"भुक्खालउ भोयण-वुज्झणउ जो जुज्झइ तइं सहु जुज्झणउ
बल्लव-अहिहाणु अणालसिउ दव्वी-हरु होमि महाणसिउ"
॥घत्ता॥ अज्जुणु विण्णवइ मणहरउ लडह-लायण्णउ २०
" हउं णट्टायरिउ णच्चावमि णरवइ-कण्णउ ॥

---

आयान्ति सर्वाणि वंचितव्यानि इंद्रियाणि पंच कर्षितव्यानि
॥घत्ता॥ महती चिंता मम यः योगिगणस्याप्यगम्यः
कथं युष्मादृशैः स सेव्यः सेवाधर्मः ॥

( २ )

यज्जानीथ तच्चिंतयत लघु निजनिजविज्ञानानि कथयत मह्यम्
कः किं करिष्यति रूपं तत्र आसिष्यामहे पुरे प्रच्छन्ना यत्र
अहं भवामि पुरोहितः शासनिको नाम्ना कङ्कोऽग्रासनिकः
द्यूतकारो जानामि द्यूतविधिं तथा रमणे तस्य यथा दीयते धृतिः"
ततो यमगोचरीकृतबकाहिडंबस्य वदनोद्गता वाग् वृकोदरस्य
" बुभुक्षितो भोजनबोधको यः युध्यते तेन सह योधनशीलः
बल्लवाभिधानोऽनलसो दर्वीधरो भवामि महानसिकः"
॥घत्ता॥ अर्जुनो विज्ञापयति मनोहरो लटभलावण्यः
" अहं नाट्याचार्यो नर्तयामि नरपतिकन्यकाः ॥

( ३ )

णामेण बिहंदल दुल्ललिय परिहेसमि कंबल कंचुलिय
करि वलयइं कण्णिहिं कुंडलइं णं चंद-दिवायर-मंडलइं
गुंथेवइ[1] वेणि पई-हरिय जा कसण-भुवंगिहि अणुहरिय
णच्चेवइ सइं णट्टायरिउ अवरेहिं मि गुणहिं अलंकरिउ २५
गाएवइ[2] किं-णरु किं-पुरिसु वाएवइ[3]को वि ण मइं सरिसु"
तहिं अवसरि जमल-जेट्ठ चवइ "हउं होमि महंतु महास-वइ
जे णिरु विसम-सील दप्पुद्धुर ते वि करेमि तुरंगम पद्धुर[4]
॥घत्ता॥ पभणइ[5] जोइसिउ "हउं गोउलु णाह णिहालमि
गो-रस-रिद्धि-करु धण-पालु होवि धणु पालमि" ॥ ३०

( ४ )

ता मालइ-माला-ललिय-भुय स-ब्भावें पभणइ दुमय-सुय
"जाणमि विण्णाणु अणुत्तमउं सयालधि भडारा होमि हउं

---

१. गुंथेवी । २. गाएवए । ३. वाएवए । ४. पद्धर । ५. पभणइं ।

( ३ )

नाम्ना बृहन्नला दुर्ललिता परिधास्यामि कंबलं कंचुलिकाम्
करे वलयानि कर्णयोः कुंडलानि यथा चंद्रदिवाकरमंडलानि
ग्रथितव्ये वेण्याः प्रतिगृहिका या [ वेणी ] कृष्णभुजंगैरनुहृता
नर्तितव्ये स्वयं नृत्याचार्यः अपरैः अपि गुणैः अलंकृतः
गातव्ये किन्नरः किंपुरुषः वादितव्ये कोऽपि न मम सदृशः"
तस्मिन्नवसरे यमलज्येष्ठो वदति "अहं भवामि महान्महाश्वपतिः
ये खलु विषमशीला दर्पोद्धुरास्तानपि करोमि तुरंगमान् सरलान्
॥घत्ता॥ प्रभणति ज्योतिषी' अहं गोकुलं नाथ निभालयामि
गोरसऋद्धिकरः धनपालः भूत्वा धनं पालयामि ॥

( ४ )

ततः मालतीमाललालितभुजा सद्भावेन प्रभणति द्रुपदसुता
"जानामि विज्ञानं अनुत्तमं सैरन्ध्री भट्टारक भवामि अहम्

किंकरि कल-कोइल-वाणियहे कमलच्छहे मच्छहो राणियहे "
तो एव परोप्परु संगयइं पुर-घर-सीमंतरु ववगयइं
समि दीसइ ताम स-कोडरिय णिग्गय-बहु-दल-बहु-संगरिय ३९
स-ग्गह स-भूय स-भुवंगमिय स-मडय स-सूल स-विहगमिय
तहिं[1] जंबुय-निवह-भयंकरिय समसाण जमेण वि परिहरिय
दुद्दम-दणु-देह-वियारणइं तहिं णउलें णिहियइं पहरणइं
॥घत्ता॥ पट्टणु पइसरिय[2] जं धवल-घरालंकरियउ
केण वि कारणेणं णं सग्ग-खंडु ओयरियउ ॥ ४०

( ५ )

जो वइयरु पुव्वालोइयउ सो दउवारियहो णिवेइयउ
तेण वि जाणाविउ[3] राणाहो तहो मच्छहो मच्छ-पहाणाहो
"अच्छंति वारि के वि कप्पडिय णं सग्गहो पंच इंद पडिय
उज्जाल-झलुक्कियं-खंडवहं तहिं इक्कु पुरोहिउ पंडवहं

---

१ कहिं । २ पइसारिय । ३ ज्जाणाविउ ।

किंकरी कलकोकिलवाण्याः कमलाक्ष्याः मत्स्यस्य राज्ञ्याः "
ततः एवं परस्परं संगताः पुरवरसीमान्तरं व्यपगताः
शमी दृश्यंते तावत्सकोटरा निर्गतबहुदलबहुफलिका
सग्रहा सभूता सभुजंगा समृतका सशूला सविहंगमा
तत्र जंबूकनिवहभयंकरं श्मशानं यमेनापि परिहृतं
दुर्दमदनु[ज]देहविदारणानि तत्र नकुलेन निहितानि प्रहरणानि
॥घत्ता॥ पट्टनं प्रविष्टाः यद्धवलगृहालंकृतं
केनापि कारणेन यथा स्वर्गखंडोऽवतीर्णः ॥

( ५ )

यो व्यतिकरः पूर्वालोचितः स दौवारिकाय निवेदितः
तेनापि ज्ञापितो राज्ञे तस्मै मत्स्याय मत्स्यप्रधानाय
" आसते द्वारि केऽपि कार्पटिकाः यथा स्वर्गात्पञ्च इन्द्राः पतिताः
उज्ज्वालज्वलत्कृतखांडवानां तत्रैकः पुरोहितः पांडवानां

सूयारु अवरु विक्कम-चरिउ अवरेक्कु तेत्थु णट्टायरिउ ४५
अवरेक्कु[1] चलत्थु महासवइ धण-पालु अवरु तुम्हह हवइ
अवरेक्क णारि सु-मणोहरिय पच्चक्ख लच्छि णं अवयरिय
मह-एविहे राय-हंस-गइहे सयलिंधि हवइ सा कइकइहे[2]
॥घत्ता॥ सहुं दुमय-सुयाए कोक्कावियं ते वि पइट्ठा
जीव-दयाए सहिय परमेट्ठि पंच णं दिट्ठा ॥ ५०

( ६ )

सयल वि णिय-णिय-णिओयणि य[3] तेहि मि एयारह मास णिय[4]
बारहमउ मासु समावडिउ णं कीयइं काल-दंडु पडिउ
तणु तावइ लावइ पेम्म-जरु आयलय[5]-सल्लइ कुसुम-सरु
विंधंति काम-उक्कोवणइ दोवइ-उज्जंगल-लोयणइं
थण-यल सु-मणोहर दिंति दिहि[6] पज्जलयइ[7] अंगु अणंग-सिहि ५५
झिज्जइ कुमारु सुसियाणणउं णं करिणि-विरहे वण-वारणउं

१. अवरेकु । २. सा कइहे । ३. मि य । ४ णीय । ५. आयलइ । ६. दिह । ७. पज्जलइ ।

सूपकारोऽपरो विक्रमचरितोऽपर एकस्तत्र नाट्याचार्यः
अपर एकश्चलार्थो महाश्वपतिर्धनपालोऽपरो युष्माकं भवति
अपरैका नारी सुमनोहरा प्रत्यक्षा लक्ष्मीर्यथाऽवतीर्णा
महादेव्या राजहंसगत्याः सैरन्ध्री भवति सा कैकेय्याः ”
॥घत्ता॥ सार्धं द्रुपदसुतया आहूतास्तेऽपि प्रविष्टाः
जीवदयया सहिताः परमेष्ठिनः पञ्च यथा दृष्टाः ॥

( ६ )

सकला अपि निजनिजनियोजने च तैरप्येकादश मासा नीताः
द्वादशः मासः समापतितो यथा कीचके कालदण्डः पतितः
तनुं तापयत्यानयति प्रेमज्वरं कामपीडाशल्येन कुसुमशरः
विध्यतः कामोत्कोचे द्रौपदीदीर्घलोचने
स्तनतले सुमनोहरे ददतो धृतिं प्रज्वलयत्यंगमनंगशिखी
क्षीयते कुमारः शुष्काननो यथा करिणीविरहे वनवारणः

जउ जउ सीमंतिणि संचरइ तउ तउ चडुयार-सयइं करइ
एक्कहिं दिणि[1] णयणाणंदणिए णिब्भच्छिउ दुमयहो णंदणिए
॥घत्ता॥ "जे एत्थु करंति पुरि गंधव्व पंच महु पेसण
जइ जाणंति पइं ते णेंति पाव जम-सासण" ॥ ६०

( ७ )

जोएप्पिणु दोवइ मुह-कमलु पभणइ[2] णव-णाय-सहास-बलु
"हउं सुहड-सएहिं पडिवज्जियउ पइं सुंदरि णवर परज्जियउ
पडिमल्ल ण हरि-हर-चउ-वयण पंचहिं गंधव्विहिं का गणण
छुड करि पसाउ जीवावि मइं भुंजावमि वसुमइ[3]-अद्धु पइं[4]"
अवहेरि करिवि गय दुमय-सुय तहो णवमी कामावत्थ हुय ६५
णिय-ससहे कहिज्जइ कइकइहे "मणु रंजहि आयहे तीमइहे
जहिं अच्छमि हउं एयग्ग-मणु तहिं पट्टवि लेवि समालहणु"
स वि पेसिय तेण वि धरिय करे रइ-लालसेण एक्कंत-घरे

---

१ दिह । २. पभणइं । ३. वसुमइं । ४ पइ ।

यत्र यत्र सीमंतिनी संचरति तत्र तत्र चाटुकारशतानि करोति
एकस्मिन्दिने नयनानंदिन्या निर्भर्त्सितो द्रुपदस्य नंदिन्या
॥घत्ता॥ " येऽत्र कुर्वन्ति पुरि गान्धर्वाः पञ्च मम प्रेषणं
यदि जानन्ति त्वां ते नयन्ति पाप, यमशासनं ॥

( ७ )

दृष्ट्वा द्रौपदीमुखकमलं प्रभणति नवनागसहस्रबलः
अहं सुभटशतैः प्रतिपन्नस्त्वया सुंदरि केवलं पराजितः
प्रतिमल्ला न हरिहरचतुर्मुखाः पंचानां गांधर्वाणां का गणना
शीघ्रं कृत्वा प्रसादं जीवय मां भोजयामि वसुमत्यर्धं त्वां "
अवधीरणां कृत्वा गता द्रुपदसुता तस्य नवमी कामावस्था भूता
निजस्वस्रे कथ्यते कैकेय्यै "मनो रञ्जय अस्याः स्त्रियः
यत्राऽस्म्यहमेतद्गमनास्तत्र प्रेषय लात्वा समालभनं "
साऽपि प्रेषिता तेनाऽपि धृता करे रतिलालसेनैकान्तगृहे

॥घत्ता॥ सीहहो हरिणि जिहं णिय-पुण्णेहिं केम वि चुक्की
कंक विराड जहिं कलुणु रुवंति पदुक्की ॥ ७०

( ८ )

तो तेण विलक्खीहूवएण अणुलग्गें जिहं जम-दूयएण
चिहुरेहिं धरेवि चलणेहि हय पेक्खंतह रायहं मुच्छ गय
मणि[1] रोसु पवट्टिउ वल्लवहो किर देइ दिट्ठ तरु-पल्लवहो
"मरु मारमि मच्छु स-मेहुणउं पट्ठवमि कयंतहो पाहुणउ"
तो तव-सुएण आयड्ढएण विणिवारिउ चलणंगुट्ठएण ७५
ओसरिउ विओयरु सण्णियउ पुर-वर-णारिउ आदण्णियउ
"धि धि दड्ढ-सरीरें काइं किउं कुल-जायहं जायहं मरणु थिउ
जहिं पहु दुच्चरिउ[2] समायरइ तहिं जणु सामण्णु काइं करइ"
॥घत्ता॥ ताम स-वेयणिय पंचालि स-दुक्खउ रोवइ
" जइ गंधव्व पुरे तो किं मइं विडु विग्गोवइ " ॥ ८०

---

१. मणे. । २. दुच्चारिउ ।

॥घत्ता॥ सिंहाद् हरिणी यथा निजपुण्यैः कथमपि मुक्ता
कंको विराटो यत्र करुणं रुदती प्रढौकिता ॥

( ८ )

ततस्तेन विलक्षीभूतकेन अनुलग्नेन यथा यमदूतकेन
चिकुरैर्धृत्वा चरणैर्हता प्रेक्षमाणानां राज्ञां मूर्च्छा गता
मनसि रोषः प्रवृत्तो बल्लवस्य किल ददाति दृष्टिं तरुपल्लवाय
"म्रिये मारयामि मत्स्यं सश्यालकं प्रस्थापयामि कृतांताय प्राघूर्णकं"
ततः तपःसुतेन आकृष्टकेन विनिवारितश्चरणांगुष्टकेन
अपसृतः वृकोदरः संज्ञितः पुरवरनार्यो व्याकुलिताः
" धिग् धिग् दग्धशरीरेण किं कृतं कुलजातानां जायानां मरणं भूतम्
यत्र प्रभुर्दुश्चरितं समाचरति तत्र जनः सामान्यः किमपि करोति "
॥घत्ता॥ तावत्सवेदना पाचाली सदुःखं रोदिति
"यदि गांधर्वाः पुरे तर्हि किं मां विटो विगोपयति ॥

( ९ )

णिय-कीलइं मच्छुडु कहि मि गय हउं तेण विसूरिमि दड्ढ-हय
जइ पंचहं इक्कु[1] वि होंतु पुरि[2] तो जुप्पइ रण-भर-धरण-धुरि[3]"
एत्तडउ जाम जंपइ वयणु गउ ताम दिवायरु अत्थवणु
पडिवण्ण रयणि वित्थरिउ तमु कउहंतर-कसणी-करण-खमु
किम्मीर-वीर-जम-गोयरहो गय दोवइ पास विओयरहो ८५
णं गंग महा-णइ सायरहो णं ससहर-पडिम दिवायरहो
णं करिणि करिहो करडुज्झरहो[4] णं वल्लर-वल्लरि तरु-वरहो
विणएण विउज्झाविउ समुहुं णं सीह-किसोयरि पंच-मुहुं
॥घत्ता॥ रोवइ दुमय-सुय दरिसंति किणंकिय-हत्था
" पइं जीवंतएण महु एही भइय अवत्था " ॥ ९०

( १० )

तो भणइ विओयरु अरि-दमणु " कहि काइं माए किउ आगमणु
परिभविय केण कहो तणउं दुहु पक्खालहि लोयण लुहहि मुहुं "

---

१. एकु । २. पुरे । ३. धुरे। ४. करडज्झरहो ।

( ९ )

निजक्रीडया मंक्षु कुत्रापि गताः अहं तेन खिद्यामि दग्धहृदया
यदि पंचानामेकोऽपि भवेत्पुरे तर्हि युज्यते रणभरधरणधुरि"
एतावद् यावद् वदति वचनं गतस्तावद् दिवाकरोऽस्तं
प्रतिपन्ना रजनी विस्तृतं तमः ककुबंतरकृष्णीकरणक्षमं
किर्मीरवीरयमगोचरस्य गता द्रौपदी पार्श्वे वृकोदरस्य
यथा गंगा महानदी सागरस्य यथा शशधरप्रतिमा दिवाकरस्य
यथा करिणी करिणः द्रवत्करटस्य यथा वनवल्लरी तरुवरस्य
विनयेन विबोधितः संमुखं यथा सिंहकृशोदर्या पंचमुखः
॥घत्ता॥ रोदिति द्रुपदसुता दर्शयन्ती किणांकितहस्ता
"त्वयि जीवति, मम एषा भूताऽवस्था" ॥

( १० )

ततो भणति वृकोदरोऽरिदमनः "कथय, किं मात्रा कृतमागमनं
परिभूता केन कस्य सत्कं दुःखं, प्रक्षालय लोचने मृड्ढि मुखं "

तं णिसुणिवि दुमय-राय-दुहिय पभणइ छण-छुद्ध[1]-हीर-मुहिय
" महु कवणु सुहु च्छइ[2] कवण दिहि जहिं तुम्ह वि वट्टइ एह विहि
जो सामि-सालु महि-मंडलहो थिउ हरिवि[3] लच्छि आहंडलहो ९५
सो विहि-परिणामें संचरइ घरि[4] मच्छहो णिच्च सेव करइ
जो मुट्ठि-पहारें दलइ गिरि जं खणु वि ण मेल्लइ सुहड-सिरि
जें बगु हिडिंबु[5] किम्मीरु जिउ सो हुउ विहि-वसिण महाणसिउ
॥घत्ता॥ जो बहु-लद्ध-वरु खंडव-डह-डामर-वीरु
कम्महं विहि-वसिण सो[6] जायहं मलइ सरीरु[7] ॥ १००

( ११ )

जमलाऽस-वाल-धण-वाल जहिं सइलिधि हउं मि सुहु कवणु तहिं
महि-मंडलि सयलि[8] गविट्ठाइं केम वि खल-दइवें दिट्ठाइं
देसें देसंतरु भमियाइं वणि बारह वरिसइं गमियाइं

---

१. च्छणच्छुद्ध। २. सुहच्छी। ३. हरेवि। ४. घरे। ५ हिडिंब। ६. जो। ७. सरीरउ। ८. महिमंडले सयले।

तन्निश्रुत्य द्रुपदराजदुहिता प्रभणति क्षणक्षुब्धधीरमुखी
" मम किं सुखं अस्ति का धृतिर्यत्र युष्माकं वर्तते एष विधिः
यः स्वामिवरो महीमंडलस्य स्थितो हृत्वा लक्ष्मीमाखंडलस्य
स विधिपरिणामेन संचरति गृहे मत्स्यस्य नित्यं सेवां करोति
यो मुष्टिप्रहारेण दलति गिरिं यं क्षणमपि न मुञ्चति सुभटश्रीः
येन बको हिडिम्बः किर्मीरो जितः स भूतो विधिवशेन महानसिकः
॥घत्ता॥ यो बहुलब्धवरः खाण्डवदाहडामरवीरः
कर्मणां विधिवशेन स जायानां मृद्नाति शरीरम् ॥

( ११ )

यमलौ अश्वपाल-धनपालौ यत्र सैरन्ध्री अहमपि सुखं किं तत्र
महीमंडले सकले गवेषितानि कथमपि खलदैवेन दृष्टानि
देशाद् देशांतरं भ्रामितानि वने द्वादश वर्षाणि गमितानि

अहियइं मासिहिं ग्यारहिहि अवरहिं वासर-पण्णारहिहिं
तो वि दुक्ख-किलेसहो छेउ[1]ण वि वरि मरणु न जीविए सु-हल[2]क वि' १०५
तो भणइ[3] भीमु अ-पमेय-बलु थोरंसु-जलोल्लिय-मुह-कमलु
" किं रुवहि माइ लुहि लोयणइं गय-दुक्ख-किलेसहो भायणइं
संसार-धम्मु ण णिरिक्खियउ सुहु केत्तिउ केत्तिउ[4] दुक्खियउ
॥घत्ता॥ देइ दुवि वि फलइं पंचालि पुराइय-रुक्खु
जहिं णिय रावणिण किं सीयहिं थोडउ दुक्खु ॥ ११०

( १२ )

अइकंत-दिवसि[5] अ-विणीयएण परिभविय माइ जं कीयएण
तं तहिं जि कालि किर णिट्ठवमि पाहुणउं कयंतहो पट्ठवमि
हउं[6] ताम णरिंदहे सण्णियउ णिय-रोसु तेण अवगण्णियउ[7]
जइ कह वि[8] चुक्कु अज्जोणियहे मारमि रयणिहे कल्लोणियहे
छुडु तेण समउ संकेउ करि पइसारहि णच्चण[9]-साल-घरि ११५

---

१. च्छेउ । २. सहल । ३. भणइ । ४. सुहि केतिउ केतिउ । ५. दिवसे ।
६. हउ । ७. अवगणियउ । ८. कहट्ठ । ९ णच्चल ।

अधिकानि मासैरेकादशभिरपरस्य पञ्चदशवासरैः
तदपि दुःखक्लेशस्य छेदो नापि वरं मरणं न जीविते सुफलं कदापि "
तावद्भणति भीमोऽप्रमेयबलो स्थूलाश्रुजलार्द्रितमुखकमलः
" किं रोदिषि मातः मृड्ढि लोचने गतदुःखक्लेशस्य भाजने
संसारधर्मः न निरीक्षितः सुखं कियत् कियत् दुःखितं
॥घत्ता॥ ददाति द्वे अपि फले पाञ्चालि पुराकृतवृक्षः
यथा नीतं रावणेन किं सीतायै स्तोकं दुःखम् ॥

( १२ )

अतिक्रान्तदिवसेऽविनीतकेन परिभूता मातर्यत्कीचकेन
तं तस्मिन्नेव काले किल निष्ठापयामि प्राघूर्णकं कृतान्ताय प्रस्थापयामि
अहं तावन्नरेन्द्रात्संज्ञितो निजरोषस्तेनावगणितः
यदि कथमपि च्युतोऽद्यतनायां मारयामि रजन्यां कल्यतनायां
शीघ्रं तेन समं संकेतं कृत्वा प्रवेशय नृत्यशालागृहे

जहिं तुंगिहे को वि ण संचरइ तहिं कल्लइं कीयउ महु मरइ "
तं णिसुणि[1] पुलउ उब्भिण्ण भुय गय णिय-थणि हेलणु दुमय-सुय
थिउ ताम भीमु परियलिय णिसि अरुणेणालंकिय पुव्व-दिसि
॥ घत्ता ॥ ' कल्लइं दोवइहे जं कड्ढिउ केस-कलावउ
सो मउ किं ण मउ ' णं दिण-मणि आउ विहावउं ॥ १२०

( १३ )

पडिवण्णइं वासरे वियड-पय पंचालि कुमारहो पासु गय
बोल्लाविय तेण मराल-गइ[2] कुल-जाय पइ-व्वय विमल-मइ[2]
" सुंदिर-समुद्द-णवणीय-मुहि गंधव्वह केरी लीह लुहि
कहि काइं न इच्छहि सु-यणु मइं किं णत्थि हत्थि-हय-साहणइं
किं ण वि णव-णाय-सहास-बलु किं कमल-समाणु ण मुह-कमलु १२५
किं ण वि जुवाणु किं ण वि सुहउ किं ण वि पहु किं ण वि अत्थमउ
लइ अट्ठवीस मणि-कंठाहं बाहत्तरि अवरहं मंठाहं

---

१. निसुणिवि । २. गई ।

यत्र रात्र्यां कोऽपि न संचरति तत्र कल्ये कीचको मत् म्रियते
तं निश्रुत्य पुलकाः उद्भिन्नाः भूताः गता निजस्तने हेलनं द्रुपदसुता
स्थितस्तावद्भीमः परिगलिता निशा अरुणेनालंकृता पूर्वदिशा
॥घत्ता॥ ' कल्ये द्रौपद्याः येन कृष्टः केशकलापः
स मृतः किं न मृतः ' इव दिनमणिरायातो विभावयितुम् ॥

( १३ )

प्रतिपन्ने वासरे विकटपदा पांचाली कुमारस्य पार्श्वं गता ।
आहूता तेन मरालगतिः कुलजाया पतिव्रता विमलमतिः
" सौन्दर्यसमुद्रनवनीतमुखि गांधर्वाणां सम्बन्धिनीं लेखां मृद्विह
कथय किं नेच्छसि सुतनु मां किं नास्ति हस्तिहयसाधनानि
किं नापि नवनागसहस्रबलः किं कमलसमानं न मुखकमलं
किं नापि युवा किं नापि सुभगः किं नापि प्रभुः किं नाप्यर्थवान्
लाहि अष्टाविंशतिं मणिकण्ठिकानां द्वासप्ततिमपराणां बन्धानां

लइ भामिणि जणमण-भामिणिहि महएवि-पट्टु महु कामिणिहि
॥घत्ता॥ अक्खमि केत्तडउ लइ सच्चु देमि जं मग्गहि
कोमल-बाहुयहिं छुडु एक्क मि सइं आलिंगहि " ॥ १३०

( १४ )

पडिवण्णु सव्वु जं दोवइए दुव्वार-जार-मारण-मइए
"आविज्जइ नच्चण-साल तुहु तं माणहु विण्णि वि सु-रय-सुहु"
गय तेत्थहो कहिउ विओयरहो "विडु णिवडिउ दिट्ठी-गोयरहो"
भीमेण वि तं पडिवण्णु रणु अहिम-यरु ताम गउ अत्थवणु
सेणा-वइ लेवि पसाहणउ सकेय-भवणु गउ अप्पणउ १३५
जहिं भीम-सेणु थिउ पइसरिवि[2] जहि सीहु कुरंगहो कमु करिवि[3]
तहिं घंघु विसत्थु पइट्ठु विडु ण उ जाणइ मंडिउ मरण-पिडु
रायाणुएण चिहुरहिं धरिउ णं कालें पढम कवलु भरिउ
॥घत्ता॥ चिंतिउ कीयएण "लइ हउं गंधव्वें मारिउ
ण उ सइलिंधि-करु एहु कालें हत्थु पसारिउ" ॥ १४०

---

१. मइं । २. पइसरवि ३. करेवि ।

लाहि भामिनि जनमनोभ्रामिणीनां महादेवीपट्टं मम कामिनीनां
॥घत्ता॥ आख्यामि कियत् लाहि सत्यं ददामि यन्मार्गयसि
कोमलबाहुभ्यां शीघ्रं एकशोऽपि स्वयमालिंग ॥

( १४ )

प्रतिपन्नं सर्वं यद् द्रौपद्या दुर्वारजारमारणमत्या
" आयायाः नृत्यशालां त्वं तन्मानयावो द्वावपि सुरतसुखं '
गता तस्मात् कथितं वृकोदराय " विटो निपतितो दृष्टिगोचरं "
भीमेनापि तत् प्रतिपन्नं रणं अहिमकरस्तावद्गतोऽस्तं
सेनापतिः लात्वा प्रसाधनं सैकेतभवनं गतः आत्मनः
यत्र भीमसेनः स्थितः प्रविश्य यथा सिंहः कुरङ्गाय क्रमं कृत्वा
तत्र गृहे विश्वस्तः प्रविष्टो विटो न तु जानाति आरब्धं मरणपेटकं
राजानुजेन चिकुरैर्धृतो यथा कालेन प्रथमः कवलो भृतः
॥घता॥ चिंतितं कीचकेन " लात्वा अहं गान्धर्वेण मारितः
न तु सैरन्ध्रीकरः एषः कालेन हस्तः प्रसारितः ॥

( १५ )

कह-कह-वि गाहु मेल्लावियउ[1] सो विड-भडेण बोल्लावियउ
" गंधव्व जाहि किं जुज्झिएण पइं विक्कम-वीर-बलुज्झिएण
हउं कीयउ सव्व-कला-कुसलु अण्णु वि णव-णाय-सहास-बलु
किर भीमहो हत्थें महु मरणु किउ तासु जि [2]वसुमइ-अवहरणु "
तो भणइ विओयरु " सो जि हउं जो हणिसु सहुं तइं भाइ-सउं
तव-तणउ कंकु[3] मत्थाण-यरु णट्टावउ णरु गंडीव-धरु
जम-जेट्ठु तुरंगम-कम्म-कसु जोवइ सहएउ गु[4]-गंव-रसु
दोवइ सयलिंधि पाव धरहि तुहु कीयउ महु भीमहु मरहि "
॥घत्ता॥ तं णिसुणिवि वयणु हक्कारिउ पंडुहि णंदणु
अक्खाडइ थिएण चाणूरें जिव जणद्दणु ॥

( १६ )

तो भिडिय परोप्परु रण-कुसल बिण्णि वि णव-णाय-सहास-बल

---

१. मेलावियउ । २. जे । ३ हउ । ४ सउतइ । ५. सउ । ६. कंकु । ७ ग ।

( १५ )

कथं कथमपि ग्राहो मोचितः स विटभटेनाहूतः
" गान्धर्व, याहि किं युद्धेन त्वया विक्रमवीर्यबलोज्झितेन
अहं कीचकः सर्वकलाकुशलोऽन्यदपि नवनागसहस्रबलः
किल भीमस्य हस्तेन मम मरणं कृतं तस्यैव वसुमत्यपहरणं "
ततः भणति वृकोदरः " स एवाहं यः हनिष्यामि सह त्वया भ्रातृशतं
तपस्तनयः कङ्कः आस्थान—चरो नर्तको नरो गाण्डीवधरः
यमज्येष्ठस्तुरङ्गमकर्मकृशः पश्यति सहदेवो गोगव्यरसं
द्रौपदीं सैरन्ध्रीं पाप धरसि त्वं कीचक मद् भीमान्म्रियसे "
॥घत्ता॥ तन्निश्रुत्य वचनमाहूतः पाण्डोर्नंदनः
अक्षवाटे स्थितेन चाणूरेण यथा जनार्दनः ॥

( १६ )

ततः मीलितौ परस्परं रणकुशलौ द्वौ अपि नवनागसहस्रबलौ

बिण्णि वि गिरि-तुंग-सिंग-सिहर बिण्णि वि जल-हर-रव-गहिर-गिर
बिण्णि वि दट्ठोट्ठ रुट्ठ-वयण बिण्णि वि गुंजा-हल-सम-णयण
बिण्णि वि णह-यल-णिह-वच्छ-यल बिण्णि वि परिहोवम-भुय-जुयल
बिण्णि वि तणु-तेयाहय-तिमिर बिण्णि वि जिण-चरण-कमल-णमिर१५५
बिण्णि वि मंदर-परिभमण-चल बिण्णि वि विण्णाण-करण-कुसल
बिण्णि वि पहरंति पहर-क्खमिहिं भुय-दंडिहिं वज्ज दंड-समिहिं
पय-भारिहिं भारिय बिहि मि महि महि-पडण-पेल्लणाहित्थ महि
॥घत्ता॥ भीमु समाहयउ वच्छ-त्थलि मुट्ठि-पहारं
कह वि ण णिवडिउ महि-यलि सहुं रुहिरुग्गारें ॥ १६०

( १७ )

सेणा-वइ पेक्खवि अ-तुल-बलु ओहुल्लिउ भीमहो मुह-कमलु
"किय होसइ महु जस हाणि[1] रणि वज्जेसइ अ-यस-पडहु भुवणि
किय होसइ जण-वए जंपणउं" कह कहवि धीरवि अप्पणउं

---

१. रणे...भवणे ।

द्वा अपि गिरितुंगशृङ्गशिखरौ द्वा अपि जलधररवगभीरगिरौ
द्वा अपि दष्टौष्ठौ रुष्टवदनौ द्वा अपि गुञ्जाफलसमनयनौ
द्वा अपि नभस्तलनिभवक्षःस्थलौ द्वा अपि परिघोपमभुजयुगलौ
द्वा अपि तनुतेजःआहततिमिरौ द्वा अपि जिनचरणकमलनमनशीलौ
द्वा अपि मंदरपरिभ्रमणचलौ द्वा अपि विज्ञानकरणकुशलौ
द्वा अपि प्रहरतः प्रहारक्षमाभ्यां भुजदंडाभ्यां वज्रदंडसमाभ्यां
पदभारैर्भारिता द्वाभ्यामपि मही महीपतनपीडनचलिता मही
॥घत्ता॥ भीमः समाहतो वक्षःस्थले मुष्टिप्रहारेण
कथमपि न निपतितः महीतले सह रुधिरोद्गारेण ॥

( १७ )

सेनापतिं प्रेक्ष्य अतुलबलम् अवनतं भीमस्य मुखकमलं
"किमिव भविष्य त मम यशोहानी रणे वादिष्यते अयशःपटहः भुवने
किमिव भविष्य : जनपदे वचनीयं" कथं कथमपि धीरयित्वाऽऽत्मानं

आयासु करिवि णिय-भुय-जुयलि हउ मुट्ठि-पहारि वच्छ-यलि
घाएण जि वइवस-णयरु[1] णिउ सो कीयउ कुम्मागारु किउ १६९
पइसारिय हत्थ-पाय उयरि णं पुंजिउ आमिस-पुंजु घरि
णीसारिवि भीमु महा-भुयए जाणाविउ दुमय-राय-सुयए
"गंधव्विहिं विड-भड णिट्ठविउ पेयाहिव-पंथि पट्ठविउ"
॥घत्ता॥ धाइय पवर भड "मरुमारिउ कीयउ केण"
पंच-जणाहिएण घरु वेढिउ भाय-सएण ॥ १७०

( १८ )

उज्जोउ करिवि णिज्झाइयउ "सच्चउ गंधव्विहिं घाइयउ
एवडु सरीरि ण कहि मि वणु ण उ एक्कु वि करु एक्कु वि चरणु"
अण्णेत्तहे दीसइ दुमय-सुय बाहु-लयालिंगिय-सिहिण-जुय
ण काल-रत्ति दुद्दंसणिय णं असणि सहावें भीसणिय
णं विस-हरि[2] आसीविस-भरिय णं रक्खसि भुवण-भयंकरिय १७१

१. वइवसयरु । २. वीसहरि ।

आयासं कृत्वा निजभुजयुगलेन हतो मुष्टिप्रहारेण वक्षस्तले
घातेनैव विवस्वन्नगरं नीतः स कीचकः कूर्माकारः कृतः
प्रवेशितं हस्तपादमुदरे यथा पुञ्जितः आमिषपुञ्जः गृहे
निःसार्य भीमं महाभुजया ज्ञापितं द्रुपदराजसुतया
"गान्धर्वैर्विटभटो निष्ठापितः प्रेताधिपपथे प्रस्थापितः"
॥घत्ता॥ धाविताः प्रवराः भटाः "मारितः कीचकः केन"
पंचजनाहितेन गृहं वेष्टितं भ्रातृशतेन ॥

( १८ )

उद्द्योतं कृत्वा निध्यातं "सत्यं गान्धर्वैर्हतः
एतावति शरीरे न कुत्राऽपि व्रणो नत्वेकोऽपि करः एकोऽपि चरणः"
अन्यत्र दृश्यते द्रुपदसुता बाहुलतालिंगितस्तनयुगा
यथा कालरात्रिर्दुर्दर्शनीया यथाऽशनिः स्वभावेन भीषणा
यथा विषधर्याशीविषभृता यथा राक्षसी भुवनभयंकरा

णं परम-कुहिणि जम-सासणहो आसंक जाय सव्वहो जणहो
"मयर-द्धय-बाणोवद्दविउ उहु आयहे कारणि विद्दविउ"
"लइ एवहिं काइं विहाणएण परिपुच्छिएण किं राणएण[1] "
॥घत्ता॥ दोवइ सवेण सहुं थावि उप्परि मडयाजाणहो
कीयय-भाउ-सउ सवडंमुहु[2] चलिउ मसाणहो ॥ १८०

( १९ )

णिज्जंती कंदइ[3] दुमय-सुय "गंधव्वहु, धावहु काइं मुअ
अहो जय जयंत विजयंत धरि जयसेण जयावह रक्ख करि[4] "
तो भीमु ण कुहिणिहिं माइयउ भंजिवि पायारु[5] पधाइयउ
अण्णेत्तहे जेत्तहे[6] वइरि ण वि उप्पाइय नोक्खी भंगि क वि
मुक्कलिय-केसु उक्खाय-तरु पच्चक्खु णाइं थिउ रयणि-यरु १८५
सवडं-मुहुं दीसइ कीयएहिं जमु दंड-पाणि णं भीयएहिं
छड्डिज्जइ मडया-जागु तहिं 'णउ-णाय पणट्ठ' पइट्ठ कहि

---

१. रणाएण । २. कीयया...मुहुं । ३. कंदिय । ४. धरे...करे । ५. पयारु । ६. जेतहो ।

यथा परममार्गो यमशासनस्य आशंका जाता सर्वस्य जनस्य
"मकरध्वजबाणोपद्रुतः पश्यत अस्याः कारणेन विद्रुतः"
"नन्विदानीं किं विभानकेन परिपृष्टेन किं राज्ञा "
॥घत्ता॥ द्रौपदीं शबेन सह स्थापयित्वोपरि मृतकयानस्य
कोचकभ्रातृशतं संमुखं चलितं श्मशानस्य ॥

( १९ )

नीयमाना क्रंदति द्रुपदसुता "गान्धर्वाः, धावत किं मृताः
अहा जयजयंतविजयंताः धारयत जयसेनजयावहौ रक्षां कुरुतम् "
तावद्भीमो न मार्गे मातः भङ्क्त्वा प्राकारं प्रधावितः
अन्यत्र यत्र वैरो नास्ति उत्पादिता नूतना भङ्गी काऽपि
मुक्तकेशः उत्खाततरुः प्रत्यक्षो यथा स्थितो रजनीचरः
संमुखं दृश्यते कीचकैः यमो दंडपाणिर्यथा भीतैः
त्यज्यते मृतकयानं तत्र 'नवनागाः प्रणष्टाः' प्रवृत्ता कथा

पल्लट्टु विओयरु णिय-भवणु पडिवण्णु दिवायरु उग्गमणु
॥घत्ता॥ संकप्प उट्ठ[1]मणि तहो मच्छहो अ-णिहय-मल्लहो
कइकइ सिक्खावइ[2] "सयलिंधि णिवासहो घल्लहो " ॥ १९०

( २० )

तहिं अवसरि दुमय-णरिंद-सुय पक्खालिय-अंगोवंग-भुय
लक्खिज्जइ सयल-जणेण किह पट्टणि पइसंति भवित्ति जिह
सिय-वलयालंकिय-कर-यलहो गय स-रहसु पास विहंदलहो
पच्छण्ण-पउत्तिहिं वज्जरिवि "उत्तरइ समाणु खेडु करिवि
अप्पणउ णिहेलणु जाइ"किर उच्छलइ सुजेट्ठहो ताम गिर १९५
"जा जाहि भडारिए कहि मि तुहुं राउलहो स-णयरहो देहि सुहु "
धट्ठज्जुण-ससए समुण्णएण बोलिज्जइ रोस-वसं-गएण
"जइ एवहिं घल्लिय कह वि पइं तो पुरु घाएवउ सयलु मइं
॥घत्ता॥ जइ पुणु थक्कि महु घरि तेरह दिवसउ देसहुं
पुण्ण-मणोरहि य तो रज्जु सइं भुंजेसहो " ॥ २००

---

१. इट्ठ । २. सिक्खविय । ३ उच्छलिब ।

परिनिवृत्तो वृकोदरो निजभवनं प्रतिपन्नो दिवाकरः उद्गमनं
॥घत्ता॥ संकल्पः उत्थितः मनसि मत्स्यस्याऽनिहतमल्लस्य
कैकेयी शिक्षयति " सैरन्ध्रीं निवासे क्षिप "

( २० )

तस्मिन्नवसरे द्रुपदनरेन्द्रसुता प्रक्षालिताङ्गोपाङ्गभुजा
लक्ष्यते सकलजनेन कथं पट्टने प्रविशन्ती भवित्री यथा
सितवलयालंकृतकरतलायाः गता सरभसं पार्श्वे बृहन्नलायाः
प्रच्छन्नप्रवृत्तिभिरुक्त्वा "उत्तरायाः सभं क्रीडां कृत्वा
आत्मनो निहेलना जायते" किलोत्सरति सुज्येष्ठायास्तावद्गिरा
"याहि याहि भट्टारिके कुत्रापि त्वं राजकुलाय स्वनगरस्य देहि सुखं "
धृष्टद्युम्नस्वसा समुन्नतेन उच्यते रोषवशंगतेन [ वचसा ]
"यद्येवं क्षिप्ता कथमपि त्वया तर्हि पुरं हन्तव्यं सकलं मया
॥घत्ता॥ यदि पुनः स्थितिं मह्यं गृहे त्रयोदश दिवसान् दास्यसि
पूर्णमनोरथा च तर्हि राज्यं स्वयं भुङ्क्ष्यसि " ॥

# ॥ चतुर्थमुद्धरणम् ॥

## [ तिहुयण सयंभु । ]

### ॥ बलपण्हु ॥

तिहुवणो[1] जइ वि ण होंतु णंदणो सिरि-सयंभु-एवस्स
कव्वं कुल-कवित्तं तो पच्छा को समुद्धरइ ॥

( १ )

तो महि-मंडलि वम्मीसर-सर-विणिवारउ
णेमि-जिणेसरु विहरइ णं रिसहु भडारउ ॥
पइसिवि मज्झ-एस-मज्झहु[2] पुव्व पसिलाएवि
धम्म वइस-दिय-खत्तिय असेसि लाए वि ॥

१. तिहुवणे । आ गाथा हाथप्रतमां घणे स्थळे छे. बधामां य तिहुवणे पाठ छे; मने लागे छे के जइ वाळी रचना अने सति सप्तमीनो संकर होय; के मागधी प्रथमा एकवचन पण होय. २. मज्झेएसमच्छहु ।

## [ त्रिभुवनः स्वयंभूः । ]

### ॥ बलप्रश्नः ॥

त्रिभुवनो यदि न भवति नंदनः श्रीस्वयंभूदेवस्य
काव्यं कुलकवित्वं ततः पश्चात्कः समुद्धरति ॥

( १ )

ततः महीमंडले मन्मथशरविनिवारकः
नेमिजिनेश्वरो विहरति यथा ऋषभः भट्टारकः ॥
प्रविश्य मध्यदेशमध्ये पूर्वं प्रश्राव्य
धर्मं वैश्यद्विजक्षत्रियान् अशेषान् राज्ञोऽपि ॥

हाथप्रतनो आ भाग कोइए वांच्यो लागतो नथी. कविए आ सधिमां विदग्धता बतावी छे. हाथप्रतमां अर्थ अने छंदनी बहु ज भ्रष्टता छे. टिप्पण तो छे ज नहि.

सहसट्टालय-सुलि[1]-वल-पवलि हल-हर-हलि[2]-वल-कुल-सहस-बलि
सयलामल-केवल-णाण-वलि स-लसालविंद-सुकुमाल-कलि
दूलयलोसालिय-काम-सलि सासय-सिलि-जय-सिलि[3]-वहुय-वलि
संसाल-सायरा-ऽमल-सइलि[4] पलिहलिय-स-लज्जासेस-यलि १०
उज्जेंतह वल-हले तित्थ-यले उद्धरिय-सयल-भवि-उहय कुले
णासिय-संभव-जल-मलण-दले चिल-भव-सय-खल-वहु-दुलिय-मले
गोलव-थेलासण[5]-चंद-ऽमले विणिवारिय-सल्ल-त्तय-समले
तियसिंद-णमिय-कम-तामरसि[6] जय-मंगल-दव्व-पुण्ण-कलसि
॥ मागधिका णाम भासा ॥
॥घत्ता॥ बहुविं कालेण सहुं गणिहे भमेप्पिणु आयउ १५
पुणु वि पडीवउ रेवइ-उज्जाणु पराइउ ॥

---

१. सहसट्टालएसुर इ० य के इने बदले ए लखवानो रिवाज हाथप्रतोमां सामान्य होय छे. २. हलिहर एम हाथप्रतमां छे; आ ज लइए तो मात्राभंग थइ बे मात्रा छंदमां खूटे छे. हलहरहलि एम पाठ होवा पूरतो संभव छे. अर्थ नहि समजातां सरखा वर्णसमूहमां अमुकवर्ण पडी जवा स्वाभाविक छे. ३. जयसिरि । ४. मूळ संसारसायरासामलसइलि । छे, परंतु बे मात्रा वधी जाय छे; एटले सा छोडी दीधो छे. अवग्रह मूळ हाथप्रतमां नथी; परंतु अर्थस्पष्टता खातर मारी ऊमेरणी छे. ५. थेणासण । ६. भामरसि ++ पुव्वकलसि ।

सहस्राष्टादशसूरिवरप्रवरः हलधरहरिवरकुलसहस्रबलः
सकलामलकेवलज्ञानवरः सरसारविंदसुकुमारकरः
दूरतरोत्सारितकामशरः शाश्वतश्रीजगच्छ्रीवधूकवरः
संसारसागरामरशैलः परिहृतसराज्याशेषबलः
उज्जयन्तस्य वरधरायां तीर्थंकरः उद्धृतसकलभव्योभयकुलः
नाशितसंभवजरामरणदरः [नाशित]चिरभवशतखरबहुदुरितमलः
गौरवकमलामलचन्द्रः विनिवारितशल्यत्रयसमरः
त्रिदशेन्द्रनतक्रमतामरसः जगन्मंगलद्रव्यपूर्णकलशः
॥ मागधिका नाम भाषा ॥
॥घत्ता॥ बहुना कालेन सह गणिभिः भ्रमित्वा आयातः
पुनरपि प्रतीपं रैवतोद्यानं परागतः ॥

( २ )

॥ हेला ॥ जं उज्जित-महीहरे परम-गुण-सणाहे
थियउ[1] हरि-भूसणु ति-हुयणेक्क-णाहे ॥
तं हलिसियंगि सिलि-वच्छाए इंदीवल[2]-दल-स-लिल-ऽच्छाए
पलिभूसिय-सिलि-हलि-वंसाए अमरासुर-दिण्ण-पसंसाए २०
पूयण-मलट्ट-कय-बहणाए पायस-णिप्पेहुण-कल-णाए[3]
माया-रह-बल-णिद्दलिणाए सु-धुलंबल-कंबय-वरणाए
चल-केसि-गल-यल-कय-पयाए जमल-ऽज्जुण[4]-भू-लुह-विलयाए
गोवद्धण-ऽचल[5]-उद्धलणाए गो-उलि लीला-संचलणाए
विस हल-गुलु-सेज्जा-लुहणाए पल-सूलत्तण[6]-लिह-लुहणाए[7] २५
ओऊलिय-जल-यल-पबलाए अट्ठुत्तर-सय-णाम-हलाए
हेला-सु-चडाविय-चावाए दस-दिसि-णीसलिय-पयावाए

---

१. थिउ । २. इंदिवल । ३. तद्दन काल्पनिक अर्थ छायामां छे; ठीक लागे तो स्वीकारवो. ४. ज्जण । ५. वल । ६. सूलत्तणु । ७. प्रथम पाद तेम ज आ पादने छेडे लहणाए ।

( २ )

॥ हेला ॥ यावदुज्जयंतमहीधरे परमगुणसनाथः
स्थितः हरि[वंश]भूषणः त्रिभुवनैकनाथः ॥
तावद् हृष्टाङ्गः श्रीवत्सः इंदीवरदलसलीलाक्षः
परिभूषितश्रीहरिवंशः अमरासुरदत्तप्रशंसः
पूतनागर्वकृतबर्हणः प्रावृण्मयूरकलनादः
मायारथबलनिर्दलनः सुधवलांबरकम्रवरणः
चलकेशिगलतलकृतपदः यमलार्जुनभूरुहविलयः
गोवर्धनाचलोद्धरणः गोकुले लीलासंचलनः
विषधरगुरुशय्यारोहणः परशौर्यलेखामार्जनः
आकुलितप्रबलजरा[संध]बलः अष्टोत्तरशतनामधरः
हेलासुसंधितचापः दशदिशानिःसृतप्रतापः

कालिंदिय-महद्दह-मंथाए कालिय-सिय-चिंध-पवण्णाए
तोडिय-कोमल-तामलसाए[1] लंगदि गो-दुद्ध-किय-कलसाए
संघालिय-णिलि-चाणूलाए उक्खय-माउल तलु-मूलाए[2] ३०
॥ मागह-पुव्वद्धा-कलाए ॥
॥ घत्ता ॥ णिय-सीहासणु मिल्लिप्पिणु सिरु णामंतउ
जिण-सवडं मुहु[3]गउ सत्त-पयाइं तुरंतउ ॥

( ३ )

॥ हेला ॥ पुणु आणंद-भेरी-सद्देण जय-पहाणो[4]
चलिउ महण्णवो व मणि-रयण-सोहमाणो ॥
एत्थंतरि[5] निग्गइ संकरिसणि वयरि-णरिंद-णियर-दु-द्दरिसणि ३५
लोहिय-दुहिया-रोहिणि-तणु-रुहि सुर-वइ-कुलिस-सरिस-सीराउहि
ईसरंगि ससि-तारा-णि-मल्लि[6] सुर-सरि-णीर-खीर-हारुज्जलि

---

१. मामलसाए । सरखावो आ ज उद्धरण कडवक. १. पं. १२, आ प्रकारनो ज पाठनो फेरफार. २. चालूणाए + + उक्खलमाहुलतलमूलाए । ३. मुह । ४. पहाणे । ५. एक्कंतरि । ६. णिम्मल ।

कालिंदीमहाह्रदमंथकः कालीयश्रितचिह्नप्रपन्नः
त्रोटितकोमलतामरसः क्रीडायां [त्रोटित]गोदुग्धकृतकलशः
संहारितनीलचाणूरः उत्खातमातुलतरुमूलः
॥ मागधपूर्वार्धकलापः ॥
॥घत्ता॥ निजसिंहासनं मुक्त्वा शिरो नामयन्
जिनसंमुखं गतः सप्तपदानि त्वरन् ॥

( ३ )

॥ हेला ॥ पुनरानन्दभेरिशब्देन जगत्प्रधानः
चलितो महार्णव इव मणिरत्नशोभमानः ॥
अत्रान्तरे निर्गच्छति संकर्षणः वैरिनरेन्द्रनिकरदुर्दर्शनः
लोहितदुहितृरोहिणीतनुरुहः सुरपतिकुलिशसदृशसीरायुधः
ईश्वरांगः शशितारानिर्मलः सुरसरिन्नीरक्षीरहारोज्ज्वलः

सुट्ठु-रुट्ठ[1]-मुट्ठिय-संघारणि कंसासुर-किंकर-विणिवारणि
रेवइ-वयण[2]-सरो·रुह-महु·यरि रण·उहि वेणु·दारि रिउ-भय-यरि
केसरि-वाहणि-विज्जा-हारणि खे·यर[3]-जंबु·मालि-णिव-साहणि ४०
वंदारय-णिह-णयण-मणण्णिए परियाणिय-विण्णाण-कलालिए
संगय-सिर-यर-ताण-करिसणि दस-दसार-रोयण·भुय-दरिसणि
॥ इयमण्णि व मागधिका भासा ॥
॥ मत्तमातंगछंदः ॥
॥घत्ता॥ सुमरिवि जिण·चलण रेवइ-रोहिणिहि विहूसिउ ॥
महु-हत्थिल्लउ णहि णं चंदु[4] जणेण पडीसउ

( ४ )

॥ हेला ॥ से [5]अणुलग्गया गया जाइ-कुल-विसुद्धा ४५
सच्चइ-चारुणि-सढरी-दीवायणा-ऽणिरुद्धा ॥
अण्णु वि संचल्लिए मरंकि जे दुरुज्झिय-अ-यस-कलंकि

---

१. रुट्ठु । २. वयणि । ३. खेयरि । ४ चदु । ५. यणुलग्गए ।

सुष्ठुरुष्टमुष्टिकसंहारणः कंसासुरकिंकरविनिवारणः
रेवतीवदनसरोरुहमधुकरः रणयुधि वेणुदारी रिपुभयकरः
केसरिवाहिनीविद्याधारकः खेचरजंबुमालिनृपसाधनः
वृन्दारकनिभ-नयन-मनोज्ञःपरिज्ञातविज्ञानकलावलोकः
करसंगतसीरकर्षणत्राणः दशदशार्हरोचनभूतदर्शनः
॥ इयमन्यैव मागधिका भाषा ॥
॥ मत्तमातंगछंदः ॥
॥घत्ता॥ स्मृत्वा जिनचरणौ रेवतीरोहिणीभ्यां विभूषितः
महा[मघा]हस्तियुतः नभसि यथा चंद्रः जनेन प्रतिश्रितः ॥

( ४ )

॥ हेला ॥ तस्य अनुलग्नका गता जातिकुलविशुद्धाः
सात्यकि-चारुणि—सढरि-द्वैपायन-अनिरुद्धाः ॥
अन्येऽपि संचलिताः स्मितेन ये दूरोज्झितायशःकलङ्काः

जे रुप्पिणि-मण-भुवणाणंदि जे रिउ-णियर-सरोरुह-चंदि[1]
जे जगि-णारि-चित्त-अवहरणे जे कंचण-माला-परिहरणि
जे सोलस-महलंभावण्णि जे सोहग्ग-रूव-संपुण्णे ५०
जे महि-कंप-जलहि-सुर-सेले जे सयलंगणोह-मण-चोलें
जे कुरु-खंधावार-विणासि जे दुज्जोहण-पहु-संतासि
जे स-सिबिर-तव-सुय-परिखलणि जे णर-भीम-मडप्फल-दलणि
जे सहदेव-पराभव-करणि जे बंदिण-जण-अब्भुद्धरणि
॥ मागधिकायां भाषायां पदाकुल-छंदः ॥
॥ घत्ता ॥ गंजोल्लिय-तणु परिसेसिय-पवर-मरट्ठउ ५५
सुहि-सय-परिमियउ स-विणेउ स-कलत्तु पयट्ठउ ॥

( ५ )

॥ हेला ॥ ताव हियोलियहिं चंदो व्व कंतिवंतो
भाणुकुमार णर-वरो णिग्गओ तुरंतो ॥
॥ दुवई ॥ कल-विण्णाण-जुत्तए सेवि-यण रत्तए

---

१. चदें ।

ये रुक्मिणीमनोभुवनानन्दाः ये रिपुनिकरसरोरुहचन्द्राः
ये जगन्नारीचित्तावहरणाः ये काञ्चनमालापरिधरणाः
ये षोडशमहालाभापन्नाः ये सौभाग्यरूपसंपूर्णाः
ये महीकंपजलधिसुरशैलाः ये सकलाङ्गनौघमनःक्षोभाः
ये कुरुस्कन्धावारविनाशाः ये दुर्योधनप्रभुसंस्पर्शाः
ये स्वशिबिरश्रुततपःपरिस्खलनाः ये नरभीमगर्वदलनाः
ये सहदेवपराभवकरणाः ये बंदिजनाभ्युद्धरणाः
॥धत्ता॥ रोमाञ्चिततनवः परिशेषितप्रवरगर्वाः
सुहृच्छतपरिवृताः सविनेयाः सकलत्राः प्रवृत्ताः ॥

( ५ )

॥ हेला ॥ तावद् हृदयार्द्रितैश्चन्द्रः इव कान्तिमान्
भानुकुमारो नरवरो निर्गतः त्वरन्
॥द्विपदी॥ कलाविज्ञानयुक्तो रक्तसेव्यजनः

[3]बारस-लक्खणंगए मेरुतुंगसिंगुत्तमंगए[4] ॥ ६०
चामीयर-चारु-वण्णए कुंडल-जुय-ललंत-कण्णए
कंग-हरण-णिल्ल-कोरए रेहमाण-गुरु-इणिय-दोरए
इंदीवर-दल-ऽच्छए हार-परिफुरिय-वच्छए
केऊरारिद्ध-बाहए रयण-खुसिय-अब्भत्थए
मागहाणयाअत्थए पलंब.....णिरत्थए ६५
पसरिय-णिय-णहा-सोहए अंघ-पउम-जिय-णलिण-सोहए
॥ मागधिका णाम छंदः ॥
॥घत्ता॥ कमला-णंदणु णिय-भा-भूसिय-भुवणोयरु
वर-दीहर-करु संचल्लिउ णाइं दिवायरु ॥

( ६ )

॥हेला॥ तहिं पत्थावि तार-संभार-पवर-दल-मालए
संचलिय महा-बलिय.....॥ ७०

---

३. पारस । ४ मेरुतुंग... ।

( ६ )

द्वादशलक्षणाङ्गकः मेरुतुङ्गशृङ्गोत्तमाङ्गः
चामीकरचारुवर्णकः कुण्डलयुगललत्कर्णकः
कङ्कतधरणललाटपट्टकः शोभमानगुरूपनयनदोरकः
इंदीवरदलाक्षः हारपरिस्फुरितवक्षाः
केयूर-ऋद्ध-बाहुः रत्नखचिताग्रहस्तः
मागध.....अर्थः प्रलंब.....निरस्तः (?)
प्रसृतनिजनखशोभः अंघ्रिपद्मजितनलिनशोभः
॥ मागधिका नाम छंदः ॥
॥घत्ता॥ कमलानंदनो निजभाभूषितभुवनोदरः
वरदीर्घकरः संचलितो यथा दिवाकरः ॥

( ६ )

तस्मिन् प्रस्तावे तारसंभारप्रवरदलमालया
संचलितः महाबलि.....

सो णारायणिट्ठसुदेसंबुय[1]-मालाए अट्ठमि-यंद-रुंद-पिहुलुण्णय-भालाए
विज्जा-हर-कुमार-विस-हर-खइ-णेयाए बहु-जरसिंधु-बंधु-
वरक्खुरप्पायाए
हेमल-दल-हिडिंब-घण-तम-दिण-णाहाए सिंधव-हूण-जोण-हुयवह-
जल-वाहाए[2]
विवरी-हीर-वीर-[3]समीर-अणुरत्ताए वर-वारण-वलग्ग-अमर-गिरिंदाए
जालंधर-डहार-सुभद्दा-सुरभद्दाए केरल-कामरूव-वण-गहण-हुयासाए७९
पारसिय-सुकंत-रुक्ख-फल-कीराए खस-जोहेय-दद्दुर-फणि-रायाए[4]
पच्छिक्कुडक्कणरसिरवणासणिघायं बल-कण्णाड-दविड-पणमंत-पायं[5]
खग्गुज्जुइ-उज्जल-सूर-प्पह-हरु[6]पचलिउ लीलए णावइ पाउस-जल-हरु
॥घत्ता॥ तो हरि-राम-काम-पमुहएहिं[7] जायवेहिं
पासुपवण्णएहिं कंटइय-अवयवेहिं ॥ ८०

---

१. °संबुकमालाए । २. °जाणहुयवहुजरवाहणाए । ३. वीक । ४ आखो य पंक्ति भ्रष्ट छे; मेळ लाववा ज संस्कारेली पंक्तिमां प्रयत्न छे. मूळ हाथप्रतमां, पाराप्तयसुकंतरुक्खफलभरकीराणणाए खसजोहेयददुरफणिरायाए । ५. आ पंक्ति पण आखी य भ्रष्ट छेः पच्छिक्कुडक्कणरसिरवणिज्जाघणिघायं बलकण्णाडदविडए णमंतपायं । ६. खग्गुजुज्जलसूरप्पहहरु । ७. पमुहहेहिं ।

सः नारायणेष्टसुदेशांबुज[द]मालः अष्टमीचंद्रविशालपृथुलोन्नतभालः
विद्याधरकुमारविषधरक्षयनेता बहुजरासंधबंधुवरक्षुरप्रः
हेमलदलहिडिम्बघनतमोदिननाथः सैन्धवहुणयवनहुतवहजलवाहः
विपरीतधीरवीरसमीरानुरक्तः वरवारणकामरगिरीन्द्रविलग्नः
जालंधर-डहार-सुभद्र-सुरभद्र-केरल-कामरूप-वनगहनहुताशः
पारसीकसुकान्तवृक्षफलकीरः खसयौधेयदर्दुरफणिराजः
पश्चिमोत्कटनरशिरोवनाशनिघातः बलिकर्णाटद्रविडप्रणतपादः
खड्गोद्द्योत्युज्ज्वलसूरप्रभाहरः प्रचलितः लीलया यथा प्रावृड्जलधर

॥घत्ता॥ ततो हरिरामकामप्रमुखैर्यादवैः
पार्श्वोपपन्नैः कण्टकितावयवैः ॥

( ७ )

॥ हेला ॥ दीसइ समवसरणु जग-जणिय-उज्जोयउ
णं लोहिउ [1]जम्म-अ-सेयाहिय-णाहिदउ ॥
भा-मंडल-समिद्धु णावइ रामायणु सीहासण-स-णाहु थिउ णाइ महा-वणु
णावइ छंद-सत्थु सुंदर-जइ-माला-हरु णं मंदर-णियंबु णंदण-वण-मणहरु
दीसइ णाइं पाउस ण परतिह जे घय..... ८५
णावइ महि-पवण्ण-सुर-उयय[2]-सम-प्पहु देविंदराय-बहुल-पसरिय-रयण-प्पहु
॥घत्ता॥ तहि जिणु लक्खियउ जायव-जणेण[3] गरुय-अणुराएं
आइ-महेसरु रिसहु व चिरु अमर णिहालए ॥

( ८ )

॥ हेला ॥ पुणु ते पउम-सहाव पियर-गुण-साणुराय
बल-गोविंद पुणु पुणु णमंति जिणह पाय ॥ ९०
जय जिण मणुय-दणुय-गण-धण-वइ[4]-फण-वइ-णमिय-पय-जुया
अ-थिर-मण-पवण-दिण-मणि-विलयण-वरुण-ऽसणि-जुया

---

१. लोहियउ । २. ओय । बीजा पादमां:—देवींदरीयबहुलपसरियरणप्पहु ।
३. जयवजणेणा ४. धवइ ।

( ७ )

॥ हेला ॥ दृश्यते समवसरणं जगज्जनितोद्योतं
यथा लोहितः [वृक्षः] जन्माश्वेताधिकनागेन्द्रः
भामंडलसमृद्धं यथा रामायणं सिंहासनसनाथं स्थितं यथा महावनं
यथा छंदःशास्त्रं सुंदरयतिमालाधरं यथा मंदरनितंबं नंदनवनमनोहरं
दृश्यते यथा प्रावृट्.....
यथा महोप्रपन्नसूरोदयसमप्रभं देवेन्द्रराजबहुलप्रसृतरत्नप्रभं
॥घत्ता॥ तत्र जिनः लक्षितो यादवजनेन गुरुकानुरागेण
आदिमहेश्वरं ऋषभमिव चिरममराः निभालयन्ति ॥

( ८ )

॥ हेला ॥ पुनस्तौ पद्मस्वभावौ पितृगुणसानुरागौ
बलगोविन्दौ पुनः पुनर्नमतः जिनस्य पादौ ॥
जय जिन मनुजदनुजगणधनपतिफणापतिनतपदयुग !
अस्थिरमनःपवनदिनमणिविलयनवरुणाशनियुत !

जय ति-यस-वइ-कु-वइ-जम-वइ-रिउ-गह-वइ-धणय-वंदिया
जय भुवण-वइ धीर चित्तुब्भव-खवण-वग्ग-संदिया
हय-गय-कणय-पाणिदादि-स-सर-भड-घड-उडु-गण-घण-घण-उलय-
संसिया९८
जय विस-विसम-विसय-गह-परिसह-सु-णिहय-णिवह-साहया
जय तइ-लोय-णमिय अइसय-वर-पाविय-परम-संपया
जय मलिणिलयाण[1] रणि फेडिय-दुग्गह-जडल-वलय-सामला
जय जय-जल-जउण-जल-कज्जल-इसि-सुमणस-समुज्जला
जय कमल-भव-तंब-तणु-भव आंखलिय सुण भवंतया १००
जय भव-समय समय-णविण चउ-तीसाइसय-वंतया
॥घत्ता॥ तुम्हहं सग्गहो जइ इह अवयरणु ण होंतउ
ता दु-क्किय-भारेण जगु हिट्ठा-मुहु जंतउ ॥

( ९ )

॥ हेला ॥ एव णमेवि णेमि नित्थं-करहो पहिट्ठा
जायव णिरवसेस णर-कोट्ठइं णिविट्ठा ॥ १०५

---

१. जय मूळमां नथी;

जय त्रिदशपतिकुपतियमपतिऋतुग्रहपतिधनदवंदित !
जय भुवनपते धीर स्यंदितचित्तोद्भवक्षपणवर्ग !
हयगजकनकप्राणेन्द्रियादिसशरभटघटोडुगणघनघनकुलकशंसित !
जय विषविषमविषयग्रहपरीषहसुनिहितनिवहसाधक !
जय त्रिलोकनत अतिशयवरप्राप्तपरमसंपत् !
जय मलिनेन्द्रियाणां रणे भग्नदुर्ग्रहजटिलवलयश्यामल !
जय जगज्जलयमुनाजलकज्जलेषत्सुमनःसमुज्ज्वल !
जय कमलाभवताम्रतनुभव अस्खलित शृणु भवान्
जय भवशमक समयनवीन चतुस्त्रिंशदतिशयवन् !
॥घत्ता॥ युष्माकं स्वर्गाद् यदीहावतरणं नाभविष्यत्
तर्हि दुष्कृतभारेण जगदधोमुखमगमिष्यत् ॥

( ९ )

॥ हेला ॥ एवं नत्वा नेमितीर्थंकरं प्रहृष्टाः
यादवाः निरवशेषाः नरकोष्ठके निविष्टाः

जल-कल्लोलुप्पील-रउद्दें जाह दिण्णु ओसारु समुद्दें
जाहं णयरु कारिउ सहस-ऽक्खें जाहं गेहि धणु वरिसिउ जक्खें
जाहं संख कोडिउ अट्ठारह जाहऽण्णाय लक्ख-हय-गय-रह
मंदिरि जाहं जाउ जिण-जम्मणु जाहं सामि सयमेव जणद्दणु
जेण समरि सिसुपालु विहाइउ जेहिं वीरु[1] भूरीसउ घायउ ११०
जेहिं णिहउ स-सेणु चक्केसरु मारिउ जेहिं चाणुर[2] कलि-केसरु
अ-प्पमाण विस्स-भर-गो-यर सेव करंति जाह विज्जा-हर
जाहं परिग्गहि सइं मयर-द्धउ विज्जउ जाहं पसिद्धउ सिद्धउ
पेसणु करइ जाहं चक्कारहु[3] जाहं मज्झि णवमउ सीराउहु
जेहिं कोडि-सिल चिरु उच्चाइय जाह कित्ति तइ-लोक्कि ण माइय११५
जाहं पमाणु णाहि परिवारहो अंतेउरहो वि सालंकारहो
॥घत्ता॥ जिण-माहप्पेण ते सयल वि णिरु अणुराइय
णर-वक्खारहो एक्क-देसे जे सम्माइय ॥

---

१. वीरू । २. चाणू । ३. चक्कहुउ ।

जलकल्लोलोत्पीडरौद्रेण येषां अपसारो दत्तः समुद्रेण
येषां नगरं कारितं सहस्राक्षेण येषां गेहे धनं वर्षितं यक्षेण
येषां संख्या कोट्यःअष्टादश येषामज्ञाता लक्षहयगजरथाः
मंदिरे येषां जातं जिनजन्म येषां स्वामी स्वयमेव जनार्दनः
यैः समरे शिशुपालो विहतो यैः वीरः भूरिश्रवाः हतः
यैर्निहतः ससैन्यश्चक्रेश्वरो मारितो यैश्चाणूरः कलिकेसरी
अप्रमाणाः विश्वंभरगोचराः सेवां कुर्वन्ति येषां विद्याधराः
येषां परिग्रहे स्वयं मकरध्वजः विद्याः येषां प्रसिद्धाः सिद्धाः
प्रेषणं करोति येषां चक्रायुधः येषां मध्ये नवमः सीरायुधः
यैः कोटिशिला चिरं उच्चैः कृता येषां कीर्तिस्त्रिलोके न माता
येषां प्रमाणं नास्ति परिवारस्य अंतःपुरस्यापि सालंकारस्य
॥घत्ता॥ जिनमाहात्म्येन ते सकलाः अपि खल्वनुरागिणः
नरवक्षस्कारस्यैकदेशे ये सम्माता ।

( १० )

॥ हेला ॥ पुणु पुच्छइ महीसरो सयल-लोय-पालो
महुर-महा-झुणीए अक्खइ ति-लोय-वालो ॥ १२०
"किं इह ति-हुयणे सारु भडारा" "धम्म-रअणु भो महि-हर-धारा"
"किं दुल्लहु भव-लक्खिहिं[1] जिण-वर" "पव्वज्जा-णिहाणु हे सिरि-हर"
"किं सुहु लोयालोइ[2] महागुरु" "बाह-रहिउ अहो मुसुमूरिय-मुरु"
"के जीवहो वइरिय तित्थं-कर" "कोह-मोह-मय-अच्छी हरि-हर"
"किं पालणिउ एत्थु सव्वण्हं" "धुउ सम्मत्तु सीलु अइ विण्हं" १२५
"किं सुंदरु करणिज्जु दया-रुह" "दाणु पुज्ज हो देवइ-तणु-रुह"
"के दू-सह तियसेसर-सामिय" "पवर-परीसह खग-वइ-गामिय"
"किं बलवंतउ समर-विमद्दण" "जीवहो चिरु-कय-कम्म जणद्दण"
"कवणु देउ केवल-वर-लोयण" "दोस-विवज्जिउ हो मह-सूयण"
"कवणु धम्मु जगि णाणुप्पायण" "जीव-दया-वरु हे णारायण" १३०

१. भवलक्खेहिं । २. लोयालोय ।

( १० )

॥ हेला ॥ पुनः पृच्छति महीश्वरः सकललोकपालः
मधुरमहाध्वनिनाऽऽख्याति त्रिलोकपालः ॥
"किमिह त्रिभुवने सारं, भट्टारक" "धर्मरत्नं भो महीधरधारक"
"किं दुर्लभं भवलक्षेषु जिनवर" "प्रव्रज्यानिधानं हे श्रीधर"
"किं सुखं लोकालोके महागुरो" "बाधारहितमहो मृदितसुर"
"के जीवस्य वैरिणस्तीर्थंकर" "क्रोधमोहमृगाक्ष्यः हरिधर"
"किं पालनीयमत्र सर्वज्ञ" "ध्रुवं सम्यक्त्वं शीलं अयि विष्णो"
"किं सुंदरं करणीयं दयारुह" दानं पूजा हे देवकीतनुरुह"
"के दुःसहाखिदशेश्वरस्वामिन्" "प्रवरपरीषहाः खगपतिगामिन्"
"किं बलवत् समरविमर्दन" "जीवस्य चिरकृतं कर्म जनार्दन"
"को देवः केवलवरलोचन" "दोषविवार्जितः हे मधुसूदन"
"को धर्मो जगति ज्ञानोत्पादन" "जीवदयापरः हे नारायण"

"किं संसारहो मूलु णिरासव" "गरुउ पमाउ मुणहिं मणि केसव"
"किं कट्ठ-यरु सिद्धि-अब्भावह" "अण्णाणत्तणु जउ-वइ माहव"
॥घत्ता॥ "जीव-णिकायहो[1] किं दढ-बंधणु भुवणुत्तम"
" विविह-परिग्गहु गेहिणि-सणेहु पुरिसोत्तम" ॥

( ११ )

परमेसरु साहइ जेम जेम हरिसिज्जइ सह-यणु तेम तेम १३९
सेसिय-सुय-वयणामिय-रसस्स तित्ति ण संभवदि हु केसवस्स
ण जउण-सिदस्स[2] दीवायणस्स ण कुसुम-सरस्स से णंदणस्स
ण सिणिस्स जरस्स ण सच्चइस्स संबस्स ण तित्ति ण दुंदुहिस्स
भाणुस्स सुभाणुहि सुट्ठवस्स भगदस्स जगस्स सढावियस्स
तित्ति ण सारस्स ण सारणस्स तित्ति ण णंदस्साणंदणस्स १४०
भोयस्स देव-सेणस्स तस्स.....
ण भवदि ससि-मुह-स-णेउरस्स किस-मज्झुद्देसंतेउरस्स

---

१. णिहायहो । २. करणसिदस्स ।

"किं संसारस्य मूलं निरास्रव" "गुरुकः प्रमादो मनुष्व मनसि केशव"
"किं कष्टकरं सिद्धचभ्यावह" "अज्ञानत्वं यदुपते माधव"
॥घत्ता॥ "जीवनिकायस्य किं दृढबंधनं भुवनोत्तम"
"विविधपरिग्रहः गेहिनीस्नेहः पुरुषोत्तम" ॥

( ११ )

परमेश्वरः कथयति यथा यथा हृष्यति सभाजनस्तथा तथा
शेषितश्रुतवचनामृतरसस्य तृप्तिर्न संभवति खलु केशवस्य
न यमुनाश्रितस्य द्वीपायनस्य न कुसुमशरस्य तस्य नंदनस्य
न शिनेः जरतो न सात्यकेः शंबस्य न तृप्तिर्न दुंदुभेः
भानोः सुभानोः सुष्टुकस्य भगदस्य जगतः श्रद्धापितस्य
तृप्तिर्न सारस्य न सारणस्य तृप्तिर्न नन्दस्याऽऽनंदनस्य
भोजस्य देवसेनस्य तस्य.... .... .... .....
न भवति सशशिमुद्रानू पुरस्य कृशमध्योद्देशान्तःपुरस्य

तित्ति ण पउरस्स महा-यणस्स सस्सुड्ढसिरस्स[1] ण रिसि-गणस्स
॥ ढक्का-भासा-कडवयं ॥
॥घत्ता॥ किय-कर-मउलिहिं जिहं णरहं तेव सुरा-ऽसुर-वरहिं[1] वि
धरणिंदाइहिं ण वि होइ तित्ति विस-हरिहि वि ॥ १४९

( १२ )

॥हेला॥ तहिं पत्थावि णाहि किय-परम-वंदणेण
रोहिणि-दस-दसार-लहु-भाइ-णंदणेण ॥
कर-कोंपलु करेवि सुर-सारउ चलण पुच्छिउ णेमि-भडारउ
" कहि परमेसर इह दारा-वइ धणय-विणिम्मिय सुर-पुरि णावइ
बहु-पुण्णोदएण गोविंदहो विद्धिए गच्छइ[2] मज्झि समुद्दहो १५०
तुह जम्मु वि भणेवि जणु वंदइ कित्तिउ कालु स-तोरण णंदइ
आयहो णामु ति-लोग-पगासु वि जिण सत्थेण ण अत्थि विणासु वि
अण्णु वि पर-बल-वण-तिण-डहणहो कित्तिउ कालु विजउ महु-महणहो

१. सुरवरहिं । २. गच्छिय ।

तृप्तिर्न पौरस्य महाजनस्य श्वासोर्ध्वशिरसः न ऋषिगणस्य
॥ ढक्काभाषाकडवकम् ॥
॥घत्ता॥ मौलिकृतकराणां यथा नराणां तथा सुरासुरवराणामपि
धरणीन्द्रादीणां नापि भवति तृप्तिः विषधराणामपि ॥

( १२ )

॥हेला॥ तस्मिन् प्रस्तावे नाथे कृतपरमवन्दनेन
रोहिणिदशदशार्हलघुभातृनन्दनेन ॥
करकुड्मलं कृत्वा सूरिश्रेष्ठः चरणयोः पृष्टो नेमिभट्टारकः
" कथय परमेश्वर एषा द्वारावती धनदविनिर्मिता सुरपुरी यथा
बहुपुण्योदयेन गोविन्दस्य वृद्ध्यै गच्छति मध्ये समुद्रस्य
तव जन्मापि भणित्वा जनो वंदते कियन्तं कालं सतोरणा नंदति
अस्याः नाम त्रिलोकप्रकाशमपि जिन शस्त्रेण नास्ति विनाशोऽपि
अन्यदपि परबलवनतृणदहनस्य कियन्तं कालं विजयो मधुमथनस्य

जीवउ स-सुहि स-पुत्तु स-भज्जु व किंत्तिउ कालु णिरग्गलु रज्जु व"
अक्खइ णेमि "अ-भाउ स-दारहो बारसमए संवच्छरे दारहो १५९
॥घत्ता॥ " अण्णु वि हल-हर तहिं कालि[1] महब्बलवंतहो
णिय-पुण्ण-खइं सइं अवसाणु अणंतहो " ॥

( १३ )

॥हेला॥ पुण[2]रवि रेवइ-वरो पभणइ " देव-देवो
कहु पासिउ अभाउ किं कारणेण के[3]... ॥
पुर-विणासि किं कण्हु करेसइ कहि पएसि कहो करेण मरेसइ १६०
कम्म-पहावि कत्थ हवेसइ कित्तइं जम्मंतरइं भमेसइ
कित्तिउ कालु हउं वि जीवेसमि हरिहि विओए किं नु करेसमि
सोय-कालि नियरिसणइ दाविवि को मइं संबोहेसइ आविवि
कालु करेवि कित्थु जाएसमि कइ इह कम्म[4]-बंधु मुच्चेसमि "
इय वयणहिं वरु कम्म-खयं-करु[5] साहइ बावीसमु तित्थं-करु १६५

---

१. काल । २. पुणु । ३. 'वा' जेवु वंचाय छे; पण संदिग्ध लागे छे. ४. कम्मु । ५ खयंकरि ।

जीवितं ससुहृत्कं सपुत्रं सभार्याकं च कियन्तं कालं निरर्गलं राज्यं च
आख्याति नेमिः " अभावः सद्वारायाः द्वादशमे संवत्सरे द्वारकायाः
॥घत्ता॥ अन्यदपि हलधर तस्मिन् काले महाबलस्य
निजपुण्यक्षयेण स्वयमवसानमनन्तस्य ॥

( १४ )

॥ हेला ॥ पुनरपि रेवतीवरः प्रभणति " देवदेव
कस्य पार्श्वतः अभावः किं कारणेन कीदृशः ॥
पुरविनाशे किं कृष्णः करिष्यति कस्मिन् प्रदेशे कस्य करेण मरिष्यति
कर्मप्रभावेन कुत्र भविष्यति कति जन्मान्तराणि भ्रमिष्यति
कियन्तं कालमहमपि जीविष्यामि हरेर्वियोगे किं नु करिष्यामि
शोककाले निदर्शनानि दत्त्वा को मां संबोधयिष्यति आगत्य
कालं कृत्वा कुत्र यास्यामि कदा इमं कर्मबंधं मोचयिष्यामि "
इति वचनेभ्यो वरः कर्मक्षयंकरः कथयति द्वाविंशस्तीर्थकरः

" जउण-महा-णइ-तड-संजायहो दीवायण-णामहो विक्खायहो
॥घत्ता॥ आयहो पासिउ जं सयल-जणहो दुह-संदणु
मज्जहो कारणिहिं दारा-वइ-विद्धंसणु ॥

( १४ )

॥हेला॥ अण्णु वि चंड-कंड-धणु-सर[1]-सहाएणं
वसुएव-पिय-जरा-एवि-जायएणं ॥ १७०
आयं जरेण कउसंबि-वणि परमाउ-पवण्णु पसु-रुहणि
णिय-भाइ कणिट्ठउ चक्क-हरु घाएवउ एहु सिरि-धरणि-हरु
पुणु होसइ काल-विणास-यरु तइयइं जम्मंतरि तित्थ-यरु
एयहो विच्छोइ किलामियउ तुहुं राम होसि पब्भावियउ
सग्गहो अवयरिवि तेय-पउरु पडिबोहेसइ सिद्धत्थ-सुरु १७५
पुणु तउ वीसुत्तरु[2] वरिस-सउ सण्णासु करेवि मरेवि तउ
पावेसइ सुट्ठु मणोरमए इंदत्तु सुरालइ पंचमइं

---

१. हर । २. वीसत्तर ।

" यमुनामहानदीतटसंजातस्य द्वीपायननाम्नः विख्यातस्य
॥घत्ता॥ अस्य पार्श्वतः यत् सकलजनस्य दुःखस्यंदनं
मद्यस्य कारणात् द्वारावतीविध्वंसनम् ॥

( १४ )

॥ हेला ॥ अन्यदपि चण्डकाण्डधनुःशरसहायेन
वसुदेवप्रियाजरादेवीजातकेन ॥
अनेन जरेण कौशांबीवने परमायुःप्रपन्नः पशुरोधनेन
निजभ्राता कनिष्ठश्चक्रधरो हन्तव्यः एषः श्रीधरणीधरः
पुनर्भविष्यति कालविनाशकरः तृतीये जन्मान्तरे तीर्थङ्करः
एतस्य वियोगेन क्लान्तस्त्वं राम भविष्यसि प्रभ्रामितः
स्वर्गादवतीर्य तेजःप्रचुरः प्रतिबोधयिष्यति सिद्धार्थसुरः
पुनस्ततो विंशत्युत्तरं वर्षशतं संन्यासं कृत्वा मृत्वा ततः
प्राप्स्यसि सुष्ठु मनोरमे इन्द्रत्वं सुरालये पञ्चमे

अट्ठमउ रामु जहिं गयउ चिरु तो दिण-यर-कोडि-किरण-रुइरु
॥घत्ता॥ दस-सायर-समइ तहिं गमिवि चविवि मणुयत्तणि
तव-णिहिं पावेवि पुणु पइसेसहि सिव-पट्टणि " ॥ १८०

( १५ )

॥हेला॥ तं णिसुणेवि वयणु मसि-वण्णु गउ णरिंदो
णं थियउ गिंभ-याले दव-दड्ढ-महि-हरिंदो
भासिएण जिण-णाहहो णाहहो मणु परितप्पइ कण्हहो कण्हहो
कंपइ देहु स-रामहो रामहो भउ वड्ढइ तव-कामहो कामहो
असुह-त्थिइ [1]अ सु-भाणुहिं भाणुहिं अ-दिहि वि स-विलासंबहो संबहो
अवलुअ अणिरुद्धहो अणिरुद्धहो [2]चिंत पदुक्कइ णिसढहो णिसढहो
गाढउ मणु जिण-धम्महो धम्महो धुक्कुद्धुअ[3] गोणंदहो णंदहो
दुहुलु[4] दीवायणि दीवायणि उम्माहउ भुय-पंजरि पंजरि
संकाविय मणि सारणि सारणि होइ कलुस-मइ सच्चहिं सच्चहिं

१. असुहत्थीअ । २. अवलू अणिरुद्धहो णिरुद्धहो । ३. धुक्कइ । ४. दुहुल ।

अष्टमो रामो यत्र गतश्चिरं तत्र दिनकरकोटिकिरणरुचिरः

॥घत्ता॥ दशसागरसमयं तत्र गमित्वा च्युत्वा मनुजत्वं
तपोनिधिः प्राप्य पुनः प्रवेक्ष्यसि शिवपत्तनं ॥

( १५ )

॥हेला॥ तद् निश्रुत्य वचनं मषीवर्णः गतो नरेन्द्रः
यथा स्थितो ग्रीष्मकाले दवदग्धमहीधरेन्द्रः ॥

भाषितेन जिननाथस्य नाथस्य मनः परितप्यति कृष्णस्य कृष्णस्य
कम्पते देहः सरामस्य रामस्य भयो वर्धते तपःकामस्य कामस्य
असुखस्थितिश्च सुभानोः भानोः अधृतिरपि सविलासताम्रस्य शंबस्य
कोपोऽनिरुद्धस्यानिरुद्धस्य चिंता प्रढौकते निषण्णं निषधम्
गाढं मनो जिनधर्मे धर्मस्य कम्पः गोनंदस्य नंदस्य
दुर्भाग्यं द्वीपायने द्वीपायने उन्माथो भुजपञ्जरे पञ्जरे
शङ्कितः मनसि स्मरणेन सारणिः भवति कलुशमतिः सत्येन सात्यकिः

मुहुं मइलिज्जइ गोरिहिं गोरिहिं मेइणि लिहइ स·लक्खण लक्खण १९०
सामलइज्जइ रुप्पिणि रुप्पिणि तिह जिय-णिय-पह-रोहिणि रोहिणी
॥ पडि·पाय-जमयं छंदः ॥
॥घत्ता॥ तहिं वर-वेलए जउ-अवत्थ जा दीसइ
सा आगंतुए पुर[1]-डाहि वि दुक्कर[2] होसइ ॥
( १६ )
॥हेला॥ वरि सुसइ समुद्दु वरि मंदरो णमेइ
ण वि सव्वण्हु-भासियं अण्णहा हवेइ॥ १९५
इत्थंतरि चिंतइ कुसुम-सरु एहु सो महु तव-चरणावसरु
पलए वि ण चुक्कइ जिण-वयणु कहो मणि-कंचणु कहो सुहि-स·यणु
जइ दारावइहि वि होइ खउ तहे अण्णहो भुवणि थिरत्तु कउ
जहिं णारायणु वि दिणिहिं मरइ तिहं अम्हारिसु कहिं पइसरइ
जहिं दीवायणु पुर-वरु डहइ जइ जर-कुमारु केसउ वहइ २००
जहिं बलु खंधेण समुव्वहइ एवडु दुक्खु को तं सहइ ”

---

१. पुर । २ दुक्कर ।

मुखं मलिनीभवति गौर्याः गौर्याः मेदिनीं लिखति सलक्षणा लक्षणा
श्यामलीभवति रूपिणी रुक्मिणी तथा जितनिजप्रभारोहिणी रोहिणी
॥ प्रतिपादयमकं छन्दः ॥
॥घत्ता॥ तत्र वरवेलायां यदु[कुल]अवस्था या दृश्यते
सा आगंतुके पुरदाहेऽपि दुष्करा भविष्यति ॥
( १६ )
॥ हेला ॥ वरं शुष्यति समुद्रः वरं मन्दरो नमति
नापि सर्वज्ञभाषितमन्यथा भवति ॥
अत्रान्तरे चिन्तयति कुसुमशरः “ एषः स मम तपश्चरणावसरः
प्रलयेऽपि न च्यवति जिनवचनं कस्य मणिकाञ्चनं कस्य सुहृत्स्वजनः
यदि द्वारावत्याः अपि क्षयो भवति तर्हि अन्यस्य भुवने स्थिरत्वं कुतः
यत्र नारायणोऽपि दैन्येन म्रियते तत्रास्मादृशः कुत्र प्रतिसरति
यत्र द्वीपायनः पुरवरं दहति यत्र जरत्कुमारः केशवं हन्ति
यत्र बलः स्कंधेन समुद्वहति एतावद् दुःखं कस्तत् सहते ”

पुणु पुणु वि वियप्पिवि एम मणि णिय-वए ठवेवि अणिरुद्ध खणि
हरि-सुउ आयंतुय-भय-लइउ सहुं वीर-सहासिं पव्वइउ
तिह उहयहिं माल-कुरु-वइहि सुय दिक्खंकिय जुयइ-सहास-जुय[1]
॥घत्ता॥ तिह णर-णंदणि कंचण-माल वि भव-दुसिय २०८
सहु मयरंकेण तव-चरणें झत्ति विहूसिय ॥

( १७ )

॥हेला॥ तिह भामा-सुओ वि सहु णियय-परियणेण
भाणुकुमारु वीरु दिक्खंकिउ तक्खणेण ॥
तिहं सु-भाणु तिह जउ तिह सुंदरु तिह सच्चइ जयंत स-पुरंदरु
तिहं किव-वम्मु सारु तिह सारणु तिह दुंदुहि विओरु धरि-धारणु २१०
देवसेणु तिहिं सिणि तह णंदणु तिह अपरज्जिउ णयणाणंदणु
चारु-जेट्ठु तिहं चिन्हउ उद्धउ कंचणु णंदु रुद्द सुहि दुब्भउ
तहिं अवर वि अणेय-जउ-राणा तिह कउरव कसाय-गय-माणा

---

१. जय ।

पुनः पुनरपि विकल्प्यैवं मनसि निजपदे स्थापयित्वाऽनिरुद्धं क्षणेन
हरिसुतः आगंतुकभयगृहीतः सह वीरसहस्रेण प्रव्रजितः
तत्रोभयोर्मालाकुरुपत्योः सुता दीक्षाङ्किता युवतीसहस्रयुता
॥घत्ता॥ तत्र नरनन्दिनि कांचनमालाऽपि भवदूषिता
सह मकराङ्केण तपश्चरणे झटिति विभूषिता ॥

( १७ )

॥हेला॥ तथा भामासुतोऽपि सह निजकपरिजनेन
भानुकुमारो वीरो दीक्षाङ्कितस्तत्क्षणेन ॥
तथा सुभानुस्तथा जयस्तथा सुन्दरस्तथा सात्यकिर्जयन्तः सपुरंदरः
तथा कृष्णवर्मा सारस्तथा सारणस्तथा दुन्दुभिः वृकोदरः धरधारणौ
देवसेनस्तथा शिनिस्तथा नंदनस्तथाऽपराजितो नयनानंदनः
चारुज्येष्ठस्तथा चिह्नः उद्धवः काञ्चनो नन्दो रुद्रः सुहृद्भयः
तथापरेऽप्यनेकयदुराजास्तथा कौरवाः गतकषायमानाः

तिह केसव-अणुमइए सु-लक्खण पव्वज्जिय पउमावइ लक्खण
सच्चहाम तिह रोहिणि रुप्पिणि तिह जंबुमइ गोरि तिह रुप्पिणि२१५
तिह गंधारि सु-सील सबाली तिह सिरि संबलि तणु-सोमाली
॥घत्ता॥ तिह अवराउ[1] वि भव-भीरु-मणउ हरि-कंतउ
सहु वहु-सुण्हहिं पज्जुण्णहो अणु णिक्खंतउ ॥

( १८ )

॥हेला॥ तव-चरणेण तेण इत्थि-यणस्स[2] पहु-वयस्स
गय-ऽसेस-सुरय-राग-रूय[3]-विब्भमस्स ॥ २२०
सोउं[4] णाणा-वत्थु-विसेसें अण्णं पि हु आयार-विसेसें
णमिऊणं सहसा केवलिणं जोइऊण सिरि सिरि-सुह-णलिणं
मुणिय जीवाजीव य विरत्तं[5] तहिं गिण्हंति के वि सम्मत्तं
के वि पुण्णें अप्पे पावज्जं के वि चयंति सया पिय-भज्जं
के वि वयाइं लिंति रायाणो केहिं विमुक्को रागो माणो २२५

---

१. अवराऊ । २. इत्थीणस्स । ३. रुयविब्भयस्स । ४. सोउ । ५. मुणिय जीवजीवियअविरत्तं ।

तथा केशवानुमत्या सुलक्षणा प्रव्रजिता पद्मावती लक्षणा
सत्यभामा तथा रोहिणी रूपिणी तथा जाम्बवती गौरी तथा रुक्मिणी
तथा गान्धारी सुशीला सबाला तथा श्रीः शाल्मली तनुसुकुमारा
॥घत्ता॥ तथाऽपरा अपि भवभीरुमनसो हरिकान्ताः
सह वधूस्नुषाभिः प्रद्युम्नस्यानु निष्क्रान्ताः ॥

( १८ )

॥ हेला ॥ तपश्चरणेन तेन स्त्रीजनस्य पृथुव्रतस्य
गताशेषसुरतरागरूपविभ्रमस्य ॥
श्रुत्वा नानावस्तुविशेषान् अन्यानपि खलु आचारविशेषान्
नत्वा सहसा केवलिनं दृष्ट्वा श्रीश्रीसुखनलिनं
ज्ञात्वा जीवाजीवांश्च विरक्ता तत्र गृह्णन्ति केऽपि सम्यक्त्वं
केऽपि पुण्येनात्मना प्रव्रज्यां केऽपि त्यजन्ति सदा प्रियभार्यां
केऽपि व्रतानि लान्ति राजानः कैर्विमुक्तो रागः मानः

केहिं पि हु साण-त्थावियाइं गहियइं सुइ-सिक्खा-वयाइं
केहिं वि हु य पुणु धरिय चरित्ता थिय णं गिरि जिह उण्णय-इत्ता[1]
अण्णे के वि स-गुरुणो वइणो णिव्वणंति गिरं जग-वइणो[2]
के वि करंति णिवित्ति महुणो सुणहुल्लस्स के वि तह मिहुणो
कायस्साहारस्स वि एक्को तह परिणयणो वि अण्णिक्को २३०
के वि स-भाईणं पुत्ताणं दिंति महंताणं संताणं
पच्छा भणिय 'णमो सिद्धाणं' उद्धरणं करंति कंजाणं
॥घत्ता॥ केहिं[3] वि अण्णाणेहिं णाणा-विह लइय अवग्गहं
केहि वि कुसलेहिं परिमाणिय णियय-परिग्गहं ॥

( १९ )

॥हेला॥ तो दीवायणो वि पिय-भिच्च-सुय-वरिट्ठो २३५
गुरु-चिंता-महण्णवे तक्खणे पइट्ठो ॥
" धिद्धिगत्तु जीविय मणुयत्तणु धिद्धिगत्थु परियणु बंधव-जणु

१. उण्णइ-इत्ता । २. पइणो + + + जगवयणो । ३. कवि ।

कैरपि खलु शाणस्थापितानि गृहीतानि शुचिशिक्षाव्रतानि
कैरपि खलु च पुनर्धृतं चारित्रं स्थिता खलु गिरय इव उन्नतचित्ताः
अन्ये केऽपि स्वगुरून् व्रतिनः निर्वर्णयन्ति गिरं जगत्पतेः
केऽपि कुर्वन्ति निवृत्तिं मधुनः श्वानिकस्य केऽपि तथा मैथुनस्य
कायस्याहारस्याप्येकस्तथा परिणयस्याप्यन्यः एकः
केऽपि सभ्रातॄन् पुत्रान् यच्छन्ति महद्भ्यः सद्भ्यः
पश्चाद् भणित्वा ' नमः सिद्धेभ्यः ' उद्धरणं कुर्वन्ति कञ्जानां
॥घत्ता॥ कैरपि अज्ञानैः नानाविधो गृहीतोऽवग्रहः
कैरपि कुशलैः परिमानितो निजकपरिग्रहः ॥

( १९ )

॥ हेला ॥ ततः द्वीपायनोऽपि प्रियभृत्यसुतवरिष्ठः
गुरुचिन्तामहार्णवे तत्क्षणे प्रविष्टः ॥
"धिग् धिगस्तु जीवितं मनुजत्वं धिग धिगस्तु परिजनं बांधवजनं

धिद्धिगत्थु मणि धण्णु स-कंचणु धिद्धिगत्तु महिला-यणु जोव्वणु
जहिं महु मणहो कोउ संबज्झइ जहिं महु पासिउ पट्टणु डज्झइ
जहिं महु पासिउ जउ-कुलु णासइ जहिं महु पासिउ सयलु वि तासइ
तहिं किं णिवसिएण णिमिसेक्कु वि विसएहिं वेयारिउ जइ लोक्कु वि
भट्ठि जाउ गिह-धम्मु असारउ णाणा-विह-दुक्खइ दुक्कारउ
सव्व-पयारें कलुण-रसाहिउ वरि[1] अरहंतु देउ आराहिउ
मुत्ति-रमणि-रस-भर-उम्माहिउ.....
भल्लउ एहु दस-वावाऽलंकिउ स-सुउ स-भज्जउ सो दिक्खंकिउ"२४५
॥घत्ता॥ पुणु णिव्वेइउ गउ पुव्व-देसु अ-सहंतउ
तव-माहप्पेण थिउ णिय-सरीरु सोसंतउ ॥

(२०)

॥हेला॥ ताम जरा-सुओ वि वसुएव[2]-मण-पियारो
डोल्लइ णिय-मणेण पुणु पुणु वि जर-कुमारो ॥

---

१. पयारे + + कलुणु + + वरि । २. वसुएवसुउएव ।

धिग् धिगस्तु मणिं धान्यं सकाञ्चनं धिग् धिगस्तु महिलाजनं यौवनं
यत्र मम मनसः कोपः संबध्यते यत्र मम पार्श्वतः पट्टनं दह्यते
यत्र मम पार्श्वतो यदुकुलं नश्यते यत्र मम पार्श्वतः सकलमपि त्रस्यति
तत्र किं निवसितेन निमेषमेकमपि विषयैर्विकारितो यदि लोकोऽपि
भ्रष्टिं यातु गृहधर्मः असारः नानाविधदुःखानामाकारकः
सर्वप्रकारेण करुणरसाधिको वरमर्हन् देवः आराधितः
मुक्तिरमणीरसभरोन्माथितः .... .... .... ....
भद्रकः एषः दशवातालंकृतः ससुतः सभार्याकः सः दीक्षाङ्कितः"
॥घत्ता॥ पुनः निर्विण्णः गतः पूर्वदेशमसहमानः
तपोमाहात्म्येन स्थितः निजशरीरं शुष्यन् ॥

( २० )

॥ हेला ॥ तावज्जरासुतोऽपि वसुदेवमनःप्रियकरः
दोलायते निजमनसा पुनः पुनरपि जरत्कुमारः ॥

एहु णारायणु महु लहुउ भाइ राहव-चंदहो सामित्ति णाइ २५०
चक्केसरु जायव-सामि-सालु हरि-वंसुद्धारणु धरणि-पालु
किय-बहु-साहसु विद्दविय-देहु हेला-उवलद्ध-महा-विरोहु
जहि मइ करि मरइ खगिंद-गमणु तहिं आयहो पासिउ कंडु कवणु
जहि हउं णिग्घिणु सइ लच्छि-संगि पहरेसमि मइ-सूयणहो अंगि
तहिं वार-वार किं बोल्लिएण किं मइ-मह-हियवइ-डोल्लिएण २५५
लहु गम्मइ एक्कंगणइं तित्थु मेलावउ कहि वि ण होइ जेत्थु
जम्महो वि ण सुव्वइ जहिं पवत्ति जहिं कहि वि ण सयणहो
तणिय तत्ति

॥घत्ता॥ एवए चिंतिवि भाइ सोयावरु हरि-पासहो
बाण-धणुद्धरु गउ दूरु दुग्ग-वण-वासहो ॥

( २१ )

॥हेला॥ थिय पिय णलिणि-लोयणे मत्त-मद-विहारे २६०
आउलियहूय-माणसे पवसिए कुमारे ॥

---

१. वाणु ।

एष नारायणो मम लघुको भ्राता राघवचन्द्रस्य सौमित्रिर्यथा
चक्रेश्वरो यादवस्वामिसारो हरिवंशोद्धारणो धरणीपालः
कृतबहुसाहसो विद्राावितदेहो हेलोपलब्धमहाविरोधः
यत्र मम करेण म्रियते खगेन्द्रगमनस्तत्रास्य पार्श्वतः काण्डः कः
यत्राहं निर्घृणः सदा लक्ष्मीसंगं प्रहरिष्यामि मधुसूदनस्याऽङ्गं
तत्र वारंवारं किं उक्तेन किं मधुमथहृदयदोलायितेन
लघु गम्यते एकाकिना तत्र मेलापकः कथमपि न भवति यत्र
जन्मनोऽपि न श्रूयते यत्र प्रवृत्तिः यत्र कथमपि न स्वजनस्य सत्का तप्तिः
॥ घत्ता ॥ एवं चिन्तयित्वा भ्रातृशोकातुरो हरिपार्श्वतः
बाणधनुर्धरो गतः दूरं दुर्गवनवासाय ॥

( २१ )

॥हेला॥ स्थिताः प्रियाः नलिनीलोचनाः मदमत्तविहाराः
आकुलीभूतमानसाः प्रोषिते कुमारे ॥

गुरु-भायरहो तणेण विआए अण्णु वि दिक्खंकिय सुहि-लोए
कण्हु सुण्णु मण्णइ अप्पाणउं 'वंस-हरु व को माणउ माणउं'
मण्णइ सो य असेसह कारणु सोय-विओय-मइंद-भयावणु
मण्णइं सयल वि सावय सावय सेस-स-यण जायव पासाऽऽवय २६९
मण्णइं सेस पियइं वण-वेल्लिउ कर-दल-थण-फल-णह-कुसुमिल्लिउ
तहिं अवसरि सिद्ध-त्थु अ-कायरु सारहि बलएवहु लहु-भायरु
तेण वुत्तु "एरिस संसारए ण वि सक्कमि अच्छणहं अ-सारए[1]
मोकल्लहि सहसा सीराउह जिं तवि लग्गमि सर-रुह-सम[2]-मुह
॥घत्ता॥ तुज्झ पसाएण तव-सिरि-वहु मइ करु पावउ[3] २७०
सिग्घु अ-विग्घेण सुह-णिहि सवडं-मुह आयउ ॥ "

( २२ )

॥हेला॥ त सिद्धत्थ-वयणु णिसुणेवि चवइ रामो
" जइ भो वच्छ वच्छ तुहुं मणि विरत्त-कामो ॥

---

१ असारइं । २ ब हाथप्रतमां नथी । ३ पावइ ।

गुरुणा भ्रातुः सत्केन वियोगेनाऽन्योऽपि दीक्षाङ्कितः सुहृल्लोकः
कृष्णः शून्यं मन्यते आत्मानं 'वंशधरं च कं मानवं मन्ये'
मन्यते स चाशेषाणां कारणं शोकवियोगमृगेन्द्रभयानकम्
मन्यते सकलानपि श्रावकान् श्वापदानशेषस्वजनान् यादवान् पाशापदः
मन्यतेऽशेषाः प्रियाः वनवल्लीः करदलस्तनफलनखकुसुमिताः
तस्मिन्नवसरे सिद्धार्थोऽकातरः सारथिः बलदेवस्य लघुभ्राता—
तेनोक्तं " इदृशे संसारे नापि शक्नोमि आसितुमसारे
मुञ्च सहसा सीरायुध येन तपसि लगामि सरोरुहसममुख
॥ घत्ता ॥ तव प्रसादेन तपःश्रीवधूः मम करं प्राप्नोतु
शीघ्रमविघ्नेन सुखनिधिः संमुखमायातु ॥ "

( २२ )

॥ हेला ॥ तत्सिद्धार्थवचनं निशम्य वदति रामः
" यदि भो वत्स वत्स त्वं मनसि विरक्तकामः ॥

तो मइ पडिवण्णइं वसण-कालि बलवंति वियंभिए मोह-जालि[1]
धुअ-वहिए लहु सग्गहो विपज्ज मम चित्तहो संबोहणु कुणेज्ज ''२७५
तं पडिवज्जिवि [2]बलहद्द-सिक्ख सिद्धत्थें तक्खणि लइय दिक्ख
तउ करइ विसेसें घोरु वीरु तणु ल्हसइ ल्हसइ ण उ मणु वि धीरु
गय जिणु पणविवि बल-वासुएव णि·प्पह गह-लुक्क रविंदु जेव
णं विज्ज·[3]झडप्पिय गिरि-वरिंद णं मय·वइ-पचेडिय करिंद
णं विणया·सुय-मोडिय फणिंद णं णिण्णासिय-वय·भर मुणिंद २८०
रयणी सुण्णइ णं हरिय वित्त णं खल-वयणें सज्जणहु[4] चित्त
जिहं सरसि·य सिय-किरणेण[5] भिण्ण तिह हरि-बलिणो इंदिय भिण्ण
॥घत्ता॥ उव्विण्ण चइत्ता [6]रज्ज-कज्ज आउलमय
सुअ·वक्ख·सरीर-परिवज्जिय·उच्छव थिय ॥

( २३ )

॥हेला॥ एत्तहे समवसरण-परिमंडिउ विहरेइ जिण-वरिंदो २८५

१. जाले । २. पडिज्जिवि । ३. विज्जु । ४. सेज्जण । ५. सियकरणे । ६. सइत्ता ।

तावत् मम प्रतिपन्ने व्यसनकाले बलवति विजृंभिते मोहजाले
ध्रुवपथेन लघु स्वर्गं विपद्येथाः मम चित्तस्य संबोधनं कुर्याः ''
तां प्रतिपद्य बलभद्रशिक्षां सिद्धार्थेन तत्क्षणे गृहीता दीक्षा
तपः करोति विशेषेण घोरं वीरः तनुः क्षयति क्षयति न खलु मनोऽपि धीरं
गतौ जिनं प्रणम्य बलवासुदेवौ निष्प्रभौ ग्रहलुप्तौ रवीन्दू यथा
यथा विद्युदाक्रान्तौ गिरिवरेन्द्रौ यथा मृगपतिमृदितौ करीन्द्रौ
यथा विनतासुतमृदितौ फणीन्द्रौ यथा व्रतभारनिर्नाशितौ मुनीन्द्रौ
रजन्या शून्यया यथा हृतं वृत्तं यथा खलवचनेन सज्जनस्य चित्तं
यथा सरसिजं सितकिरणेन भिन्नं तथा हरिबलयोः इन्द्रियाणि भिन्नानि
॥ घत्ता ॥ उद्विग्नौ त्यक्त्वा राज्यकार्यमाकुलितौ
परिवर्जितसुतपक्षशरीरोत्सवौ स्थितौ ॥

( २३ )

॥ हेला ॥ इतः समवसरणपरिमंडितो विहरति जिनवरेन्द्रः

जिह पचवग्गेण[1] उडु-गण-जुओ णिसियरिंदो ॥
जो जणु दारावइ पव्वइउ तें सहुं अमरासुर-णर-महियउ
चउ-विह-संघ-सहिउ परमेसरु उत्तर-देस चलिउ जि गणेसरु
चरम-सरीरु महा-गुण-जुत्तउ वर-अइसय-विहूइ-रेहंतउ
वसु-विह-पाडिहेर-विलसंतउ भवि-यण-पुंडरीय बोहंतउ २९०
वसु-दह-दोस-असेसहं चत्तउ सिव-उरि-सिरि-माणिणि-रइ-रत्तउ
धम्मामय ति-लोउ सिंचन्तउ दंसण जण-मण-धत्थु धुणंतउ
काह मि दंसण-मग्गु कहंतउ काहि मि वय-पासाए थवंतउ
॥घत्ता॥ काह मि सामाइउ वज्जरइ काह मि पोसहु उच्चरइ
स-चित्त-चाउ काह मि जणहं फेडंतु मि भव-भमण-रइ २९५

( २४ )

॥हेला॥ काह मि दिण-मेहुण-णिवित्ति पयडंतो
काह मि सव्वायरेण बंभज्जणु महंतो ॥

---

१. पंचमग्गेण ।

यथा पञ्चवर्गेणोडुगणयुतो निशाकरेन्द्रः ॥
यो जनो द्वारावत्याः प्रव्रजितः तेन सहामरासुरनरमहितः
चतुर्विधसंघसहितः परमेश्वरः उत्तरदेशे चलितः इव गणेश्वरः
चरमशरीरः महागुणयुक्तः वरातिशयविभूतिशोभमानः
वसुविधप्रातिहार्यविलसन् भव्यजनपुण्डरीकान् बोधयन्
वसुदशाशेषदोषैस्त्यक्तः शिवपुरीश्रीमानिनीरतिरक्तः
धर्मामृतेन त्रिलोकं सिञ्चन् दर्शनेन जनमनोधाष्टर्यं धुन्वन्
केभ्योऽपि दर्शनमार्गं कथयन् कानपि व्रतप्रासादे स्थापयन्
॥ घत्ता ॥ केभ्योऽपि सामायिकं कथयति केभ्योऽपि पोषधमुच्चरति
सचित्तत्यागं केभ्योऽपि जनेभ्यः भञ्जन्नपि भवभ्रमणरतिं ॥

( २४ )

॥ हेला ॥ केभ्योऽपि दिनमैथुननिवृत्तिं प्रकटयन्
केभ्योऽपि सर्वादरेण ब्रह्मार्जनं कथयन् ॥

काहि मि आरम्भाइय-वज्जणु तहं अणुमइ-परिचाय-समज्जणु
तह परिगह-णिवित्ति साहइ जिणु तह उद्दिट्ठाहार-विवज्जणु
सावयाहं सावय-वय देंतउ सावयाहं गिह-धम्मु कहंतउ ३००
काह वि दंतु महव्वय सारइं चउ-गइ-गमण-भवण-विणिवारइं
उग्गिरंतु दह-लक्खण-भेयइ विसहो विसेसरु णेयाणेयइ
काह मि चक्कि तवइं उग्गीरइ वण-यराह जिण विसु पच्चीरइ
एम अ-सेसु लोउ बोहंतउ सुर-विस-हर-णर-मणु खोहंतउ
विहरइ जिण-वरिंदु भय-चत्तउ अ-वियल-बोह-दिट्ठि-संजुत्तउ ३०५
॥घत्ता॥ महु-महाणिसंतु जो पव्वइउ णिण्णासियभव-भवण-रइ
रायमई-गणिणि-सयासि थिउ भाव-विसुद्धिए तउ तवइ

( २५ )

॥हेला॥ पज्जुणाइ-[1]मुणि-गणा दु-विह-गंथ-चत्ता
ते जिण-वर-सयासि णि-स्पह-मण दुद्धरु तउ तवंता ॥[2]

---

१. पज्जुणाई । २. आ पंक्तिमां मात्राभंग वधारे छे.

केभ्योऽपि आरम्भादिवर्जनं तथा अनुमतिपरित्यागसमर्जनं
तथा परिग्रहनिवृत्तिं कथयति जिनस्तथोद्दिष्टाहारविवर्जनं
श्रावकेभ्यः श्रावकव्रतान् यच्छन् श्रावकेभ्यो गृहधर्मं कथयन्
केभ्योऽपि यच्छन् महाव्रतानि साराणि चतुर्गतिगमनभ्रमणविनिवारकाणि
उद्गिरन् दशलक्षणभेदानि विदुभ्यो विशेश्वरो ज्ञेयाज्ञेयानि
केभ्योऽपि चक्री तपांसि उद्गिरति वनचराणां जिनो विषं मृद्गाति
एवमशेषं लोकं बोधयन् सुरविषधरनरमनांसि क्षोभयन्
विहरति जिनवरेन्द्रस्त्यक्तभयोऽविकलबोधदृष्टिसंयुक्तः
॥ घत्ता ॥ मधुमथ-अनिश्रान्तः यः प्रव्रजितः निर्नाशितभवभ्रमणरतिः
राजीमतिगणिनीसकाशे स्थितः भावविशुद्ध्या तपस्तपति ॥

( २५ )

॥ हेला ॥ प्रद्युम्नादिमुनिगणाः द्विविधग्रंथत्यक्ताः
ते जिनवरसकाशे निःस्पृहमनसो दुर्धरं तपस्तपन्तः ॥

एत्तहे दारावइ जो जण-वउ जिण-वर-भासिए मइ-णि-च्चलु थिउ ३१०
भविय-सत्तु आसण्ण-भवण्णउ भविय-उवसमु वज्जिय-दुण्णउ
दाण-[1]पूय-सुह-भावासत्तउ दुण्णय-णय-वसणाइ-विरत्तउ
जिण-वर-भासिउ णिलउ चयंतउ[2] भव-तण-धण वेराउ वहंतउ
भंगुरयरु ति-लोउ भावंतउ विसय-कसायइं दूरि चयंतउ
पिय-घर-घरिणि-मोहु विहुणंतउ णिय-मणि पंच-पयइं सुमरंतउ ३१५
जो अ-भव्वु सो चिंतावण्णउ आगामिय-दुह-कलुसु वहंतउ
अट्ट-रउद्दें मणु पोसंतउ 'हा किं किं होसइ' जंपंतउ[3]
पिय-घर-वसु-विओय कंपंतउ मोह-महा-दहे णिम्मज्जंतउ ॥
॥घत्ता॥ सइंभुवि[4] विहणंतउ एम जणु भावि-किलेसादण्णउं
थिर-भावाउल-रस-पूरियउ हरिस-विसाय पवण्णउ ॥ ३२०

---

१. दाणु । २. णलिउ चवंतउ । ३ जंपंतउ । ४ भुव ।

आ संधिमां हाथप्रत प्रमाणे मूलमां कडवानी संख्या २६ छे कारण के कडवुं २० पहिआए २१ तरीके नोंधी गणतरीनी भूल ठेठ छेडा सुधी खेंची छे. खरी कडवांनी संख्या २५ छे.

संधिने छेडे नीचे प्रमाणे पुष्पिका छे.

इय अरिट्ठणेमिचरिए धवलासियसयंभुउव्वरिए
तिहुवणसयंभुरइए बलपण्ह ति-उत्तरं सयं पव्वं ॥ १३० ॥

इतः द्वारावत्यां यो जानपदः जिनवरभाषिते निश्चलमतिः स्थितः
भव्यसत्त्वः आसन्नभवार्णवः भावितोपशमः वर्जितदुर्नयः
दानपूजाशुभभावासक्तः दुर्नयनयव्यसनादिविरक्तः
जिनवरभाषितो गृहं त्यजन् भवतनुधनेषु वैराग्यं वहन्
भङ्गुरतरं त्रिलोकं भावयन् विषयकषायान् दूरे त्यजन्
प्रियगृहगृहिणीमोहं विधुन्वन् निजमनसि पञ्चपदानि स्मरन्
योऽभव्यः सः चिन्तापन्नः आगामिदुःखकालुष्यं वहन्
आर्तरौद्राभ्यां मनः पोषयन् 'हा किं किं भविष्यति' जल्पन्
प्रियागृहवसुवियोगेन कम्पमानः मोहमहाह्रदे निमज्जन्
॥ घत्ता ॥ स्वयंभुवा विहन्यमानः एवं जनः भाविक्लेशापीडितः
स्थिरभावाकुलरसपूरितः हर्षविषादौ प्रपन्नः ॥

# ॥ पञ्चममुद्धरणम् ॥

## [ पुष्पयंतु ]

### ॥ वसुएव-घरच्चाउ ॥

( १ )

सहुं भायरहिं समिद्धु णायाणाय णिहालइ
पहु समुद्दविजयंकु महि-मंडलु परिपालइ ॥

एक्कहिं दिणि आरूढउ करि-वरि णावइ सस-हरु उइय[1]-मही-हरि
अ-सहस-णयणु णाइं कुलिसाउहु अ-कुसुम-सरु णं सइं कुसुमाउहु
णं अ-क्खारु स-लवणु रयणायरु[2] अ-कवड-निलउ णाइं दामोयरु ५
अ-मल-देहु णावइ उज्जोयणु जग-संखोह-कारि णावइ जिणु
चामर-छत्त-चिंध-सिरि-सोहिउ विविहाहरण-विसेस-पसाहिउ
सो वसुएउ कुमारु पुरंतरि हिंडइ हट्ट-मग्गि घरि चत्तरि
सो ण पुरिसु जें दिट्ठि ण ढोइय सा ण दिट्ठि जा तहु ण पराइय

---

१. उइउ । २. 'णं अखारु सलवणु रयणायरु'=हुं अक्खार करी स-लोणु वांचवा प्रेराउं छुं.

## [ पुष्पदंतः ]

### ॥ वसुदेवगृहत्यागः ॥

( १ )

सह भ्रातृभिः समृद्धः ज्ञाताज्ञातं निभालयति ।
प्रभुः समुद्रविजयांकः महीमंडलं परिपालयति ॥

एकस्मिन् दिने आरूढः करिवरे यथा शशधरः उदयमहीधरे
असहस्रनयनः यथा कुलिशायुधः अकुसुमशरः यथा स्वयं कुसुमायुधः
यथा अक्षारः सलवणः रत्नाकरः अकपटनिलयः यथा दामोदरः
अमलदेहः यथा उद्द्योतनः जगत्संक्षोभकारी यथा जिनः
चामरछत्रचिह्नश्रीशोभितः विविधाभरणविशेषप्रसाधितः
सः वसुदेवः कुमारः पुरान्तरे हिंडते आपणमार्गे गृहे चत्वरे
सः न पुरुषः येन दृष्टिः न ढौकिता सा न दृष्टिः या तस्मै न परागता

मणुअ[1]-देउ सो कासु ण भावइ सचरंतु तरुणी-यणु तावइ
॥घत्ता॥ क वि कुमारु णियंति रोमि रोमि पुलइज्जइ
अ-लहन्ती तहु चित्तु पुणरवि तिलु तिलु खिज्जइ ॥ १२

( २ )

पासेइज्जइ का वि णियंबिणि थिप्पइ णं अहिणव-कालंबिणि
का वि तरुणि हरिसंसुअ मेल्लइ काहिं वि वम्महु वम्मइं सल्लइ
सूहव-गुण-कुसुमहिं मणु वासिउ काहि वि मुहु णीसासि[2] सोसिउ
णेह-वसेण पडिउ चेलंचलु काहि मि पायडु थक्कु थण-त्थलु
काहि मि केस-भारु चुअ[3]-बंधणु काहि मि कडियले ल्हसिउ पयंधणु
खलिय-क्खरइं का वि दर जंपइ पिय-विओअ-य[4]-खेएं कंपइ
चिक्कवंति क वि चरणहिं गुप्पइ का वि पुरंधि णिय-दइयहो कुप्पइ[5]
मयणुम्मायउ गय-मज्जायउ काहि मि हियउ णिरंकुसु जायउ

---

१. मणुउ । २ काई+++णीसासं । ३ चुउ । ४ विओअजखेए । ५ आ पंक्तिनो क्रम में मारा पाठमां मूळनो कायम राख्यो छे; परंतु आ पंक्ति आखी य पं. १७ पछी होय; अने एम मूकवा मारुं मने य खरुं ।

मनुजदेवः स कस्मै न रोचते संचरन् तरुणीजनं तापयति
॥ घत्ता ॥ काऽपि कुमारं पश्यन्ती रोम्णि रोम्णि पुलकायते
अलभमाना तस्य चित्तं पुनः अपि ईषत् ईषत् खिद्यति ॥

( २ )

प्रस्विद्यति काऽपि नितंबिनी विगलति यथा अभिनवमेघलेखा
काऽपि तरुणी हर्षाश्रूणि मुञ्चति कस्याः अपि मन्मथः मर्मणि शल्यायते
सुभगगुणकुसुमैः मनः वासितं कस्याः अपि मुखं निःश्वासेन शोषितं
स्नेहवशेन पतितं चेलाञ्चलं कस्याः अपि प्रकटं स्थितं स्तनस्थलं
कस्याः अपि केशभारः च्युतबन्धनः कस्याः अपि कटीतटे स्रस्तं प्रबन्धनं
स्खलिताक्षरैः काऽपि ईषत् वदति प्रियवियोगजखेदेन कंपते
चमत्कुर्वती काऽपि चरणेषु गोपायति काऽपि पुरन्ध्री निजदयिताय कुप्यति
मदनोन्मादितं गतमर्यादं कस्याः अपि हृदयं निरंकुशं जातं

लोय-लज्ज-कुल-भय-रसु मुक्कउ वर-देवर-ससुरय-सुहि चुक्कउ
काहि मि वउ पेम्मेण किलिण्णउ बि-उणावेदु णियंबहो दिण्णउ
॥घत्ता॥ क वि ईसालुय कंत[1] दप्पणि तरुणु पलोइवि
विरह-हुआसें[2] दड्ढ मुअइ[3] अप्पाणउ सोइवि ॥ २४

( ३ )

तग्गय-मण क वि मुह-आलोयणि वीसारवि सिसु सुण्ण-णिहेलणि
कडि-यलि घर-मज्जारु लएप्पिणु धाइय जण-वए हासु[4] जणेप्पिणु
काहि वि कंडंतहिं ण उदूहलिं[5] णिवडिय मुसल-घाउ धरणी-यलि
काहि वि चट्टउ हत्थए जोइउ रंकहं करए पिंडु ण ढोइउ
चित्तु लिहंति का वि तं झायइ पत्त-च्छेइ तं चेय णिरूवइ २९
जा तहिं णच्चइ सा तहिं णच्चइ जा गायइ सा तं सरि सुच्चइ
जा बोल्लइ सा तहो गुण वण्णइ णिय-भत्तारु ण काइं वि मण्णइ
विरहंतिहि इच्छिज्जइ मेलणु भुंजंतिहिं पुणु तहो कह-सालणु

---

१ कविइसालुयकंते इ० । २ हुवासें । ३ मुअ । ४ हीसु । ५. उदहलि ।

लोकलज्जाकुलभयरसाः मुक्ताः वरदेवृश्वसुरकसुहृदः विस्मृताः
कस्याः अपि वपुः प्रेम्णा क्लिन्नं द्विगुणावेष्टनं नितंबाय दत्तं
॥ घत्ता ॥ काऽपि ईर्ष्यालुका कान्तं दर्पणे तरुणं प्रलोक्य
विरहहुताशेन दग्धा म्रियते आत्मानं शोचित्वा ॥

( ३ )

तद्गतमनाः काऽपि मुखालोकने विस्मृत्य शिशुं शून्यगृहे
कटीतटे गृहमार्जारं लात्वा धाविता जनव्रजे हास्यं जनयित्वा
कस्याः अपि कंडयन्त्याः उदूखले निपतितः मुशलघातः धरणीतले
कस्याः अपि दारुहस्तः हस्ते दष्टः रंकस्य करे पिण्डः न ढौकितः
चित्रं लिखन्ती काऽपि तं ध्यायति पत्रच्छेदे तं चैव निरूपयति
या तत्र नृत्यति सा तस्मै नृत्यति या गायति सा तं स्वरेण सूचयति
या ब्रवीति सा तस्य गुणान् वर्णयति निजभर्तारं न किम् अपि मन्यते
विरहिणीभिः इष्यते मीलनं भुञ्जतीभिः पुनः तस्य कथास्मरणकम्

णिसि सोवंतिहिं सिविणए दीसइ इय वसुएउ जाम पुरि विलसइ
णर-णाहहु कय-साहुक्कारें ता पय गय सयल वि विहुवारें[1] ३४
" देव देव भणु किं किर किज्जइ विणु घरिणिहिं घरु केम धरिज्जइ
मयणुम्मत्तउ पुर-णारी-यणु वसुदेवहु उप्परि ढोइय-मणु
णिसुणि भडारा दु-क्करु जीवइ 'जाउ जाउ' पय कहि मि पयावइ"
॥घत्ता॥ ता पउरहं राएण पउरु पसाउ करेप्पिणु
पत्थिउ राय-कुमारु णेहें हक्कारेप्पिणु ॥ ३९

(४)

" दिण-यरु दहइ धूलि तणु मइलइ दुट्ठ-दिट्ठि ललियंगइं जालइ
किं अप्पाणउ अप्पुणु दंडहिं बंधव तुहु किं बाहिरि हिंडहिं
करि वण-कील विउल णंदण-वणि झडय-कील करिहि घर-पंगणि
मणि-गण-बद्ध-णिट्ठ-धरणी-यलि रमणी-कील करहिं सत्तम-यलि
सलिल-कील[2] करि कुवलय-वाविहिं " तं णिसुणेवि वयणु कुल-
सामिहिं ४५

---

१ छंदोभंग; मूलमां साहूक्कारे+++सयलविविहूवारे । २ कीर ।

निशि स्वपन्तीभिः स्वप्ने दृश्यते इति वसुदेवः यावत् पुरे विलसति
नरनाथस्य कृतसाधुकारैः तावत् पदं गतं सकलैरपि व्यवहारिभिः
" देव देव भण किं किल क्रियते विना गृहिणीभिः गृहं कथं ध्रियते
मदोन्मत्तः पुरनारीजनः वसुदेवस्य उपरि ढौकितमनाः
निशृणु भट्टारक दुष्करं जीव्यते ' यातु यातु ' प्रजां कथमपि प्रवाचयति"
॥ घत्ता ॥ तावत्पौरेषु राज्ञा प्रचुरं प्रसादं कृत्वा
प्रार्थितः राजकुमारः स्नेहेन आहूय ॥

(४)

" दिनकरः दहति धूलिः तनुं मलिनयति दुष्टदृष्टिः ललितांगानि ज्वालयति
किं आत्मना आत्मानं दंडयसि बंधव त्वं किं बहिः हिंडसे
कुरु वनक्रीडां विपुलां नंदनवने कंदुकक्रीडां कुरु गृहप्रांगणे
मणिगणबद्धनिष्ठधरणीतले रमणीक्रीडां कुरु सप्तमतले
सलीलक्रीडां कुरु कुवलयवापीषु " तत् निशृत्य वचनं कुलस्वामिनः

जुव-राएं पडिवण्णु णिरुत्तउ गय कयवय-दिअसेहिं अ-जुत्तउ
पुणु णिउण-मइ सहाएं वुत्तउ "पहुणा णियलणु तुज्झु णिउत्तउ
पुर-यण-णारी-यणु तुह रत्तउ जोइवि विहलंघलु णिवडंतउ
णायर-लोएं तुहु बंधाविउ णर-वइ-वयणि[1] णिरोहणु पाइउ"
तासु वयणु तं तेण परिक्खिउ णिव-मंदिर-णिग्गमणि जीक्खिउ
॥ घत्ता ॥ ता पडिहार-णरेहिं एहउ तासु समीरिउ[2]
"घर-णिग्गमणु हिएण तुम्हहु राए वारिउ"

( ५ )

तओ सो सुहद्दा-सुओ वुड्ढ-माणो ण केणावि दिट्ठो [3]विणिग्गच्छमाणो
घराओ पुराओ गओ कालि काले अ-चक्खु-प्पएसे तमालालि-णीले
वसा-वीसढं देहि-देहावसाणं पविट्ठो अ-साणं स-साणं मसाणं
कुमारेण तं तेण दिट्ठं रउद्दं ललंतंतमाला-सिवा-मुक्क-सद्दं

---

१ वयणा । २ समीरउ । ३ विणिगच्छमाणो। घणे स्थले हाथप्रतमां आम संयुक्ताक्षरने बदले सादा अक्षरने लखेलो जोवामां आवे छे एटले केटली वार नोंध्या विना आवी बाबतो सुधारी लीधी छे.

युवराजेन प्रतिपन्नं निरुक्तं गतेषु कतिपयदिवसेषु अयुक्तः
पुनः निपुणमतिः सहायेन उक्तः "प्रभुणा निगडनं तव नियुक्तं
पुरजननारीजनः त्वयि रक्तः दृष्ट्वा विह्वलांधः निपतन्
नागरलोकेन त्वं बंधापितः नरपतिवचनेन निरोधनं प्रापितः"
तस्य वचनं तत् तेन परीक्षितं नृपमंदिरनिर्गमने निर्णीतं
॥ घत्ता ॥ तावत् प्रतिहारनरैः एतत् तस्मै समीरितं
"गृहनिर्गमनं हितेन युष्माकं राज्ञा वारितं" ॥

( ५ )

ततः सः सुभद्रासुतः वृद्धमानः न केनापि दृष्टो विनिर्गच्छन्
गृहतः पुरतः गतः तस्मिन्ने काले अचक्षुःप्रदेशे तमालालिनीले
वसाविस्निग्धं देहिदेहावसानं प्रविष्टः असंज्ञं सश्वानं श्मशानम्
कुमारेण तत् तेन दृष्टं रौद्रं ललदंत्रमालाशिवामुक्तशब्दं

महा-सूल-भिण्णंग-कंदंत-चोरं वियंभंत-मज्जार-घोसेण घोरं ५७
विहिंडंत-वीरं[1] स-हुंकार-फारं पलिप्पंत-सत्त-च्चि-धूमंधयारं
णहुड्डीण-भू-लीण-कीला-उलूवं समुट्ठंत-णग्गुग्ग-वेयाल-रूवं
णिकंकाल-वीणा-समालत्त-गीयं डिसा-डाइणी-दुग्ग-खज्जंत-पेयं
कुलुज्जुत्त[2]-सिद्धत-मग्गावयारं दिजि डोंबि चण्डालि पेयाहियारं
घणं णिग्घिणं भासियव्वइं अ-वायं सया जोइणी-चक्क-कीलाणुयारं
॥घत्ता॥ अ-कुल-कुलहं संजोए कुल-सरीरु उवलक्खियउं
इय जहिं सीसहं तत्तु कउलायरिए अक्खियउं ॥ १४

( ६ )

जोइउ तहिं वम्महु-सोहालें डज्झंतउ मडउल्लउ बालें
तहो उप्परि आहरणइं खित्तइं रयण-किरण-विप्फुरिय-विचित्तइं
लिहिवि मरण-वत्ताए विसुद्धउ हरि-गल-कंदल पत्तु णिबद्धउ
सु-ललिउ सूहउ णयणाणंदिरु गउ अप्पुणु सो कत्थइं सुंदरु

---

१ वीरे । २ कुलुज्झय ।

महाशूलभिन्नांगक्रंदच्चौरं विजृम्भन्मार्जारघोषेण घोरं
विहिंडमानवीरं सहुंकारस्फारं प्रदीप्यमानसप्तार्चिःधूमांधकारं
नभःउड्डीनभूलीनक्रीडोद्भकं समुत्तिष्ठन्नग्नोग्रवैतालरूपं
निष्कंकालवीणासमालपितगीतं दिशाडाकिनीदुर्गाखाद्यमानप्रेतं
कौलोपाध्यायोक्तसिद्धान्तमार्गावतारं द्विजे डुंबे चंडाले प्रेताधिकारं
घनं निर्घृणं भाषितव्येन अवाच्यं सदा योगिनीचक्रक्रीडानुकारं
॥ घत्ता ॥ अकौलकौलानां संयोगे कौलशरीरं उपलक्षितं
इदं यत्र शिष्येभ्यः तत्त्वं कौलाचार्येण आख्यातं ॥

( ६ )

दृष्टं तत्र मन्मथशोभिना दह्यमानं मृतशरीरं बालेन
तस्य उपरि आभरणानि क्षिप्तानि रत्नकिरणविस्फुरितविचित्राणि
लिखित्वा मरणवार्तां विशुद्धं हरिगलकंदले पत्रं निबद्धं
सुललितः सुभगः नयनानंदनः गतः स्वयं सः कुत्रापि सुंदरः

उग्गउ सूरु कुमारु ण दीसइ 'हा कहिं गउ कहि गउ ' पहु भासइ ६९
कणय-कोन्त-पट्टिस-कंपण-कर राए दस-दिसु पेसिय किंकर
पुरि घरि घरि अवलोइउ उववणि अवरहिं दिट्ठउ हय-वरु पिउ-वणि
पल्लाणियउ पट्ट-चमरंकिउ तं अवलोइवि भड-यणु संकिउ
लेहु लइप्पिणु णाहहो घल्लिउ तेण वि सो झडत्ति उव्वेल्लिउं
रायहु बाहा-उण्हइं णयणइं दिट्ठइं पयइं लिहियइं वयणइं
' णंदउ पयवई[1] वि-प्पिय-गारी णंदउ सुहि सिव-एवि भडारी
णंदउ परियणु णंदउ णर-वइ गउ वसुएव सामि सुर-वर-गइ '
॥घत्ता॥ ता पिउ-वणि जाइवि सयणेहिं जिय-विच्छोइउ
दड्ढु स-भूसणु पेउ हाहा-कार विजायउ ॥ ७८

( ७ )

ते णव बंधव सहुं परिवारे सोउ करंति दुक्ख-वित्थारे
सा सिव-एवि रुवइ परमेसरि " हा देवर पर-भड-गय-केसरि

---

१ पहवई ।

उद्गतः सूरः कुमारः न दृश्यते ' हा कुत्र गतः कुत्र गतः ' प्रभुः भाषते
कनककुन्तपट्टिशकृपाणकराः राज्ञा दशदिशासु प्रेषिताः किंकराः
पुरे गृहे गृहे अवलोकितः उपवने अपरैः दृष्टः हयवरः पितृवने
पर्याणितं पटचामरांकितं तं अवलोक्य भटजनः शंकितः
लेखः लात्वा नाथाय दत्तः तेन अपि सः झटिति उद्वेल्लितः
राज्ञः बाष्पोष्णाभ्यां नयनाभ्यां दृष्टानि एतानि लिखितानि वचनानि
" नंदतु प्रजापतिः विप्रियकारी नंदतु सुखिनी शिवादेवी भट्टारिका
नंदतु परिजनः नंदतु नरपतिः गतः वसुदेवः स्वामिन् सुरवरगतिं "
॥ घत्ता ॥ ततः पितृवने गत्वा स्वजनैः जीवरहितं
दग्धं सभूषणं प्रेतं हाहाकारः विजातः ॥

( ७ )

ते नव बान्धवाः सह परिवारेण शोकं कुर्वन्ति दुःखविस्तारेण
सा शिवादेवी रोदिति परमेश्वरी " हा देवः परभटगजकेसरिन्

हा किं जीविउ तिणु परिगणियउ कोमल-वउ हुव-वहि किं हुणियउ
हा पयाइ किं किउ पेसुण्णउ हा किं पुरि परिभमहु ण दिण्णउ
हा कुल-धवलु केम विद्धंसिउ हा जय-सिरि-विलासु किं णिरसिउ[1]
हा पइं विणु सोहइ ण घरंगणु चंद-विवज्जिउ णं गयणंगणु
हा पइं विणु दुक्खें णरु रुण्णउ हा पइं विणु माणिणि-मणु सुण्णउ
हा पइं विणु को हारु थणंतरि को कीलइ सर-हंसु व सर-वरि
पइं विणु को जण-दिट्ठिउ पीणइ कंदुय-कील देव को जाणइ
हा पइ विणु को एवहिं सूहउ पइ आपिक्खवि मयणु वि दूहउ
हा[2] पइं विणु णिय-गोत्त-स-संकहो को भुअ-बलु समुद्दविजयंकहो
पइं विणु सुण्णु हिमावलि माणिउ" ण्हाइवि सव्वहिं दिण्णउ पाणिउ[3]
॥घत्ता॥ "वरिस-सएण कुमारु मिलउ तुज्झु गुण-सोहिउ"
णेमित्तियहिं णरिंदु एम्व भणिवि संबोहिउ ॥ ९२

---

१. णिरसिउ । २ 'हा' हाथप्रतमां नथी; छंदोभंग न थाय माटे उमेर्युं.
३. हा पइं विणु ई० । छंदोभंग खातर 'हा' त्यजी दीधु छे ४. पाणिउ ।

हा किं जीवितं तृणं परिगणितं कोमलवपुः हुतवहे किं हुतं
हा प्रजया किं कृतं पैशुन्यं हा किं पुरे परिभ्रमणं न दत्तं
हा कुलधवलः किं विध्वस्तः हा जयश्रीविलासः किं निरस्तः
हा त्वया विना शोभते न गृहांगणं चंद्रविवर्जितं इव गगनांगनं
हा त्वया विना दुःखेन नरः रुदितः हा त्वया विना मानिनीमनः शून्यं
हा त्वया विना कः हारः स्तनांतरे कः क्रीडति सरोहंसः इव सरोवरे
हा त्वया विना कः जनदृष्टीः प्रीणयति कंदुकक्रीडां देव कः जानाति
हा त्वया विना कः एतावान् सुभगः त्वां आप्रेक्ष्य मदनः अपि दुर्भगः
हा त्वया विना निजगोत्रसशंकस्य किं भुजबलं समुद्रविजयांकस्य
हा त्वया विना शून्यं हिमालये भुक्तं" स्नात्वा सर्वैः दत्तं पानीयं
॥ घत्ता ॥ "वर्षशतेन कुमारः मीलतु त्वां गुणशोभितः"
नमित्तिकैः नरेन्द्रः एवं भणित्वा संबोधितः ॥

( ८ )

एत्तहिं सुंदरु महि विहरंतउ विजय-णयरु सहसा संपत्तउ
दिट्ठउ णंदण-वणु तहिं केहउ महुं भावइ रामायणु जेहउ
जहिं चरंति भीयर रयणी-यर चउ-दिसि उच्छलंति लक्खण-सर
सीय-विरहि संकमइ णहंतरु घोलिर-पुच्छु स-रामउ वाणरु
णील-कंठु णच्चइ रोमंचिउ अज्जुणु जहिं दोणें संसिंचिउ ९७
णउलें सो जि णिरारिउ सेविउ भायरु किं ण उ[1] कासु वि भाविउ[2]
इय सोहइ उववणु णं भारहु विल्लिहिं सछण्णउ रवि-भा-रहु
जहिं पाणिउ णीयत्तणिं सोहइ जडहो अणंगइ को किर पयडइ
तहिं असोअ-तलि सो आसीणउ सूहउ दीहर-पंथे रीणउ
णं वणु लय-दल-हत्थहिं विज्जइ पयलिय-मुह-घिंभहि णं रंजइ १०२
चल-जल-सीयरेहिं णं सिंचइ णिवडिय-कुसुमोहें णं अच्चइ
साहा-बाहहि णं आलिंगइ परिमलेण णं हियवए लग्गइ

१. ण्णउ । २. भायउ ।

( ८ )

अत्रान्तरे सुन्दरः मह्यां विहरन् विजयनगरं सहसा संप्राप्तः
दृष्टं नंदनवनं तत्र कीदृशं मह्यं रोचते रामायणं यादृशं
यत्र चरन्ति भीकराः रजनीचराः चतुर्दिशासु उच्छलन्ति लक्ष्मणस्वराः
सीता ( शैत्य ) विरहेण संक्राम्यति नभोऽन्तरे घूर्णितपुच्छः सरामः वानरः
नीलकंठः नृत्यति रोमाञ्चितः अर्जुनः यत्र द्रोणेन संसिक्तः
नकुलेन सः एव निश्चयेन सेवितः भ्राता किं न कस्यापि भावुकः
इति शोभते उपवनं यथा भारतं वल्लीभिः संछन्नं रविभारहम्
यत्र पानीयं नीचत्वेन निपतति जडं अनंगेन कः किल प्रकटयति
तत्र अशोकतले सः आसीनः सुभगः दीर्घपथेन रीणः
यथा वनं लतादलहस्तैः वीजयति प्रगलितमुखघर्मभिः यथा रञ्जयति
चलजलशीकरैः यथा सिंचति निपतितकुसुमौघेन यथा अर्चति
शाखाबाहुभिः यथा आलिङ्गति परिमलेन यथा हृदये लगति

पहिय-पुण्ण-सामत्थें णव णव सुक्क सुरुक्खहं णिग्गय पल्लव
पणविवि पालिय-पउर-पियालि रायह वज्जरियउ वण-वालि
॥घत्ता॥ " जोइसियहिं वुत्तु जर-तरु-वरु कय-छायउ
सो पुत्तिहिं वरइत्तु णं अणगु सइं आयउ[1] ॥ "

( ९ )

तण्णिसुणिवि आयउ सइं राणउ पुरि पइसारिउ राय-जुवाणउ
हरिय-वंस वण्णेण रवण्णी सामाएवि तासु तें दोण्णी
कामुउ कंतहिं अंगि विलग्गउ थिउ कइवय-दिअहइं पुणु णिग्गउ
सिरि-वसुएव-सामि सतुट्ठउ देवदारु-वणु णवर पइट्ठउ ११३
जहिं लवंग-चंदण-सुरहिय जलु दिसि गय कल-कोइल-कुल
-कलयलु
जहिं बहु-दुम-दल-वारिय-रवि-यर रुहवुहंति णाणा-विह-णह-यर
णव-मायंद-गोंजि गंजोल्लिय जहिं कइ-कइ-करेहिं उप्पिल्लिय
जहिं हरि-कर-रुह-दारिय-मय-गल-रुहिर-वारि-वाहाउल जल-थल

---

१. आइय ।

पथिकपुण्यसामर्थ्येन नवानि नवानि शुष्काणां सुवृक्षाणां निर्गतानि पल्लवानि प्रणम्य पालितप्रचुरप्रियालेन राज्ञे उक्तं वनपालेन

॥ घत्ता ॥ " यः ज्योतिषिभिः उक्तः जीर्णतरुवरकृतच्छायः
सः पुत्र्याः वरयिता यथा अनंगः स्वयं आगतः " ॥

( ९ )

तन्निश्रत्य आयातः स्वयं राजा पुरं प्रवेशितः राजयुवा
हरितवंशा वर्णेन रम्या श्यामादेवी तस्मै तेन दत्ता
कामुकः कान्तायाः अंगे विलग्नः स्थितः कतिपयदिवसान् पुनः निर्गतः
श्रीवसुदेवस्वामी सन्तुष्टः देवदारुवनं केवलं प्रविष्टः
यत्र लवङ्गचंदनसुरभितं जलं दिशासु गतः कलकोकिलकुलकलकलः
यत्र बहुद्रुमदलवारितरविकराः ' रुहरुहं ' कुर्वन्ति नानाविधाः नभश्चराः
नवमाकन्दमञ्जर्यः पुलकिताः यत्र कतिकपिकैरः उत्पीडिताः
यत्र हरिकररुहदारितमदकलरुधिरवारिवाहाकुलानि जलस्थलानि

दस-दिसि-वह णिहित्त-मुत्ताहल गिरि-कंदरि वसंति जहिं णाहल
ओसहि-दीव-तेय दाविय पह जहिं तमाल-तमविय लक्खि परह
जहिं संबरहिं संचिज्जइ तरु-हलु हरिणिहिं चिज्जइ कोमल-कंदलु
॥घत्ता॥ तहिं कमलायरु दिट्ठु णव-कमलहिं छण्णउ
धरणि-विलासिणिआए जिणहु अग्घु णं दिण्णउ ॥ १२१

( १० )

सोयल-स-गाह-गय-थाह-सलिलालि कंज-रस-लालस-चलालि-
कुल-कालि
मत्त-जल-हत्थि-कर-भीय-डसणालि-वारि-पेरंत-सोहंत-णव-णालि
मंद-मयरंद-पिंजरिय-वर-कूलि तीर-वण-महिस-दुक्कंत-सद्दूलि
पंक-पल्हत्थ-लोलंत-वर-कोलि कीर-कारंड-कल-राव-हलबोलि
कंक-चल-चंचु-परिचुंबिय-बिसंसि लच्छि-णेऊर-खुडुविय-कल-हंसि१२६
अक्क-रह-दंसण-पओसिय-रहंगि वाय-हय-वेविर-पघोलिय-तरंगि
ण्हंत-विहरंत-विहसंत-सुर-सत्थि एंत-जल-माणुस-विसेस-हय-हत्थि

---

दशदिशापथे निहितमुक्ताफलाः गिरिकंदरे वसन्ति यत्र नाहलाः
ओषधिदीपतेजसा दर्शितः पन्थाः यत्र तमालतमोऽभिभूता लक्ष्मीः परेषां
यत्र शबरैः सञ्चीयते तरुफलानि हरिणीभिः चोयते कोमलकंदलानि
॥ घत्ता ॥ तत्र कमलाकरः दृष्टः नवकमलैः छन्नः
धरणीविलासिन्या जिनाय अर्घ्यः यथा दत्तम् ॥

( १० )

शीतलसग्राहगतस्ताघसलिलालये कंजरसलालसचलालिकुलश्यामे
मत्तजलहस्तिकर-भीतदशनालि-वारिप्रेरयत्-शोभमान-नवनाले
मंदमकरन्दपिञ्जरितवरकूले तीरवनमहिषढौकमानशार्दूले
पर्यस्तपङ्कलोलमानवरकोले कीरकारंडकलरावकलकलायिते
कङ्कचलचंचुपरिचुंबितबिसांशे लक्ष्मीनू पुरक्षोदितकलहंसे
अर्करथदर्शनप्रतोषितरथांगे वातहतवेपमानघूर्णिततरङ्गे
स्नात्-विहरत्-विहसत्-सुरसार्थे आयात्-जलमनुष्यविशेषहयहस्तिनि

॥घत्ता॥ करि सर-वरि कीलंतु तेण णिहालिउ मत्तउ
णावइ मेरु-गिरिंदु खीर-समुद्दि णिहित्तउ ॥ ११

( ११ )

अंजण-णीलु णाइं अहिणव-घणु कर-तुसार-सीयर-तिम्मिय-वणु
दसण-पहर-णिद्दलिय-सिला-यलु पाय-णिवायए णविय-इला-यलु
कण्णाणिल-चालिय-धरणी-रुहु गज्जण-रव-पूरिय-दस-दिसि-मुहु
मय-जल-मिलिय-घुलिय-महु-लिह-उलु [1]उग्ग-सरीर-गंध-गय-गय-उलु
गुरु-कुंभ-[2]थल-पिहिय-पिहु-णह-यलु णिय-बल-तुलिय[3]-दिसा-
मय-गल-बलु १३९
तं अवलोइवि वीरु ण संकिउ 'बहि'-वहि'-सद्दें कुञ्जरु कोक्किउ
जा पाहाणु ण पावइ मुक्कउ ता करिणा सो गहिउ गुरुक्कउ
कर-कलियउ वियलिय गय-देहहो उवरि भमइ तडि-दंडु व मेहहो
वंसारुहणउं करइ सु-पुत्तु व खणि करिं णहिं संमोहइ धुत्तु व
खणि ससि जेम हत्थु आसंघइ खणि विउलइं कुंभ-[4]थलइं लंघइ१४०

---

१–चलु । २–यल–। ३–तुसिय । ४–यलइं ।

॥ घत्ता ॥ करी सरोवरे क्रीडन् तेन निभालितः मत्तः
यथा मेरुगिरीन्द्रः क्षीरसमुद्रे निक्षिप्तः ॥

( ११ )

अंजननीलं यथा अभिनवघनं करतुषारशीकरस्तोमितवनं
दशनप्रहरनिर्दलितशीलातलं पादनिपातेन नमितेलातलं
कर्णानिलचालितधरणीरुहं गर्जनरवपूरितदशदिशामुखं
मदजलमीलितघूर्णितमधुलिहकुलं उग्रशरीरगन्धगतगजकुलं
गुरुकुंभकलापिहितपृथुनभस्तलं निजबलतुलितदिशामदकलबलं
तं अवलोक्य वीरः न शंकितः ' बहि ' 'वहि' शब्देन कुञ्जरः आहूतः
यावत् पाषाणं न प्राप्नोति मुक्तः तावत् करिणा सः गृहीतः गुरुकः
करकलितः विगलितः गजदेहस्य उपरि भ्राम्यति तडिद्दंडः इव मेघस्य
वंशारोहणं करोति सुपुत्रः इव क्षणे करेण नखैः संमोहयति धूर्त इव
क्षणे शशी इव हस्तं अपेक्षते क्षणे विपुलानि कुंभस्थलानि लङ्घति

खणि चउ-चरणंतरिहि विणिग्गइ खणि हक्कारइ वारइ वग्गइ
दंत-णिसिक्किय मुहु ण वि याणइ कालें अप्पाणउ संदाणइ
जित्तउ वारणु जुवय-णरिंदें णं मयर-द्धउ परम-जिणिंदें
॥घत्ता॥ गय-वर-खंधारूढु दिट्ठउ खे-यर-पुरिसें
अंधक-विट्टिहि पुत्तु उच्चाइवि णिउ हरिसें ॥ १४५

( १२ )

णह-यल-लग्ग-रयण-मय-गोउरु णिउ वेयड्ढहो बारा-वइ-पुरु
कुल-बलवंतहो दइय-सहायहो दरिसिउ असणि-वेय-खग-रायहो
एम स सामि-सालु विण्णवियउ " विंज्झ-गइंदु एण विद्दवियउ
एहु जि चिरु जो णाणिहिं जाणिउ एहउ दुहिया-वरु मइं आणिउ "
तण्णिसुणेवि असणिवेअंकें अवलोइय सुहिं वयण-ससंकें १५०
पवण-वेय-देवी-तणु-संभव सामरि णामें सुअ वीणा-रव
दीण्णी तासु सुहद्दा-तणयहो पोढ्ढहो पउणिय-पणय-पसायहो

---

क्षणे चतुःचरणान्तरात् विनिर्गच्छति क्षणे आह्वयति वारयति वल्गति
निक्षिप्तदंतं मुखं न अपि जानाति कालेन आत्मानं नियन्त्रयति
जितः वारणः युवकनरेन्द्रेण यथा मकरध्वजः परमजिनेन्द्रेण
॥ घत्ता ॥ गजवरस्कन्धारूढः दृष्टः खेचरपुरुषेण
अंधकवृष्णेः पुत्रः उच्चस्थ्य नीतः हर्षेण ॥

( १२ )

नभस्तललग्नरत्नमयगोपुरं नीतः वैताढ्यस्य द्वारावतीपुरं
कुलबलवन्ते दयितसहायाय दर्शितः अशनिवेगखगराजाय
एवं सः स्वामिश्रेष्ठः विज्ञापितः " विंध्यगजेन्द्रः अनेन विद्रावितः
एषः एव चिरं यः ज्ञानिभिः ज्ञातः एषः दुहितृवरः मया आनीतः "
तन्निश्रुत्य अशनिवेगांकेन अवलोकितः सुहृदा वदनशशांके
पवनवेगादेवीतनुसम्भवा ' सामरी ' नाम्ना सुता वीणारवा
दत्ता तस्मै सुभद्रातनयाय प्रौढाय प्रगुणितप्रणयप्रसादाय

गय बहु-दियहहिं पेम्म-पसत्तउ सो सुहउ जामऽच्छइ सुत्तउ
तावगारय-खऽयरें जोइउ सुहु सुत्तु जि भुअ-पंजरि ढोइउ
" भूमी-यरहु पभट्ठ-विवेयहो मामें णिय-सुअ दिण्णी एयहो "
एम भणंतें णिउ णिय-इच्छए सामरि सुन्दरि धाइय पच्छए
॥घत्ता॥ असि वसु-णंदय हत्थ णिय-णाहहो कुटिलग्गी
पडिवक्खहो अब्भिट्ठ समर-सएहिं अ-भग्गी ॥ १६४

( १३ )

असि-जल-सलिल-झलक्कए सित्तें अंगारएण सु-कसणिय-गत्तें
सोहद्देउ झडत्ति विमुक्कउ पहरण-कक्कसि संजुए दुक्कउ
घरिणिए पइ णिवडंतु णियच्छिउ पण्ण-लहुय-विज्जाए पडिच्छिउ
तहिं पहरंतिहिं वइरि पलाणउ सुन्दरु गयणहु मयण-समाणउ
तरु-कुसुमोहहिं सोह-पसाहिरि णिवडिउ चंपाउर-वर-बाहिरि १६३
कीलमाण वणि मणि-कंकण-कर पुच्छिय तेण तेत्थु णायर-णर

---

गतेषु बहुदिवसेषु प्रेमप्रसक्तः सः सुभगः यावदास्ते सुप्तः
तावदङ्गारकखचरेण दृष्टः सुखं सुप्तः एव भुजपञ्जरे ढौकितः
" भूमिचराय प्रभ्रष्टविवेकाय मातुलेन निजसुता दत्ता एतस्मै"
एवं भणता नीतः निज-इच्छया सामरी सुन्दरी धाविता पश्चात्
॥ घत्ता ॥ असिः वसुनन्दकः हस्ते निजनाथस्य कुटिलाग्रः
प्रतिपक्षस्य अभिभवनशीलः समरशतेषु अभग्नः ॥

( १३ )

असिजलसलिलजाज्वल्येन सिक्तेन अंगारकेण सुकृष्णितगात्रेण
सौभद्रेयः झटिति विमुक्तः प्रहरणकर्कशे संयुगे ढौकितः
गृहिण्या पतिः निपतन् दृष्टः ' पर्णलघुक 'विद्यया प्रतीक्षितः
तस्यां प्रहरन्त्यां वैरी पलायितः सुन्दरः गगनात् मदनसमानः
तरुकुसुमौघानां शोभाप्रसाधिते निपतितः चंपापुरवरबाह्ये
क्रीडन्तः वने मणिकङ्कणकराः पृष्टाः तेन तत्र नागरनराः

ते भणंत " मुद्धत्त णडियउ किं गयणंगणाउ तुहु वडियउ
वासु-पुज्ज-जिण-जम्मण-रिद्धी ण मुणहिं चपा-उरि सु-पसिद्धी "
तण्णिसुणिवि तें णयरु पलोइय सह-मंडव बहु-विउस-विराइय
चारुयत्तु वणि-वर-वइ-तणु-रुहु जहिं जहिं जोइज्जइ तहिं तहिं सुहु
तहिं गंधव्व-यत्त सइ संठिय महुर-वाय णावइ कल-कंठिय
॥घत्ता॥ जहिं वइस-वइ-सुयाए रमणु कामु संपत्तउ
खे-चर-महि-यर-वंदु वीणा-वज्जें जित्तउ ॥ १७१

( १४ )

गंपि कुमार वि तहिं जि णिविट्ठउ कण्णए अ-णिमिस-णयणएं दिट्ठउ
वम्महु-बाणु व हियए पइट्ठउ विहसिवि पहिउ पहासइ तुट्ठउ
" हउं मि किं पि दावमि तंती-सरु जइ वि ण चल्लइ सर-ठाणए करु"
ता तहो ढोइयाउ सुइ-लीणउ पंच सत्त णव दह बहु वीणउ
ता वसुएउ भणइ " किं किज्जइ वल्लइ-दंडु ण एहउ जुज्जइ १७६

---

ते भणन्ति " मुग्धत्वेन बाधितः किं गगनांगनात् त्वं पतितः
वासुपूज्यजिनजन्मऋद्धां न जानासि चम्पापुरीं सुप्रसिद्धां "
तन्निश्रत्य तेन नगरं प्रलोकितं सभामण्डपं बहुविद्वद्विराजितं
चारुदत्तः वणिग्वरपति-तनुरुहः यत्र यत्र दृश्यते तत्र तत्र सुखं
तत्र गन्धर्वदत्ता सती संस्थिता मधुरवाग् यथा कलकण्ठी
॥ घत्ता ॥ यत्र वैश्यपतिसुतया रमणः कामः संप्राप्तः
खेचरमहीचरवृन्दः वीणावाद्येन जितः ॥

( १४ )

गत्वा कुमारः अपि तत्र एव निविष्टः कन्यया अनिमेषनयनाभ्यां दृष्टः
मन्मथबाणः इव हृदये प्रविष्टः विहस्य पथिकः प्रभाषते तुष्टः
" अहमपि किमपि दापयामि तन्त्रीस्वरं यद्यपि न चलति स्वरस्थाने करः "
तावत् तस्मै ढौकिताः श्रुतिलीना पञ्च सप्त नव दश बह्व्यः वीणाः
ततः वसुदेवः भणति " किं क्रियते वल्लकीदण्डः न एष युज्यते

एही तंति ण एम णिबज्झइ वासु इ एहउ एत्थु विरुज्झइ
सिरि-हलु एव एउ किं ठवियउं सत्थु ण केण वि मणि चिंतवियउ
लक्खण-रहियउं जड-मण-हारिउं मिल्लिवि वीणउं णाइं कुमारिउं"
अक्खइ सो तहिं तहिं अक्खाणउ आलावण-कए चारु चिराणउं

॥घत्ता॥ हत्थिणाय-पुरि राउ णिज्जियारि घण-संदणु
तहु पउमा-वइ देवि विहु णाम पिउ णंदणु ॥ १८२

( १५ )

अवरु पउम-रहु सुउ लहुआरउ जणय णविवि अरहंतु भडारउ
रिसि होएप्पिणु मिग-संपण्णहो सहुं जिट्ठें सुएण गउ रण्णहो
ओहि-णाणु तायहे उप्पण्णउ दिट्ठउ जगु बहु-भाव-विभिण्णउ
इत्तहिं गय-उरि पय-पोमाइउ करइ रज्जु पउम-रहु महाइउ
ता सो पच्चंतेहि णिरुद्धउ तहु बलि णाम मंति पविबुद्धउ
तेण गुरु वि ओहामिउ सक्कहो बुद्धिउ माणु मलिउ पर-चक्कहो

एषा तन्त्री न एवं निबध्यते व्यासः अपि एषः अत्र विरुध्यते
श्रीफलं एवं एतद् किं स्थापितं शास्त्रं न केनापि मनसि चिन्तितं
लक्षणरहिताः जडमनोहारिण्यः मेलिताः वीणाः यथा कुमार्यः"
आख्याति तत्र तस्य आख्यानकं आलापनकृते चारु चिरन्तनं

॥ घत्ता ॥ " हस्तिनागपुरे राजा निर्जितारिः घनस्यन्दनः
तस्य पद्मावती देवी विष्णुः नाम प्रियः नंदनः ॥

( १५ )

अपरः पद्मरथः सुतः लघुः—जनकः नत्वा अर्हन्तं भट्टारकं
ऋषिः भूत्वा मृगसम्पन्ने सह ज्येष्ठेन सुतेन गतः अरण्यं
अवधिज्ञानं तातायं उत्पन्नं दृष्टं जगत् बहुभावविभिन्नं—
अत्रान्तरे गजपुरे पदपद्मायितः करोति राज्यं पद्मरथः महात्मा
तावत् सः प्रत्यन्तैः निरुद्धः तस्य बलिः नाम मन्त्री प्रविबुद्धः
तेन गुरुः अपि अभिभूतः शक्रस्य बुद्धया मानं मृदितं परचक्रस्य

संतूसिवि रोमंचिय-कायं 'मग्गि मग्गि वरु' बोल्लिउं राए
मंतिइं[1] वुत्तउ "तुट्ठि करेज्जसु कहि मि कालि महु मग्गिउ दिज्जसु"
काले जंते मारण-कामें आयउ सूरि अकंपण णामें
सहुं रिसि-संघें जिण-वर-मग्गें पुर[2]-बाहिरि थिउ काओसग्गें
॥घत्ता॥ बलिणा मुणि-वरु दिट्ठु सु-अरिउ अवमाणिप्पिणु
" इह एवं हउं आसि घित्तु विवाए जिणेप्पिणु ॥ १९४

( १६ )

अवयारहु अवयारु रइज्जइ उवयारहु उवयारु जि किज्जइ
खलहो खलत्तणु सुहिहिं सुहित्तणु जो ण करइ सो णिय-मइ-णियमणु
तावस-रूवें णिवसिउ णिज्जणि हउं पुणु अज्जु खवमि किं दुज्जणि"
इम भणेप्पिणु गउ सो तित्तहिं अच्छइ णि-वइ णिहेलणि जित्तहिं
भणिउ णवंतें "पइं पडिवण्णउ आसि कालि जं पइं वरु दिण्णउ १९५
जं तं देहि अज्जु मइं मग्गिउ जइ जाणहि पत्थिव ओलग्गिउ"
ता राएण वुत्तु " ण वियप्पिमि जं तुहुं[3] इच्छहिं तं जि समप्पमि"

---

१. मंते । २. पुरि । ३. तुहं ।

संतोष्य रोमाञ्चितकायेन 'मार्गय मार्गय वरं' उक्तं राज्ञा
मन्त्रिणा उक्तं " तुष्टिं कुर्याः कस्मिन्नपि काले मम मार्गितं दद्याः "
काले गच्छति मारणकामे आयातः सूरिः अकम्पनः नाम्ना
सह ऋषिसंघेन जिनवरमार्गेण पुरबाह्ये स्थितः कायोत्सर्गेण
॥ घत्ता ॥ बलिना मुनिवरः दृष्टः सुचरितः अवमान्य
"अत्र एतेन अहं आसं क्षिप्तः विवादे जित्वा ॥

( १६ )

अपकाराय अपकारः रच्यते उपकाराय उपकार एव क्रियते
खलाय खलत्वं सुहृदे सुहृत्वं यः न करोति सः निजमतिनियमनः
तापसरूपेण निवसितः निर्जने अहं पुनरद्य क्षाम्यामि किं दुर्जनं "
एवं भणित्वा गतः सः तत्र आस्ते नृपतिः गृहे यत्र
भणितं नमता " त्वया प्रतिपन्नः आसीत् काले यः त्वया वरः दत्तः
यत् तं देहि अद्य मया मार्गितं यदि जानासि पार्थिव सेवाम् "
ततः राज्ञा उक्तं "न विकल्पे यत्त्वं इच्छसि तदेव समर्पयामि "

पडिभासइ बंभणु " अ-समत्तणु सत्त दिणाइं देहि राइत्तणु "
दिण्णउ पत्थिवेण तं लइयउ रोसें सव्वु अंगु पच्छइयउ
साहु-संघु पाविट्ठे रुद्धउ मिग-वहु महु चउ-दिसि पारद्धउ
सोत्तिएहि सोमंबु रसिज्जइ साम-वेय सुइ-महुरें[1] गिज्जइ
भक्खिवि जंगलु अडवि अट्टइ उप्परि रिसिहिं णिहित्तइं हड्डइं
॥घत्ता॥ भोज्ज-सराव-समूहु जं केण ण वि छित्तउं
तं सवणहं सीसग्गि जण-उच्चिट्ठउ घित्तउ ॥ २०८

( १७ )

सोत्तइं पूरियाइं सुइ-वारें बहलिय-रेणु धूम-पब्भारें
अणु-दिणु पीडिय भीसण-वसणहं तो वि धीर रूसंति ण पिसुणहं
तहिं अवसरि दुक्किय[2]-परिचत्ता जणण-तणय जहिं ते तव-तत्ता
णिसि णिवसंति मही-हर-कंदरि भीरु-भयंकर-सुअ-केसरि-सरि
तेहिं बिहि मि तिहिं णहि पवहंतउ सवण-रिक्खु दिट्ठउ कंपंतउ २१३

---

१ सुइसुमहुरें । २ दुक्खिय ।

प्रतिभाषते ब्राह्मणः " असपत्नं सप्त दिनानि देहि राजत्वं "
दत्तं पार्थिवेन तद् लातं रोषेण सर्वं अंगं प्रस्पृष्टं
साधुसंघः पापिष्ठेन रुद्धः मृगवधः मखः चतुर्दिशि प्रारब्धः
श्रोत्रियैः सोमांबु रस्यते सामवेदः श्रुतिमधुरेण गीयते
भक्षित्वा जंगलं अटवीं अटति उपरि ऋषीणां निक्षिप्तानि अस्थीनि
॥घत्ता॥ भोज्यशरावसमूहः यः केनापि न स्पृष्टः
स श्रमणानां शीर्षाग्रे जनोच्छिष्टः क्षिप्तः ॥

( १७ )

श्रोत्राणि पूरितानि श्रुतिकारेण बहलितरेणुना धूमसमूहेन
अनुदिनं पीडिताः भीषणव्यसनेभ्यः तदपि धीराः रुष्यन्ति न पिशुनेभ्यः
तस्मिन् अवसरे परित्यक्तदुष्कृतौ जनकतनयौ यत्र तौ तप्ततपसौ
निशि निवसतः महीधरकंदरे श्रुतभीरुभयंकरकेसरिस्वरे
ताभ्यां द्वाभ्यामपि तत्र नभसि प्रवहत् श्रवण-ऋक्षं दृष्टं कंपमानं

तं तेवड्डु चोज्जु जोएप्पिणु भणइ विट्ठु पणिपाउ करेप्पिणु
"किण्णक्खत्तु भडारा कंपइ" तण्णिसुणेवि जणणु पुणु जंपइ
" गय-उरि बलिणा मुणि उवसग्गें संताविय पावें भय-भग्गें
सज्जण-घट्टणु सव्वउ भारिउ तेण रिक्खु थरहरइ णिरारिउ "
पुच्छइ पुणु वि सीसु खम-वंतहं "णासइ केम्व उवद्दउ संतहं"
॥घत्ता॥ घणरह-रिसिणा उत्तु " तुम्ह विउव्वण-रिद्धिए
णासइ रिसि-उवसग्गु भव-संसारु व सिद्धिए ॥ २२०

( १८ )

खल-जण-वइ अच्चब्भुय-भुवें छिद्दहिं[1] जाइवि वामण-रूवें
णिलय-णिवासु णिरग्गलु मग्गहि पच्छइ पुणु गयगंगणि लग्गहि "
तण्णिसुणिप्पिणु लहु णिग्गउ मुणि रिय पढतु किय-ओंकार-ज्झुणि
रिसि य कमंडलु-सिय-छत्तिय-धरु दब्भ-दंड-मणिवलयंकिय-करु
मिट्ठ-वाणि उववीअ-विहूसणु देसिउ कासायंबर-णिवसणु २२५
सो णव-णर-णाहेण णियच्छिउ " भणु भणु किं तुह दिज्जउ " पुच्छिउ

---

१. छिद्दहिं।

तत् तादृशं आश्चर्यं दृष्ट्वा भणति विष्णुः प्रणिपातं कृत्वा
" किं नक्षत्रं भट्टारक कंपते " तद् निश्रुत्य जनकः पुनः वदति
" गजपुरे बलिना मुनिः उपसर्गेण संतापितः पापेन भग्नभयेन
सज्जनघट्टनं सर्वेभ्यः भारितं तेन ऋक्षं कम्पते निश्चितं "
पृच्छति पुनः अपि शिष्यः क्षमावते "नाश्यते कथं उपद्रवः सतां"
॥घत्ता॥ घनरथ–ऋषिणा उक्तः "युष्माकं विकुर्वणऋद्धया
नाश्यते ऋषि–उपसर्गः भवसंसारः इव सिद्धया ॥

( १८ )

खलजनपतिं अत्यद्भुतभूतेन छिन्धि गत्वा वामनरूपेण
निलयनिवासं निरर्गलं मार्गय पश्चात् पुनः गगनांगने लग "
तन्निश्रुत्य लघु निर्गतः मुनिः ऋचः पठन् कृत–ओंकारध्वनिः
ऋषिः च कमंडलुसितछत्रधरः दर्भदंडमणिवलयांकितकरः
मिष्टवाणीकः उपवीतविभूषणः दैशिकः काषायांबरनिवसनः
सः नवनरनाथेन दृष्टः " भण भण किं तुभ्यं दद्याम् " पृष्टः

किं हय गय रह किं जंपाणइं किं धय-छत्तइं दव्व-णिहाणइं"
कवड-विप्पु भासइ महि-सामिहिं "णिव कम तिण्णि देहि महु भूमिहिं"
तण्णिसुणिवि बलिणा सिरु धुणियउं " हा हे दिय-वर किं पइं भणियउं
वाय तुहारी दइवें भग्गी लइ धरत्ति मढ-थित्तिहिं जोग्गी "
॥घत्ता॥ ता विट्ठहिं वड्ढंतु लग्गउ अंगु णहंतरि
णिहियउ मंदरि पाउ एक्कु बीउ मण-उत्तरि ॥ २३२

( १९ )

तइयउ कमु उक्खित्तु जि अच्छइ कहि दिज्जउ तहो थत्ति ण पेच्छइ
सो विज्जा-हर-ति-यसहिं अंचिउ पिय-वयणेहिं कह व आउंचिउ
ताव तित्थु घोसावइ-वीणए देवहिं दिण्णए मल-परिहीणए
गरुयारउ णिय-भाइ सहोयरु तोसिउ पोमरहें जोईसरु
" मारहु आढत्तउ दिय-किंकरु " विण्हु-कुमारु खमए अ-भयं-करु
" अच्छउ जियउ वराउ म मारहि रोसु म हियउल्लए वित्थारहि

---

" किं हयाः गजाः रथाः किं जंपानानि किं ध्वजच्छत्राणि द्रव्यनिधानानि "
कपटविप्रः भाषते महीस्वामिने " नृप क्रमाणि त्रीणि देहि मह्यं भूमेः "
तन्निश्रुत्य बलिना शिरः धूतं " हा हे द्विजवर किं त्वया भणितं
वाचा तव दैवेन भग्ना लाहि धरित्रीं मठस्थितेः योग्या "
॥घत्ता॥ तावत् विष्णोः वर्धमानं लग्नं अंगं नभोऽन्तरे
निहितः मंदरे पादः एकः द्वितीयः मानसोत्तरे ॥

( १९ )

तृतीयः क्रमः उत्क्षिप्तः एव आस्ते कुत्र देयः तस्य स्थितिं न प्रेक्षते
सः विद्याधरत्रिदशैः अर्चितः प्रियवचनैः कथमपि आकुंचितः
तावत् तत्र घोषवतीवीणया देवैः दत्तया मलपरिहीनया
गुरुकारकः निजभ्राता सहोदरः तोषितः पद्मरथेन योगीश्वरः
" मारयत आक्रान्तं द्विजकिंकरं " विष्णुकुमारः क्षमते अभयंकरः
" आस्तां जीवतु वराकः मा मारय रोषं मा हृदये विस्तारय

रोसें चंडालत्तणु किज्जइ रोसें[1] णरय-विवरि पइसिज्जइ
एण जि कारणेण हय-दुम्मइ कय-दोसह मि खमंति महा-मइ ”
॥घत्ता॥ एम भणेप्पिणु जेट्ठु गउ गिरि-कुहर-णिवासहो
मुणि-वर संघु अ-सेसु मुक्क दुक्ख-किलेसहो ॥ २४२

( २० )

अज्ज वि वीण तेत्थु सा अच्छइ जइ महु आणिवि को वि पयच्छइ
तो गंधव्व-दत्त किं वायइ मइ अग्गइ पर-वयणु णिवायइ ”
वणिणा तं सुणेवि विहसंतें पेसिय णिय-पाइक्क तुरंतें
गय गयउरु वल्लइ पणवेप्पिणु मग्गिय तव्वंसियमणुणेप्पिणु
वियलिय-दुम्मय-पंक-विलेवहो आणिवि ढोइय करि वसुएवहो २४७
सा कुमार-कर-ताडिय वज्जइ सुइ-भेइहिं बावीसहिं छज्जइ
सत्तहिं वर-सरेहिं तिहिं गामहिं अट्ठारह-जाइहिं सुअ-धम्महिं
अंसहिं सउ-चालीसिक्कुत्तरु गोइउ पंच वि पयडइ सुंदरु

---

१. रोसे ।

रोषेण चंडालत्वं क्रियते रोषेण नरकविवरं प्रविश्यते
अनेन एव कारणेन दुर्मतिहतान् कृतदोषान् अपि क्षमन्ते महामतयः ”
॥घत्ता॥ एवं भणित्वा ज्येष्ठः गतः गिरिकुहरनिवासाय
मुनिवरसंघः अशेषः मुक्तः दुःखक्लेशेभ्यः ॥

( २० )

अद्यापि वीणा तत्र सा आस्ते यदि मह्यं आनीय कः अपि प्रयच्छति
ततः गंधर्वदत्ता किं वादयति मम अग्रे परवचनं निपातयति ”
वणिजा तच्छ्रुत्वा विहसता प्रेषितः निजपदातिः त्वरमाणेन
गतः गजपुरं वल्लकीं प्रणम्य मार्गिता तद्वंशिकं अनुनीय
विगलितदुर्मदपङ्कविलेपस्य आनीय ढौकिता करे वसुदेवस्य
सा कुमारकरताडिता वदति श्रुतिभेदैः द्वाविंशतिभिः शोभते
सप्तभिः वरस्वरैः त्रिभिः ग्रामैः अष्टादशजातिभिः श्रुतधर्मैः
अंशानां शतचत्वारिंशदेकोत्तरं गीतिकाः पंच अपि प्रकटयति सुंदराः

तीस वि गाम-सयइं रइआसउ चालीस वि भासउ छ विहासउ
एक्क-वीस मुच्छणउ समाणइ एक्कूण वि पण्णासइं ताणइं
॥घत्ता॥ तहो वायंतहो एव वीणा सुइ-सर-जोग्गउ
णं वम्महु-सरु तिक्खु मुद्धहिं हियवए लग्गउ ॥

( २१ )

णयणइं णाहहो उप्परि घुलियइं अट्ठंगइं वेवंतइं वलियइं
तंती-रव-तासिय-गिव्वाणहो घित्त सयं-वर-माल जुआणहो
संथुउ तरुणु सुरिंदें स-सुरें विहिउ विवाह-महुच्छवु ससुरें
पुणरवि सो विज्जा-हर-दिण्णहं सत्त-सयइं परिणिप्पिणु कण्णहं
मण-हर-लक्खण चच्चिय-गत्तउ कालें रिट्ठ-णयरु संपत्तउ २५१
राउ हिरण्णवम्मु तहिं सुम्मइ जासु रज्जि णउ कासु वि दुम्मइ
तासु कंत णामें पोमा-वइ पर-हुय-सद्द बाल-पाडल-गइ
रोहिणि पुत्ति जुत्ति णं मयणहो किं वण्णमि[1] भल्लारी सु-यणहो
ताहि सयं-वरि मिलिय णरेसर तेयवंत णावइ ससिणेसर

---

१. वण्णिव ।

त्रिंशत् अपि ग्रामशतानि रचिताश्रयः चत्वारिंशत् अपि भाषाः षड् विभाषाः
एकविंशतिः मूर्छनाः समाप्नोति एकोनपंचाशत् अपि तानानि
॥घत्ता॥ तस्य वादयतः एव वीणां श्रुतिस्वरयोग्यां
यथा मन्मथशरः तीक्ष्णः मुग्धायाः हृदये लग्नः ॥

( २१ )

नयनानि नाथस्य उपरि घूर्णितानि अष्टांगानि वेपमानानि वलितानि
तंत्रीरवतोषितगिर्वाणे क्षिप्ता स्वयंवरमाला यूनि
संस्तुतः तरुणः सुरेन्द्रेण ससुरेण विहितः विवाहमहोत्सवः श्वसुरेण
पुनः अपि सः विद्याधरदत्तानां सप्तशतानि परिणीय कन्यानां
मनोहरलक्षणः चार्चितगात्रः कालेन रिष्टनगरं संप्राप्तः
राजा हिरण्यवर्मा तत्र श्रूयते यस्य राज्ये न खलु कस्यापि दुर्मतिः
तस्य कांता नाम्ना पद्मावती परभृतशब्दा बालमरालगतिः
रोहिणी पुत्री युक्तिः यथा मदनस्य किं वर्णयामि भद्रकारिणी सुजनस्य
तस्याः स्वयंवरे मीलिताः नरेश्वराः तेजोवन्तः यथा शशीश्वराः

ते जरसंध-पमुह अवलोइय कण्णए माल ण कासु वि ढोइय
तहि मि तेण वण-गय-पडिमल्लें जिणिवि कण्ण स-कला-कोसल्ल
माल पडिच्छिय उट्ठिउ कलयलु सण्णद्धउ सयलु वि पत्थिव-बलु
जर-संधहो आणए[1] कय-विग्गह धाइय जादव कउरव मागह २६७
तेहिं हिरण्णवम्मु संभासिउ "पइं गउरविउ काइं किर देसिउ
मालइ-माल ण कइ-गलि बज्झइ जाव ण अज्जि वि राउ विरुज्झइ
॥घत्ता॥ ता पेसहि तहु धूअ मा संधहि धण-गुणिसरु
वहु-जरसंधि विरुद्धे धुउ[2] पावहि वइवस-पुरु " ॥ २७१

( २२ )

तं णिसुणेप्पिणु सो पडिजंपइ " भड-बोक्कहं वर धीरु ण कंपइ
जो महु पुत्तिहिं चित्तहो रुच्चइ सो सूहउ किं देसिउ वुच्चइ
पहु तुम्हइं वि धिट्ठ परियारिय अज्जु ण जाव[3] समरि अ वियारिय "
ता तहिं लग्गइ रोहिणि-लुद्धइं महि-वइ-सेण्णइं सहसा कुद्धइं
थिय जोवंत देव गयणंगणि अण्णहो अण्णु भिडिउ समरंगणि २७६
कंचण-विरइए रह-वरि चडियउ णर-वरु णिय-भाइहिं अब्भिडिउ

---

१. आणय । २. धुअ । ३. जाह ।

ते जरासंधप्रमुखाः अवलोकिताः कन्यया माला न कस्मै अपि ढौकिता
तत्र अपि तेन वनगजप्रतिमल्लेन जित्वा कन्यां स्वकलाकौशलेन
माला प्रतीष्टा उत्थितः कलकलः संनद्धं सकलं अपि पार्थिवबलं
जरासंधस्य आज्ञया कृतविग्रहाः धाविताः यादवाः कौरवाः मागधाः
तैः हिरण्यवर्मा संभाषितः "त्वया गौरवितः किं किल दैशिकः
मालतीमाला न कपिगले बध्यते यावत् न अद्यापि राजा विरुणद्धि
॥घत्ता॥ तावत् प्रेषय तव दुहितरं मा संधत्स्व धनगुणेश्वरं
महाजरासंधे विरुद्धे ध्रुवं प्राप्नुयाः वैवस्वत्पुरं " ॥

( २२ )

तद् निश्रुत्य सः प्रतिवदति "भटगर्जनाभ्यः वरः धीरः न कम्पते
यः मम पुत्र्याः चित्ताय रोचते सः सुभगः कथं दैशिकः उच्यते
प्रभुः युष्माभिः अपि धृष्टः परिचारितः अद्य न यावत् समरे च विदारितः "
तावत् तत्र लग्नानि रोहिणीलुब्धानि महीपतिसैन्यानि सहसा कुद्धानि
स्थिताः प्रेक्षमाणाः देवाः गगनांगने अन्यस्मै अन्यः अभ्येतः समरांगणे
कांचनविरचिते रथवरे आरूढः नरवरः निजभ्रातृभिः अभ्यायातः

विद्धत्तें सहस त्ति परिक्खिउ तेण समुद्दविजउ ओलक्खिउ
जे सर घल्लइ ते सो छिंदइ अप्पुणु तासु ण उर-यलु भिंदइ
बंधवु जगि ण होइ णिव्वच्छलु सु-इरु णिहालिवि जोवइ भुय-बलु
दिव्व-पक्खि-पत्तेहिं विहूसिउ णिय-णामंकु बाणु पुणु पेसिउ २८१
पडिउ पयंतरि सउरो-णाहें उच्चाइउ अरि-मय-उल-वाहें
अक्खराइं वाइयइं सु-सत्तें वियलिय-बाहल्लोल्लिय-णेत्तें
" जण-उअरोहें पइं घरि धरियउ जो पुणु विहि-वसेण णीसरियउ
॥घत्ता॥ संवच्छर-सय पुण्णि आउ एउ समरंगणु
हउं वसुएव-कुमारु देव देहि आलिंगणु" ॥ २८६

( २३ )

जइ वि सु-वंस-गुणेण विराइउ कोडीसरु णिय-मुट्ठिए माइउ
आवइ-काले जइ वि ण भज्जइ जइ वि सु-हड-संघट्टणि गज्जइ
भायर पेक्खिवि पिसुणु य वंकउ तो वि तेण बाणासणु मुक्कउ
णर-वइ रह-वराउ उत्तिण्णउ कुंअरु वि सम्मुहु लहु अवइण्णउ २९०

---

वृद्धत्वेन सहसा इति परीक्षितः तेन समुद्रविजयः उपलक्षितः
यान् शरान् क्षिपति तान् सः छिनत्ति स्वयं तस्य न उरस्तलं भिनत्ति
बांधवः जगति न भवति निर्वात्सल्यः सुचिरं निभाल्य पश्यति भुजबलं
दिव्यपक्षिपत्रैः विभूषितः निजनामांकः बाणः पुनः प्रेषितः
पतितः पदांतरे शौरिनाथेन उच्चायितः अरिमृगकुलव्याधेन
अक्षराणि वाचितानि सुसत्त्वेन विगलितबाष्पार्द्रार्द्रीयदनेत्रेण
" जनोपरोधेन त्वया गृहे धृतः यः पुनः विधिवशेन निःसृतः
॥घत्ता॥ संवत्सरशते पूर्णे आयात एतद् समरांगणं
अहं वसुदेवकुमारः देव देहि आलिंगनं " ॥

( २३ )

यद्यपि सुवंशगुणेन विराजितः, कोटीश्वरः निजमुष्टौ मातः
आपत्काले यद्यपि न भजति यद्यपि सुभटसंघट्टने गर्जति
भ्रातरं प्रेक्ष्य पिशुनं च वक्रं तदपि तेन बाणासनं मुक्तं
नरपतिः रथवरात् उत्तीर्णः कुमारः अपि सम्मुखं लघु उत्तीर्णः

एक्कमेक्क आलिंगिउ बाहहि पसरिय-करहिं णाइं करि-णाहहिं
भाय महंतु णविउ वसु-एवें जंपिउ पहुणा महुरालावें
" हउं पइं भायर संगरि णिज्जिउ बंधु भणंतु स-सूअहो लज्जिउ
अण्णहो चाव-सिक्ख कहिं एही पइं अब्भसिय धुरं-धर जेही
पइं हरि-वंसु बप्प उद्दीविउ तुहुं महुं धम्म-फलें मेलाविउ २९५
अज्जु मज्झु परिपुण्ण मणोरह " गय णिय-पुर-वरु दस वि दसारह
खे-यर-महि-यर-णारिहिं माणिउ थिउ वसु-एव राय[1]-सम्माणिउ
संखु णाम रिसि जो सो ससि-मुहु मह-सुक्कामरु रोहिणि-तणु-रुहु
॥घत्ता॥ भरह-खेत्त णिव-पुज्जु णवमु सीरि उप्पण्णउ
पुप्फयंत-तेआउ तेण तेउ पडिवण्णउ ॥ ३००

१. राउ ।

आ संधिनी पुष्पिका नीचे प्रमाणे छे:

इय महापुराणे ति-सट्टि-महा-पुरिस-गुणालंकारे महा-कइ-पुप्फदंत-विरइए महा-भव्व-भरहाणुमण्णिए महा-कव्वे खे-यर-भू-गोयर-कुमारीलंभो समुद्-विजय-वसु-एव-संगमो णाम तेआसीमो परिच्छेओ सम्मत्तो ॥ ८३ ॥

एकमेकं आलिंगितौ बाहुभ्यां प्रसारितकराभ्यां यथा करिनाथाभ्याम्
भ्राता महान् नतः वसुदेवेन उक्तः प्रभुणा मधुरालापेन
" अहं त्वया भ्रातः संगरे निर्जितः ' बंधुः ' भणन् स्वसूतात् लज्जितः
अन्यस्य चापशिक्षा क्व ईदृशी त्वया अभ्यस्ता धुरंधरा यादृशी
त्वया हरिवंशः तात उद्दीपितः त्वं मह्यं धर्मफलेन मेलापितः
अद्य मम परिपूर्णः मनोरथः " गताः निजपुरवरे दश अपि दशार्हाः
खेचरमहीचरनारीभिः मानितः स्थितः वसुदेवः राजसम्मानितः
शंखः नाम ऋषिः यः सः शशिमुखः महाशुक्रामरः रोहिणीतनुरुहः
॥ घत्ता ॥ भरत क्षेत्रे नृपपूज्यः नवमः सीरीः उत्पन्नः
पुष्पदंततेजसः तेन तेजः प्रतिपन्नं ॥

पुष्पिकानी संस्कृतछायाः—

इति महापुराणे त्रिषष्टिमहापुरुषगुणालंकारे महाकविपुष्पदंतविरचिते महाभव्यभरतानुमते महाकाव्ये खेचरभूगोचरकुमारीलाभः समुद्रविजयवसुदेवसंगमो नाम त्र्यशीतितमः परिच्छेदः समाप्तः ॥ ८३ ॥

# ॥ षष्ठमुद्धरणम् ॥

## [ धणवालु । ]

### ॥ बंधुयत्तें चत्तहो भविसत्तहो तिलय-दीवि हिंडी ॥

( १ )

चंद-प्पहु जिणु हियवइ धरिवि जासु पहावि विमल-मइ
पुणु कहमि जेम भविसत्तु णिरु[1] तिलय-दीवि लाहउ लहइ
अहो जिणु अंचहु मं परु वंचहु इंदिय खंचहु सु-क्किउ संचहु
बंधु-यत्तु कुल-कित्ति-विणासु गउ वोहित्थइं लेवि हयासु
भविसु वि सरि कर-चलण धुएवि जाम एइ वर-कमलइ लेवि
ताम ण को-इ वि पिक्खइ तित्थु विभिउ मणि अ-मुणिय-कज्जत्थु
सुण्णउ तं पएसु ण सुहावइ[2] कमलइं मिल्लिवि उम्मुहुं धावइ
पिक्खइ ताम समुद्दि वहंतइ धुय-धय-वडइं ताइं जल-जंतइं

१. णरु । २. सुहाइ (द. गु.) ।

## [ धनपालः । ]

### ॥ बंधुदत्तेन त्यक्तस्य भविष्यदत्तस्य तिलकद्वीपे पर्यटनम् ॥

( १ )

चंद्रप्रभं जिनं हृदये धृत्वा यस्य प्रभावेन विमलमतिः
पुनः कथयामि यथा भविष्यदत्तः निश्चितं तिलकद्वीपे लाभं लभते ॥

अहो जिनं अर्चत मा परं वञ्चयत इंद्रियाणि कर्षत सुकृतं संचिनुत
बंधुदत्तः कुलकीर्तिविनाशः गतः प्रवहणानि लात्वा हताशः
भविष्यः अपि सरसि करचरणान् धावित्वा यावत् आयाति वरकमलानि लात्वा
तावत् न कमपि प्रेक्षते तत्र विस्मितः मनसि अज्ञातकार्यार्थः
शून्यः तं प्रदेशः न सुखयति कमलानि मुक्त्वा उन्मुखः धावति
प्रेक्षते तावत् समुद्रे वहन्ति धूतध्वजपटानि तानि जलयन्त्राणि

" दुक्खहो भरिउ हियउ[1] आहल्लिवि गउ खलु बंधु-यत्तु मइं मिल्लिवि"
करु महि-यलि हणेवि उरि कंपिउ " ण चलिउ जं चिरु जणणिए जंपिउ
णट्ठु कज्जु कहिं अब्भुद्धरणउं वणि अ-समाहिए आयउ मरणउं
॥घत्ता॥ अण्णण्णइं चिंतिज्जंति मणि खल-विहि अण्णण्णइं सरइ
सुट्ठु वि वियड्ढु गुण-सय-भरिउ दइउ परम्मुहु किं करइ ॥ १३

( २ )

हा हय-पाव-कम्म मइ-वज्जिय किउ अ-जुत्तु हय-बुद्धि अ-लज्जिय
णिय-कुल-मग्गु भग्गु जसु हारिउ दुज्जण-जणि जंपणउं संवारिउ
कवडु करिवि जं परु वंचिज्जइ आपं गुणवंतहं लज्जिज्जइ
एत्तिउ दुक्खु मज्झु नि-क्कारणु कुलहो कलंकु जाउ जं दारुणु
गय-उरि अ-यस-पडहु वज्जाविउ तायहो तणउं णाउं लज्जाविउं १८
अह इत्थु वि ण विसाउ करिव्वउ [2]मंछुडु एण एम होइव्वउ
जइ तं तेम घडिउ तं तेण इ तो किर काइं विसूरइ[3] एणइ"

---

१. हियइ । २. (द.)मं च्छुडु (गु.) मेच्छुडु । ३ विसूरिय ।

" दुःखैः भृतं हृदयं आक्षुभ्य गतः खलः बन्धुदत्तः मां त्यक्त्वा "
करौ महीतले आस्फाल्य उरसि कंपितः "न आचरितं यत् चिरं जनन्या उक्तं
नष्टं कार्यं क्व अभ्युद्धरणं वने असमाधिना आयातं मरणं
॥घत्ता॥ अन्यान्यानि चिंत्यन्ते मनसि खलविधिः अन्यान्यानि स्मरति
सुष्ठु अपि विदग्धः गुणशतभृतः—दैवः पराङ्मुखः—किं करोति ॥

( २ )

हा हतपापकर्मन् मतिवर्जित कृतं अयुक्तं हतबुद्धे अलज्जित
निजकुलमार्गः भग्नः यशः हारितं दुर्जनजने वचनं समाचरितं
कपटं कृत्वा यत्परः वंच्यते अनेन गुणवद्भिः लज्यते
एतावत् दुःखं मम निष्कारणं कुलस्य कलंकं जातं यद् दारुणं
गजपुरे अयशःपटहः वादितः तातस्य सत्कं नाम लज्जितं
अथ अत्र अपि न विषादः कर्तव्यः मंक्षु अनेन एवं भवितव्यं
यदि तत् तथा घटितं तत् तेनैव तर्हि किल किं खिद्यते अनेन "

इउ चिंतंतु विसाएं मिल्लिउ विहुणिवि बाहु-दंड संचल्लिउ
"इउ वणु इउ सरीरु धम्म-ट्ठउ[1] करि खल-विहि जं पइं पारद्धउ"
॥घत्ता॥ चिंतंतु एम उब्भड वयणु दूर-विसज्जिय-मरण-भउ
संचलिउ सं-मुहु[2] वण-काणणहो णं मुक्कंकुसु मत्त-गउ ॥ २८

( ३ )

पइट्ठो वणिंदो वणे तम्मि काले पहिट्ठो तहिं दुण्णिरिक्खे खयाले
दिसा-मंडलं जत्थ णाउं अ-लक्खं पहायं पि जाणिज्जए जम्मि दुक्खं
भमंतो विभीसावणं तं वणं सो णियच्छेइ दु-प्पिच्छ राई स-रोसो
कहिं-चि प्पएसे स-जूहं गयंदं महा-लोल कल्लोल-गंडं स-णिद्दं
कहिं-चि प्पएसे णिएउं णरिंदं ण णट्ठं ण रुट्ठं स-दप्पं मइंदं २९
कहिं-चि प्पएसे घणं कज्जलाहंगयं[3] भुंडिणी-सावराहं वराहं
कहिं-चि प्पएसे समुण्णोण्ण-घोसो हुओ पायडो वंस-याले हुयासो
कहिं-चि प्पएसे मऊरं पमत्तं णडंतं पि अप्पाणयं विण्णडंतं

---

१. धम्मद्धउ । २. सम्मुहु । ३. कज्जालाहं गयं ।

एतत् चिन्तयन् विषादेन मुक्तः विधूय बाहुदंडौ संचलितः
"एतद् वनं एतत् शरीरं धर्मार्थकं कुरु खलविधे यत्त्वया प्रारब्धं"
॥घत्ता॥ चिन्तयन् एवं उद्भटं वचनं दूरविसृष्टमरणभयः
संचलितः सम्मुखं वनकाननस्य यथा मुक्तांकुशः मत्तगजः ॥

( ३ )

प्रविष्टः वणिगिन्द्रः वनं तस्मिन् काले प्रधृष्टः तस्मिन् दुर्निरीक्ष्ये तरुखंडे
दिशामंडलं यत्र ज्ञातुं अलक्ष्यं प्रभातं अपि ज्ञायते यस्मिन् दुःखं
भ्राम्यन् बिभीषणं तं वनं सः पश्यति दुष्प्रेक्ष्यां रात्रिं सरोषः
कस्मिँश्चित् प्रदेशे सयूथं गजेंद्रं महालीलं कल्लोलगंडं सनिद्रं
कस्मिँश्चित् प्रदेशे द्रष्टुं नरेन्द्रं न नष्टं न रुष्टं सदर्पं मृगेन्द्रं
कस्मिँश्चित् प्रदेशे घनं कज्जलाभांगकं वराहीसापराधं वराहं
कस्मिँश्चित् प्रदेशे समुन्नतोन्नतघोषं भूतं प्रकटं वंशजाले हुताशं
कस्मिँश्चित् प्रदेशे मयूरं प्रमत्तं नृत्यन्तं अपि आत्मानं विगोपायन्तं

॥घत्ता॥ अ·वियल-चित्तु मुणेवि गय एम सु·इरु हिंडंतु थिउ
अइ·मुत्तय-मंडइ दुमहो तलि वियड-सिला·यलि वीसमिउ ॥ ३४

( ४ )

कर·चरण धुएवि वर·कुसुम लेवि जिणु सुमिरिवि पुप्फंजलि खिवेवि
फासुय-सु·यंध-रस-परिमलाइं अहिलसिवि अ·सेसइं तरु-हलाइं
थिउ वीसवंतु खणु इक्कु जाम दिण·मणि अत्थ·वणहु दुक्कु ताम
हुअ संझ तेय-तंबिर स-राय रत्तंबरु णं पंगुरिवि आय
पहि पहिय थक्क विहडिय रहंग णिय·णिय-आवासहो गय विहंग ३९
मउलिय रविंद वम्महु वितट्टु[1] उप्पन्न बाल-मिहुणहं मरट्टु
परिगलिय संझ तं णिएवि राइ अ·सइ व संकेयहो चुक्क णाइ
हुअ कसण स·वत्ति व मच्छरेण सिरि पहय णाइं मसि-खप्परेण
हुअ रयणि बहल-कज्जल-समील जगु गिलिवि णाइं थिय विसम-सील

१ दलालना मूळमां छेल्लो अक्षर छपातां खरी गयो छे; गुणे वितत्तु सुधारो मूके छे; हुं वितट्टु एम सुधारुं छुं.

॥ घत्ता ॥ अविचलचित्तः ज्ञात्वा गतः एवं सुचिरं हिण्डमानः स्थितः
अतिमुक्तकमंडपे द्रुमस्य तले विकटशिलातले विश्रान्तः ॥

( ४ )

करचरणान् धावित्वा वरकुसुमानि लात्वा जिनं स्मृत्वा पुष्पांजलिं क्षिप्त्वा
प्राशुकसुगंधरसपरिमलानि अभिलष्य अशेषाणि तरुफलानि
स्थितः विश्राम्यन् क्षणं एकं यावत् दिनमणिः अस्तमनं ढौकितः तावत्
भूता संध्या तेजस्ताम्रा सरागा रक्तांबरं यथा परिधाय आगता
पथि पथिकाः स्थिताः विघटिताः रथांगाः निजनिजआवासं गताः विहंगाः
मुकुलितानि अरविन्दानि मन्मथः विततः उत्पन्नः बालमिथुनानां गर्वः
परिगलिता संध्या तद् दृष्ट्वा रागेण असती इव संकेतात् च्युता यथा
भूता कृष्णा सपत्नी इव मत्सरेण शिरसि प्रहता यथा मषिकर्परेण
भूता रजनी बहलकज्जलसमा जगत् गिलित्वा यथा स्थिता विषमशीला

अवरुप्परु पयडंतेहि गुज्झु मिहुणहि पारंभिउ सु-रय-जुज्झु
वहइ पडिवण्णि करालि कालि गह-भूअ-जक्ख-रक्खस-वमालि
वणि विसमि विएसि विचित्ति[1] पत्तु तह वि हु अ-कंपु कमल-
सिरि-पुत्तु
॥घत्ता॥ परमिट्ठि पंच हियवइ धरेवि दु-विहें पच्चक्खाणु किउ
अहियरिवि मंत सत्तक्खरउ परमप्पउ झायंतु थिउ ॥ ४८

( ५ )

परिगलिय रयणि पयडिउ विहाणु णं पुणु वि गवेसउ आउ भाणु
जिणु संभरंतु संचलिउ धीरु वणि हिंडइ रोमंचिय-सरीरु
सु-णिमित्तइं जायइं तासु ताम गय पयहिणंति उड्डेवि साम
वामंगि सुत्ति रुहुरुहइ वाउ पिय-मेलावउ कुलुकुलइ काउ
वामउ किलिकिंचिउ लावएण दाहिणउ अंगु दरिसिउ मएण ५३
दाहिणु लोयणु फंदइ स-बाहु णं भणइ 'एण मग्गेण जाहु'
थोवंतरि दिट्ठु पुराण पंथु भविएण वि णं जिण-समय-गंथु

---

१ विचित्त ।

परस्परं प्रकटयद्भिः गुह्यं मिथुनैः प्रारब्धं सुरतयुद्धं
एतस्मिन् प्रतिपन्ने कराले काले ग्रहभूतयक्षरक्षःकलकले
वने विषमे विदेशे विचित्रे प्राप्तः तथापि खलु अकंपः कमलश्रीपुत्रः
॥घत्ता॥ परमेष्ठिनः पंच हृदये धृत्वा द्विविधेन प्रत्याख्यानं कृतं
अभिचर्य मंत्रं सप्ताक्षरं परमात्मानं ध्यायन् स्थितः ॥

( ५ )

परिगलिता रजनी प्रकटितं विभानं यथा पुनः अपि गवेषकः आयातः भानुः
जिनं संस्मरन् संचलितः धीरः वने हिंडते रोमांचितशरीरः
सुनिमित्तानि जातानि तस्य तावत् गतः प्रदक्षिणान्ते उड्डीय श्यामः
वामांगे सुप्ते मन्दं वहति वायुः प्रियमेलापकं आक्रंदते काकः
वामतः किलकिलारवः कृतः लावकेन दक्षिणतः अंगं दर्शितं मृगेण
दक्षिणं लोचनं स्पन्दते सबाहु यथा भणति 'अनेन मार्गेण यात'
स्तोकान्तरे दृष्टः पुराणः पन्थाः भव्येन अपि इव जिनसमयग्रन्थः

सप्पुरिसु वियप्पइ "ण होमि विज्जा-हर सुर ण छिवति भूमि
णउ जक्खहं रक्खहं किण्णराहं लइ इत्थु आसि संचरु णराह"
संचलिउ तेण पहेण जाम गिरि-कंदरि सो वि पइट्ठु ताम
चिंतवइ धीरु सुंडीरु वीरु "लइ को वि एउ भक्खउ सरीरु
पइसरमि ण विवरंतरेण णिव्वडिउ कज्जु किं वित्थरेण"
॥घत्ता॥ दुत्तरु दुलंघु दूरंतरिउ ताम जाम संचरहिं णउ
भणु काइं ण सिज्झइ स-उरिसहं[1] अवगण्णंतहं मरण-भउ ॥ ६२

( ६ )

सुहि स-यण मरण-भउ परिहरेवि अहिमाणु माणु पउरिसु सरेवि
सत्त-क्खर-अहिमंतणु करेवि चंद-प्पहु जिणु हियवइ धरेवि
गिरि-कंदरि विवरि पइट्ठु बालु अंतरिउ णाइं कालेण कालु
संचरइ बहल-कज्जल-तमालि णं जिउ वामोह-तमोह-जालि
सेइउ णिरुद्ध-पवणुच्छवेण[2] बहिरिउ पमत्त-महु-अर-रवेण ६७

---

१. सउरिसहो (द.) सउरिसहं (गु.)। २ स्वीकृत पाठ प्रमाणे ( गु. ) निरुद्ध पवणुच्छवेण ।

सत्पुरुषः विकल्पते "अनेन भवामि विद्याधराः सुराः न स्पृशन्ति भूमिं
न खलु यक्षाणां रक्षसां किन्नराणां ननु अत्र आसीत् संचरः नराणां"
संचलितः तेन पथा यावत् गिरिकंदरे सः अपि प्रविष्टः तावत्
चिन्तयति धीरः शौण्डीरः वीरः "बाढं कोऽपि एतत् भक्षयतु शरीरं
प्रविशामि अनेन विवरांतरेण निष्पन्नं कार्यं किं विस्तरेण"
॥घत्ता॥ दुस्तरं दुर्लंघं दूर-अन्तरितं तावत् यावत् संचरन्ति न
भणामि किं न सिध्यति सपौरुषाणां अवगणयतां मरणभयं ॥

( ६ )

सुहृदं स्वजनं मरणभयं परिहृत्य अभिमानं मानं पौरुषं स्मृत्वा
सप्ताक्षराभिमंत्रणं कृत्वा चंद्रप्रभं जिनं हृदये धृत्वा
गिरिकंदरे विवरे प्रविष्टः बालः अन्तरितः यथा कालेन कालः
संचरति बहलकज्जलतमसि यथा जीवः व्यामोहतमःओघजाले
स्विन्नः निरुद्धपवनोत्स्पर्शेन बधिरितः प्रमत्तमधुकररवेण

चिंतिउ अ·चिंत-णिव्वुइ-वसेण कंटइउ अ·सम-साहस-रसेण
अणुसरइ जाम थोवंतरालु तं णयरु दिट्ठु ववगय-तमालु
चउ·गोउर-चउ·पासाय-सारु चउ-धवल·पओलि-दुवार-फारु
मणि·रयण·कंति-कब्बुरिय-देहु सिय·कमल·धवल-पंडुरिय-गेहु
॥घत्ता॥ तं तेहउ धण·कंचण-पउरु दिट्ठु कुमारिं वर-णयरु
सियवंतु वि·यणु वि·च्छाय-छवि णं विणु णीरिं कमल-सरु ॥ ७३

( ७ )

तं पुर पविस्समाणेण तेण दिट्ठयं
तं ण तित्थु किं पि जं ण लोयणाण इट्ठयं
वावि·कूव·सु·प्पहूव-सु·प्पसण्ण-वण्णयं
मढ-विहार-देहुरेहिं सुट्ठु तं रवण्णयं
देव·मंदिरेसु तेसु अंतरं णियच्छए ७८
सो ण तित्थु जो कयाइ पुज्जिऊण पिच्छए
सुरहि·गंध-परिमलं पसुणएहिं फंसए

---

चिंतातुरः अचिंत्यनिर्वृतिवशेन कंटकितः असमसाहसरसेन
अनुसरति यावत्स्तोकान्तरालं तन्नगरं दृष्टं व्यपगततमः
चतुःगोपुरचतुःप्रासादसारं चतुःधवलप्रतोलिद्वारस्फारं
मणिरत्नकांतिकर्बुरितदेहं सितकमलधवलपांडुरितगेहं
॥ घत्ता ॥ तत् तादृशं धनकाञ्चनप्रचुरं दृष्टं कुमारेण वरनगरं
श्रीतः विजनं विच्छायछवि यथा विना नीरेण कमलसरः ॥

( ७ )

तत् पुरं प्रविशता तेन दृष्टं
तत् न तत्र किमपि यत् न लोचनानां इष्टं
वापीकूपसुप्रभूतसुप्रसन्नवर्णकं
मठविहारदेवकुलैः सुष्टु तत् रमणीयं
देवमन्दिरेषु तेषु अन्तः पश्यति
सः न तत्र यः कदापि पूजयित्वा प्रेक्षते
सुरभिगन्धपरिमलं प्रसूनेभ्यः स्पृशति

सो ण तित्थु जो करेण गिण्हऊण वासए
पिक्क-सालि-धण्णयं पणट्ठयम्मि ताणए
सो ण तित्थु जो घरम्मि लेवि तं पराणए ८३
सर-वरम्मि पंक-याइं भमिर-भमर-कंदिरे
सो ण तित्थु जो खुडेवि णेइ ताइं मंदिरे
हत्थ-गिज्झ-वर-फलाइं विंभएण पिक्खए
केण कारणेण को वि तोडिउं ण[1] भक्खए
पिच्छिऊण पर-धणाइं खुब्भए ण लुब्भए ८८
अप्पणम्मि अप्पए वियप्पए सु चिंतए[2]
" पुत्ति-चोज्जु[3] पट्टणं विचित्त-बंध-बंधयं
घाहि मिच्छ तं जणं[4] दु-रक्खसेण खद्धयं
पुत्ति-चोज्जु रा-उलं विचित्त-भंगि-भंगयं
आसि इत्थु जं पहुं ण याणिमो कहं गयं

---

१. (द.) तोडिउं ण। (गु.) तोडिऊण । २ .विकप्पए सु चिन्तए (द.) विकप्पएइ चिंतए (गु.) ३. पुत्तिचोज्जु (द.) पुत्ति चोज्जु (गु.) ४ वाहिमिच्छ-तंजणं (द.); (गु.) मे कशो सुधारो बतावबानो नथी

सः न तत्र यः करेण गृहीत्वा जिघ्रति
पक्वशालिधान्यके प्रनष्टे त्राणाय
सः न तत्र यः गृहे लात्वा तत् आनयति
सरोवरे पंकजानि भ्रमिरभ्रमरक्रंदिनि
सः न तत्र यः त्रोटयित्वा नयति तानि मंदिरे
हस्तग्राह्यवरफलानि विस्मयेन प्रेक्षते
केन कारणेन कः अपि त्रोटयित्वा न भक्षयति
प्रेक्ष्य परधनानि क्षुभ्यति न लुभ्यति
आत्मनि आत्मने विकल्पते सः चिंतयति
" आश्चर्यं, पट्टनं विचित्रबंधबद्धकं
व्याधिना म्लेच्छेन स जनः दुःराक्षसेन जग्धः
आश्चर्यं, राजकुलं विचित्रभंगीभग्नकं
आसीत् अत्र यः प्रभुः न जानीमः कुत्र गतः

पुत्ति-चोज्जु कारणं ण याणिमो अ-संभमं
एक्क-मित्तएहिं कस्स दिज्जए सु-विब्भमं "
॥घत्ता॥ विद्धुणिय-सिरु भरडक्खिय-लोयणु पइं पइं विंभइ
अ-णिमिस-जोअणु
णव-तरु-पल्लव-दल-सोमालउ हिंडइ तित्थु महा-पुरि बालउ ॥९७

(८)

पिक्खइ मंदिराइं फलअद्धुग्घाडिय-जाल-गवक्खइं
अद्ध-पलोइराइ णं णव-वहु-णयण-कडक्खइं
अह फलहंतरेण दरिसिय-गुज्झंतर-देसइं
अद्ध-पयंधियाइं विलयाण व ऊरु-पएसइं
पिक्खइ आवणाइं भरियंतर-भंड-समिद्धइं १०२
पयडिय-पण्णयाइं णं णाइणि-मउडइं चिंधइं
एक्क-धणाहिलास-पुरिसाइ व रंधि पलित्तइं
वरइत्त-जुवाणइं णं वहु-कुमारिहु चित्तइं

---

आश्चर्यं कारणं न जानीमः असंभ्रमं
एकमात्राय कस्मै दीयते सुविभ्रमं "
॥घत्ता॥ विधूतशिराः विस्फारितलोचनः पदे पदे विस्मयेन अनिमेषदर्शनः
नवतरुपल्लवदलसुकुमारः हिंडते तत्र महापुरे बालः ॥

(८)

प्रेक्षते मंदिराणि फलकार्धोद्घाटितजालगवाक्षाणि
अर्धप्रलोकिनः यथा नववधूनयनकटाक्षान्
अथ फलकान्तरेण दर्शितगुह्यान्तर्देशान्
अर्धप्रबद्धान् वनितानां यथा ऊरुप्रदेशान्
प्रेक्षते आपणान् भरितान्तर्भाण्डसमृद्धान्
प्रकटितपन्नगानि (पण्यान्) यथा नागिनीमुकुटे चिह्नानि
एकधनाभिलाषान् पुरुषान् इव रंधे प्रदीप्तान्
वरयितृयूनः इव श्रेष्ठकुमारीषु (णाम्) चित्तानि (चित्राणि)

जोएसर-विवाय-करणाइं व जोइय-थंभइं
विहडिय-णेसणाइं मिहुणाण व सु-रयारंभइं १०७
पिक्खइ गो-उराइं परिवज्जिय-गो-पय-मग्गइं
पासायंतराइं पवणुद्धुअ-धवल-धयग्गइं
जाइं जणाउलाइं चिरु आसि महंतर-भवणइं
ताइं मि णि-ज्जुणाइं सु-रयइं सम्मत्तइं[1] मिहुणइं
जाइं णिरंतराइं चिरु पाणिय-हारिहु तित्थइं
ताइं वि विहि-वसेण हूअइं[2] णी-सद्द सु-दु-त्थइं
॥घत्ता॥ सिय-वंत-णियाणइं णिइवि तहो उम्माहउ अंगइं भरइ
पिक्खंतु णियय-पडिबिंब-तणु सण्णिउं सण्णिउं संचरइ ॥ ११५

(९)

भमइ कुमारु विचित्त-स-रूवें सव्वंगिं अच्छेरय-भूएं
" हा विहि पट्टणु सुट्ठु रवण्णउ किर कज्जेण केण थिउ सुण्णउं
हट्ट-मग्गु कुल-सील-णिउत्तहिं सोह ण देइ रहिउ वणि-उत्तहिं

---

१. (द.) सुरवइ सम्मत्तइं (गु.) सुरइ समत्तइं। २. हुअइं।

योगीश्वरविवादकरणानि इव यौगिक(दृष्ट)स्तंभानि(स्तंभान्)
विघटितनिवसना(नि)न् मिथुनानां इव सुरतारंभान्
प्रेक्षते गोपुरान् परिवर्जितगोपदमार्गान्
प्रासादांतराणि पवनोद्भूतधवलध्वजाग्राणि
यानि जनाकुलानि चिरम् आसन् महत्तराणि भवनानि
तानि अपि निर्ध्वनीनि सुरते समाप्ते मिथुनानि
यानि निरंतराणि चिरं पानीयहारिणीनां तीर्थानि
तानि अपि विधिवशेन भूतानि निःशब्दानि सुदुःस्थानि
॥घत्ता॥ श्रीमन्निदानानि दृष्ट्वा तस्य उन्माथः अंगानि भरति
प्रेक्षमाणः निजकतनुप्रतिबिंबं शनैः शनैः संचरति ॥

(९)

भ्राम्यति कुमारः विचित्रस्वरूपेण सर्वांगेन आश्चर्यभूतेन
" हा विधे पट्टनं शोभनं रमणीयं किल कार्येण केन स्थितं शून्यं
आपणमार्गः कुलशीलनियुक्तैः शोभां न ददाति रहितः वणिक्पुत्रैः

टिटा·उत्तएहिं विणु टिटउ णं गय-जोव्वणाउ मयरट्ठउ
घर·घर-पंगणेहिं आहोयइं सोह ण दिंति विवज्जिय-लोयइं
सोवरणइ मि रसोइ-पएसइं विणु सज्जणहिं णाइं पर-देसइं
॥घत्ता॥ हा किं बहु-वाया·वित्थरिण आपं दुहिण को ण भरिउ
तं केम पडीवउ संमिलइ जं खय-कालि अंतरिउ"॥ १२३

( १० )

एम दिट्ठु तं पट्टणु बालें खय-कालावसाणु णं कालें
लीलइ परिसक्कंतु महाइउ जस·हण-राय-दुवारु पराइउ
राउल-सीह·दुवारइं[1] पिक्खइ दर·वियसंति णाइं स·विलक्खइं
[2]दिक्खइ णिग्गयाउ गय-सालउ णं कुल-तियउ विणासिय-सीलउ
पिक्खइ तुरय-वलत्थ-पएसइं पत्थण-भंगाइ व विगयासइं १३८
पिक्खइ सहु पंगणउ विचित्तउ चिर-चंदण-छड-कद्दमि लित्तउ
पिक्खइ कणय-वीदु सिंहासणु छत्तु स-चिंधु स-चामर·वासणु

---

१ राउलु सीहदुवारहो (द. गु.) २ अहिं दिक्खइ ने बदले पिक्खइ बांचवु वधारे सारुं छे.

द्यूतकारैः विना द्यूतगृहं यथा गतयौवनाः वारवनिताः
वरगृहप्राङ्गणैः आभोगाः शोभां न ददति विवर्जितलोकाः
सोपकरणाः अपि रसवतीप्रदेशाः विना सज्जनैः यथा परदेशाः
॥घत्ता॥ हा किं बहुवाचाविस्तरेण अनेन दुःखेन को न भरितः
तत् कथं प्रतीपं सम्मीलति यत् क्षयकालेन अंतरितं" ॥

( १० )

एतादृशं दृष्टं तत् पट्टनं बालेन क्षयकालावसानं यथा कालेन
लीलया परिक्राम्यन् महात्मा यशोधनराजद्वारं परागतः
राजकुलसिंहद्वाराणि प्रेक्षते दर–विकसन्ति यथा सवैलक्ष्याणि
पश्यति निर्गजाः (निर्गताः)गजशालाः यथा कुलस्त्रियः विनाशितशीलाः
प्रेक्षते तुरगपर्यस्तप्रदेशान् प्रार्थनाभंगान् इव विगताशान्(अश्वान्)
प्रेक्षते सर्वं प्रांगणं विचित्रं चिरं चंदनलटाकर्दमेन लिप्तं
प्रेक्षते कनकपीठं सिंहासनं छत्रं सचिह्नं सचामरवसनं

णि·प्पहु पहु-परिवार-विवज्जिउ हसइ व णाइं विलक्खु अ·लज्जिउ
मणि-कंचण-चामरइं णियच्छइ चामर-गाहिणीउ ण उ पिच्छइ
॥घत्ता॥ सह-मंडवि राय-जसो·हणहो पिक्खवि परिसक्कंतु णरु
मुत्ता·हल-माल-झुलुक्कुइहिं रुवइ व थोरंसुवहिं घरु॥ १३४

( ११ )

आउह-साल विसाल विसंति चित्त विचित्त परामरिसंति
अग्घाइउ सु·गंधु मय-परिमलु णं पुव्व-क्किय-सु·किय-महा·फलु
सोउ करिवि नव·कमल·दल-ऽच्छिए णं णीसासु मुक्कु घर·लच्छिए
तूर-भेरि-दडि-संख-सहासइं वीणालावणि वंस·विसेसइं
" जस·हण सामि·साल अच्छंतइ[1] पुर·पउरालंकार समत्तइं १३९
एवहिं अम्हहिं को वज्जावइ " थक्कइं मउणु लएविणु णावइं
बहु·विलास-मंदिरइं पईसिवि रइ-हरि भमिवि तवंगि बईसिवि
णिग्गउ भविस·यत्तु अ·विसण्णउ चंद·प्पह-जिण-भवणु पवण्णउ

---

१. अच्छंतए । ( द. गु. )

निष्प्रभं प्रभुपरिवारविवर्जितं हसति इव यथा विलक्षः अलज्जितः
मणिकाञ्चनचामरान् पश्यति चामरग्राहिणीः न तु प्रेक्षते
॥घत्ता॥सभामंडपे यशोधनराजस्य प्रेक्ष्य परिक्राम्यन्तं नरं
मुक्ताफलमालाझलत्कृतिभिः रोदिति इव स्थूलाश्रुभिः गृहं ॥

( ११ )

आयुधशालां विशालां विशता चित्रं विचित्रं परामृशता
आघ्रातः सुगंधिः मदपरिमलः यथा पूर्वकृतसुकृतमहाफलं
शोकं कृत्वा नवकमलदलाक्ष्या यथा निःश्वासः मुक्तः गृहलक्ष्म्या
तूरभेरिदडिशंखसहस्राणि वीणालापने वंशविशेषाः
" यशोधने स्वामिश्रेष्ठे सति पुरप्रवरालंकारे समाप्ते
एतादृशैः अस्माभिः कः वादयति " तिष्ठन्ति मौनं लात्वा यथा
बहुविलासमंदिराणि प्रविश्य रतिगृहे भ्रान्त्वा मध्ये उपविश्य
निर्गतः भविष्यदत्तः अविषण्णः चंद्रप्रभजिनभवनं प्रपन्नः

॥घत्ता॥ तं पुणु भवणु णिएवि धवलुत्तुंग-विसालु
वियसिय-वयण·रविंदु[1] मणि परिओसिउ बालु ॥ १४५

( १२ )

दिट्ठु जिणालउ भविस·णरिंदिं णं णंदीसर-दीउ सुरिंदिं
पवरारामग्गाम-परियंचिउ इंद-णरिंद-सुरिंदहिं अंचिउ
धवलुत्तंग-सिहरु सु·विसालउ छण·ससि·कंत-कंति-सोमालउ
वर·मणि·किरण-कंति-सोहिल्लउ सइं चित्तु व दिढ-बद्ध-कडिल्लउ
आगम-जुत्ति-पमाण-विहंजिउ मणि·मोत्तिय·पवाल-पहु-रंजिउ
बहु·घण·घुसिण-पंकि पडियंकिउ सुह·लक्खण-लक्खण[2]-चच्चंकिउ
अग्गइ कमल-वावि सु·मणोहर णं कामिणि स·च्छाय-पओ·हर
तहिं अवयरिवि अंगु पक्खालिवि कमलइं खुडिवि धुएवि अणुमालिवि
अहि·मुहुं चलिउ धवल·सिय-वाहहो दिट्ठु बिंबु चंद·प्पह-णाहहो

॥घत्ता॥ परिअंचिवि अंचिवि परम·गुरु अवलोइवि सव्वायरेण
सम·दिट्ठिए सामाइउ करेवि थुइ आढत्त णरेसरेण ॥

---

१. वयणु रविदु । (द. गु.) २. लक्खणि ।

॥घत्ता॥ तत् पुनः जिनभवनं दृष्ट्वा धवलोत्तुंगविशालं
विकसितवदनारविंदः मनसि परितुष्टः बालः ॥

( १२ )

दृष्टः जिनालयः भविष्यनरेन्द्रेण यथा नंदीश्वरद्वीपः सुरेन्द्रेण
प्रवरारामग्रामपर्यंचितः इन्द्रनरेन्द्रसुरेन्द्रैः अर्चितः
धवलोत्तुंगशिखरः सुविशालः क्षणशशिकांतकांतिसुकुमारः
वरमणिकिरणकांतिशोभितः स्वयं चित्रं इव दृढबद्धकटिकः
आगमयुक्तिप्रमाणविभक्तः मणिमौक्तिकप्रवालप्रभारंजितः
बहुघनघुसृणपंकेन प्रत्यंकितं शुभलक्षणलक्षणचर्चांकितं
अग्रे कमलवापी सुमनोहरा यथा कामिनी सच्छायपयोधरा
तस्याम् अवतीर्य अंगं प्रक्षाल्य कमलानि त्रोटयित्वा धावित्वा अनुमाल्य
अभिमुखं चलितः धवलश्रीवाहस्य दृष्टं बिंबं चंद्रप्रभनाथस्य ।

॥घत्ता॥ पर्यंच्य अर्चित्वा परमगुरुं अवलोक्य सर्वादरेण
समदृष्ट्या सामायिकं कृत्वा स्तुतिः आरब्धा नरेश्वरेण ॥

( १३ )

तिलय-दीवंतर-त्थेण चंद-प्पहं संथुअं भविस-यत्तेण चंद-प्पहं
" भरह-खेत्तम्मि काले चउत्थे जए वट्टमाणम्मि तस्सेय तित्थेसए
सिसिर-कालम्मि उण्हालए पाउसे मत्त-लोयम्मि दस-लक्ख-पुव्वाउसे
जस्स माणं धणूणं दिवड्ढं सयं जेण पत्तं पवित्तं सिवं सासयं
अट्ठमं जेण तित्थं पवित्ताइयं जस्स जम्मे ति-लोयम्मि वद्धावियं
जस्स वायाइं भुवण-त्तयं मोइयं केवलेणं ति-लोयं पउज्जोवियं
जेण मिच्छत्त मोहं च णिण्णासियं दिव्व-भासतरेणं जयं भासियं
जेण लोयस्स लोहत्तणं फेडियं दुट्ठ-कंदप्प-दप्पं च पंचेडियं
अ-प्पमत्ताण भत्ताण संती सया देसिउं दाविया जीव-लोए दया
णाह कज्जेण तेणं मए संथुओ जेण तम्हाण पासं गमं तक्कुओ
देहि अम्हाण माणम्मि काउं दयं अ-क्खयं अ-व्वयं तं महंतं पयं"
॥घत्ता॥ तहिं तिलय-दीवि भविसि णमिउं इत्थु काले धण-वइ थुणइ
"अणुणंत-पढंत-सुणंतहं मि देहि भडारा विमल-मइ ॥[1]"

---

१. (द.) आ प्रमाणे ( c हाथप्रतनी ) पुष्पिका नोंधे छे:—
इय भविसत्तकहाए पयडियधम्मत्थकाममोक्खाए बुहधणवालकयाए पंचमि-फलवण्णणाए भविसत्ततिलकपुरवण्णणो णाम चउत्थो संधीपरिच्छेओ सम्मत्तो ॥

( १३ )

तिलकद्वीपान्तरस्थेन चंद्रप्रभः संस्तुतः भविष्यदत्तेन चंद्रप्रभः
" भरतक्षेत्रे काले चतुर्थे जगति वर्तमाने तस्यैव तीर्थेश्वरे
शिशिरकाले उष्णकाले प्रावृषि मर्त्यलोके दशलक्षपूर्वायुषि
यस्य मानं धनुषां द्वयर्धं शतं येन प्राप्तं पवित्रं शिवं शाश्वतं
अष्टमं येन तीर्थं पवित्रायितं यस्य जन्मनि त्रिलोके वर्धापितं
यस्य वाचया भुवनत्रयं मोचितं कैवल्येन त्रिलोकं प्रोद्द्योतितं
येन मिथ्यात्वं मोहः च निर्नाशितः दिव्यभाषान्तरेण जगद् भाषितं
येन लोकस्य लोभः विनाशितः दुष्टकंदर्पदर्पः च दलितः
अप्रमत्तानां भक्तानां शांतिं सदा देशयितुं दर्शिता जीवलोके दया
नाथ कार्येण तेन मया संस्तुतः येन युष्माकं पार्श्वं गच्छामि स्वजनः
देहि अस्मभ्यं माने कृत्वा दयां अक्षयं अव्ययं तत् महत् पदं "
॥घत्ता॥तस्मिन् तिलकद्वीपे भविष्येण नतः अस्मिन् काले धनपतिः स्तौति
" अनुजानद्भ्यः पठद्भ्यः शृण्वद्भ्यः अपि देहि भट्टारक विमलमतिं ॥

# ॥ सप्तममुद्धरणम् ॥

## [ जोइन्दु । ]

### ॥ परमप्पपयास–दोहासमुच्चउ ॥

जे जाया झाणग्गियए कम्म–कलंक डहेवि
णिच्च णिरंजण णाण·मय ते परमप्प णमेवि ॥ १ ॥
ते हउ वंदउं सिद्ध–गण अच्छहिं[2] जे वि हवंत
परम·समाहि–महग्गियए कम्मिंधणइं हुणंत ॥ २ ॥
जे परमप्पु णियंति मुणि परम–समाहि धरेवि
परमाणंदह कारणिण तिण्णि वि ते वि णमेवि ॥ ३ ॥
भावि पणविवि पंच·गुरु सिरि·जोइंदु जिणाउ[3]
भट्ट–पहा·यरि विण्णविउ[4] विमलु करेविणु भाउ ॥ ४ ॥

---

१. तेहउ । २. अत्थाह । ३. जिणाउ । ४. विण्णयउ ।

### ॥ योगीन्द्रः ॥

### ॥ परमात्मप्रकाश'दोहा'समुच्चयः ॥

ये जाताः ध्यानाग्निना कर्मकलंकान् दग्ध्वा
नित्याः निरञ्जनाः ज्ञानमयाः तान् परमात्मनः नत्वा ॥१॥
तानहं वन्दे सिद्धगणान् तिष्ठन्ति ये अपि भवन्तः
परमसमाधिमहाग्निना कर्मेन्धनानि जुह्वन्तः ॥२॥
य परमात्मान पश्यन्ति मुनयः परमसमाधिं धृत्वा
परमानंदस्य कारणेन त्रीनपि तानपि नत्वा ॥३॥
भावेन प्रणम्य पञ्चगुरून् श्रीयोगीन्द्रः एव नाम
भट्टप्रभाकरेण विज्ञाप्तः विमलं कृत्वा भावम् ॥४॥

" गउ संसारि वसंताहं सामिय कालु अणंतु
पर मइं किं पि न पत्तु सुहु दुक्खु जि पत्तु महंतु ॥ ५ ॥
चउ-गइ-दुक्खहं तत्ताहं जो परमप्पउ को इ
चउ-गइ-दुक्ख-विणास-यरु कहहु पसाएं सो वि" ॥ ६ ॥
" पुण पुण पणविवि पंच-गुरु भावें चित्ति धरेवि
भट्ट-पहा-यर णिसुणि तुहुं अप्पा ति-विहु कहेवि ॥ ७ ॥
मूढु वियक्खणु बंभु परु अप्पा ति-विहु हवेइ १५
देहु जि अप्पा जो मुणइ सो जणु मूढु हवेइ ॥ ८ ॥
देह-विभिण्णउ[1] णाण-मउ जो परमप्पु णिएइ
परम-समाहि-परिट्ठियउ पंडिउ सो जि हवेइ ॥ ९ ॥
ति-हुयण-वंदिउ सिद्धि-गउ हरि-हर झायहि जो जि
लक्खु अ-लक्खें धरिवि थिरु मुणि परमप्पउ सो जि ॥१०॥
वेयहिं सत्थहिं इंदियहिं जो जिय मुणहु ण जाइ
णिम्मल-झाणह जो विसउ सो परमप्पु अणाइ ॥ ११ ॥

---

१. विभण्णउ ।

" गतः संसारे वसतां स्वामिन् कालः अनन्तः
परं मया किमपि न प्राप्तं सुखं दुःखमेव प्राप्तं महत् ॥५॥
चतुर्गतिदुःखैः तप्तानां यः परमात्मा कोऽपि
चतुर्गतिदुःखविनाशकरः कथयत प्रसादेन तम् अपि" ॥६॥
पुनः पुनः प्रणम्य पंचगुरून् भावेन चित्ते धृत्वा
भट्टप्रभाकर निशृणु त्वं आत्मानं त्रिविधं कथयामि ॥७॥
मूढः विचक्षणः ब्रह्म परं आत्मा त्रिविधः भवति
देहमेव आत्मानं यः मनुते सः जनः मूढः भवति ॥८॥
देहविभिन्नं ज्ञानमयं यः परमात्मानं पश्यति
परमसमाधिपरिस्थितः पण्डितः स एव भवति ॥९॥
त्रिभुवनवन्दितं सिद्धिगतं हरिहरौ ध्यायतः यम् एव
लक्ष्यम् अलक्ष्येण धृत्वा स्थिरं मन्यस्व परमात्मानं तमेव ॥१०॥
वेदैः शास्त्रैः इन्द्रियैः यः जीव, मंतुं न याति
निर्मलध्यानस्य यो विषयः स परमात्मा अनादिः ॥११॥

केवल·दंसण·णाणमउ केवल·सुक्ख-सहाउ
केवल-वीरिउ सो मुणहि जो जि परावरु भाउ ॥ १२ ॥
जेहउ णिम्मलु णाणमउ सिद्धिहि णिवसइ देउ
तेहउ णिवसइ बंभु परु देहहं मं करि भेउ ॥ १३ ॥
जें दिट्ठें तुट्टंति लहु कम्मइं पुव्व-कियाइं
सो परु जाणहि जोइया देहि वसंतु ण काइं ॥ १४ ॥
अ·मणु अ·णिंदिउ णाणमउ मुत्ति-विरहिउ चि·मित्तु
अप्पा इंदिय-विसउ ण वि लक्खणु एहु णिरुत्तु ॥ १५ ॥
भव·तणु·भोय-विरत्त-मणु जो अप्पा झाएइ
तासु गुरुक्की वेल्लडी संसारिणि तुट्टइ ॥ १६ ॥
देहा-देवलि जो वसइ देउ अणाइ अणंतु
केवल·णाण-फुरंत-तणु सो परमप्पु णिभंतु ॥ १७ ॥
देहे वसंतु वि ण वि छिवइ णियमें देहु जि जो जि
देहिं छिप्पइ जो जि ण वि मुणि परमप्पउ सो जि ॥ १८ ॥

---

केवलदर्शनज्ञानमयः यो केवलसौख्यस्वभावः
केवलवीर्यस्तं मनुष्व यः एव परापरो भावः ॥१२॥
यादृशः निर्मलः ज्ञानमयः सिद्धौ निवसति देवः
तादृग् निवसति ब्रह्म परं देहे मा कुरु भेदम् ॥१३॥
येन दृष्टेन त्रुट्यंति लघु कर्माणि पूर्वकृतानि
तं परं जानासि योगिन् देहे वसंतं न किम् ॥ १४ ॥
अमनस्कः अनिन्द्रियः ज्ञानमयः मूर्तिविरहितः चिन्मात्रः
आत्मा इन्द्रियविषयः नापि लक्षणं इदं निरुक्तम् ॥१५॥
भवतनुभोगविरक्तमनाः यः आत्मानं ध्यायति
तस्य गुर्वी वल्ली सांसारिकी त्रुट्यति ॥१६॥
देहदेवकुले यः वसति देवः अनादिः अनंतः
केवलज्ञानस्फुरिततनुः सः परमात्मा निर्भ्रांतः ॥१७॥
देहे वसन्नपि नैव स्पृशति नियमेन देहं एव यः एव
देहेन स्पृश्यते यः एव नापि मन्यस्व परमात्मानं तमेव ॥१८॥

जो समभाव-परिट्ठियहं जोइहिं को इ फुरेइ
परमाणंदु जणंतु फुडु सो परमप्पु हवेइ ॥ १९ ॥
गयणि अणंति जि एक्क उडु जेहउ भुअणु विहाइ
मुक्कहं जसु पए बिंबियउ सो परमप्पु अणाइ ॥ २० ॥
जसु अब्भंतरि जगु वसइ जग अब्भंतरि जो जि
जगि जि वसंतु वि जगु जि ण वि मुणि परमप्पउ सो जि ॥२१॥
देहि वसंतु वि हरि-हर वि जं अज्ज वि ण मुणंति
परम-समाहि-तवेण विणु सो परमप्पु भणंति ॥ २२ ॥
अप्पा अप्पु जि परु जि परु अप्पा परु जि ण होइ ४५
परु जि कयाइ वि अप्पु ण वि णियमिं पभणहिं जोइ ॥२३॥
ण वि उप्पज्जइ ण वि मरइ बंधु ण मोक्खु करेइ
जिउ परमत्थें जोइया जिण-वरु एउ भणेइ ॥ २४ ॥
कम्महं केरा भावडा अण्णु अ-चेयणु दव्वु
[1]अप्प-सहावहं भिण्णु जिय णियमिं बुज्झहि सव्वु ॥२५॥ ५०

---

१. जीवसहावहं ।

यः समभावपरिस्थितानाम् योगिनां कश्चित् स्फुरति
परमानन्दं जनयन् स्फुटं स परमात्मा भवति ॥१९॥
गगने अनंते अपि एकं उडु यथा भुवनं विभाति
मुक्तस्य यस्य पदे बिम्बितः स परमात्मा अनादिः ॥२०॥
यस्य अभ्यंतरे जगत् वसति जगतः अभ्यन्तरे य एव
जगति वसन् अपि जगत् एव नापि मनुष्व परमात्मानं तमेव॥२१॥
देहे वसन्तमपि हरिहरौ अपि यं अद्यापि न जानीतः
परमसमाधितपसा विना तं परमात्मानं भणन्ति ॥२२॥
आत्मा आत्मा एव परः एव परः आत्मा परः एव न भवति
परः एव कदाचिद् अपि आत्मा नैव नियमेन प्रभणन्ति योगिनः॥२३॥
नापि उत्पद्यते नापि म्रियते बंधं न मोक्षं करोति
जीवः परमार्थेन योगिन् जिनवरः एवं भणति ॥२४॥
कर्मणां संबंधिनः भावाः अन्यद् अचेतन द्रव्यम्
आत्मस्वभावाद् भिन्नं जीव, नियमेन बोध सर्वम् ॥२५॥

अप्पा मेल्लिवि णाणमउ अण्णु परायउ भाउ
सो छंडेविणु जीव तुहुं भावहि अप्प-सहाउ ॥ २६ ॥
अप्पि अप्पु मुणंतु जिउ सम्मा-दिट्ठि हवेइ
सम्मा-इट्ठिउ जीवडउ लहु कम्मइ मुच्चेइ ॥ २७ ॥
जणणी जणणु वि कंत घरु पुत्तु वि मित्तु वि दव्वु ५५
माया-जालु वि अप्पणउं मूढउ मण्णइ सव्वु ॥ २८ ॥
दुक्खहं कारणि जे विसय ते सुह-हेउ रमेइ
मिच्छा-इट्ठिउ जीवडउ इत्थु ण काइं करेइ ॥ २९ ॥
कालु लहेविणु जोइया जिमु जिमु मोहु गलेइ
तिमु तिमु दंसणु लहइ जिउ णियमें अप्पु मुणेइ ॥३०॥ ६०
जोइय अप्पें जाणिएण जगु जाणियउ हवेइ
अप्पहं केरइ भावडइ बिंबिउ जेण वसेइ ॥ ३१ ॥
अप्पु पयासइ अप्पु परु जिम अंबरि रवि-राउ
जोइय एत्थु म भंति करि एहउ वत्थु-सहाउ ॥ ३२ ॥

---

आत्मानं मुक्त्वा ज्ञानमयं अन्यः परकीयः भावः
तं त्यक्त्वा जीव त्वं भावय आत्मस्वभावम् ॥ २६ ॥
आत्मनाऽऽत्मानं जानन् जीवः सम्यग्दृष्टिर्भवति
सम्यग्दृष्टिकः जीवः लघु कर्मणा मुच्यते ॥ २७ ॥
जननी जनकः अपि कांता गृहं पुत्रोऽपि मित्रमपि द्रव्यं
मायाजालमपि आत्मनः मूढो मन्यते सर्वं ॥ २८ ॥
दुःखस्य कारणे ये विषयाः तान् सुखहेतून् रमते
मिथ्यादृष्टिः जीवः अत्र न किं करोति ॥ २९ ॥
कालं लब्ध्वा योगिन् यथा यथा मोहो गलति
तथा तथा दर्शनं लभते जीवः नियमेन आत्मानं मनुते ॥३०॥
योगिन् आत्मना ज्ञातेन जगत् ज्ञातं भवति
आत्मनः संबंधिनि भावे बिंबितं येन वसति ॥ ३१ ॥
आत्मा प्रकाशयत्यात्मानं परं यथा अम्बरे रविराजः
योगिन् अत्र मा भ्रांतिं कुरु एतादृशः वस्तुस्वभावः ॥ ३२ ॥

तारा-यणु जलि बिंबियउ णिम्मलि दीसइ जेम ९५
अप्पए णिम्मलि बिंबियउ लोयालोउ वि तेम ॥ ३३ ॥
अप्पा णाणु मुणेहि तुहुं जो जाणइ अप्पाणु
जीव-पएसहिं तित्तिडउ णाणें गयण-पवाणु ॥ ३४ ॥
जइ णिविसद्धु वि कु वि करइ परमप्पइ अणुराउ
अग्गि-कणी जिव कट्ठ-गिरि डहइ असेसु वि पाउ ॥३५॥ ७०
मिल्लिवि सयल अवक्खडी जिय णिच्चिंतउ होइ
चित्तु णिवेसहि परम-पइ देउ णिरंजणु जोइ ॥ ३६ ॥
जं सिव-दंसणि परम-सुहु पावहि झाणु करंतु
तं सुहु भुवणि वि अत्थि ण वि मेल्लिवि देउ अणंतु ॥ ३७ ॥
जोइय णिय-मणि णिम्मलए पर दीसइ सिउ संतु ७५
अंबरि णिम्मलि घण-रहिए भाणु जि जेम फुरंतु ॥३८॥
रायं रंगिए हियवडए देउ ण दीसइ संतु
दप्पणि मइलइ बिंबु जिम एहउ जाणि णिभंतु ॥ ३९ ॥

---

तारागणः जले बिंबितः निर्मले दृश्यते यथा
आत्मनि निर्मले बिंबितं लोकालोकमपि तथा ॥ ३३ ॥
आत्मानं ज्ञानं मन्यस्व त्वं यः जानाति आत्मानं
जीवप्रदेशैः तावन्मात्रं ज्ञानेन गगनप्रमाणम् ॥ ३४ ॥
यदि निमेषार्धमपि कोऽपि करोति परमात्मनि अनुरागं
अग्निकणिका यथा काष्ठगिरिं दहति अशेषमपि पापम् ॥३५॥
मुक्त्वा सकलां चिन्तां जीव निश्चिन्तो भूत्वा
चित्तं निवेशय परमपदे देवं निरञ्जनं पश्य ॥ ३६ ॥
यच्छिवदर्शने परमसुखं प्राप्नोषि ध्यानं कुर्वन्
तत्सुखं भुवनेऽप्यस्ति नैव मुक्त्वा देवमनन्तम् ॥ ३७ ॥
योगिन् निजमनसि निर्मले परः दृश्यते शिवः शान्तः
अंबरे निर्मले घनरहिते भानुरेव यथा स्फुरन् ॥ ३८ ॥
रागेन रञ्जिते हृदये देवो न दृश्यते शान्तः
दर्पणे मलिने बिंबं यथा एवं जानीहि निर्भ्रान्तं ॥ ३९ ॥

जसु हिरणच्छि हियवडए तसु णवि बंभु वियारि
एक्कहिं केम समंति वढ बे खंडा पडियारि ॥ ४० ॥ ८०
णिय-मणि णिम्मलि णाणियहं णिवसइ देउ अणाइ
हंसा सर-वरि लीणु जिम महु एहउ पडिहाइ ॥ ४१ ॥
देउ ण देउलि ण वि सिलए ण वि लिप्पइ ण वि चित्ति
अ-खउ णिरंजणु णाणमउ सिउ संठिउ सम-चित्ति ॥४२॥
मणु मिलियउ परमेसरहं परमेसरु वि मणस्स ८५
बीहि वि सम-रसिहूवाहं पुज्ज चडावउं कस्स ॥ ४३ ॥
जेण णिरंजणि मणु धरिउ विसय-कसायहिं जंतु
मोक्खहं कारणु एत्तडउ अण्णु ण तंतु ण मंतु ॥ ४४ ॥
उत्तमु सुक्खु ण देइ जइ उत्तमु मुक्खु ण होइ
तो किं इच्छहिं बंधणहिं बद्धा पसुय वि सो इ ॥ ४५ ॥ ९०
अणु जइ जगह जि अहिय-यरु गुण-गणु तासु ण होइ
तो तइ-लोउ वि किं धरइ णिय-सिर उप्परि सो इ ॥ ४६ ॥

---

यस्य हरिणाक्षी हृदये तस्य नापि ब्रह्म विचारय
एकस्मिन् कथं सम्मातः मूढ द्वौ खड्गौ प्रत्याकारे ॥ ४० ॥
निजमनसि निर्मले ज्ञानिनां निवसति देवः अनादिः
हंसः सरोवरे लीनः यथा मम ईदृशं प्रतिभाति ॥ ४१ ॥
देवो न देवकुले नापि शिलायां नापि लेप्ये नापि चित्र
अक्षयः निरञ्जनः ज्ञानमयः शिवः संस्थितः समचित्ते ॥४२ ॥
मनः मिलितं परमेश्वरस्य परमेश्वरः अपि मनसः
द्वयोरपि समरसीभूतयोः पूजां समारोपयामि कस्य ॥४३॥
येन निरञ्जने मनः धृतं विषयकषायेषु गच्छत्
मोक्षस्य कारणं एतावद् अन्यः न तन्त्रः न मन्त्रः ॥४४॥
उत्तमं सुखं न ददाति यदि उत्तमो मोक्षो न भवति
ततः किमिच्छन्ति बन्धनैः बद्धाः पशवः अपि तमेव ॥४५॥
पुनः यदि जगतोऽपि अधिकतरः गुणगणः तस्य न भवति
ततः त्रिलोक्यपि किं धरति निजशिरसः उपरि तमेव ॥४६॥

हरि-हर-बभु वि जिण-वर वि मुणि-वर-विंद वि भव्व
परम-णिरंजणि मणु धरिवि मुक्खु जि झायहि सव्व ॥४७॥
जीवहं सो पर मुक्खु मुणि जो परम-प्पय-लाहु ९५
कम्म-कलंक-विमुक्काहं णाणिय बोल्लहिं साहु ॥ ४८ ॥
जेण कसाय हवंति मणि सो जिय मिल्लहि मोहु
मोह-कसाय-विवज्जिउ पर पावहिं सम-बोहु ॥ ४९ ॥
तत्तातत्तु मुणेवि मणि जे थक्का सम-भावि
ते पर सुहिया इत्थु जगि जिहं रइ अप्प-सहावि ॥ ५० ॥
बिण्णि वि दोस हवंति तसु जो सम-भाउ करेइ
बंधु जि णिद्दणइ अप्पणउ अणु जगु गहिलु करेइ ॥५१॥
जा णिसि सयलहं देहियहं जोग्गिउ तहिं जग्गेइ
जहिं पुणु जग्गइ सयलु जगु सा णिसि मुणिवि सुवेइ ॥५२॥
मं पुणु पुण्णइं भल्लाइं णाणिय ताइं भणंति
जीवहं रज्जइं देवि लहु दुक्खइं जाइं जणंति ॥ ५३ ॥

---

हरिहरब्रह्माणोऽपि जिनवरा अपि मुनिवरवृन्दान्यपि भव्याः
परमनिरञ्जने मनो धृत्वा मोक्षमेव ध्यायन्ति सर्वे ॥४७॥
जीवानां तं परं मोक्षं मन्यस्व यः परमात्मलाभः
कर्मकलंकविमुक्तान् ज्ञानिनः ब्रुवन्ति साधवः ॥ ४८ ॥
येन कषायाः भवन्ति मनसि तं जीव मुञ्च मोहम्
मोहकषायविवर्जितः परं प्राप्नोषि समबोधः ॥ ४९ ॥
तत्त्वातत्त्वं मत्वा मनसि ये स्थिताः समभावे
ते परं सुखिताः अत्र जगति येषां रतिः आत्मस्वभावे ॥५०॥
द्वौ अपि दोषौ भवतः तस्य यः समभावं करोति
बन्धमेव निहन्ति आत्मीयं पुनः जगत् ग्रथिलं करोति ॥५१॥
या निशा सकलानां देहिनां योगी तस्यां जागर्ति
यस्मिन् पुनः जागर्ति सकलं जगत् तां निशां मत्वा स्वपिति॥५२॥
मा पुनः पुण्यानि भद्राणि ज्ञानिनः तानि भणंति
जीवस्य राज्यानि दत्वा लघु दुःखानि यानि जनयंति ॥५३॥

सिद्धिहिं केरा पंथडा भाउ विसुद्धउ एक्कु
जो तसु भावहि मुणि चलइ सो किम होइ विमुक्कु ॥ ५४ ॥
देउ णिरंजणु इउं भणइ णाणिं मुक्खु ण भंति
णाण-विहीणा जीवडा चिरु संसारु भमंति ॥ ५५ ॥
णाण-विहीणहं मोक्ख-पउ जीव म कासु वि जोइ
बहुपं सलिलि विरोलियइं करु चोप्पडउ ण होइ ॥ ५६ ॥
तं णिय-णाणु जि होइ ण वि जेण पवड्ढइ राउ
दिण-यर-किरणहं पुरउ जिय किं विलसइ तम-राउ ॥५७॥
अप्पा मिल्लिवि णाण-मउ चित्ति ण लग्गइ अण्णु
रयणउ जें परियाणियउ तहुं कञ्चें कउ गण्णु ॥ ५८ ॥
णिहिं मूढहं मुणि-वरहं अंतरु होइ महंतु
जु मिल्लइ णाणियउं जीवहं भिण्णु मुणंतु ॥ ५९ ॥
रुच्छइ मूढु पर भुवणु वि एहु अ-सेसु
-धम्म-मिसेण जिय दोहि मि एहु विसेसु ॥ ६० ॥

---

सिद्धेः संबंधी पन्थाः भावः विशुद्धः एकः
यः तस्माद् भावान्मुनिश्चलति स कथं भवति विमुक्तः ॥५४॥
देवः निरञ्जनः एवं भणति ज्ञानेन मोक्षो न भ्रान्तिः
ज्ञानविहीनाः जीवाः चिरं संसारं भ्रमन्ति ॥ ५५ ॥
ज्ञानविहीनस्य मोक्षपदं जीव मा कस्यापि पश्य
बहुना सलिलविलोडितेन करः चिक्कणो न भवति ॥ ५६ ॥
तन्निजज्ञानमेव भवति नापि येन प्रवर्धते रागः
दिनकरकिरणानां पुरतः जीव किं विलसति तमोरागः ॥५७॥
आत्मानं मुक्त्वा ज्ञानमयं चित्ते न लगति अन्यत्
मरकतः येन परिज्ञातः तस्य काचेन किं गण्यं ॥ ५९ ॥
ज्ञानिनां मूढानां मुनिवराणां अंतरं भवति महत्
देहमपि मुञ्चति ज्ञानी जीवाद्भिन्नं मन्यमानः ॥ ५९ ॥
लातुमिच्छति मूढः परं भुवनमप्येतदशेषं
बहुविधधर्ममिषेण जीव द्वयोः अपि एषः विशेषः ॥ ६० ॥

भल्लाहं वि णासंति गुण जह संसग्गु खलेहिं
वइसाणरु लोहहं मिलिउ तें पिट्टियइ घणेहिं ॥ ६१ ॥
तलि अहिरणि वरि घण-वडणु संडस्सय लुचोट्ठ
लोहहं लग्गिवि हुय-वहहं पिक्खु पडंतउ तोट्ठ ॥ ६२ ॥
जोइय णेहु परिच्चयहि णेहु ण भल्लउ होइ १२५
णेहासत्तउ सयलु जगु दुक्खु सहंतउ जोइ ॥ ६३ ॥
धधइ पडियउ सयलु जगु कम्मइं करइ अ-याणु
मोक्खहं कारणु एक्कु खणु ण वि चिंतइ अप्पाणु ॥ ६४ ॥
जीव वधंतहं णरय-गइ अ-भय-पदाणें सग्गु
बे पह जवला दरिसिया जहिं भावइ तहिं लग्गु ॥ ६५ ॥ १३०
जे दिट्ठा सूरुग्गमणि ते अत्थवणि ण दिट्ठ
तें कारणि वढ धम्मु करि धणि जोव्वणि कउ तिट्ठ ॥ ६६ ॥
विसय-सुहइं बे दिवहडा पुणु दुक्खह परिवाडि
भुल्लउ जीव म वाहि तुहुं अप्पण खंधि कुहाडि ॥ ६७ ॥

---

भद्राणामपि नश्यंति गुणाः येषां संसर्गः खलैः
वैश्वानरो लोहेन मिलितः तेन अभिहन्यते मुद्गरैः ॥ ६१ ॥
तले अधिकरणी उपरि घनपतनं संदंशकर्षणं
लोहं लगित्वा हुतवहाय प्रेक्षस्व पतन्तं त्रोटनम् ॥ ६२ ॥
योगिन् स्नेहं परित्यज स्नेहो न भद्रो भवति
स्नेहासक्तं सकलं जगत् दुःखं सहमानं पश्य ॥ ६३ ॥
प्रवृत्तौ पतितं जगत् कर्माणि करोति अज्ञानं
मोक्षस्य कारणं एकं क्षणं नैव चिन्तयति आत्मानम् ॥६४॥
जीवं घ्नतां नरकगतिः अभयप्रदानेन स्वर्गः
द्वौ पन्थानौ समीपस्थौ दर्शितौ यत्र रोचते तत्र लग ॥ ६५ ॥
ये दृष्टाः सूर्योद्गमने ते अस्तमने न दृष्टाः
तेन कारणेन मूर्ख धर्मं कुरु धने यौवने का स्थितिः ॥ ६६ ॥
विषयसुखानि द्वौ दिवसौ पुनः दुःखानां परिपाटी
भ्रांतः जीव मा वाहय त्वं आत्मनः स्कंधे कुठारम् ॥ ६७ ॥

संता विसय जु परिहरइ बलि किज्जउं हउं तासु १३५
सो दइवेण जि मुंडियउ सीसु खडिल्लउ जासु ॥ ६८ ॥
पंचहं णायकु वसि करहु जेण होंति वसि अण्ण
मूल विणट्ठइं तरु-वरहं अवसइं सुक्कहिं पण्ण ॥ ६९ ॥
कालु अणाइ अणाइ जिउ भव-सायरु वि अणंतु
जीविं बिण्णि ण पत्ताइं जिणु सामिउ सम्मत्तु ॥ ७० ॥ १४०
बलि किउ माणुस-जम्मडा देक्खंतहं पर सारु
जइ उट्टब्भइ तो कुढइ अह डज्झइ तो छारु ॥ ७१ ॥
उव्वलि चोप्पडि चिट्ठ करि देहि सु-मिट्ठाहार
देहहं सयल णिरत्थ गय जिमु दु-ज्जणि उवयार ॥ ७२ ॥
विसय-कसायहिं मण-सलिलु ण वि डहुलिज्जइ जासु
अप्पा णि-म्मलु होइ लहु वढ पच्चक्खु वि तासु ॥ ७३ ॥
णास-विणिग्गउ सासडा अंबरि जेत्थु विलाइ
तुट्टइ मोहु तडत्ति तहिं मणु अत्थवणहं जाइ ॥ ७४ ॥ १४८

---

सतः विषयान् यः परिहरति बलिं कुर्यां अहं तस्य
सः दैवेन एव मुण्डितः शीर्षं खल्वाटं यस्य ॥ ६८ ॥
पंचानां नायकं वशं कुरुत येन भवंति वशं अन्यानि
मूले विनष्टे तरुवरस्य अवश्यं शुष्यन्ति पर्णानि ॥ ६९ ॥
कालः अनादिः अनादिः जीवः भवसागरः अपि अनन्तः ।
जीवेन द्वे न प्राप्ते जिनः स्वामी सम्यक्त्वम् ॥ ७० ॥
बलिः कृतः मनुष्यजन्म पश्यतां परं सारं
यदि अवष्टभ्यते ततः कुध्यते अथ दह्यते ततः क्षारः ॥ ७१ ॥
उद्वर्तय म्रक्षय चेष्टां कुरु देहि सुमिष्टाहारं
देहस्य सकलं निरर्थं गतं यथा दुर्जने उपकारः ॥ ७२ ॥
विषयकषायैः मनःसलिलं नैव क्षुभ्यते यस्य
आत्मा निर्मलो भवति लघु बाल प्रत्यक्षोऽपि तस्य ॥ ७३ ॥
नासाविनिर्गतः उच्छ्वासः अंबरे यत्र विलीयते
त्रुट्यति मोहः झटिति तत्र मनः अस्तमनं याति ॥ ७४ ॥

# ॥ अष्टममुद्धरणम् ॥

[ जोइन्दु । ]

## ॥ दोहा–पाहुड ॥

गुरु दिण·यरु गुरु हिम·किरणु गुरु दीवउ गुरु देउ
अप्पहं परहं परंपरहं जो दरिसावइ भेउ ॥ १ ॥

आभुंजंता विसय-सुहु जे ण वि हियइ धरंति
ते सासय-सुहु लहु लहहिं जिण·वर एम भणंति ॥ २ ॥

ण वि भुंजंता विसय-सुह हियडइ भाउ धरंति
सालिसित्थु जिम बप्पुडउ णर णरयहं णिवडंति ॥ ३ ॥

वरु विसु विस·हरु वरु जलणु वरु सेविउ वण-वासु
णउ जिण·धम्म-परम्मुहउ मिच्छत्तिय-सह·वासु ॥ ४ ॥

जसु मणि णाणु ण विप्फुरइ कम्महं हेउ करंतु
सो मुणि पावइ सुक्खु ण वि सयलइ सत्थ मुणंतु ॥ ५ ॥ १०

अप्पा केवल·णाणमउ हियडइ णिवसइ जासु
ति·हुयणि अत्थइ मोक्कलउ पाउ ण लग्गइ तासु ॥ ६ ॥

---

[ योगीन्द्रः । ]

## ॥ दोहाप्राभृतम् ॥

गुरुः दिनकरः गुरुः हिमकिरणः गुरुः दीपकः गुरुः देवः
आत्मनः परस्य परंपरायाः यः दर्शयति भेदम् ॥ १ ॥

आभुञ्जानाः विषयसुखं ये नापि हृदये धरन्ति
ते शाश्वतसुखं लघु लभन्ते जिनवराः एवं भणन्ति ॥२॥

नापि भुञ्जानाः विषयसुखं हृदये भावं धरन्ति
शालिसिक्थः इव वराकः नराः नरकेषु निपतन्ति ॥ ३ ॥

वरं विषं विषधरः वरं ज्वलनः वरं सेवितः वनवासः
न तु जिनधर्मपराङ्मुखः मिथ्यात्विसहवासः ॥ ४ ॥

यस्य मनसि ज्ञानं न विस्फुरति कर्मणां हेतुं कुर्वन्
सः मुनिः प्राप्नोति सौख्यं नापि सकलानि शास्त्राणि वदन्ति॥५॥

आत्मा केवलज्ञानमयः हृदये निवसति यस्य
त्रिभुवने अस्ति मुक्तः पापं न लगति तस्य ॥ ६ ॥

अप्पा दंसण-णाणमउ सयलु वि अण्णु पयालु
इम जाणेविणु जोइयहो छंडहु माया-जालु ॥ ७ ॥
बहुयइं पढियइं मूढ पर तालु सुक्कइ जेण १५
एक्कु जि अक्खरु तं पढहु सिव-पुरि गम्मइ जेण ॥ ८ ॥
तोडिवि सयल वियप्पडा अप्पहं मणु वि धरेहि
सोक्खु णिरंतरु तहिं लहहिं लहु संसारु तरेहि ॥ ९ ॥
तित्थहिं तित्थ भमेहि वढ धोयउ चम्मु जलेण
एहु मणु किमु धोएसि तुहुं मइलउ पाव-मलेण ॥ १० ॥ २०
अप्पा-परहं ण मेलयउ आवागमणु ण भग्गु
तुस कंडंतहं कालु गउ तंदुलु हत्थि ण लग्गु ॥ ११ ॥
इंदिय-विसय चएवि वढ करि मोहहं परिचाउ
अणु-दिणु झायहि परम-पउ तो एहउ ववसाउ ॥ १२ ॥
वाद-विवादा जे करहिं जाहिं ण फिट्टिय भंति
जे अत्ता गउपावियइ ते गुप्पंत भवंति ॥ १३ ॥ २६

---

आत्मा दर्शनज्ञानमयः सकलमप्यन्यत् प्रजालं
इति ज्ञात्वा योगिन् त्यज मायाजालं ॥ ७ ॥
बहुना पठितेन मूढ परं तालु शुष्यति येन
एकमेवाक्षरं तत् पठ शिवपुरी गम्यते येन ॥ ८ ॥
त्रोटयित्वा सकलान् विकल्पान् आत्मनि मनः अपि धरेः
सौख्यं निरंतरं तत्र लभेथाः लघु संसारं तरेः ॥ ९ ॥
तीर्थेभ्यः तीर्थानि भ्राम्येः मूर्ख धौतं चर्म जलेन
एतद् मनः कथं भावसि त्वं मलिनं पापमलेन ॥ १० ॥
आत्मपरयोर्न मेलकः गमनागमनं न भग्नं
तुषं कंडयतः कालः गतः तण्डुलः हस्ते न लग्नः ॥ ११ ॥
इन्द्रियविषयान् त्यक्त्वा मूर्ख कुरु मोहस्य परित्यागं
अनुदिनं ध्याय परमपदं ततः एषः व्यवसायः ॥ १२ ॥
वादविवादान् ये कुर्वन्ति येषां न स्फेटिता भ्रान्तिः ।
ये आत्मानं खलु गोपायन्ति ते गुप्यमानाः भवन्ति ॥ १३ ॥

# ॥ नवममुच्चरणम् ॥

[ जोइन्दु । ]

## ॥ सावयायार ॥

अरहंतु वि दोसहिं रहिउ जासु वि केवल-णाणु
णाण-मुणिय-काल-त्तयहु वयणु वि तस्स पमाणु ॥ १ ॥
तं पायडु जिण-वर-वयणु गुरु-उवएसें होइ
अंधारइ विणु दीवइण अह-व किं पिच्छइ को-इ ॥ २ ॥
संजमु सीलु सउच्च तउ जसु सूरिहिं गुरु सो-इ
दाह-छेय-कस-घाय-खमु उत्तमु कंचणु होइ ॥ ३ ॥
मग्गइ गुरु-उवएसियइं णर सिव-पट्टणि जंति
तिं विणु वग्घह वण-यरहं चोरहं पिडि विपडंति ॥ ४ ॥
मज्जु मंसु महु परिहरहि करि पंचुंबर दूरि
आयहं अंतरि अट्ठहं मि तस उप्पज्जइ भूरि ॥ ५ ॥

---

[ योगीन्द्रः । ]

## ॥ श्रावकाचारः ॥

अर्हन् अपि दोषैः रहितः यस्य पुनः केवलज्ञानं
ज्ञानज्ञातकालत्रयस्य वचनमपि तस्य प्रमाणम् ॥ १ ॥
तत्प्रकटं जिनवरवचनं गुरूपदेशेन भवति ।
अन्धकारे विना दीपकेन अथवा किं प्रेक्षते कोऽपि ॥ २ ॥
संयमः शीलं शौचं तपः यस्य सूरेः गुरुः सोऽपि
दाहछेदकषघातक्षमं उत्तमं काञ्चनं भवति ॥ ३ ॥
मार्गेण गुरूपदिष्टेन नराः शिवपट्टनं गच्छन्ति
तेन विना व्याघ्राणां वनचराणां चौराणां पिण्डे विपतन्ति ॥ ४ ॥
मद्यं मांसं मधु परिहर कुरु पञ्चोदुम्बरं दूरे
एतेषाम् अन्तरे अष्टानाम् त्रसाः उत्पद्यन्ते भूरि ॥ ५ ॥

मधु आस्वायउ थोडउ वि णासइ पुण्णु बहुत्तु
वइसाणरहं तिडिक्कउ वि काणणु डहइ महंतु ॥ ६ ॥
वसणइं तावइं छंडु जिया परिहर वसणासत्ति
सुक्कहं संसग्गें हरिया पेक्खह तरु डज्झंति ॥ ७ ॥
भोगहं करहि पमाणु जिय इंदिय म करि स-दप्प
हुंति ण भल्ला पोसिया दुद्धें काला सप्प ॥ ८ ॥
सण्णासेण मरंतयहं लब्भइ इच्छिय-लद्धि
इत्थु ण कायउ भंति करि जहिं साहसु तहिं सिद्धि ॥ ९ ॥
पत्तहं जिण-उवएसियहं तिहि मि देइ जु दाणु
कल्लाणाइं पंचइं लहिवि भुञ्जइ सोक्ख-णिहाणु ॥ १० ॥
दंसण-रहिय-कु-पत्ति जइ दिण्णउ ताहं कु-भोउ
खार-घडइं अह णिवडियउ णीरु वि खारउ होइ ॥ ११ ॥
काइं बहुत्तइं संपयइं जा किवणहं घरि होइ
सायर-णीरु खारिं भरिउ पाणिउ पियइ ण को-इ ॥ १२ ॥

---

मधु आस्वादितं स्तोकमपि नाशयति पुण्यं प्रभूतं
वैश्वानरस्य स्फुलिंगोऽपि काननं दहति महत् ॥ ६ ॥
व्यसनानि तावत् त्यज जीव परिहर व्यसनासक्तिं
शुष्कानां संसर्गेण हरिताः प्रेक्षस्व तरवः दह्यन्ते ॥ ७ ॥
भोगानां कुरु प्रमाणं जीव इन्द्रियाणि मा कुरु सदर्पाणि
भवन्ति न भद्राः पोषिताः दुग्धेन कृष्णाः सर्पाः ॥ ८ ॥
संन्यासेन म्रियमाणैः लभ्यते इप्सितलब्धिः
अत्र न कामपि भ्रांतिं कुरु यत्र साहसः तत्र सिद्धिः ॥ ९ ॥
पात्रेभ्यः जिनोपदिष्टेभ्यः त्रिभ्यः अपि यच्छति यः दानम्
कल्याणानि पञ्च लब्ध्वा भुंक्ते सौख्यनिधानम् ॥ १० ॥
दर्शनरहितकुपात्राय यदि दत्तानि तेभ्यः कुभोगः
क्षारघटके अथ निपतितं नीरमपि क्षारं भवति ॥ ११ ॥
किं बहुना संपदा या कृपणानां गृहे भवति
सागरनीरं क्षारेण भृतं पानीयं पिबति न कोऽपि ॥१२॥

पत्तहं दिण्णउं थोअडउ रे जिय होइ बहुत्तु २५
वडहं बीउ धरणिहिं पडिउ वित्थरु लेइ महंतु ॥ १३ ॥
जं जिय दिज्जइ इत्थ भवि तं लब्भइ पर-लोइ
मूलें सिंचइ तरु-वरहं फलु डालहं पुणि होइ ॥ १४ ॥
धम्में जाणहिं जंति णरा पावें जाण वहंति
घर-यर गेहुवरि चडहिं कूव-खणय तलि जंति ॥ १५ ॥ ३०
सत्थ-सएण वियाणियइं धम्मु ण चरइ मुणेवि
दिण-यर-सउ जइ उग्गमइ घूहडु अंधउ तो वि ॥ १६ ॥
रूवहु उप्परि मइ म करि णयण णिवारहि जंत
रूवासत्त पयंगडा पेक्खहिं दीवि पडंत ॥ १७ ॥
मउयत्तणु जिय मणि धरहि माणु पणासइ जेण ३५
अहवा तिमिरु ण ठाहरइ सूरहु गयणि ठिएण ॥ १८ ॥
मणुयहं विणय-विवज्जियहं गुण सयल वि णासंति
अह सर-वरि विणु पाणियइं कमलइं केम रहंति ॥ १९ ॥

---

पात्रेभ्यो दत्तं स्तोकं रे जोव भवति प्रभूतम्
वटस्य बीजं धरणौ पतितं विस्तारं लाति महान्तम् ॥१३॥
यद् जीव दीयते अस्मिन् भवे तद् लभ्यते परलोके
मूलेन सिंचति तरुवरान् फलं शाखाभ्यः पुनः भवति ॥१४॥
धर्मेण यानैः यान्ति नराः पापेन यानं वहन्ति
गृहकराः गृहोपरि आरोहन्ति कूपखनकाः तले यान्ति ॥ १५ ॥
शास्त्रशतेन विज्ञातेन धर्मं न चरति चिन्तयित्वा
दिनकरशतं यदि उद्गच्छति घूकः अंधः ततः अपि ॥ १६ ॥
रूपस्य उपरि मतिं मा कुरु नयने निवारय गच्छन्ती
रूपासक्तान् पतंगान् प्रेक्षस्व दीपके पततः ॥ १७ ॥
मृदुत्वं जीव मनसि धर मानं प्रणाश्यते येन
अथवा तिमिरं न तिष्ठति सूर्यस्य गगने स्थितेन ॥ १८ ॥
मनुष्याणां विनयविवर्जितानां गुणाः सकलाः अपि नश्यन्ति
अथ सरोवरे विना पानीयेन कमलानि कथं वसन्ति ॥ १९ ॥

गुणवंतहं सह संगु करि भद्दिम पावहि जेम
सु-घण-सु-पत्त-विवज्जियउ वरु तरु वुच्चइ केम ॥ २० ॥ ४०
गंधोएण जि जिण-वरहं ण्हाविय पुण्णु बहुत्तु
तेलह बिंदु वि विमल-जलि को वारइ पसरंतु ॥ २१ ॥
पुण्णु पाउ जसु मणि ण समु तसु दुत्तर भव-सिंधु
कणय-लोह-णियलइं जियहं किं ण कुणहिं पय-बंधु ॥२२॥
जाहं हियइ असिआउसा पाउ ण दुक्कइ ताहं
अह दावाणलु किं करइ पाणिय गहिर ठियाहं ॥ २३ ॥
दुल्लहु लहिवि मणुयत्तणउ भोयहं पेरिउ जेण
इंधण-कज्जें कप्प-यरू मूलहो खंडिउ तेण ॥ २४ ॥ ४८

---

गुणवद्भ्यः सह संगं कुरु भद्रत्वं प्राप्नोषि यथा
सुवनसुपत्रविवर्जितः वरः तरुः उच्यते कथम् ॥ २० ॥
गन्धोदकेन एव जिनवराणां स्नापितानां पुण्यं प्रभूतम्
तैलस्य बिन्दुमपि विमलजले को वारयति प्रसरन्तम् ॥ २१ ॥
पुण्यं पापं यस्य मनसि न समे तस्य दुस्तरः भवसिन्धुः
कनकलोहनिगडानि जीवानां किं न कुर्वन्ति पदबन्धम् ॥ २२ ॥
येषां हृदये ' असिआउसा ' पापं नाभिगच्छति तेभ्यः
अथ दावानलः किं करोति पानीये गभीरे स्थितेभ्यः ॥ २३ ॥
दुर्लभं लब्ध्वा मनुजत्वं भोगेभ्यः प्रेरितं येन
इन्धनकार्ये कल्पतरुः मूलात् खण्डितः तेन ॥ २४ ॥

# ॥ दशममुद्धरणम् ॥

[ उज्जोयणसूरि । ]

॥ सुजण–दुज्जण–सहाव–विवेयणु ॥

अत्थि चउ-सागरुज्जल-मेहला—

अहह ! पम्हुट्ठं किंचि, पसियह, तं ता णिसामेह।

किं च तं ?

हूं ! —

सम्मुह-मइ-सुंदरो चिय पच्छा-भायम्मि मंगुलो होइ। ५
विंझ-गिरि-वारणस्स व खलस्स बीहेइ कइ-लोओ ॥

तेण बीहमाणेहिं तस्स थुइ-वाओ किं चि कीरइ त्ति।

सो च दुज्जणु कइसउ ? — हूं, सुणउ जइसउ, पढम-दंसणे च्चिय भसण-सीलो पट्ठि-मांसासउ व्व। तहे मंडलो हि अ-पच्चभिण्णायं भसइ, मयहिं च मासाइं असइ। खलो १०

---

[ उद्द्योतनसूरिः । ]

॥ सुजनदुर्जनस्वभावविवेचनम् ॥

अस्ति चतुःसागरोज्ज्वलमेखला—

अहह विस्मृतं किंचित्, प्रसीदत, तत्तावन्निशाम्यत। किं च तद् ?

हूं ! —

सम्मुखमतिसुंदरः चैव पश्चाद्भागे असुंदरः भवति
विंध्यगिरिवारणाद् इव खलाद् बिभेति कविलोकः ॥

तेन बिभ्यद्भिः तस्य स्तुतिवादः किंचित् क्रियत इति

सः दुर्जनः कीदृशः ? — हूं, श्रणोतु यादृशः प्रथमदर्शने चैव भषणशीलः पृष्ठमांसाशकः इव। तयोः शुनकः हि अग्रत्यभिज्ञातं भषति, मृतानाम् च मांसानि अश्नाति। खलः

घइं मायहे वि भसइ, चडप्फडंतहं चम्मट्टि-मासाइं असइ त्ति । होउ काएण सरिसु, णिच्च-करयरण-सीलो छिड्डु-पहारि व्व । तहे वायसो हि करयरेंतो पउत्थ-वइयाणं होइ हिययरो, छिड्डेहिं च आहारमेत्तं विलुंपइ । खलो घइं पउत्थ-वइयाकुल-बालियाणं विज्झ-संपायणेहिं दुक्ख-जणउ, अ·च्छिड्डे वि जीविअं विलुंपइ । जाणिउ खरो जइसउ, सु·यण-रिद्धि-दंसणे झिज्झइ निलज्जो, महल्लेणं च सद्दें उल्लवइ । तहे रासहो हि ऽइमुत्तय रिद्धि-महल्लं असिउं न तीरइ त्ति चित्तए झिज्झइ, अ·विभाविज्जंत-अक्खरं च उल्लवइ । खलु घइं आयहो किर महल्ल-रिद्धि जायल्लिअ त्ति मच्छरेण झिज्झइ । पयड·दोस-खरालावं च उल्लवइ । अवि काल-सप्पु जइसउ, छिड्डु-मग्गण-वावडो कुडिल-गइ-मग्गो व्व । तहे भुयंगमो हि पर-कयाइं छिड्डाइं मग्गइ, सव्वहा पोट्टेण च कसइ । खलो घइं सइं जे कुणइ छिड्डाइ, थड्ढो व भमइ । चिंते,

---

खलु मातरम् अपि भषति क्लेशपीडितानां चर्मास्थिमांसानि अश्नाति इति । भवतु काकेन सदृशः, नित्यकलकलनशीलः छिद्रप्रहारी इव । तयोः वायसः हि कलकलायमानः प्रोषितपतिकानां भवति हितकरः छिद्रेषु च आहारमात्रं विलुम्पति। खलः खलु प्रोषितपतिकाकुलबालिकानां भेदसंपादनैः दुःखजनकः अछिद्रे अपि जीवितं विलुम्पति । ज्ञातः खरः यादृशः, सुजनऋद्धिदर्शने क्षीयते निर्लज्जः महता शब्देन च उल्लपति। तयोः रासभः हि अतिमुक्तकमृद्धिमहान्तं अशितुं न तीरयतीति चित्ते क्षीयते; अविभाव्यमानाक्षरं च उल्लपति । खलः खलु अस्य किल महर्द्धिः जाता इति मात्सर्येण क्षीयते, प्रकटदोषखरालापं च उल्लपति । अपि कालसर्पः यादृशः,छिद्रमार्गेण व्यापृतः कुटिलगतिमार्गः इव । तयोः भुजंगमो हि परकृतानि छिद्राणि मार्गयति, सर्वथा उदरेण च कर्षति । खलः खलु स्वयमेव करोति छिद्राणि, स्तब्धः इव भ्रमति ।

हूं ! - विसु जइसउ, पमुह-रसिउ जीअंत-करो व्व । तहेव २५
महुरउ मुहे महुरं, मंतेहि च कीरइ रसायणं । खलो घइं मुहे
ज्जे कडूयउ, मंतइं च घडियइं वि विसंघडइ । हूं, बुज्झइ-
वट्टइ खलु खलो ज्जि जइसउ, उज्जिय-सिणेहु पसु-भत्तो
य । तहे खलो वि वरउ पीलिज्जंतो विमुक्क-णेहो, अ-याणंतो
य पसूहिं खज्जइ । इअरु घइं एक्क-पए ज्जे मुक्क-णेहु, जाणइ ३०
जे पसु तह वि खज्जइ। किं च भण्णउ, सव्वहा खलु अ-
सुइ जइसउ, विसिट्ठ-जण-परिहरणिज्जो अ-परिप्फुड-सद्दा-
बद्ध-खुद्द-मंडली-गिणिगिणाविउ व । तहे सो वि वरउ, किं
कुणइ अण्णहो ज्जि कस्सइ विआरु । खलो घइं सइं ज्जि
बहु-विआर-भंगि-भरिअल्लउ त्ति । सव्वहा, ३५

मह पत्तियासु एवं फुडं भणंतस्स संसयं मोत्तुं ।
मा मा काहिसि मेत्तिं उग्ग-भुअंगेण व खलेण ॥

---

चिन्तये, हूं ! विषं यादृशं; प्रमुखरसिकः जीवांतकरः इव । तयोश्च विषं मुखे मधुरं मंत्रैश्च क्रियते रसायनम् । खलः खलु मुखे एव कटुकः मंत्रान् च घटितान् अपि विसंघटति । हूं, बुध्यते वर्तते खलः खलः एव यादृशः, उज्झितस्नेहः पशुभक्तः च । तयोः खलः अपि वरः पीड्यमानः विमुक्तस्नेहः अजानन् च पशुभिः खाद्यते । इतरः खलु एकपदे एव मुक्तस्नेहः, जानात्येव पशुं तथापि खादति । किं च भण्यताम्, सर्वथा खलु अशुचिः यादृशः विशिष्टजनपरिहरणीयः अपरिस्फुटशब्दाबद्धक्षुद्रमंडलीशब्दायमानः इव । तयो सः अपि वरः, किं, करोति अन्यस्य एव कस्यापि विकारः । खलः खलु स्वयमेव बहुविकारभंगीभरितः इति । सर्वथा

मयि प्रतीहि एवं स्फुटं भणति संशयं मोक्तुं
मा मा करोषि मैत्रीं उग्रभुजंगेन इव खलेन ॥

जारज्जाअहो दुज्जणहो दुट्ठ-तुरंगमहो ज्जि
जेण ण पुरउ णउ मग्गउ हूं तीरइ गंतुं जि ॥
अकए वि कुणइ दोसे कए वि णासेइ जे गुणे पयडे ४०
विहि-परिणामस्स व दुज्जणस्स को वा न बीहेइ ॥

अहवा—

कीरउ कहापबंधो भसमाणे दुज्जणे अगणिऊण ।
किं सुणएहिं धरिज्जइ विसंखलो मत्त-करि-णाहो ॥
होन्ति सुअण च्चिय परं गुण-गण-गरुआण भाजणं लोए ४५
मोत्तूण णइ-णाहं कत्थ व णिवसंतु रयणाइं ॥
तेण सज्जण-सत्थो च्चेय एत्थ कहा-बंधे सोउमभिउत्तो ति ॥
सो य सज्जणो कइसओ ?-रायहंसो जइसओ, विसुद्धो-
भय-पक्खो पय-विसेस-ण्णुओ व्व । तहे रायहंसो वि—

---

जारजातस्य दुर्जनस्य दुष्टतुरंगमस्य एव
येन न पुरतः न तु पश्चात् भोः शक्यते गन्तुमेव ॥
अकृते अपि करोति दोषान् कृते अपि नाशयति यः
गुणान् प्रकटान्
विधिपरिणामात् इव दुर्जनात् को वा न बिभेति ॥

अथवा—

क्रियताम् कथाप्रबन्धः भषतः दुर्जनान् अगणयित्वा
किं शुनकः धार्यते विशृंखलः मत्तकरिनाथः ॥
भवन्ति सुजनाश्चैव परं गुरुगुणगणानां भाजनं लोके
मुक्त्वा नदीनाथं कुत्रैव निवसंतु रत्नानि ॥

तेन सज्जनसार्थः एव अत्र कथाबंधे श्रोतुमभियुक्तः इति ॥

स च सज्जनः कीदृशः ? — राजहंसः यादृशः विशुद्धोभयपक्षः
पद(पयः)विश्लेषज्ञः एव । तयोः राजहंसः अपि

उब्भड-जलयाडंबरहि पावइ माणस-दुक्खइं
सज्जणु पुणु जाणेइ ज्जि खल-जल-यहं सहावइं ॥[1]

तेण हसिउं अच्छइ। होउ पुण्णिमा-यंदु जइसउ, सयल-कला-भरियउ जण-मणाणंदो व्व । तहे पुण्णिमा-यंदो वि कलंक-दूसिओ, अहिसारियाण मण-दूमिओ य । सज्ज-णो पुण अ-कलंको सव्व-जण-दिहि-करो व्व। अवि मुणालु जइसउ, खंडिज्जंतो वि अ-खुडिय-णेह-तंतु सु-सीयलो व्व। तहे मुणालु वि ईसि कंडूल-सहाओ जल-संसग्गि वड्ढिओ व्व। सज्जणु पुणु महुर-सहावु वियड्ढ-वड्ढिय-रसो य। हूं! च, दिसा-गओ जइसओ, सहावुण्णओ अणवरय-पयट्ट-दाण-पसरो य । तहे दिसा-गओ वि मय-विआरेण घेप्पइ, दाण-समए य सामायंत-वयणो होइ । सज्जणु पुणि अ-जाय-मय

---

१ हाथप्रत उपरथी श्री. जिनविजय नीचे प्रमाणे वांचे छेः-उब्भड-जलयाडंबरसद्दहिं पावइं माणसं दुक्खं । सज्जणु पुणु जाणइ ज्जि खल-जलयहं सहावइं ॥ उपलीं पंक्ति आर्या अने बीजी अपभ्रंश छंद दोहानी छे; ते दोहा तरीके सुधारी उपर मूकी छे.

उद्भटजलदाडंबैरैः प्राप्नोति मानसदुःखानि
सज्जनः पुनः जानाति एव खलजलदानां स्वभावान् ॥

तेन हसित्वा आस्ते। भवतु पूर्णिमाचन्द्रः यादृशः, सकलकला-भृतः जनमनःआनन्दः इव । तयो पूर्णिमाचन्द्रः अपि कलंक-दूषितः अभिसारिकाणां दूनमनाः च । सज्जनः पुनः अकलंकः सर्व-जनधृतिकरः इव । अपि मृणालः यादृशः खण्ड्यमानः अपि अक्षुण्ण-स्नेहतन्तुः सुशीतलः इव । तयोः मृणालः अपि ईषत्कण्डूलस्वभावः जलसंसर्गेण वर्धितः इव । सज्जनः पुनः मधुरस्वभावः वैदग्ध्यवर्धि-तरसः च । हूं ! च-दिशागजः यादृशः स्वभावोन्नतः अनवरतप्र-वृत्तदानप्रसरः च । तयोः दिशागजः अपि मदविकारेण गृह्यते, दानसमये च श्यामायमानवदनः भवति । सज्जनः पुनः अजातमद

-पसरु देंतहो य विअसइ वयण-कमलु । होउ मुत्ताहारु जइसउ, सहाव-विमलो बहु-गुण-सारो य । तहे मुत्ता-हारो वि छिड्ड-सय-निरंतरो वण-वड्ढिओ य । सज्जणो पुण अ-च्छिड्ड-गुण-पसरो णायरओ य । किं बहुणा ?। समुहु ६५
जइसउ, गंभीर-सहावु महत्थो य । तहे समुद्दो वि उक्कलि-यासय-पउरो णिच्च-कलयलारावुव्वेविय-पास-जणो व दु-ग्गय कुडुंबहो जि अणुहरइ । सज्जणु पुणि मंथर-सहावो महु-महुर-वयण-परितोसिय-जणवओ त्ति ।

अवि य—

सरलो पियंवओ दक्खिण्णो चाई गुणण्णओ सुहओ ।
मह जीविएण वि चिरं सुअणु च्चिअ जियउ लोयम्मि ॥ ७१

---

प्रसरः, ददतः च विकसति वदनकमलम् । भवतु मुक्ताहारः यादृशः स्वभावविमलः बहु गुणसारः च । तयोः मुक्ताहारः अपि छिद्रशतनिरंतरः वनवर्धितः च । सज्जनः पुनः अछिद्रगुणप्रसरः नागरकः च । किं बहुना ? । समुद्रः यादृशः गंभीरस्वभावः महार्थः च । तयोः समुद्रः अपि उत्कलिकाशतप्रचुरः नित्यकलकलारावोद्वेजितपार्श्वजनः इव दुर्गतकुटुम्बकम् एव अनुहरति । सज्जनः पुनः मन्थरस्वभावः मधुमधुरवचनपरितोषितजानपदः इति

अपि च,

सरलः प्रियंवदः दक्षिणः त्यागी गुणज्ञः सुभगः
मम जीवितेन अपि चिरं सुजनः एव जीवतु लोके ॥

# ॥ एकादशमुद्धरणम् ॥

## [ कालियासु । ]

### ॥ पुरुरवस्स उम्माय-वयणाइं ॥

मइं जाणिअं मिअ-लोअणि णिसि-अरु को इ हरेइ
जाव ण णव-तडि सामलो धारा-हरु वरिसेइ ॥ १ ॥

जल-हर संहरु एहु कोपु आढत्तओ
पविरल-धारा-सार-दिसा-मुह-कन्तओ ।
एमइं पुहवि भमन्तो जइ पिअ पेक्खोहिमि
तव्वे जं जु करीहिसि तं तु सहीहिमि ॥ २ ॥
गन्धुम्माइअ-महु-अर-गीएहिं
वज्जन्तेहिं पर-हुअ-रव-तूरेहिं ।
पसरिय-पवणुव्वेल्लिर-पल्लव-(लय-)निअरु
सु-ललिअ-विविह-पआरं णच्चइ कप्प-अरु ॥३॥

१. (पं.) जाणिअ, (पी.) जाणिअं; (पं.) मिअलोअणि, (पी.) मिअलोअ।ण; — ( पं. रं. ) णु, (पी.) ण; (पं.) णवतलि ( पं.k. ) णवतडि, (पी.) णवतलिं; तृतीयानो अर्थ लाववा. २. (पं.) कोपइं (पं.k.)

## [ कालिदासः । ]

### ॥ पुरुरवसः उन्मादवचनानि ॥

मया ज्ञातं मृगलोचनां निशाचरः कोऽपि हरति
यावन्न नवतडित् श्यामलः धाराधरः वर्षति ॥ १ ॥

जलधर संहर एतं कोपं आरब्धं
प्रविरलधारासाराक्रान्तदिशामुखः
एवं पृथिव्यां भ्राम्यन् यदि प्रियां प्रेक्षिष्ये
तदा यद् यत् करिष्यसि तत् तत् सहिष्ये ॥२॥
गन्धोन्मादितमधुकरगीतैः
वाद्यमानैः परभृततूर्यैः
प्रसृतपवनोद्वेल्लनशीलपल्लवलतानिकरः
सुललितविविधप्रकारेण नृत्यति कल्पतरुः ॥३॥

बंहिण पइं इअ अब्भत्थेमि आअक्खहि मं ता
एत्थु रण्णे भमन्तें जइ पइं दिट्ठी सा महु कंता ।
णिसम्महि मिअंक-सरिसें वअणें हंस-गइ
एँ चिण्हें जाणिहिसि आअक्खिउ तुज्झु मइं ॥४॥

पर·हुअ महुर-पलाविणि कन्ति १५
नन्दण-वण स·च्छन्द भमन्ति ।
जइ पइं पिअअम सा महु दिट्ठी
ता आअक्खहि महु पर·पुट्ठि ॥ ५ ॥
रे रे हंसा किं गोविज्जइ
गइ-अणुसारें मइं लक्खिज्जइ ।
कइं पइं सिक्खिउ ए गइ-लालस
सा पइं दिट्ठी जहण-भरालस ॥ ६ ॥

---

**कोपलि,** (पं.k.) कोपं; (रं.) 'कोपं' ५म अर्थ करे छे; (पी.) को पइं वांचे छे–(प.) ए मइं (रं.) एने निपात लई मइं=अहम् एम नोंधे छे; **परंतु एमइ**=एवम् एम वांचवुं वधारे घटित छे. ३. [लय.]=लता 'चर्चरी' बरोबर बेसे एटला काजे उमेर्युं छे; बाकी (पं.) (पी.) नोंधता नथी.

६. (पं.) ए (पी.) एं.

बर्हिण त्वामित्यभ्यर्थये आचक्ष्व मां तावत्
अत्रारण्ये भ्रमता यदि त्वया दृष्टा सा मम कान्ता ।
निशामय मृगांकसदृशेन वदनेन हंसगतिः
एतेन चिह्नेन ज्ञास्यसि आख्यातं तुभ्यं मया ॥४॥

परभृते मधुरप्रलापिनि कान्ता
नन्दनवने स्वच्छन्दं भ्रमन्ती ।
यदि त्वया प्रियतमा सा मम दृष्टा
तदाचक्ष्व मह्यं परपुष्टे ॥ ५ ॥
रे रे हंस किं गोप्यते
गत्यनुसारेण मया लक्ष्यते ।
केन तुभ्यं शिक्षितं एतद् गतिलालस
सा त्वया दृष्टा जघनभरालसा ॥ ६ ॥

गोरोअण-वण्णा चक्का भणहि मइं
महु-वासर कीलन्ति घणिअ ण दिट्ठी पइं ॥ ७ ॥
एक्कक्कम-वड्ढिअ-गुरुअर-पेम्म-रसे २५
सरि हंस-जुवाणउ कीलइ काम-रसे ॥ ८ ॥
करिणी-विरह-संताविअउ
काणणे गंधुद्धअ-महु-अरु ॥ ९ ॥
हउं पइं पुच्छिमि अक्खहि गअ-वरु
ललिअ-पहारें णासिअ-तरु-वरु ।
दूर-विणिज्जिअ-सस-हर-कंती
दिट्ठी पिअ पइं सं-मुह जंती ॥ १० ॥ ३२

७. (पं.) भणहि मइं (पी) भण्णइ मइं

८. (पं.) एक्कक्कम जेने अनुसरी (रं.) एकक्कम; जो के (पं.) नी छाया एकंक; (पी.) एक्केक्कम.

९. (पं) संताविअओ–महुअरु। (पी.) संताविअओ–महुअरओ

१०. (ध्रुव) णामियतरुवरु सूचवे छे.

गोरोचनवर्ण चक्र भण माम्
मधुवासरे क्रीडन्ती प्रिया न दृष्टा त्वया ॥ ७ ॥
एकक्रमवर्धितगुरुतरप्रेमरसेन
सरसि हंसयुवा क्रीडति कामरसेन ॥ ८ ॥
करिणीविरहसंतापितः
कानने गन्धोद्धतमधुकरः ॥ ९ ॥
अहं त्वां पृच्छामि आख्याहि गजवर
ललितप्रहारेण नाशिततरुवर ।
दूरविनिर्जितशशधरकान्तिः
दृष्टा प्रिया त्वया संमुखं यान्ती ॥ १० ॥

पसरिअ-खर-खुर-दारिअ-मेइणि वण-गहणे अविचल्लु ।
परिसक्कइ पेच्छहु लीणो णिअ-कज्जुज्जअ कोलु ॥११॥
फलिअ-सिला-अल-णि-म्मल-णिज्झरु
बहु-विह-कुसुमे विरइअ-सेहरु ।
किण्णर-महुरुग्गीअ-मणो-हरु
देक्खावहि महु पिअअम महि-हरु ॥ १२ ॥
पुव्व-दिसा-पवणाहअ-कल्लोलुग्गअ-बाहओ
मेहअ-अंगे नच्चइ स-ललिअं जल-णिहि-णाहओ ४०
हंस-विहंगम-कुंकुम-संख-कआभरणु
करि-मअराउल-कसणल-कमल-कआवरणु
वेला-सलिलुव्वेल्लिअ-हत्थ-दिण्ण-तालु
ओत्थरइ दस-दिसं रुंधेविणु णव-मेहालु ॥ १३ ॥ ४४

---

११ (पं) मेइणि-अविचालु. (पी ) मेइणिओ-अविचल्लु; (पं) परिसप्पइ (पी.) परिसक्कइ (पं. K. U रं.) कज्जुज्जुअ; परंतु छंदनी दृष्टिए (पं) कज्जुज्जुअओ (पी.) कज्जुज्जुओ.

१२. (पी.)ए नथी लीधो.

१३. (पी ) (रं)ने अनुसरी पंक्ति ३ मां विहंगम (पं.) ने बदले रहंग वांचे छे; पक्ति ६ मां (पं पी.) णवमेहआलु.

---

प्रसृतखरखुरदारितमेदिनिः वनगहने अविचलः ।
परिष्वष्कति प्रेक्षध्वं लीनः निजकार्योद्यतः कोलः ॥ ११ ॥

स्फटिकशिलातलनिर्मलनिर्झर
बहुविधकुसुमैर्विरचितशेखर
किन्नरमधुरोद्गीतमनोहर
दर्शय मम प्रियतमां महीधर ॥ १२ ॥

पूर्वदिशापवनाहतकल्लोलोद्गतबाहुः
मेघाङ्गैः नृत्यति सललितं जलनिधिनाथः ।
हंसविहंगमकुंकुमशंखकृताभरणः
करिमकराकुलकृष्णलकमलकृतावरणः ।
वेलासलिलाद्वेल्लितदत्तहस्ततालः
अवस्तृणाति दशादिशः रुद्ध्वा नवमेघकालः ॥ १३ ॥

सुर-सुदरि जहण-भरालस पीणुत्तुंग-घण-त्थणि
थिर-जोव्वण तणु-सरीरि हंस-गइ ।
गअणुज्जल-काणणे मिअ-लोअणि भमन्तें दिट्ठि पइं
तहं विरह-समुद्दन्तरें उत्तारहि मइं ॥ १४ ॥
लएँ पेक्खिविणु हिअएं भावमि
"जइ विहि-जोएं पुणु तहिं पावमि । ५०
ता रण्णें वि ण करिमि णिब्भन्ती
पुणु ण·इ मेल्लमि दाह कअन्ती " ॥ १५ ॥
मोरा पर·हुअ हंस विहंगम
अलि गअ पव्वअ सरिअ कुरंगम ।
तुज्झहं कारणे रण्णे भमन्तें
को ण·हु पुच्छिउ मइं रोअन्तें ॥ १६ ॥ ५६

१४. (पं.) दिट्ठि वांची पइं ने पंक्ति ३ मां ले छे जे छंदनी दृष्टिए खोटुं छे; (पी.) दिट्ठा पइं वांची तेने पंक्ति ४ मां ले छे.

१५. (पं.) पेक्ख विणु (पी.) पेक्खु विणु (रं.) टीकाः लते प्रेक्षस्व विना हृदयेन भ्रमामि । परंतु पेक्खिविणु एम अव्ययभूतकृदंत होवा वधारे संभव छे; अने भावमि=भावयामि । पंक्ति ४. मां (पी.) ताह कअन्ती; (पं.) दाह कलन्ती पण; (पं.)नी छायामांः–तां कृतान्ताम् । (रं.) बन्ने य पाठांतरो नोंधे छे; (पी.) (पं) मेल्लइं.

सुरसुन्दरी जघनभरालसा पीनोत्तुंगघनस्तनी
स्थिरयौवना तनुशरीरा हंसगतिः ।
गगनोज्ज्वलकानने मृगलोचना भ्रमता दृष्टा त्वया
तर्हि विरहसमुद्रान्तरादुत्तारय माम् ॥ १४ ॥
लतां प्रेक्ष्य हृदयेन भावयामि
"यदि विधियोगेन पुनः तां प्राप्नोमि
तद् अरण्ये अपि न करोमि निर्भ्रान्तिं
पुनः नापि मोचयिष्ये दाहं कुर्वन्तीम् " ॥ १५ ॥
मयूरः परभृतः हंसः विहंगमः
अलिः गजः पर्वतः सरित् कुरंगमः ।
तव कारणेन अरण्ये भ्रमता
कः न खलु पृष्टः मया रुदता ॥ १६ ॥

## ॥ द्वादशमुद्धरणम् ॥

### । दोहाकोसोद्धरियगीयाइं ।

### [ काण्ह । ]

लोअह गव्व समुव्वहइ 'हउं परमत्थे पवीण'
कोडिह मज्झे एक्कु जइ हाइ निरंजन-लीण ॥ १ ॥
आगम-वेअ-पुराणे पंडित्ता माण वहन्ति
पक्क-सिरि-फले अलिअ जिम बाहेरित भुमयन्ति ॥ २ ॥
एवंकार बीअ लइअ कुसुमिअउ अरविंदए
मधु-अर-रूपें सुरअ-वीर जिंघइ मअरन्द ॥ ३ ॥
गअण-समीरण-सुह-वासे पंचेहि परिपुण्णए
सअल-सुरासुर एहु उअत्ति वढिए एहु सो सुन्नए ॥ ४ ॥
नि-त्तरंग सम सहज-रूअ सअल-कलुस-विरहिए
पाप-पुण्ण-रहिए कुच्छ नाहि काण्हु फुड कहिए ॥ ५ ॥

---

### । दोहाकोषोद्धृतगीतानि ।

### [ कृष्णः । ]

लोकेषु गर्वं समुद्वहति 'अहं परमार्थे प्रवीणः'
कोटीनां मध्ये एकः यदि भवति निरञ्जनलीनः ॥ १ ॥
आगमवेदपुराणे पण्डिताः मानं वहन्ति
पक्वश्रीफले अलयः यथा बाह्यतः भ्राम्यन्ति ॥ २ ॥
एवंकारं बीजं लात्वा कुसुमितं अरविन्देन
मधुकररूपेण सुरतवीरः जिघ्रति मकरन्दम् ॥ ३ ॥
गगनसमीरणसुखवासः पञ्चभिः परिपूर्णः
सकलसुरासुराणामेषः उत्पत्तिः, मूर्ख, एषः स शून्यः ॥ ४ ॥
निस्तरङ्गः समः सहजरूपः सकलकलुषविरहितः
पापपुण्यरहितः किंचित् न अस्ति कृष्णः स्फुटं कथयति ॥ ५ ॥

सहज एक्कु पर अत्थि तहिं फुड काण्हु परिजानइ
बहु सत्थागम पढइ गुणइ वढ किंपि न जानइ ॥ ६ ॥
अहें ण गमइ ण उहें जाइ बेण्णि-रहिअ तसु निच्चल थाइ
भणइ काण्ह मन कह वि ण फुट्टइ निच्चल पवण-घरिणि घरे वट्टइ॥७॥
वर-गिरि-कंदर गुहिर जगु तहिं सअल वि तुट्टइ १५
विमल सलिल सोसं जाइ कालग्गिइं पइट्ठइ ॥ ८ ॥
एहु सुदुद्धर धरणि-धर सम विसम उत्तार न पावइ
भणइ काण्ह दु-लक्ख दुरवगाह को मणे परिभावइ ॥ ९ ॥
जो संवेअइ मण-रअण अहरह सहज फरन्त
सो पर जाणइ धम्म-गइ; अन्न कि मुनइ कहन्त ॥ १० ॥ २०
पहं वहंतेण णिय-मन बंधनं कियउ जेण
ति-हुअण सयल विफारिआ पुणु संहारिअ तेण ॥ ११ ॥
सहजें नि-च्चल जेण किय सम-रसें निअ-मण-राअ
सिद्धो सो पुण तक्खणे णउ जर-मरणह भाय ॥ १२ ॥

---

सहजः एकः परः अस्ति तं स्फुटं कृष्णः परिजानाति
बहून् शास्त्रागमान् पठति गुणयति मूर्खः किमपि न जानाति ॥६॥
अधः न गच्छति न ऊर्ध्वं याति द्विरहिता तस्य निश्चला स्थितिः
भणति कृष्णः मनः कथमपि न स्फुटति निश्चला पवनगृहिणी गृहे वर्तते॥७
वरगिरिकंदरः गभीरः जगत् तत्र सकलं अपि त्रुट्यति
विमलं सलिलं शोषं याति कालाग्नौ प्रविष्टे ॥ ८ ॥
एषः सुदुर्धरः धरणीधरः समविषमः उत्तारं न प्राप्नोति ।
कृष्णः भणति दुर्लक्षं दुरवगाहं कः मनसि परिभावयति ॥ ९ ॥
यः संवेत्ति मनोरत्नं अहरहः सहजे स्फुरत्
सः परां जानाति धर्मगतिं अन्यः किं जानाति कथयन् ॥ १० ॥
पन्थानं वहता निजमनः बन्धनं नीतं येन
त्रिभुवनं सकलं विस्फारितं पुनः संहृतं तेन ॥ ११ ॥
सहजे निश्चलः येन कृतः समरसेन निजमनोराजः
सिद्धः सः पुनः तत्क्षणे न जरामरणयोः भयम् ॥ १२ ॥

णिच्चल निव्वियप्प निवियार उअअ-अत्थमण-रहिअ सु-सार ३२
अइसो सो निव्वाण भणिज्जइ जहिं मन मानस किंपि न किज्जइ॥१३॥
वर-गिरि-सिहर-उत्तुंग-थलि शबरे जहिं किअ वास
णउ लंघिअ पंचाननेहिं करि-वर दूरिअ आस ॥ १४ ॥
एहु सो गिरि-वर कहिअ मइं एहु सो महा-सुह-ठाव
एत्थु रे निअहु सहज खण लब्भइ महा-सुह जाव ॥ १५ ॥ ३०
एक्कु ण किज्जइ मंत ण तंत णिअ घरिणि लइ केलि करन्त
णिअ घरे घरिणि जाव ण मज्जइ ताव कि पंच-वण्ण विहरिज्जइ॥१६
एसो जप-होमे मंडल-कम्मे अनुदिन अच्छसि काहि उ धम्मे।
तो विणु तरुणि निरंतर-नेहे बोहि कि लाभइ एण वि देहे॥१७
जें बुज्झिअ अविरल सहज खण काहिं वेअ-पुराण ३५
तें तुंडिअ विसय-वियप्प जगु रे असेस-परिमाण ॥ १८ ॥
जिम लोण विलिज्जइ पाणिएहि तिम घरिणी लइ चित्त
सम-रस जाई तक्खणे जइ पुणु ते सम चित्त ॥ १९ ॥

---

निश्चलं निर्विकल्पं निर्विकारं उदयास्तमनरहितं सुसारं
ईदृशं तद् निर्वाणं भण्यते यत्र मनसा मानसं किमपि न क्रियते॥१३॥
वरगिरिशिखरोत्तुंगस्थली शबरेण यत्र कृतः वासः
न तु लङ्घिता पञ्चाननेन, करिवरस्य दूरिता आशा ॥ १४ ॥
एषः सः गिरिवरः कथ्यते मया एषः सः महासुखस्थानम्
अत्र रे पश्य सहजक्षणं लभ्यते महासुखं यावत् ॥ १५ ॥
एकः न कुर्यात् मन्त्रं न तन्त्रं, निजां गृहिणीं लात्वा केलीं कुर्वन्
निजगृहे गृहिणी यावत् न मज्जति तावत् किं पञ्चवर्णेषु विहियते॥१६
एषः जपहोमे मण्डलकर्मणि अनुदिनं आस्से कस्मिन् खलु धर्मे
तव विना तरुणि निरन्तरस्नेहेन बोधिः किं लभ्यते अनेनापि देहेन॥१७
येन बुद्धं अविरलं सहजक्षणं (तस्य) किं वेदपुराणानि
तेन त्रोटितं विषयविकल्पं जगत् रे अशेषपरिमाणं ॥ १८ ॥
यथा लवणं विलीयते पानीये तथा गृहिणीं लात्वा चित्ते
समरसं याति तत्क्षणे यदि पुनः तया समं चित्तम् ॥ १९ ॥

# ॥ त्रयोदशमुद्धरणम् ॥

## । दोहाकोसोद्धरिअगीयाइं ।

### [ सरह । ]

मट्टी पाणी कुस लइ पढंत घरहिं बइसिअ अग्गि हुणंत
कज्जे विरहिअ वहन्ति होमे अक्खि डहाविअ कडुए धूमें ॥१॥
एक-दंडि ति-दंडि भअवं-वेसें विणुआ होइ अ हंस-उवेसें
मिच्छेहिं जग बाहिअ भुल्लें धम्माधम्म ण जाणिअ तुल्लें ॥२॥
अइरिएहिं उद्धूलिअ छारें सीसउ बाहिय ए जड-भारें ५
घरहिं बइसी दीवा जाली कोणेहिं बइसा घडा चाली ॥ ३ ॥
अक्खि निवेसी आसन बंधी कण्णेहिं खुसखुसाइ जन धन्धी
रंडी मुंडी अण्ण वि वेसें दिक्खा देइ दक्खिण-उवेसें ॥४॥
दीह-णक्ख जे मलिणें वेसें णग्गल होइअ उपाट्टिअ-केसें
खवणेहिं जान विडंबिय वेसें अप्पणु बाहिअ मोक्ख-उएसें॥५॥१०

---

## । दोहाकोशोद्धृतगीतानि ।

### [ सरह । ]

मृदं पानीयं कुशं लात्वा पठन्ति गृहे उपविश्य अग्निं जुह्वति
कार्येंग विरहिताः वहन्ति होमान् अक्षिणी दग्ध्वा कटुकेन धूमेन॥१॥
एकदण्डेन त्रिदण्डैः भगवद्वेशेन विज्ञकाः भवन्ति च हंसापदेशेन
मिथ्यात्विभिः जगद् बाधितं भ्रान्तैः धर्माधर्मं न जानन्ति तुलया ॥२॥
आचार्येंग उद्धूलितं भस्मना शीर्षं बाधितं अनेन जटाभारेण
गृहे उपविश्य दीपं ज्वालयति कोणे उपविश्य घण्टं चालयति ॥३॥
अक्षिगो निमिष्य आसनं बद्ध्वा कर्णयोः मन्त्रयति जनान् प्रतार्य
रण्डायाः मुण्डितायाः अन्यायाः अपि वेशेन दीक्षां ददाति दक्षिणा-
पदेशेन ॥४॥
दीर्घनखैर्ये मलिनेन वेशेन नग्नाः भवन्ति उत्पाटितकेशेन
क्षपणैः यानं विडम्बितं वेशेन आत्मा बाधितः मोक्षापदेशेन ॥५॥

जो णग्गा विअ होइ मुत्ति ता सुणह सियालह
लोमोप्पाट्टणे अत्थि सिद्धि ता जुवइ-णितंबह
पिच्छी-गहणे दिट्ठ मोक्ख ता मोरह चमरह
उंछ-भोअणें होइ जाण ता करिह तुरंगह
सरह भणइ खवणाण मोक्ख महु किंपि न भावइ १५
तत्त-रहिअ-काया ण ताव पर केवल साहइ ॥ ६ ॥

करुणा छड्डि जो सुणहिं लग्ग ण उ सो पावइ उत्तिम मग्ग
अहवा करुणा केवल भावइ सो संसारहिं मोक्ख न पावइ॥७॥

मंत ण तंत ण धेअ ण धारण सव्व वि रे वढ विब्भम-कारण
असमल चित्त म झाणहि खरडह सुह अच्छंत म अप्पणु
जगडह ॥ ८ ॥ २०

अहिमाण-दोसें ण लक्खिउ तत्त तेण दूसइ सअल जाणइ सो दत्त
झाणें मोहिअ सअल वि लोअ निअ-सहाव ण उ लक्खइ कोइ॥९॥

---

यदि नग्नस्य अपि च भवति मुक्तिः तर्हि शुनः शृगालस्य
लोमोत्पाटने अस्ति सिद्धिः तर्हि युवतीनितम्बस्य
पिच्छिकाग्रहणे दृष्टः मोक्षः तर्हि मयूरस्य चमरस्य
उञ्छभोजने भवति ज्ञानं तर्हि करिणः तुरंगस्य
सरहः भणति क्षपणानां मोक्षः मह्यं किमपि न भावयति
तत्त्वरहितकाया न तावत् परं केवलं साधयति ॥ ६ ॥

करुणां त्यक्त्वा यः शून्यं लग्नः न तु सः प्राप्नोति उत्तमं मार्गम्
अथवा करुणां केवलं भावयति सः संसारे मोक्षं न प्राप्नोति ॥७॥

मंत्रः न तन्त्रं न ध्येयं न धारणां सर्वं रे मूर्ख विभ्रमकारणम्
अश्यामलं चित्तं मा ध्यानेन मलिनीकुरु सुखे सन्तं मा आत्मानं
पीडय ॥ ८ ॥

अभिमानदोषेण न लक्षितं तत्त्वं तेन दूषयति सकलानि यानानि सःदैत्यः
ध्यानेन मोहितः सकलः अपि लोकः निजस्वभावं न तु लक्षते कोऽपि ॥९॥

जव्वे मण अत्थमण जाइ तणु तुट्टइ बंधण
तव्वे सम-रस सहजे वज्जिइ ण उ सुद्द ण बम्हण ॥१०॥

भावहिं उवज्जइ खअहि णिवज्जइ भाव-रहिअ पुणु कहि उवज्जइ२
बिण्ण-विवज्जिअ जोओ वज्जइ अच्छहि सिरि-गुरु-णाह
कहिज्जइ ॥ ११ ॥

देक्खहु सुणहु परीसहु खाहु जिघाहु भमहु बइट्ठ उट्ठाहु
भालमाल ववहारें पेल्लह मण छड्डु एक्कार म चल्लह ॥१२॥

गुरु-उवएसह अमिय-रसु हवहिं ण पीअउ जेहि
बहु-सत्थत्थ-मरुत्थलिहिं तिसिए मरिअउ तेहि ॥ १३ ॥ ३०

पंडिअ सअल सत्थ वक्खाणइ देहहिं बुद्ध वसंत ण जाणइ
भमणागमण ण तेण विखंडिअ तो वि णिलज्ज भणइ हउं
पंडिअ ॥ १४ ॥

जीवंतह जो णउ जरइ सो अजरामर होइ
गुरु-उवएसें विमल-मइ सो पर धण्णा कोइ ॥ १५ ॥

---

यावत् मनः अस्तमनं याति तनोः त्रुट्यति बन्धनम्
तावत् समरसः सहजे व्रजति न तु शूद्रः न तु ब्राह्मणः ॥१०॥

भावे उत्पद्यते क्षये निष्पद्यते भावरहितः पुनः कथं उत्पद्यते
द्वि-विवर्जितः योगं व्रजति, आस्व, श्रीगुरुनाथेन कथ्यते ॥११॥

पश्यत शृणुत स्पृशत खादत जिघ्रत भ्राम्यत उपविशत उत्तिष्ठत
आलजालं व्यवहारे प्रेरयत मनः त्यजत एकाकी मा चलत ॥१२॥

गुरूपदेशस्य अमृतरसः अस्ति न पीतः यैः
बहुशास्त्रार्थमरुस्थलीषु तृषया मृतं तैः ॥ १३ ॥

पंडितः सकलानि शास्त्राणि व्याख्याति देहे वसन्तं बुद्धं न जानाति ॥
गमनागमनं तेन न विखण्डितं तथापि निर्लज्जः भणति 'अहं पण्डितः'

जीवन् यः न जीर्यति सः अजरामरः भवति
गुरूपदेशेन विमलमतिः सः परं धन्यः कः अपि ॥ १५ ॥

विसअ-विसुद्धे णउ रमइ केवल सुण्ण चरेइ ३५
उड्डी वोहित्थ-काउ जिम पलुटिअ तहि वि पडेइ ॥१६॥
विसयासत्ति म बंध करु अरे वढ सरहे वुत्त
मीण पयंगम करि भमरु पेक्खह हरिणह जुत्थ ॥१७॥
पंडिअ-लोअहु खमहु महु एत्थ न किअइ विअप्पु
जो गुरु-वअणें मइं सुअउ तहिं किं कहमि सु-गोप्पु ॥१८॥ ४०
घोरंधारें चंद-मणि जिम उज्जोअ करेइ
परम-महासुह एक्कु खणे दुरिआसेस हरेइ ॥ १९ ॥
घरहिं म थक्कु म जाहि वणे जहिं तहिं मण परिआण
सअलु निरंतर बोहि ठिअ कहिं भव कहिं निव्वाण ॥ २० ॥
णउ घरे णउ वणे बोहि ठिउ एव परिआणउ भेउ ४५
निम्मल-चित्त-सहावत करह अ-विकल से उ ॥ २१ ॥
एहु सो अप्पा एहु पर जो परिभावइ कोइ
ते विणु बंधे बंधिकिउ अप्प विमुक्कउ तो वि ॥ २२ ॥

---

विषयविशुद्धौ न तु रमते केवलं शून्यं चरति
उड्डीय प्रवहणकाकः यथा पर्यस्य तत्रैव पतति ॥ १६ ॥
विषयासक्तिं मा बन्धं कुरु अरे मूर्ख सरहेण उक्तम्
मीनं पतंगं करिणं भ्रमरं प्रेक्षस्व हरिणानां यूथम् ॥ १७ ॥
पण्डितलोकाः, क्षमध्वं मां अत्र न क्रियते विकल्पः
यद् गुरुवचनेन मया श्रुतं तत्र किं कथयामि सुगोप्यम् ॥१८॥
घोरान्धकारे चन्द्रमणिः यथा उद्द्योतं करोति
परममहासुखं एकस्मिन् क्षणे दुरितानि अशेषाणि हरति ॥१९॥
गृहे मा तिष्ठ मा याहि वने यत्र तत्र मनः परिजानीहि
सकलं निरन्तरं बोधिः स्थिता कुत्र भवः कुत्र निर्वाणम् ॥२०॥
न तु गृहे न तु वने बोधिः स्थिता एवं पारिजानीत भेदम्
निर्मलचित्तस्वभावत्वे कुरुत अविकलं तत् तु ॥ २१ ॥
एषः सः आत्मा एतत् परं यः परिभावयति कोऽपि
सः विना बन्धेन बंधीकृतः आत्मा विमुक्तः तथापि ॥ २२ ॥

# ॥ चतुर्दशमुल्लरणम् ॥

## । पइण्णछंदाइं ।

पासि कप्पि चउरंसिय रेवा-पय-पुण्णियं
सेडियं च गेण्हेप्पि ससि-प्पभ-वण्णियं ।
मइं सुयं पि एक्कलियं सयणि निवण्णियं
सव्व-रत्ति घोसेइ समाण-सवण्णियं ॥ १ ॥

[ श्रीसंघदासरचितायाः वसुदेवहिंड्याः । ][1]

णंदो राया णवि जाणइ जं सगडालो करेहिइ
नंदो राया मारेविणु सिरियं रज्जे ठवेहिइ ॥ २ ॥

[ श्रीजिनदासमहत्तररचितावश्यकचूर्ण्याः । ][2]

ताव इमं गीययं गीयं गामणडीए
जो जसु माणुसु वल्लहउ तं जइ अण्णु रमेइ
जइ सो जाणइ जीवइ वि तो तहु पाण लएइ ॥ ३ ॥

[ उद्द्योतनसूरेः कुवलयमालायाः । ][3]

---

१. श्रीचतुरविजयपुण्यविजयसंपादितवसुदेवहिंड्याः प्रथमोंऽशः पृ. १८।
२. (ईन्दोर-आवृत्ति) आवश्यकसूत्रचूर्णी. पृ. ८४.
३. ताडपत्र (जेसलमेर-भंडार) प्रती-पृ. ३७.

---

## । प्रकीर्णछंदांसि ।

पार्श्वे कल्पयित्वा चतुरस्रिकां रेवापयःपूर्णिकां
सेटिकां च गृहीत्वा शशिप्रभवर्णिकाम् ।
मां सुप्तां एकाकिनीं शयने निर्विण्णां
सर्वरात्रिं घोषयति समान–सवर्णिकम् (स्वमानस–वर्णितम्) ॥ १ ॥
राजा नन्दः नैव जानाति यत् शकटालः करिष्यति
राजानं नन्दं मारयित्वा श्रीयकं राज्ये स्थापयिष्यति ॥ २ ॥
तावत् इमं गीतकं गीतं ग्रामनटया—
यः यस्य मनुष्यः वल्लभः तं यदि अन्यः रमते
यदि सः जानाति जीवति अपि तर्हि तस्य प्राणान् लाति ॥३॥

राईए पच्छिमजामे केण वि गुज्जरपहिएण धवलदुव्वहयं गीयं
अवि य-
जो णवि विहुरे वि सज्जणउ धवलउ कड्ढइ भारु
सो गोट्ठंगणमंडणउ सेसउ तड्डिय-सारु ॥ ४ ॥
[ उद्द्योतनसूरेः कुवलयमालायाः । ][४]
महु महु त्ति भणंतियहो वज्जइ कालु जणस्सु
तो वि ण देउ जणद्दणउ गोअरिहोइ मणस्सु ॥ ५ ॥
[ आनंदवर्धनस्य ध्वन्यालोकात् । ][५]
कोद्धायओ को समचित्त
काहोऽवणाहिं काहो दिज्जउ वित्त ।
को उग्घाडउ परिहियउ परिणिउ को व कुमारु
पडियउ जीव खडप्फडेहिं बंधइ पावह भारु ॥ ६ ॥
[ श्रीलाङ्कविरचितसूत्रकृतांगवृत्तेः । ][६]

---

४. सदर. पृ. ४७.

५. Pischel : Materialien Zur Kenntnis Des Apabhramsa P. 48.

६. आगमोदयसमितिग्रंथमाला । सूत्रकृतांगवृत्तिः १ । ४ । इत्थिपरिन्नाअज्झयणे । गा. ९-१० ।

---

रात्र्याः पश्चिमयामे केनापि गुर्जरपथिकेनेदं धवलदुर्वहत्वं गीतम् ।
अपि च—
यः नापि विधुरे अपि स्वजनः धवलः कर्षति भारं
सः गोष्ठाङ्गणमण्डनः शेषः त्रुटितसारः ॥ ४ ॥
मम ममेति भणतः व्रजति कालः जनस्य
तथापि न देवः जनार्दनः गोचरीभवति मनसः॥५॥
क्रोधायितः कः समचित्तः
कस्मात् अपनयेत् कस्मै दद्यात् वित्तम् ॥
कः उद्घटितः परिहितः परिणीतः कः वा कुमारः
पतितः जीवः भ्रान्तिषु बध्नाति पापानां भारम् ॥ ६ ॥

# ॥ टिप्पणी ॥

## ॥ प्रथममुद्धरणम् ॥

### १. कवि अने तेनुं जीवन :—

आ उद्धरण **चतुर्मुख स्वयंभूना पउमचरिय**मांथी लेवामां आव्युं छे. कवि विक्रमना नवमा सैकानी आसपास थयेलो होवो जोईए. तेना काळनी प्रथम मर्यादा तेना काव्यमांथी दृष्टिगोचर थाय छे ते दण्डी अने भामहनो उल्लेख करे छे :

**णउ बुज्झिउ पिंगल-पन्थारु णउ भम्मह-दण्डि-यलंकारु ।**
**वयसाउ तो वि णउ परिहरमि वरि रयडा-वुत्तु कव्वु करमि ॥**[1]

तेना काळनी द्वितीय मर्यादा अपभ्रंश महाकवि पुष्पदंतना उल्लेखथी बंधाय छे. पुष्पदंत कवि विक्रमना अगीआरमा सैकानी शरुआतमां थयो. तेना **तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकार**ना उपोद्घातमां ते चतुर्मुख स्वयंभूनो उल्लेख करे छे.

**भावाहिउ भारहभासि वासु कोहलु कोमलगिरु कालिदासु ।**
**चउमुहु सयंभु सिरिहरिसु दोणु णालोइउ कइ ईसाणु वाणु ॥**

चतुर्मुख स्वयंभूए **पउमचरिय** अने **हरिवंशपुराण** एम बे काव्यो लखवा मांडेलां ते बन्ने य अधूरां रह्यां जे तेना पुत्र **त्रिभुवन स्वयंभू**ए पूरां कर्यां. प्रथम तेणे **पउमचरिय** हाथमां लीधेलुं एम **हरिवंशपुराण**ना संधि १००ना आरंभनी गाथामां मालम पडे छे. ते गाथा नीचे प्रमाणे छे :

**काऊण पोमचरियं सुद्धचरियं च गुणगणप्पचियं**
**हरिवंसमोहहरणे सरस्ससुढियदेह (?) व्व ॥**

आखा **पउमचरिय**मां ९० संधि छे. तेना भाग ग्रंथने अंते आपेली **गाथा** परथी मालम पडशे. ते गाथाओ नीचे प्रमाणे छे :

---

१. पउमचरिय । संधि १ । कडवक २ ।

**सिरिविज्जाहरकंडे संधीउ होन्ति वीसपरिमाणा**
**उज्झाकंडम्मि तहा बावीस मुणेह गणणाए ॥**
**चउहह सुंदरकंडे एक्कहियवीस जुज्झकंडे य**
**उत्तरकंडे तेरह संधीउ नवइ सव्वाउ ॥**

नेवुमा संधिने छेडे नीचे प्रमाणे अन्तदर्शक गाथाओ छे:

**इय पोमचरियसेसे सयंभुएवस्स कह वि उव्वरिए**
**तिहुअणसयंभुरइए राहवनिव्वाणमिणं ॥**
**वंदइआसियतिहुयणसयंभुपरिविरइयम्मि महाकव्वे**
**पोमचरियस्स सेसे संपुन्नो नवइमो सग्गो ॥**

आ उद्धरण **पउमचरिय**नो १४मो संधि छे. मूळ हाथप्रतना ३६–३८ पानमां आ उद्धरण छे. हाथप्रतनी लखाया साल लहियानी प्रशस्ति प्रमाणे – **संवत् १५२१ वर्षे ज्येष्ठमासे सुदि १० बुधवारे। श्रीगोपाचलदुर्गे श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे इ०...पउमचरिय**नी हाथप्रत भांडारकर ओरीएन्टल रीचर्स ईन्स्टीटयुटनी हाथपोथी नं. ११२० छे.

## २. उद्धरणवस्तु :—

वसंत प्रकट्यो छे. माहेश्वरपुरनो पति **सहस्रार्जुन** नर्मदामां जळक्रीडा करी रह्यो छे. बीजी बाजुए लंकाधिनाथ रावण नर्मदाने किनारे पूजा करी रह्यो छे. यन्त्रो वडे नर्मदानो प्रवाह सहस्रार्जुनना यान्त्रिकोए रोक्यो छे. सहस्रार्जुननी जलक्रीडा समाप्त थतां यान्त्रिको यन्त्रोने छोडे छे, एटले ऊभरातो प्रवाह लंकाधिनाथनी पूजाने रेली नाखे छे. रावण गुस्से थई पोताना दूतोने बोलावी जेणे आ अविनय कर्यो तेने शोधवा मोकले छे. दूतो समाचार लावे छे. रावण गुस्से थई तरवार खेंचे छे.

प्रभात थतां उदयगिरिना शिखरे रवि, 'मने मूकी अने चंद्रने लई निशा क्यां चाली गई' एम जाणे शोध करतो न होय एवो देखाय छे. वसंत जगत्–रूपी घरमां प्रवेश करे छे अने नवा घरमां प्रवेशतां जाणे सूर्य–रूपी मंगळ–कलशनी स्थापना करे छे. दुष्ट फागण मासने दूर करी वसंतराज प्रवेश करे छे. (१) वसंतश्रीना घरमां प्रवेशता वसंतराजनी राजसामग्रीनुं वर्णन कवि करे छे; अने भोळी नर्मदा आ वसंतना मदे घेली थई भमे छे. (२) नर्मदा पोताना पति रत्नाकरने मळवा शणगार सजी जाणे जती होय एम जुदां जुदां नर्मदा नदीनां सामान्य अंगोने निरूपित करी कवि वर्णन करे छे. आ वसंतना

मदे मस्त बनेली नर्मदा माहेश्वरपुरना पति सहस्रार्जुनने अने लंकापति रावणने कामाविष्ट करे छे. (३) ते वसंत अने ते रेवानां जळ इत्यादि जोईने सहस्रार्जुनने जळक्रीडा करवा हरख थाय छे. यांत्रिको यंत्रो वडे नर्मदानो प्रवाह रोके छे; अने सहस्रार्जुन पोताना अंतःपुर सहित नर्मदामां प्रवेश करे छे. (४) जळक्रीडानुं जुदे जुदे प्रकारे वर्णन कवि करे छे. (५–६) अंतःपुरनी राणीओ सहस्रकिरण साथे जुदा जुदा प्रकारनी क्रीडा करे छे, तेनुं वर्णन कवि करे छे. (७) आ जळक्रीडानां वखाणो देवो करे छे. (८) रावण रेतीनी वेदी बनावी जिनवरनी ते उपर स्थापना करी पूजा करे छे. एटलामां तो यान्त्रिको यन्त्रोने छोडे छे एटले प्रवाह रेलाई पूजासामग्री धोई नाखे छे. रावण गुस्से थाय छे अने आ पिशुनता करनारने शोधवा माणसो मोकले छे. (९) पछी राणीओना तूटेला अलंकार, पुष्प, कुंकुम इत्यादि खेंची जती नर्मदा तरफ रावण नजर करे छे. कवि कल्पना करे छे के नदी जिनवरनी प्रतिमाने खेंची गई कारणके ते जिनप्रभु, स्त्रीओ साथेना विलासथी अलिप्त रहेता हता अने तेमणे पोतानी निष्कामताथी नदीने गुस्से करी हती. (१०) एटलामां रावणे मोकलेला गवेषको पाछा वळे छे; अने तेमांनो एक तेनी अपूर्व कामलीला वखाणे छे अने ए कामलीलानो निर्मापक सहस्रार्जुन छे तेनी खबर करे छे. (११) बीजो गवेषक तेना अंतःपुरने विविध उपमाओए करी वखाणे छे. (१२) त्रीजो गवेषक यन्त्रोने वखाणे छे; अने यान्त्रिकोए छेवटे यन्त्रोने छोडी दीधां तेथी प्रवाह रेलाई गयो अने रावणनी पूजा तेणे धोई नाखी – ते बाबत रजु करे छे. आ सांभळी रावण पोताना हाथे तरवार खेंचे छे.

### ३. पद्यरचना :—

आ उद्धरणमां १३ कडवकनो संधि लेवामां आव्यो छे. दरेक कडवक १० पंक्तिओनुं छे. छेल्ली बे पंक्तिओ घत्तानी छे. आखा संधिने मथाळे ध्रुवपद छे चतुर्मुख स्वयंभूनी कृतिमां कडवकना देहनी लगभग सरखी रीते ८ पंक्तिओ छे. त्रिभुवन स्वयंभूमां कडवकनी पंक्तिसंख्या वधे छे. पुष्पदन्त अने धनपालमां कडवकनी पंक्तिसंख्या वहलती जाय छे अने तेनो कोई नियम ज रहेतो नथी. आ चतुर्मुखनी प्राचीनता सिद्ध करवानो एक पूरावो छे. आ उद्धरणमां ध्रुवपद, अने घत्तानो एक अने कडवकना देहनो एक – एम बे छंदो वपराया छे. ध्रुवपद अने घत्ताना छंदनी मात्रागणना : ८ + ८ + १४ = ३० मात्रानी छे; पंक्तिनी वचमां बे यति छे अने ते यति प्रासबद्ध छे :

**विमलें विहाणएं । कियएं पयाणएं । उययइरिसिहरें रवि दीसइ ।**
**मइ मेल्लेप्पिणु । निसियरु लेप्पिणु । कहि गय णिसि णाइ गवेसइ ॥**

हेमचन्द्र **छन्दोऽनुशासन**ना छट्ठा अध्यायना आरंभमां आ घत्ता अने ध्रुवपद संबंधी विवेचन करतां आदिमां ज सूत्र मूके छे : **सन्ध्यादौ कडवकान्ते च ध्रुवं स्यादिति ध्रुवा ध्रुवकं घत्ता वा**। आ ध्रुवक के घत्ता त्रण प्रकारनी छे : **सा त्रेधा षट्पदी चतुष्पदी द्विपदी च**। प्रस्तुत उद्धरणनुं ध्रुवपद अने घत्ता **षट्पदी** प्रकारनी छे; अने हेमचन्द्रना अभिप्राये आ **उपजातिनो** प्रकार छे. **अष्टौ उपजातिः**॥[1] ए सूत्र पर टीका करतां हेमचन्द्र लखे छे के: **तृतीयषष्ठयोः पादयोर्दशादिसप्तदशान्ताः कलाः शेषेष्वष्टौ चेत्तदोपजातिर्नाम षट्पदी**। **प्राकृतपिंगल**मां आ छंदने माटे नाम नथी; परंतु **दुम्मिला**नी जातनो आ छंद कही शकाय.[2]

कडवकना देहनो छंद **पद्धडिका** के प्राकृतपिंगलनो **पज्झडिआ** छंद छे. तेमां १६ मात्रानां चार चरण छे. हेमचंद्र **पद्धडिका**नुं लक्षण **चीः पद्धडिका**। नोंधी टीका करे छे : **चगणचतुष्कं पद्धडिका**। **यथा, 'परगुणगहणु सदोसपयासणु, महुमहुरक्खरहि अ मिअभासणु। उवयारिण पडिकिउ वेरिअणहं, इअ पद्धडी मणोहर सुअणहं**॥[3] एटले चार चार मात्रानां चार जूथ: कुले १६ मात्रानो आ छंद. आपणा उद्धरणनां वधां य कडवांना देहमां आ ज छंद छे. **प्राकृतपिङ्गल**[4] छेल्ला भाग उपर नियंत्रणा मूके छे, परंतु हेमचंद्र ते स्वीकारता नथी अने वळी काव्यवहनमां आ नियंत्रणानी गणतरी कोइ कवि करता पण नथी.

मात्रानी गणतरीमां **प्रा. पिं.**[5] प्रमाणे **इं, हिं, ए** के **ओ** शुद्ध के वर्ण-मिलित अने **र्** तथा **ह्** साथेना संयुक्ताक्षर लघु गणवा. सप्तमी तथा तृतीया एकवचननो **इ**; तृतीया बहुवचननो **इहिं**; संबंधक भूतकृदंतनो **इवि** इत्यादि **ए, एहिं, एवि** एम लख्या होय छतां एनी एक ज मात्रा गणवी. **होना ओनी** पण एक मात्रा गणवी. आ संबंधमां वाचके **सि. हे. ८।४।४१०।; ८।४।४११।** लक्ष्यमां लेवा घटे छे. तेमां पण आ प्रकारनो आदेश छे.

**४. टिप्पणी :—**

[ टिप्पणीमां पंक्तिओनो उल्लेख करवामां आव्यो छे. ]

---

१. छं. शा. पान ३८ (ब) पंक्ति. १४.

२. प्रा. पि. पान. ३१५ मात्रा १०+८+१४=३२. दुमिला.

३. छं. शा. पा. ४३ (अ) पंक्ति. ९.

४. प्रा. पिं. पान. २१७ पज्झडिअ पान. २२० अडिल्ला.

५. प्रा. पिं, पान. ४

१–२. आ ध्रुवक छे. सामान्य रीते संधिना आरंभनो ध्रुवक भव्य अने आकर्षक होय छे; अने आखा संधिना प्रस्तुतार्थनो सूचक होय छे. आ ध्रुवकमां सूर्यने प्रतिनायक कल्प्यो छे. निशानायिका चंद्रने लई सटकी गई. तेने शोधवा जाणे सूरज उदयगिरिना शिखरे आव्यो होय एम उत्प्रेक्षित छे.

१. सति सप्तमीनो प्रयोग छे; अपभ्रंशमां सप्तमी अने तृतीयानां रूपो सरखां होवाथी कोइ वार आवा प्रयोगमां तृतीया पण वापरी देवामां आवे छे. जुओ सदर. पान ४३. पंक्ति९० **पइं जीवंतएण महु एही भइय अवत्था ।**

३–४. सूर्यने मंगल–कलश साथे सरखाव्यो छे. वसंत विश्वगृहे वास करवा आवे छे. नवा घरमां वास करता पहेलां मंगलकलश तो मूकवो जोईए ने ? तो आ सूर्य जाणे मंगलकलश; प्रभात ए दहिंनो अंश; अने प्रभातनां कोमळ किरणो जाणे ए कलश ढांकवानी कुमळी कमळनी पांदडीओ.

३. **रवण्णउ**—सुंदर **सि. हे.** ८।४।४२२: प्रो. पीशल G. P. 603मां जणावे छे के प्राकृतमां **रमणीय** अने **करणीय**नी साथे साथे **करण्य, रमण्य** एवां विध्यर्थ भूतकृदंत टकेलां तेमांना **रमण्य**मांथी **रवण्ण** उत्तीर्ण थएलुं. आ स्थळे **लावण्य** शब्दनी व्युत्पत्तिचर्चा आवश्यक छे. सामान्य रीते तेने **लवण**मांथी उत्तीर्ण करवामां आवे छे; परंतु **लवण** 'सुंदर' ए अर्थमां संस्कृतमां ए शब्द वपरातो नथी. **लवणिमा** अने **लावण्य** आ बे ज शब्दो ज संस्कृतमां रूढ छ. मने लागे छे के मागधी असरथी **रनो ल** थइ **रवण्ण** > **लवण्ण** अने तेनुं संस्कृत **लावण्य. लावण्य** पछीनो बोल **लवणिमा.**

३. **कोमलकमलकिरणदलछण्णउं** आमां खरी रीते **कोमलकिरणकमलदलछण्णउं** एम संस्कृतनी ढबे समास होय. परंतु अपभ्रंशमां समासना बंध तूटता जाय छे अने समासना शब्दोनी गोठवण पण नियंत्रित रहेती नथी. समासना शब्दोनी गोठवण तो ठेठ जूना काळथी प्राकृतमां तूटती आवी छे. आ संबंधे प्रो. पीशल G. P. 603. **मार्कण्डेय**ना **प्रा. स.** ८।३६। **पूर्वनिपातोऽन्यथा प्रायः ॥** अने ते पर टीका : **समासे संस्कृतविहितः पूर्वनिपातः प्राकृते प्रायोऽन्यथा स्यात् ॥**

४. **णावइ** २. **णाइ सि. हे.** । ८।४।४४४। **इवार्थे नं-नउ-नाइ-नावइ-जणि-जणवः ॥ नं, नउ, नाइ**नो संबंध वैदिक **न=इव नकिः=**

कांइ नही (प्रो. पीशल G. P. 6. Einleitung)साथे जोडाय. **नावइ, जणि, जणु**नो संबंध **ज्ञा** धातु साथे होइ शके. **नाइ** कदाच **नावइ**नुं टुंकुं रूप होवा पण संभव छे. **नाइ**नो प्रयोग तुलसीदासना रामायणमां 'जाणे' 'जाणवुं' बे य अर्थमां देखाय छे.

५. **दूउ** संस्कृतछायामां **शासनं** एम अर्थ कर्यो छे. आनो आधार मारी पासेना जूना गूजराती रास नामे **मृगांकलेखा** (सोळमा सैका)नी कडी १२०–१२२ उपर छे जे नीचे टांकुं छुं:

**कोठारी बोलावीउ ए हुंतउ जेय सुजाण ॥१२०**
**"अन्न पान घृत आपिज्यो ए फाटाफाटउं वस्त्र**
**एहनइ रूडइं रहाविज्यो ए रखे जणावउ पुत्र"॥१२१**
**सेठि दूउ देई गया ए सतीय बोलावी धावि...**

आ उद्धरणनी हाथप्रतना हांसिआमां संस्कृतटिप्पण **पालय**: आप्युं छे ते कदाच **दूतः=पाल्यः** 'किंकर, अधिकारी' ए अर्थमां लेवाय.

५. **कह व ण मारिउ** 'जेम तेम मार्या नहि' एटले शिक्षा तो सखत करी परंतु प्राण हर्या नहि. **कह**=वै.सं. **कथा** 'केवी रीते' **एनां समान रूप जह=यथा, तह=तथा, अह=अथा** G. P. 103.

५. **पवमण्डवणिरिक्क आचेलिय**: परब अने लतागृहोना चोरो अर्थात् कामिजनोनां वस्त्रो जेणे हरी लीधां हतां. **णिरिक्क** जुओ. **दे. ना. ४. ४९. चोरट्टियपुट्ठसुं णिरक्कं** (v. l. **णिरिक्क**)।

७. **पइसरइ=प्रविशति** मने लागे छे के **पइसइ**नुं कारकरूप **पइसारइ** अने तेमांथी बनावेलुं सादुं रूप ते **पइसरइ** वधारे संभवित छे; जो के **पइसइ** पण कांइक प्रमाणमां अपभ्रंशमां प्रचलित छे

१३. **पईहर** [**प्रतिगृह**] अंतर्गृह; जुओ **जसहरचरिउ** (**शब्द-कोष. पा. १३६**) **पइहर-प्रतिगृह** (**अंतर्गृहमित्यर्थे।**); 'घरनो आगलो भाग' ए अर्थ पण संभवित अने बंधबेस्तो छे. गू. 'पडशाळ=सं. **प्रतिशाला**मां आ सूचित छे. **पईहर**मां **ई** माटे जुओ **सि. हे. ८।१।४। दीर्घह्रस्वौ मिथोवृत्तौ।**

१४. **नेउर=नूपुर**। **सि. हे. ८।१।१२३।** G. P. 125मां प्रो.

पीशल जणावे छे के सर्व प्राकृतोमां **नेउर** मालम पडे छे; एटले **नूपुर** शब्द साथे **नेपूर** शब्द पण भाषामां प्रचलित हशे; अने तेनी साथे सरखाववा **केयूर** शब्द तरफ लक्ष खेंचे छे. वळी **नेउरकेऊरं** ( **राजशेखर**ना बाल रामायणमां ) अने **नेउरकेऊराओ** ( अप० **प्राकृतपिंगल** १. २६ ) तरफ लक्ष दोरे छे. जूना गूजरातीमां ठेठ प्रेमानंद सुधी ' नेवर ' = नूपुरना अर्थमां वपरायो छे. हिं. नेपूर, नेवर.

१४ **अंतेउरु** [ अंतःपुरं] G. P. 344 **सि. हे.** ८।१। ६० मागधीनी असरने लीधे **अन्तः=अंते** ।

१५ **उज्जाणेहिं** सप्तमी–बहुवचनः **हिं** < प्रा. एकवचन **म्मि** < सं. एकवचन **स्मिन्** ध्यानमां राखवुं के **इहिं** अने **हिं** बे प्रत्ययो लगाडवामां आवे छे. **उज्जाणेहिं, थाणेहिं, वंदिहिं, वासहिं, महणासहिं** इ० **सि. हे.** ८।४।३४७ । अर्धमागधीमां **हत्थंसि–पायंसि** अने पालीमां **स्मिं** अने **म्हि** प्रत्ययो सप्तमी एकवचनमां छे. आ प्रत्यय एकवचनमांथी बहुवचनमां लेवावा संभव छे. तृतीया बहुवचन **हिं** अने सप्तमी बहुवचन **हिं** वच्चे पण अव्यवस्था उत्पन्न थइ होवी जोइए, कारण के बन्ने प्रत्ययो सरखा छे.

१६. **साहुलउ**–हाथप्रतना टिप्पणमां **सिगिरिका** शब्द आप्यो छे जे समझातो नथी. परन्तु ध्वजपट जेवो आनो अर्थ होय. सरखावो **दे. ना.** ८। ५२ । **साहुलिआ=वस्त्र; पा. स. म.** ' शिरोवस्त्रखण्ड ' ए अर्थ पण नोंधे छे.

१७. **कुसुमा** 'अ'कार मात्राखातर लंबाव्यो छे; **दवणा=दवणअ= दमनक** एटले **'आ'** ' ण्+अ+अ ' नो बनेलो छे.

१८. **वाणरमालिय** [ **वंदनमालिका** ] प्रा. गू. तोरण **वंदुरवाल कलस धयवड लहलहए** । प्रा. गु. का. श्रीनेमिनाथफागु. कडी. ६. हिं. वंदनवार, वंदनमाल.

१९, **भुंजा–**टिप्पणमां ' अग्रेभोजकाः स्तितीषुः ' एम आपेलुं छे; **प्रथम** जमनारा विप्रो ए एक अर्थ लीधो छे; परन्तु वनस्पतिने अनुलक्षी बीजो कोई अर्थ होवो जोइए.

२०, **वम्मेहि** ने बदले **वम्महि** वांची सप्तमी एकवचन इ–प्रत्ययान्त लेवुं ठीक छे. आ पंक्तिनो छायामां छे तेथी जुदी रीते अर्थ करी ' **विरहिणं विध्यन् गतपतिकामर्मसु आंदोलयन्** ' एम संस्कृतछाया करवी वधारे घटित थशे.

२१. **भुंभलभोली** सरखावो प्रा. गू. **भम्मर–भोली नेमिजिण-**

**वीवाह सुणेई । नेहगहिल्ली गोरडी हियडइ विहसेई ॥** प्रा. गू. का. श्रीनेमिनाथफागु. कडी. १२ पं. ५-६ **भुंभल** <म. **भिब्भल ( सि.हे.** ८।२।५८।)=**भिंभल** <सं **विह्वल । भोली** <√**भुल्ल(सि.हे.**८।४।१७७।) <सं. √ भ्रम्+उल्ल; (O.D.B.212) गू. 'भोळो' एटले मुग्ध प्रो. पीशल M. K. A. P. 53 XVI **बालो भुंभरभोलि उल्लसिअणिअंसणी ।** आ पंक्ति **भोजदेवना सरस्वतीकण्ठाभरण**मां छे, प्रो. पीशल **भुंभरभोलि**ने Intensive रूप गणावी **भुल** ने G.P. §354 प्रमाणे <**लुभ्** मांथी व्युत्पन्न करी उतारे छे. **हुलइ (सि.हे.** ८।४।१०५) =**भुलइ** >**भुल्लइ** G. P. 566. गू. भम्मरभोळी हि. तुलसीदास: पार्वतीमंगल. ३८. " बालक भमरि भूलान फिरहिं घर हेरत."

२२. **सलोणी [सलावण्या]** जुओ टिप्पण. प्रथम उद्धरण. १. ३. गू. सलुणो.

२५. **ऊढणाइं** सरखावो. **दे. ना.** १।१५। **ओड्ढणमुत्तरीष ।** अने वळी **पा. ल. ४२ ऊढिअयं पाउअयं ।** गू. ओढणो हिं. ओढनी. सामान्य रीते 'पुलिन'=उंचा रेताळ कीनाराने नितम्ब साथे सरखाववामां आवे छे; अहि पुलिनने ओढणी साथे सरखावी प्रवाहने रसना साथे सरखाव्यो छे.

२८ **सयल [सकल]** बधी कळाए सहित एटले गोळ.

३०. **रण [वर्ण]** रंग आ तेम ज '**रंग**' वन्ने शब्दोनो संबंध< सं. √**रञ्ज्** साथे छे.

३०. **तंमोलु सवाणिउ [ ताम्बूलं सवर्णकं ]** सामान्य रीते **म्र, आम्र, ताम्र,** इ० मां **म्र** नो **म्ब** थइ **म्ब** थाय छे ( G P. 295. **सि. हे.** ८।२।५६ ) गू तांबु, आंबो, परकंबा, आंबली; आमळुं, त्रांबु, ए ग्रो. पीशलनी कल्पनाने टेको आपे छे; आ दाखलामां **म्म=म्ब**नी अवळी गति थइ छे. खरी रीते **म्** नी पछी तरतज **म्** बोलतां नाकमांथी नीकळतो **स्वर** बंध थइ जतां **व** थइ जाय छे; नहि तो तेने हलको पाडी **म्** एकलो ज रहेवा देवो पडे परन्तु बीजा **म्** ना उच्चारनो प्रयत्न थतां अजाणे **ब**नो वर्णागम थाय छे.

३२. **अवरउहउ-भउहउ:** वर्णविकारमां **म्. व्. ब,** उनी एक बीजामां फेरबदली मालम पडे छे. ( **सि. हे.** ८।४।३९७ G. P. 251) हाथप्रतोमां **ब्** तो **व** ज लखाय छे; केटलीक हाथप्रतो ज भेद पाडे छे. प्रसिद्ध दाखलो **करमि-करवि-करउं** आ त्रणे य रूप अपभ्रंशमां प्रचलित छे. **सि. हे.** ८ । ४ । ३८५ । S. K. Chatterji O.D.B. 280, 288

३६. **दाहिण-मारुउऽमिय-सीयलु:-दाहिण [दक्षिण] सि. हे.**

८।१।४६। **मारुउऽमिय अ नो लोप**; आ प्रकारनो लोप स्वरभार के छंदोबंध खातर अपभ्रंशमां दीठामां आवे छे. दा. त. आज उद्धरणमां पं. ३५. **मोहुप्पाइउ**, पं. ४५. **सलिल-ब्भन्तरे** इ० सरखावो संस्कृतसंधि-**रामोऽगच्छत्**। **मोहेऽपतत्** इ० अस्वरित प्रथम ह्रस्वनो लोप. Divatia G. L. L. I P. 368. Turner J. R. A. S. 1921. G. Ph. 23. G. P. 99. "In Apabhrams'a also the rhyme determines the toning of the vowels".

४०. **णवल्लउ** [**नव+अल्ल स्वार्थ**] अपभ्रंशमां अल्ल इल्ल उल्ल स्वार्थे उमेरवामां आवे छे. **सि. हे.** ८।४।४२९ मां **उल्ल** एकलानो ज उल्लेख छे. **सि. हे.** ८।२।१५९ मां बाकीनानो उल्लेख छे. G. P. 595 आ तद्धित संस्कृतमां **आल** (**वाचाल**) **आलु** (**दयालु, श्रद्धालु**) **इल** ( **फेनिल पिच्छिल** ) **उल** ( **हर्षुल, चटुल** ) **ल** ( **अंसल, मांसल** ) इ० रूपे छे. ल् बेवडायो शाथी ते माटे जुओ टिप्पण आज उद्धरण पं. ५०.

४२. **सहु-सहुं** [ **सहकम्*** ] G. P. 206: "अ- **सहु=साकम्** ( **सि.हे.** ८।४।३५६. ४१९ । ) आ व्युत्पत्तिना कारणमां ते जणावे छे के **क** ना **अ** उपर उदात्त होई **सा** नो **स** थाय छे; G. P. 80; अने **कम्=उं** G.P. 352." प्रो. भांडारकर अने गुणे <सं. **सह.** Divatia G. L. L. II P. 94 गू. शूं < प्रा. गू. **सिउं** < सं. **सह-समम्**; प्रा गू. **सिउंनो** प्रयोग सं. १२६६ '**जंबुसामिचरिय**' प्रा. गू. का. पा. ४४. कडी २० '**पंचसए चोरेह सिउं प्रभवउ घरि पइठउ ॥**'

४३. **आरक्खिय णियबलु** पोतानुं बळ भेगुं करीने.

४४. **छुडु-सि. हे.** ८।४।२२। **यदेच्छुडुः** । परन्तु अपभ्रंश साहित्यमां **यदि** एकलो **ज** नहि **परन्तु** सामान्य निपात तरीके पण ते वपराय छे.

४९. **ससिह-रासि** [ **सहस्ररश्मि** ] व्यत्ययनुं उदाहरण; **सहस्रनुं सहास** अने **सहस** रूपान्तरो छे.

४९. **लइ** सामान्य निपात **सि. हे.** मां उल्लेख नथी; अपभ्रंश कृतिओमां बहुधा देखाय छे <सं. **लात्वा**

५१. **उप्परि** [**उपरि**] **सि. हे.** ८।२।९८-९९। सूत्रमां शब्दना आदिमां नहि परन्तु शब्दने अंते के वचमां आवेला व्यंजननुं द्वित्व कोईक शब्दोमां निश्चये करीने अने कोईक शब्दोमां विकल्पे करीने थाय छे. आ प्रकारना

शब्दोनां जुदा जुदा विद्वानो भिन्न भिन्न अभिप्रायो आपे छे. G. P. 2 मां टीका करे छे जेनुं अंग्रेजी भाषांतर हुं मूकुं छुं "The accent of M., Amg., JM., the poetical Apbhrams'a and mostly of JS. corresponds mainly to the Vedic accent. As the weakening or dropping out as well as the raising of the vowel rests on it, as also the doubling of the consonants in certain cases, it can not be purely musical, but must have been mainy expiratory." आ मतनो आशरो लई 194 मां "A consonant between vowels is doubled sometimes when followed by an accented vowel" अने वळी "The same rule explains the doubling of the suffix **ल्** in **अल्ल, इल्ल** and **उल्ल**." केटलाक ( Prof. Bloch ) एम माने छे के **तैल्य, पक्य, दुकूल्य** जेवा शब्दो प्रचारमां हशे तेना उपरथी आ रूपो ऊतरी आव्यां हशे; अने स्वरने तेमां लेवा देवा नथी. आ संबंधी संपूर्ण विवेचन J. R. A. S. April 1916 'Indo-Aryan Accent in Marathi' by Turner. केटलीक बार शब्दनी मात्रा (quantity) अने संस्कृतनुं व्यंजनतत्त्वटकाववा पण व्यंजनद्वित्व करवामां आवे छे.

६४—६५. आमां **विद्दुममरगय=सुरधणु; इंदणीलसय=घण; चामियर=विज्जु; हार=बलाय,** छायामां **बलाहक** ने बदले **बलाक=** 'हंस' वांचो.

कडवक छट्ठानी शैली जेमां **कहि मि** नुं पंक्तिए पंक्तिए बब्बे वार पुनरावर्तन करवामां आव्युं छे. ए शैली चारणोमां बहु प्रचलित छे, अने अंग्रेजी-असर पूर्वेनी गूजराती वर्णनात्मक कवितामां घणी वार देखा दे छे. **रामायण**मां किष्किन्धाकाण्डमां पम्पा सरोवरना वर्णनमां अथवा कालिदासना **रघुवंश. सर्ग. १३. श्लो. ५४-५७** मां आ प्रकारनी शैलीनो अंश मालम पडे छे, पण रूढ शैली तरीके नहि ज. अपभ्रंश काव्योमां तो पगले पगले आ प्रकारनी शैली देखा दे छे.

६८. **हुल्ल [पुष्प]; वउल्ल [वर्तुल]**; पं. ७४ **पहुत्त [प्रभूत]**; ७९ **उल्लुक; अल्लीण** एमां व्यंजनद्वित्व मालम पडे छे; आमां **उल्लुक**

जुदी ज जातनुं छे [ **उद्** + **लुप्त** ]; आम ते कर्मणि भूतकृदंत परथी बनेलुं छे.

७५ **छुड्ड छुड्ड; सि. हे.** मां **ईषत् ईषत्** अर्थ नथी.

७५ **वलग्गहो**—वि नो **व** थवामां **ल** परना उपान्त्य स्वरभारनी असर छे; आवी असर गूजरातीमां वधारे थती जाय छे. '

७८. **जुवइ सहासु जासु** नी छाया सुधारो; **युवत्यः सहासाः यस्य** एम वांचो.

८२. **उल्ल** [**उद्र***] **सि. हे.** ८।१।८२। **उदोद्वार्द्रे** ॥ G. P. 111 अने Weber = √**उद्**=**उन्द्** मांथी विशेषण; **अल्ल** अने **अद्द** जे **सि. हे.** मां बताव्यां छे ते < सं. **आर्द्र.**

८३. **इत्थु** [ **अत्र** ] **सि. हे.** ८।४।४०४-४०५ । G. P. 107. मां अत्तमांथी नहि पण वै.सं. **इत्था**—सरखावो –सं. **इत्थं**; ते ज प्रमाणे **जेत्थु, तेत्थु, केत्थु=यत्था, तत्था, कत्था** ए ध्यानमां लेवा जेवुं छे के वै. सं., पा., अने अप. नो मेळ लावता मथीए तो **य, यद्** , **या**=सं. **यद्; त, तद्, ता**=सं. **तद्** ; **क, कद्, का**=सं. **किम्** ; आ प्रमाणे सर्वनामनां मूळरुप मालम पडे छे.

८४. **माणेवि** भोगवीने सरखावो–गु॰माणवुं.

८५. **करेप्पिणु सि, हे.** ८।४।४४०। G. P. 588. वैदिक संबंधक भूतकृदंतनो **त्वी** अपभ्रंशमां हयात छे; तेमज **त्वीनम्, इष्ट्वीनम्, पीत्वीनं** ( पाणिनि ७।१।४८ अने तेना परनी काशिका )

९० **जावहिं-तावहिं; जेत्तहे-तेत्तहेः** सरखावो **सि. हे.** ८।४।४०६; G. P. 271 **जाम=यावत्** ; **ताम=तावत्** अने **जामहिं, तामहिं =यावद्भिः, तावद्भिः**; आमां पण तृतीया अने सप्तमीनो संकर मने लागे छे. **जावहिं** अने **तावहिं=जामहिं** अने **तामहिं**; **व=म्** ; **जेत्तहे-तेत्तहे सि. हे.** ८।४।४३६ **यत्र-तत्र**; **सि. हे.** ८।४।४०४ मां **अत्तु, तत्तु; जत्त+हे, तत्त+हे=यत्र+स्मात्, तत्र+स्मात्** अने ए ज **एत्तहे, जेत्तहे, तेत्तहे**, G. P. 107; **अ** ने भारपूर्वक बतावता पूरतो **ज ए** थयो छे. अथवा **ए**=**एतद्**नो असरथी **अ** नो **ए** होय.

९४. **गत्रेसहो** आज्ञार्थ बीजो पुरुष बहुवचन

९४. **तासु रक्खवमि**—९१. **संकेयहो दुक्कउ**—१०७. **कहिय**

**सुणंतह खंधावारहो**=जुओ **मार्कण्डेय. १७।११। हो च ॥ सि. हे.** मां आ प्रकारनो आदेश नथी; Pischel पण आनी नोंध लेतो नथी. खरी रीते चतुर्थी अने छठ्ठीना अपभ्रंश अने प्राकृतमां एक बनी जवामां आ संभ्रम थयो छे. जेना तरफ गति बतावनानी होय ते वस्तुनी द्वितीया के कोइक वार चतुर्थी मूकवानो संस्कृतमां नियम छे एटले आवा प्रयोगोमां द्वितीया, चतुर्थी अने षष्ठीनो संभ्रम अपभ्रंशमां बहुधा होइ **मार्कण्डेय** आ आदेश बांधवा प्रेरायो होवो जोइए.

९८. अहिं **जोव्वण-इत्ति** वांचो; **जोव्वण=यावन** मां **व्व** जुओ.

९९ **पट्टवत्थइं**—गू. मां पट=प्रवाहनी पहोळाइ ए अर्थ अहिं अभिप्रेत होय; बाकी **पट्टवस्त्र** एटले सं. मां 'रेशमी वस्त्र' अथवा तो टिप्पणीमां कह्युं छे तेम 'साडी' अर्थ लेवाय. सामान्य रीते **वत्थें** एकवचनमां होय; पण **वत्थें** अने **वत्थहिंना** संभ्रमथी **वत्थइं** अहिं वपरायुं होय.

१०० **पुलिणाहोरणाइं व पगुत्तो**=मूळमां **वीणाहोरणाइं व पंगुत्ती** छे; परंतु आ उद्धरणनी पं. २५ ने अनुसरी आ सुधारो कर्यो छे. मूळ **हाथ**-प्रतनी पंक्तिनो कांइ अर्थ थइ शकतो नथी.

१०१ **मल्लिवदंतेहि**=अहिं **व** श्रुति नथी. सामान्य रीते **इ** अने **ए** पछी **य** अने **उ** अने **ओ** पछी **व** श्रुति होय छे.

१०६. **आईय** G. P. 254 **आवइ= आयाति (सि. हे. ८।४।३६७. उ. १; ४१९. उ. ३) आवहि (सि. हे. ८।४।४३२ उ. १)**; एवी ज रीते **गै=गायति=गाअइ=गावइ.** Shahidulla: Dohākos'a P. 33. **आवइ< आअमइ< आगमति***, अने तेने माटे Dohākos'a p. 151. St. 70 टांके छे:

**पण्डिअ सअल सत्थ वक्खाणइ, देहहि बुद्ध बसंत न जाणइ ।**
**अमणागमण तेन विखण्डिअ तोबि णिलज्ज भणइ हउं पण्डिअ ॥**

**अमणागमण=गमनागमन । आइय<** सं. **आगमित***

११९ **सिर·मुह·कर·कम·कमल महासरु** वांचो.

१२२. **जोहा-कल·कंठिणी**=जीभरूपी कोकिला; **कलकंठिनी**=कोकिला; एवी ज रीते **मयगल=मद कलनो** अपभ्रंशमां 'हाथी' अर्थ थयो छे.

१२५. **मणधणवंतहु** मन ए ज जेनुं धन छे एवानो

१२६. **खंतइं [खन्+त]** कर्मणिभूतकृदंत.

१२८. **निउणसमासिय [निपुणसमासित]** बहु ज नैपुण्यथी बंध बेसतां करेलां; टिप्पणीमां ए प्रकारनो ज अर्थ सूचित लागे छे.

१३४. **कड्ढियउं [कृष्टम्] कड्ढिइ ( सि. हे. ८।४।१८७। )** पाली **कड्ढित**; Bloch ( Langue de la Marathe 112 ); S. K. Chatterjee ( Origin and Development of Bengali Language. 272 )सं. कृष्टमांथी उत्तीर्ण करे छे; परंतु ड्ढ समझाववा खातर √**दिव** धातुना वर्गनो (=चोथा गणनो) एने गणे छे. Prof. Bloomfield ( J. A. O. S. 1921 P.365 ) √**कृष+द्** ने मूळ धातुना रूप तरीके धारे छे. > कड्ढ > **कड्ढ** रूप थाय. [ Shahidulla: Dohākos'a P. 222 ] गू-काढवुं; हिं-काढना; मरा-काढणं.

१३५. **सहइ [राजते]** सि. हे. ८।४।१०० √शुभ् मांथी उत्तीर्ण होवा संभव छे.

---

## ॥ द्वितीयमुद्धरणम् ॥

**कवि अने तेनुं जीवनः—**

प्रथम उद्धरण '**चउमुहु सयंभु**'ना **पउमचरिय**मांथी लेवामां आव्युं हतुं. आ द्वितीय उद्धरण पण ते ज ग्रन्थमांथी लीधुं छे. **पउमचरिय** अधूरु रहेलुं ते **चउमुहुना** पुत्र **तिहुयण सयंभु** ए पूरुं करेलुं. आ उद्धरणने छेवटे पुष्पिका आपी छे ते परथी ते समझाशे. एटले **चउमुहुनो** पुत्र होइ, **तिहुयण** नवमाना अंतनो के दशमानी शरुआतनो अपभ्रंश कवि कही शकाय. पोते केवी रीते अधूरु **पउमचरिय** पूरूं कर्युं तेनुं इतिवृत्त आ उद्धरणनी पुष्पिकामां वर्णव्युं छे ते वाचके जोइ लेवु. आ उद्धरणमां २० कडवां छे. आठ आठ पंक्ति अने एक कडी घत्तानी एटले एक कडवक ए नियम आ उद्धरणमां जळवायो नथी. मूळ **पउमचरिय**मां आ उद्धरण ८३ मो संधि छे.

**उद्धरणवस्तुः—**

आ उद्धरणमां सीतानी अग्निपरीक्षानु कथानक कहेवामां आवेलुं छे. वाल्मीकिना कथानकमां अने आमां फेर छे. लव=अनंगलवण अने कुश=मदनांकुश. आ बन्नेनो पुरमां प्रवेश थाय छे अने ते वखते तेमने आवकार मळे छे. (१) रामपुत्रोना प्रवेश वखते रामना सामंतो, खंडीआ राजाओ, मित्रराजाओ, योद्धाओ, वानरवीरो बधा य त्यां आवे छे. बधानो अभिप्राय एम छे के लोकोना नादने राजी करवा सीतानी कांइक परीक्षा करवी. ( २ ) राम कहे छे के " सीतानुं सतीत्व अने पवित्रता हुं जाणुं छुं पण सीता उपर आवी अपकीर्ति नगरजनो नाखे छे ते ज हुं जाणतो न हतो." (३) ते वेळा विभीषणे त्रिजटाने बोलावी; अने हनुमाने पोतानी पत्नी लंकासुंदरीने बोलावो, तेमणे रामने वीनव्या अने कह्युं के " सूरज पूर्वनो पश्चिम ऊगे, तो ज सीताना सतीत्व पर कलंक लावी शकाय; छतां य जो विश्वास न पडतो होय तो तुला, मंत्रेला चोखा, झेर, जळ अने अग्नि एमांना एकथी सीतानी परीक्षा करो. " (४)आ सांभळी रामे सुग्रीव, विभीषण, अंगद,चन्द्रोदरना पुत्र विराधि, अने पवनपुत्र हनुमानने पुष्पक विमानमां पुंडरीक नगरे मोकल्या. एमणे सीताने अभिनंदन आपी विमानमां बेसी राम पासे आववा अरज करी. (५) सीता गद्गद स्वरे विभीषण प्रति बोल्यां के "मारा आगळ रामनुं नाम न लेशो कारण के तेमणे मने भयंकर वनमां मोकली दइ. मारा हृदयमां भयंकर अग्नि चेताव्यो छे ते एम होलवाय एम नथी. (६) छतां य राम माटे नहि परन्तु तमारो इच्छाने मान आपी हुं आवुं छुं. " एम बोली सीता पुष्पक विमाने चडी, अने सवारे कौशलनगरी अयोध्यामां आवी पहोंची. (७) सीताने जोइ रामे तेनी अवलेहना करी के "सामान्य रीते स्त्रीओ निर्लज्ज होय छे; आवी स्थितिमां ते पोताना भरथारनुं मुख जोतां केम लज्जा पामती नथी ? " सीताने पोताना सतीत्वनी खातरी होवाथी बीधी नहि अने गद्गद शब्दे जवाब वाळयो " गुणवान माणसो पण स्त्रीनो विश्वास करवानी बात आवे छे त्यारे हलकाश बतावे छे." ( ८ ) अनेक दृष्टांतो आपी सीता नर–नारी वच्चेनुं अंतर बतावबा यत्न करे छे अने अग्निपरीक्षा स्वीकारे छे. (९) सीतानुं वचन सांभळी बधा जनोने अने रामना योद्धा अने सहायकोने हर्ष थाय छे. (१०) सीताना बोलने अनुसरी खोदनारा बोलावी रामे खाडो खोदाव्यो; अने खड, लाकडां, चंदन, देवदार, कपूर इत्यादिथी ते खाडो पूर्यो अने चारे बाजुए सोनाना मांचडा बेठक माटे गोठव्या; देवो पण आ दृश्य जोवा आव्या. सीता लाकडांना पुंज पर चडी अने एने वैश्वानरने

प्रार्थना करी "हुं पापी होउं तो मने बाळजे." कलकल थयो; अग्नि लगाडतां तो मोटी ज्वाला ऊठी अने बधाए हाहाकार कर्यो. (११) बधा योद्धाओए धाड मूकी; अने तेओ रामना पर फीटकार वरसाववा लाग्या. (१२) ज्वालाओ नीकळवा मांडी अने जगत् धूमाडाना अंधकारथी व्याप्त थइ गयुं; परन्तु सीता पोताना सतीत्वने लीधे डगी नहि. तेणे अग्निने पोते पापी होय तो बाळवा अरज करी; आटलुं धैर्य कोनुं होय? अग्नि शीतल बनी गयो; अने पोतानी सत्ता बतावी शक्यो नहि. आ अवसरे मनमां संतोष पामेलो अग्नि सुरजनोने कहेवा लाग्यो, "सतीत्वनो प्रभाव जुओ! अग्नि पण सीताने बाळी शकतो नथी!" (१३) एटलामां चिताने स्थाने महासरोवर बनी गयुं; अने तेमां कमळ ऊग्युं. तेना पर दिव्य आसन उत्पन्न थयुं. सुरवधूओए तेना पर सीताने बेसाडी. देवोए दुंदुभिनाद कर्या अने पुष्पवृष्टि करी. बधा जनोए जयजयकार कर्या. (१४) जाणे लक्ष्मीना अभिषेक समये सर्वे दिग्गजो मळ्या होय तेम सर्वे देवो अने योद्धाओ त्यां मळ्या. (१५) राम बोल्या, "खराबजनोना स्वच्छंदी बोलथी में तने त्यजी; मने क्षमा आप; अने निःसापत्न्य राज्य कर." (१६) सीताए जवाब वाळ्यो, "राम तमे शोक न करशो; में तमारा प्रसादे बहु भोग भोगव्या छे. हवे मने संसार पर आसक्ति रही नथी. हुं तो तप करीश." (१७) एम बोली सीताए पोतानो केशपाश ऊपाडी नांख्यो. आ जोई राम मूर्च्छा पामी गया. देवो सीताने ऋषिना आश्रममां लई गया. सत्यभूषण नामे मुनि पासे तेणे दीक्षा लीधी. एटलामां राम मूर्च्छामांथी जाग्या अने जोयुं तो जनकतनया त्यां दीठी नहि. (१८) 'सीता क्यां' एम बोलता बोलता राम चारे दिशामां जोवा लाग्या. एटलामां कोइए विनयपूर्वक कहुं. "पेला उपवनमां देवो सीताने लई गया छे; अने तेमणे दीक्षा लीधी छे." आ सांभरी रामने क्रोध चड्यो. राम उपवनमां गया. मुनिने जोतां ज तेमने ज्ञान उत्पन्न थयुं. रामे मुनिने नमस्कार कर्या. (१९) बीजा राजाओए पण मुनिने नमस्कार कर्या. रामे मुनिने धर्मोपदेश करवा कहुं. मुनिए शास्त्रानुसार उपदेश कर्यो. (२०)

### ३. पद्यरचनाः—

ध्रुवपद अने घत्तामां १४+१३=२७ मात्रा. हेमचन्द्र छं. शा. पृ. ४२(अ) नी छेवटनी बे पंक्तिमां आ छंदनुं विवेचन कर्युं छे. छं. शा. नुं दृष्टान्तः—

**पलिअ केस जल दसणावलि जर जज्जरइ सरीरबलु**

**सव्वि वि गलिहिं अणंगलवलिअ किज्जउ धम्मु अणंतफलु ॥** कडवकनो छंद पज्झडिआ छे.

**४. टिप्पणीः—**

१ **लवणंकुसु** अनंगलवण अने मदनांकुश; जैनपरंपरामां 'लव' अने 'कुश'नां आ नाम छे. मात्रानी गणतरीमां आ पंक्तिमां **पुरे, पइसारेवि; महाहवेणंमां एने** ह्रस्व गणवो.

२ आ पंक्तिना प्रथम चरणमां छन्दोभंग थाय छे; जो के मूळनो **दुज्जस** कायम राखीए तो छंदोभंग निवारी शकाय; पण आ प्रमाणे ज लेवुं घटे तो कविए छंद माटे वधारे पडती ज छूट लीधी कहेवाय.

३ **समोडिउ** सरखावो **समोडेवि** पं. ७८ आ ज उद्धरण **समाडइ**= **सम्** अने **आ** + √वृत्.

३. **बलहद्द** = बलभद्र, राम, पद्म.

५ **रहे एक्कहि—हिं** < सं. **स्मिन्**; **एक्क**मां कनुं व्यंजनद्वित्व स्वरभार नथी छतां य. **अण्णेक्कहिं** < सं. **अन्यद्** + **एक** + **स्मिन्**; म. आणिक.

६ **वज्जजंघु** [ **वज्रजंघः** ] सीताने निर्वासित कर्यां त्यारे जैनपरंपरा प्रमाणे वज्रजंघ राजाए आश्रय आप्यो हतो.

८ **रहसें** [ **रभसा** ] परन्तु व्यत्ययनो आश्रय लई **हर्षेण** करीए तो ठीक पडे छे. गु. प्रयोग 'एना दीलमां हरख न मायो.' सरखावो आ ज उद्धरण पं. ४७.

९ **पइसंता** अने **पइ संता**नो यमक.

११ **अहरुल्ल** = **अहर** < सं. **अधर** + **उल्ल** स्वार्थे.

११ **घत्तिउ** = सि. हे. ८ । ४ । १४३ । = सं. √**क्षिप्**

११. **विवरेरउ** [ **विपरीत** + **इरउ** स्वार्थ प्रत्यय ] **विवरीअ** + **इरउ**. जुओ. **भविसत्तकहा** (Ed. Gune)नो शब्दकोष **विवरेर**=विपरीत.

१३. **ससरें कुसुमसरासणिण** छायामां **स्वशरेण कुसुमशरासनेन** परंतु **सशरेण कुसुमशरासनेन** एम पण अर्थ लई शकाय.

१४. **आयल्लउ** टिप्पणमां कोइक वाचके **आरार्तिकं** । **कामपीडा घा** । एम नोंधेलुं छे **दे. ना. मा.** I. 75. **आअल्लो रोगचलेसु** । जुओ उद्धरण. ३ पं. ५३. **आयल्लयसल्लइं कुसुमसरु** । **आअल्लने** प्रो गुणे **आकुल** के **आकुलितं** साथे जोडे छे. परन्तु **भ. क.** नां बधां दृष्टान्तोमां ए शब्द नाम तरीके वपरायो छे; अने उपर जणाव्युं ते प्रमाणे **दे. ना. मा.** नो तेने टेको छे. **भ. क.** ना दाखलाः–**सज्झसवसि वहंतु आयल्लउ** । VI 20. 4. **सुहमंगलजणजणियायल्लहो** IX. 9. 5. **आयल्लउ जणंति पइपरियणि** IX. 18. 10. **परिहरि तो वि तासु आयल्लउ** XI. 5. 17.

१५. **तेहए पमाणे** पर आपेलुं टिप्पण अस्पष्ट छे.

१७. **हक्कार** सरखावो सदर उद्धरण पं. ४४. ५१. आ पंक्तिमां मात्राभंग छे अने **हक्कार** ने बदले **हक्कारउ** वांचीए तो मात्रानी तूट दूर थाय छे. पं. ५१ मां **हक्कारा** = **आकाराः** ए अर्थ लीधो छे. गू. **हकारो. भ. क. हक्कारइ** [ D. आकारयति, शब्दापयति ]

१८. **जिणजम्मण** = **जिणजम्मणि** । सप्तमीनो इ प्रत्यय खप्पी दीधो छे.

२०. जाणे पांच मंदर पर्वतो एक ज स्थाने मळ्या होय तेम राम, सौमित्र, अनंगलवण, मदनांकुश अने शत्रुघ्न ते एक ज स्थळे मळ्या हता.

२१. **रहुवइहेमां हेनो ए ह्रस्व** वांचवो; नहि तो मात्राभंग थाय.

२२. **णाहि** जुओ **सि. हे.** ८।४।४१९। मराठी. 'नाहि.' गूजराती कवितामां 'नाहि' उछत–शब्द ( loan–word ) तरीके वपराय छे.

१०. **जाणमि ससहामंडलरायहो जाणमि सामिणि रज्जहो आयहो**––आ पंक्तिमां **जाणमि** बे वार छे अने एक **जाणमि**नो मेळ वाक्यमां लवातो नथी. एने घटाववा बे मार्ग छे. एक **जाणमि** अमुक शैलीनी जाळवणी खातर अनर्थक मूक्युं होय; या तो **मंडलने मंडण** सुधारी **ससहामंडण रायहो** = **राज्ञः स्वसभामंडनम्** । एम घटावाय.

११. सीतानी अंदर रहेला सघळा सद्गुणो तो समझी शकाय छे; परन्तु नगरलोकोए भेगा मळी मारे घेर हाथ उंचा करी, जे दुर्यश सीता उपर नाख्यो ते एक ज बाबत माराथी समझाती नथी.

३४. **रयणासवजाएं** रत्नश्रवन् रावण, कुंभकर्ण अने विभीषणनो बाप; ते कैकसी नामे कन्याने परण्यो हतो जेनाथी रावणनो जन्म थयो हतो. ( **हेमचन्द्र-त्रि. श. पु. चरित्र. पर्व. ७, सर्ग. १** ).

३५. **लंकासुंदरी** जैनपरंपरा प्रमाणे मूळ लंकाना कील्लाना रक्षक वज्रमुखनी विद्याना बळवाळी कन्या. मरुत्पुत्र हनुमाने लंकाप्रवेशवेळा वज्रमुखने हरावी तेनो घात कर्यो. लंकासुन्दरीने पण तेणे हरावी अने हनुमान तेनी वेरे परण्यो.

३८ **कालंतरे कालु जइ तिट्टइ** एक युग चालतो होय त्यां बीजा युगनुं घूसवुं जेम असंभवित छे तेम.

४०. **अवरें** मात्रा साचववा रें दीर्घ वांचवु पडे छे: एना करतां **अवरहिं** वांचवुं योग्य छे. **अवरें** एटले पश्चिमदिशामां ए अर्थ लेवानो छे.

४१. पांच दिव्यो १. तुला २. चावल–मंत्रेला चोखा ३. विष ४. जळ. ५ अग्नि.

४९. **आयामिय आयाम** = बल उपरथी बनेला क्रियापदनुं कर्मणि भूतकृदंत 'आक्रान्त'ना अर्थमां.

४९. ओहामिय सरखावो **ओहाइय हेट्ठामुहे** । **दे. ना. मा.** १. १५८ **ओहामइ** = आक्रमते । **सि. हे. ८. ४ १६०.** Pischel 261. 238 <अपभावति*< अपभावयति=आक्रमते.

५१. **अम्हइ आया तुम्ह हक्कारा** इने अम्हनी साथे वांचो; अने **अम्हइं** = **अम्हे सि. हे. ८. ४. ३७६.**

५४ **गग्गिर.** सरखावो पं. ७९. **गग्गर.**

६३ **तुम्हइने** बदले **तुम्हह** होवा थकी छे; लहिआओ ह अने इने सरखा वांचे छे.

६५. **परिमिय** छायामां **परिमित** ने बदले **परिवृत** वांचीए तो ठीक; कारण के **व्** अने **म्** नी फेरबदली अपभ्रंशमां बहु ज सामान्य छे.

७०. **सासणदेयए** हाथप्रतमां **ए** ने **य** नो पण बहु ज भ्रम रहे छे. अहि **एने** सुधारी **य** वांचीए तो वधारे सारी वाचना बने.

७४. **कुलग्गयाउ** = **कुलाग्रकाः** के **कुलागताः**

७५. **दावियनी दापितनी साथे दर्शित** पण छाया थइ शके.

८१–८२ स्त्री अने नदीनी श्लेषात्मक सरखामणी करी छे. छाया नीचेनुं टिप्पण श्लेष माटे जुओ; (१) **पउराणिय** पवित्र-चिरंतन (२) **कुलग्गय** सारा कुळमांथी आवेली–कुलपर्वतोमांथी नीकळेली.

९१. **जेण** शब्द समजाववो मुश्केल छे. सामान्य रीते अर्थः कनकनी गोळी अग्निमां तप्या पछी शुद्ध बने छे तेम जो हुं हुताशनमां रहुं तो मारा विशुद्ध मनने बीजां दिव्योथी शुं थवानुं छे?

९६. **दुस्सील** जेनुं मन खाटुं थइ गयुं छे तेवा.

१०६. **कंचणमंच रइय चउपासेहिं = काञ्चनमञ्चाः रचिताः चतुःपार्श्वेषु** एम वांचवुं जोईए; संस्कृत छाया सुधारी लेवी.

११५. आ पंक्ति मुद्रणप्रमादने लीधे रही गएली छेः **धाहाविउ भामंडलजणयहिं धाहाविउ लवणंकुसतणयहिं ।**

१२३. **कारण** व्यतिकर, बनाव – आ अर्थ अहिं अभिप्रेत छे.

१५१. छंदोभंग; **हसप्पहुने** बदले **हंसपहु** वांचीए तो आ भूल दूर थाय.

१७५. **जिह ण होइ पडिवारें तिय मइ** संस्कृत टिप्पणीमां **पुनः स्त्री न भवामि** एम आपेलु छे; ए अर्थ लावतां **मइ** ए प्रथमा = **अहं**ना अर्थमां लेवुं पडे छे. **सि. हे.** मां आ प्रयोगनो आदेश नथी. अर्वाचीन भाषामां **मैं**नो प्रथमामां प्रयोग हिंदीमां छे.

२०३. **छुडु छुडु** जुओ सदर ग्रन्थ उद्धरण १. पं. ७५. **भ. क.** IX. 6. 6. अर्थ बन्ने स्थळे सरखो ज छे.

२०६. **भरहेसरहु जेम पुरदेवें** जेम पुरदेव=ऋषभनाथ आदि तीर्थंकरे भरतेश्वरने धर्म कह्यो हतो तेवी रीते.

२०७. **तवचरित्तवरदंसणणाणइं [तपःचारित्रवरदर्शनज्ञानानि]** जुओ **तत्त्वार्थ०** १. १. **सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ।** आ बधानां पूर्ण लक्षण जाणवा आ सूत्र परनुं भाष्य जुओ. गूजराती वाचके पं. सुखलालजीनुं पुरातत्त्व मंदिर तरफथी प्रसिद्ध थएल 'तत्त्वार्थसूत्र' परनुं गूजराती विवेचन जोवुं.

२०७ **पंच वि गइउ** — संसारनी चार गति, नरकगति, तिर्यग्योनिमां गति, मनुष्ययोनिमां गति के देवयोनिमां गति अने पांचमो ते मोक्ष.

२०७ **जीवगुणठाणइं** [ **जीवगुणस्थानानि** ] जैनदर्शनमां १४ गुणस्थान गणाव्यां छे. जेम जेम भव्य शुद्धतर थतो जाय तेम तेम क्रमे क्रमे उपरनां गुणस्थाने चढतो जाय अने छेवटे मोक्षे जाय.

२०७ **खमदमधम्माहम्मपुराणइं** [ **क्षमादमधर्माधर्मपुराणानि** ] जुओ **तत्त्वार्थ०** ९. ७. **उत्तमः क्षमामार्दवार्जवशौचसत्यसंयमतपस्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्याणि धर्मः** । आथी विरोधी ते **अधर्म**. आम धर्म अधर्मनां पुराणां परंपरागत विवेचनो.

२०८ **जगजीवाउच्छेयपमाणइं** [ **जगज्जीवायुरुच्छेदप्रमाणानि** ] मोक्ष माटे आ बंधनोने तोडवां जोईए ते संबंधी प्रमाणो.

२१० **समयपल्लरयणायरपुव्वइं** [ **समयपल्यरत्नाकरपूर्वाणि** ] पल्योपम ए एक प्रकारनुं कालमान छे; एटले के कालना विभागो अने ब्रह्मांडना विभागोनां विवेचनपूर्वक.

२०९. **लेसाउ** [**लेश्याः**] छ प्रकारना ओप जे जीवने चढे छे ते. ते ओपने लीधे जीव संसारबंधनमांथी छूटो शकतो नथी. जैनपरंपराना रूढ शब्दोमां, कृष्णादि द्रव्यने योगे थता जीवना अध्यवसायविशेष-कृष्ण, नील कापोत, तेज, पद्म अने शुक्ल एम छ लेश्या.

२०९. **अणुव्वयाइं** [ **अणुव्रतानि** ] जुओ **तत्त्वार्थ०** ७ १. **हिंसानृतास्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम्** । यतिवर्ग आ व्रतो संपूर्णताथी पाळे छे ज्यारे गृहस्थो आ व्रतोनी क्षीणवटने त्यागी आछेरां (**अणु**) व्रत पाळे छे. आम अणुव्रत एटले गृहस्थने पाळवानां व्रतो.

२११. **सयंभुभडारइण** [ **स्वयंभूभट्टारकेण** ] पोतानी इच्छाए जेणे जन्म लीधेलो छे एवा पूज्य तीर्थंकरे–महावीरस्वामीए. आमां कविए पोतानी नाममुद्रा पण आणी छे ते जोवी. आखी पंक्तिनो अर्थः—' जेम परम आगममां ( सिद्धांतग्रन्थोमां ) तीर्थंकरभट्टारके कह्यां हतां ते प्रमाणे '; **आसि** [ **आसीत्** ] हुतुं.

# ॥ तृतीयमुद्धरणम् ॥

१. कवि अने तेनुं जीवनः—

आ उद्धरण **चतुर्मुख स्वयंभू**ना **हरिवंशपुराण**मांथी लेवामां आव्युं छे. आ कवि अने तेना जीवन विषे प्रथम उद्धरणमां ऊहापोह करवामां आवेलो छे. आ ग्रन्थमां ११२ संधि छे ते ग्रन्थना समाप्तिवचन परथी मालम पडे छेः—

**इय ऽरिट्ठणेमिचरिए धवलइयासियसयंभुउव्वरिए**
**तिहुवणसयंभुरइए समाणियं कन्हकित्तिहरिवंसं ॥**
**गुरुपव्वनासभयं सुयणाणुक्कमं जहा जाय**
**सयमिक्क दुहह-अहियं संधीत्थ परिसमत्ताउ ॥ संधि ११२॥**

आ ग्रन्थ १४००० श्लोकप्रमाण छे. **पउमचरियनी** माफक **चतुर्मुख स्वयंभूए** आ ग्रन्थ अधूरो राखेलो; अने तेना पुत्र **त्रिभुवन स्वयंभूए** ते पूरो कर्यो. आ हकीकत सदर ग्रन्थमां ठेरठेर वेरायलो प्रशस्तिगाथाओ परथी मालम पडे छे. **त्रिभुवन स्वयंभू**ना नामनी प्रशस्तिगाथा संधि १०० ना अंतथी मालम पडे छेः **इय ऽरिट्ठणेमिचरिए धवलइयासियसयंभुएवकए उव्वरिए तिहुयणसयंभुमहाकइसमाणिय समवसरणं णाम सउमसग्गो ।** एटले संधि १०० अने तेना पछीना संधि **त्रिभुवन स्वयंभूए** रच्या होय एम अधिक संभवित छे. परन्तु संधि ९२ ना अंतमां केटलीक गाथाओ छे जे बतावे छे के **चतुर्मुखस्वयंभूए** संधि ९२ रची ग्रन्थ अधूरो मूक्यो होवो जोईएः-

**तेरह जाइवकंडे कुरुकंडेकूणवीससंधीओ**
**तह सट्ठि जुज्झियकंडे एवं बाणउदि संधीओ ॥ १ ॥**
**सोमसुयस्स य वारे तइयादियहम्मि फग्गुणे रिक्खे**
**सिउ णामेण य जोए समाणियं जुज्झकंडं व ॥ २ ॥**
**छव्वरिसाइं ति मासा एयारस वासरा सयंभुस्स**
**बाणवइसंधिकरणे वोलिणो इत्तिओ कालो ॥ ३ ॥**
**वियहाहिवस्स वारे दसमीदियहम्मि मूलणक्खत्ते**
**एयारसम्मि चंदे उत्तरकंडं समाढत्तं ॥ ४ ॥**
**वरं तेजस्विनो मृत्युर्न मानपरिखण्डनं**
**मृत्युस्तत्क्षणकं दुःखं मानभंगो दिने दिने ॥ ५ ॥**

उपरनी गाथाओ हरिवंशपुराणनी रचना पर घणो प्रकाश नाखे छे. तेनो सार आ प्रमाणे छेः–१३ संधि यादवकांडना, १९ संधि कुरुकांडना, अने ६० संधि युद्धकांडना एम ९२ संधिओ थाय. (१) बुधवार, त्रीज, फाल्गुन नक्षत्र, शिव नामनो योग–आ समये युद्धकांड पूरो करवामां आव्यो. (२) छ वर्ष, त्रण मास अने अगीआर दिवस स्वयंभूने ९२ संधि पूरा करतां थया. (३) रविवार, दशमी, मूल नक्षत्र अने अगीआरमो चांद्रमास एटले भाद्रपदमां उत्तरकांड शरु कर्यो. (४) तेजस्वीने मानभंग करतां मृत्यु वहालुं लागे छे; मृत्यु तो तत्क्षण दुःख आपे छे ज्यारे मानभंग तो हंमेश दुःख दे छे. (५)

आ गाथाओ त्रिभुवन स्वयंभूए रची होय एम लागे छे. कारण के ९२ संधि पूरी कर्या पछी चमुर्मुखनो काळ थयो होवो जोईए; अने पोताना पितानी कीर्ति अधुरी न रहे एटले थोडा समय पछी त्रिभुवने उत्तरकांडनो आरंभ कर्यो होवो जोईए. ग्रन्थनी प्रशस्ति परथी एम लागे छे के १०९ संधि पछीना संधिओ त्रिभुवने नहि रच्या होय; कारण के त्यार पछीना अधुरा ग्रन्थनो उद्धार यशःकीर्तिभट्टारके करेलो मालम पडे छे. एवो उल्लेख संधि १०९ने अन्ते छेः—

इह जसकित्तिकएणं पव्वसमुद्धरणरायएककमणं
कइरायस्सुव्वरियं पयडत्थं अक्खियज्जइणा ॥ १ ॥
ते जीवंति थ भुवणे सज्जणगुणगणह रायभावत्था
परकव्वकुलं वित्तं विहडियं पि जे समुद्धरहिं ॥ २ ॥

एटले यशःकीर्तिए संधि १०२ पछीना भागनो सोळमा सैकामां उद्धार कर्यो. आ वातनो उल्लेख ग्रन्थने अन्ते पण छेः—

सुणि संखेवु सुत्तु अवहारिउ विउसें सयंभें महि वित्थारिउं
पद्धडियाछंदें सुमणोहरु भवियणजणमणसवणसुहंकरु
जसपरसेसि कविहिं जं सुण्णउं जं उव्वरिउ किंपि सुणियाणहो
तं जसकीर्त्तिमुणिहि उद्धरियउ णिपवि सुत्तु हरिवंसच्छरियउ
णियगुरुसिरिगुणकीत्तिपसाएं किउ परिपुण्णु मणहो अणुरापं ॥

आ हरिवंशपुराणनी हाथपोथी भांडारकर ओरीएन्टल रीसर्च इन्स्टीट्युट, पूना, नं. ११२० सने १८९४–९७ छे. हाथपोथीने छेडेः इति हरिवंशपुराणं समाप्तं । ग्रन्थ संख्या १८००० । संवत् १५८२ वर्षे

फा वदि १३. ॥ लखेलुं छे; एटले सं. १५८२मां आ हाथपोथी लखेली छे एम मालम पडे छे.

आ उद्धरण **हरिवंशपुराण**नो संधि २८ छे; अने ते हाथपोथीनां पत्र ११४–१२० (अ) मांथी अहि ऊतारवामां आवेलुं छे. आ उद्धरणने एक ज हाथपोथीनो आधार छे. आ उद्धरणमां पांडवोनो विराटनगरमां अज्ञातवास अने ते अरसामां द्रौपदी प्रत्ये दुष्ट मोहथी नीपजतो कीचकनो वध-ए बे बाबतोनुं वर्णन करवामां आव्युं छे. आ उद्धरणनी वार्ता **जिनसेनना हरिवंशपुराण** करतां महाभारतना **विराटपर्व** साथे वधारे साम्य धरावे छे; जो के कोइक स्थळे वार्तामे जैन मान्यताओने अनुकूळ झोक आपवामां आव्यो छे.

२. उद्धरणवस्तुः—

द्रौपदीसहित पांडवो विराटराजना नगर तरफ गया; एवामां युधिष्ठिर पोताना चार भाई अने द्रौपदीने उद्देशी बोल्या, "बार वर्ष आपणे दुःखमां गाळ्यां; हवे जेम भ्रमर कमलसरोवरमां छूपाई रहे तेम आपणे एक वर्ष विराटना घरमां छूपाइने गाळवानुं छे. त्यां सेवा स्वीकारवानी छे; अने ए तो जाणीतुं छे के योगोओने पण अगम्य एवो सेवाधर्म तमारे आचरवानो छे. (१) माटे तमे जे जे सेवा करी शको ते मने जणावो. हुं तो कंक नाम धारण करी द्यूतना जाणकार अने सभामां बेसनार एवा राजाना पुरोहित तरीके रहीश." वृकोदर बोल्यो, "हुं बल्लव नाम धारण करी राजानो रसोईओ थईश." अर्जुन बोल्यो, "हुं नृत्याचार्य बनी नरपतिनी कन्याओने नाच शीखवीश. (२) मारुं नाम बृहन्नला राखीश; अने मारी कळामां मने कोइ पहोंची वळे तेवुं नथी." नकुल कहे, "हुं अश्वपति थईश." सहदेव कहे, "हुं गायोनो पालक थईश." (३) द्रौपदी कहे, "हुं सैरंध्री थई मत्स्यराजनी राणीनी दासी थईश." आ प्रमाणे नक्की करी विराटनगरनी भागोळे ते बधां आवी पहोंच्यां त्यां श्मशान हतुं अने एक भयंकर समडीनुं वृक्ष हतु. त्यां नकुले हथीयार मूक्यां; अने बधां नगरमां पेठां. (४) जे प्रमाणे तेओए नक्की कर्युं हतुं ते प्रमाणे विराटराजना द्वारपाळने तेमणे जणाव्युं अने द्वारपाळे बधी हकीकत विराटराजने सविस्तर जणावी. विराटराजे तेमने बोलाव्या एटले जीवदयासहित जाणे पांच परमेष्ठी प्रवेश करता होय तेम द्रौपदीसहित पांचे य पांडवो विराटना दरबारमां प्रवेश्या. (५) आ प्रमाणे पोतानी सेवा बजावतां पांडवोए अगीआर मास पूरा कर्या; अने जाणे कीचकने माथे कालदंड पडतो न होय तेवो बारमो

मास बेठो. कीचकनी नजर द्रौपदी पर बेठी अने तेने कामदेवनो ताप बाळवा लाग्यो. ज्यां ज्यां द्रौपदी जती त्यां त्यां द्रौपदीने अनेक प्रकारे कीचक काम याचना करतो. एक दिवस द्रौपदीए तेने धूतकारी काढ्यो अने कह्युं, "मारी सेवा पांच गांधर्वो करे छे जे आ वात जाणतां तने यमराजने त्यां मोकली आपशे." (६) परन्तु नवहजार हाथीओना वळवाळो ते कीचक द्रौपदीनुं मुख जोइ बोल्यो "मने ब्रह्मा विष्णु अने महेश कांइ करी शके एम नथी तो पांच गांधर्वो मने शुं करवाना हता ? मारा पर प्रसाद करी मने जीवाड अने अर्धी पृथ्वी हुं तारी आगळ धरीश." छतां य द्रौपदीए तेने तरछोड्यो; अने कीचकनी तो नवमी कामावस्था थई. तेणे पोतानी बहेन कैकेयीने कह्युं "आ स्त्रीथी मारुं मन रञ्जित कर; अने सुगंधपदार्थो आपी तेने तुं मारे त्यां मोकल." कीचके तो एकांतघरमां द्रौपदीने पकडी; पण जेम सिंहना हाथमांथी पोताना पुण्ये करीने हरिणी छटकी जाय तेम द्रौपदी छटकी अने कंक तथा विराट-राज ज्यां हता त्यां करुण रुदन करती पहोंची. ( ७ ) भानभूलेलो कीचक जमदूतनी माफक तेनी पाछळ लाग्यो. तेणे द्रौपदीने तेना केशपाशथी पकडी लात मारी. राजा अने युधिष्ठिरना देखतां ते मूर्च्छा पामी. भीमनो मीजाज गयो अने तेनी दृष्टि वृक्ष पर पडी, पण तुरत ज युधिष्ठिरे पोताना पगनो अंगुठो डाबी तेने अटकाव्यो. नगरनो स्त्रीओ व्याकुळ थई अने बोलवा लागी "ज्यां आवो मोटो माणस दुराचरण करे त्यां सामान्यमाणस शुं करे ?" पांचाली पण रडवा लागी, " जो आ नगरमां गांधर्व होय तो शुं विट कीचक मने आम वगोवी शके ? (८) क्रीडा माटे तेओ क्यांक गया हशे अने तेथी ज मारे हैयाबळीने आम सोरवुं पडे छे; जो पांचमांथी एक पण होत तो युद्ध माटे ठीक थात." आम द्रौपदी बोलती हती तेवामां सूर्यास्त थयो अने रात्रीए ते वृकोदर पासे गई अने पोताना कणी पडेला हाथ बतावती रडवा लागी. "तारा जीवतां मारी आवी अवस्था थाय छे. " (९) भीमे द्रौपदीने आश्वासन आपी आववानुं कारण पूछ्युं. द्रौपदीए दरेकनी दुर्दशानुं वर्णन कर्युं; (१०) अने कहेवा लागी के " अगीआर मास उपर पंदर दिवस थया छतां य दुःखनो छेडो आवतो नथी." भीमे आश्वासन आप्युं, " तुं शा माटे रडे छे; आंख लुंछी नांख. तें संसारधर्म नीरख्यो नथी. पूर्वजन्मनां कर्मरूपी वृक्ष केटलुंक सुख अने केटलुंक दुःख एम बे फळ आपे छे. शुं रावणे सीताने ओछुं दुःख आप्युं हतुं ? (११) गई काले में कीचकने मारी नाख्यो नथी; पण आजरात्रे तो ते मारा हाथे मरशे ज. तुं एनी साथे रात्रे संकेत करी तेने नृत्यशालामां लाव." द्रौपदी हर्ष पामी अने पोताना निवासे गई. अने बीजा दिवसनो सूर्य ऊग्यो

जाणे जेणे द्रौपदीनो केशकलाप खेंच्यो हतो ते मरी गयो के केम ते जोवाने न ऊग्यो होय ! (१२) बीजे दिवसे पांचाली कीचकनी पासे गई; कीचके तेने बोलावी अने कह्युं, " जो तुं मने एक ज वार आलिंगन आपे तो तुं मागुं ते वैभव तने आपुं."(१३) कीचके जे कह्युं ते द्रौपदीए मान्युं अने तेने नृत्यशालामां रात्रे आववानो संकेत गोठवी भीमने वात करी. रात्रे कीचक नृत्यशाला तरफ पोतानी सेना लई गयो. भीम तो त्यां पेसीने ज रह्यो हतो अने कीचक आव्यो एवो ज तेणे तेना केशपाशथी तेने पकडयो. कीचकने लाग्युं, " आ द्रौपदीनो हाथ न होय; खरेखर गांधर्व ज मने मारी नाखे छे." (१४) कीचके जेम तेम करीने भीमनो ग्राह मूकाव्यो अने कहेवा लाग्यो, " गांधर्व, तुं शा माटे युद्ध करवा आव्यो छे ? हुं नवहजार हाथीना बळवाळो कीचक छुं; अने मारूं मरण जेनी वसुमती नामनी प्रियाने हुं ऊपाडी लाव्यो हतो ते भीमने हाथे छे." भीमे बधा पांडवोनुं ओळखाण आप्युं अने पोते भीम छे एम जणाव्युं. आ जाणी कीचके भीमने आह्वान आप्युं (१५) बन्नेयनुं मल्लयुद्ध जाम्युं; अने ते द्वंद्वयुद्धमां कीचके भीमने मुष्टिप्रहार कर्यो. भीम लोहीनो उलटी करी अने जेम तेम करी ते उभो रही शक्यो. (१६) भीमना मनमां घडीभर एम ज थयुं " शुं मारो यश आ द्वंद्वयुद्धमां हणाई जशे ? " परंतु धीरज धरी तेणे फरीथी कीचक उपर हुमलो कर्यो अने तेने यमसदन पहोंचाडी दीधो. तेणे तेना हाथपग भांगी मांसना लोचा जेवो तेने करी नाख्यो. भीमने बहार काढी द्रौपदीए बहार आवी जणाव्युं " कीचकने गांधर्वोए मारी नाख्यो छे." आ सांभळी " कीचकने कोणे मार्यो ? " एम कही मोटा योद्धाओ दोडया अने कीचकना सो भाइओए घरने घेरो घाल्यो. (१७) प्रकाश करी बधाए जोयुं, त्यारे " खरेखर कीचकने गांधर्वोए मार्यो छे कारण के तेना पर घा सरखो य देखातो नथी. " एम तेमने मालम पडयुं. एक बाजुए द्रौपदी शून्यवत् उभी हती; बधायने शंका थई के कीचक द्रौपदीने खातर मरी गयो. कीचकना सो भाइओ "सवार थवा देवानी के राजाने पूछवानी शी जरुर छे ? " एम कही कीचकनी ठाठडी उपर द्रौपदीने नाखी मसाण तरफ चाल्या. ( १८ ) द्रौपदीए आक्रंद करवा मांडयुं, " हे गांधर्वो तमे क्यां मर्या छो ? " भीमथी न रहेवायुं; पोताना केश छूटा करी, वृक्षने ऊपाडी, राक्षस जेम कीचकना भाइओ पर धस्यो. कीचकोए ठाठडी छोडी दीधी वात फेलावा मांडी के कीचको मराया. वृकोदर घेर पाछो वळयो अने सूरज ऊग्यो. मत्स्यराजना मनमां संकल्प थयो अने तेणे कैकेयीने जणाव्युं, " द्रौपदीने घर बहार काढो. " एटलामां द्रौपदी पोतानां अंगोपांग धोई कोइ देवतानी माफक नगरमां पेठी; अने एकदम बृहन्नला पासे

गई. जेवी छूपी रीते ते बृहन्नलाने कहे छे के " तुं उत्तरानी साथे नृत्यक्रीडा कर्या पछी तारे घेर जजे." एटलामां तो सुन्येष्टानी वाणी ऊछळी " तुं चाली जा, अने तारा नगरने अने राजाने सुख आप" द्रौपदी गुस्से थई. ' जा तुं मने काढी मूकीश तो हुं आखा नगरनो विनाश करीश जो तेर दिवस तारा घरमां तुं मने स्थान आपीश, तो तुं अने तारो पति पूर्ण मनोरथथी राज्य भोगवी शकशो. "

३. पद्यरचनाः—

सामान्य रीते दरेक कडवकमां ८ पंक्तिओ अने २ पंक्ति घत्तानी मळी १० पंक्तिओ छे. चतुर्मुख स्वयंभूनुं आ लखाण होवुं जोईए तेने आथी टेको मळे छे. घत्ता अने ध्रुवकनो छंद चतुष्पदी प्रकारनो छे अने दरेक पंक्तिमां २६ मात्रा छे; अने ९+१४=२३ एटले ९ मात्रा पछी यति छे. हेमचन्द्रना छं. शा ६ पत्र ४०. (अ) प्रमाणे केतकीकुसुम आ छंदनु नाम छे हेमचन्द्र आ दृष्टान्त आपे छे;—**ओजे दश समे पञ्चदश केतकीकुसुमम्। यथा,**

**बिंबालिउ भुवणु नवकेयइकुसुमपराइण।**
**नं अहिवासिअउं मयरद्धयकम्मणजोइण ॥**

कडवकना देहनो छंद हेमचंद्रना छं. शा. ६ पत्र ४३ (अ) प्रमाणे **पारणक छेः चितौ षचपा वा पारणकम ॥ चतुर्मात्रत्रयं त्रिमात्रश्च, यदि वा षण्मात्रचतुर्मात्रपञ्चमात्राः पारणकम् । यथा,**

**कइअहिं होएसइ तं दिवसु, आणंदसुहारसपावणउ**
**होहि प्रियमुहससिचंदिमइं, जहिं नयणचउरह पारणउ ॥**

आमां अने आपणा कडवकना देहना छंदमां एटलो ज तफावत छे के आपणा उद्धरणना छंदमां दरेक पंक्तिनां बब्बे चरणना अन्तनो प्रासमेळ छे; ज्यारे हेमचंद्रना उदाहरणमां बब्बे पंक्तिना अन्त प्रासमेळथी बद्ध छे. दा. त.

**तो भणइ जुहिट्ठिलु भायरहो सब्भावणेहगुणसायरहो ।**

४. टिप्पणः—

१. **जुहिट्ठिलु** [ युधिष्ठिरः ] जुओ **सि हे. ८ । १ । ९६ । जहु ठुलो जहिट्ठिलो ।** एम आदेश छे. वळी जुओ **सि. हे. ८।१।१०७,२५४.**

२. **भणइ भायरहो** छट्ठीना रूपनो द्वितीयारूपे प्रयोग हेमचंद्र नथी आपता; परंतु मार्कण्डेय प्रा. स. १६. ११. ते नोंधे छे.

११–१२. पंक्ति ११ अने १२मां ९+१३=२२ ए प्रमाणे मात्रा छे; ज्यारे ९+१४=२३नो छंद आंह अपेक्षित छे. सरखावो **सेवाधर्मः परमगहनः योगिनामप्यगम्यः** ।

१८. **बुज्झणउ, जुज्झणउ** धातुने **अण** लगाडी बनावेलां विशेषणो.

२२. **बिहंदल** सं. **बृहन्नला** > **बिहन्नल** > **बिहंदल**. सरखावो. गु. पांदडु

२४–२६. अर्जुन बृहन्नलाने आवश्यक एवी पोते कइ कइ विदग्धताओ धरावे छे तेनुं वर्णन करे छे. **गुंथेवइ, नच्चेवइ, गाएवइ** अने **वाएवइ** ए शब्दो नाम तरीके वपरायलां विध्यर्थ कृदंतो होई सप्तमीमां छे. '**गुंथेवइ वेणि पईहरिय**' एमां **वेणि** खरी रीते द्वितीयामां छे परंतु अर्थस्पष्टता खातर छायामां ए शब्द छट्ठी विभक्तिमां मूक्यो छे. **पईहरिय** ए एक सूचन प्रमाणे **प्रदीर्घिका** होय; परन्तु अहि प्रक्रमभंगना दोषथी विमुक्त रहेवा **प्रतिगृहिका=दासी** ए अर्थ लीधो छे. **पईहरिय** शब्द **पईहर**मांथी लीधो छे. जुओ उद्धरण १. पं. ९. परन्तु आथी पण उत्तम अर्थनिर्वाह बीजी रीते थई शके एम छे. **गुंथवी=गुंथेवि य इ०** (=**ग्रथित्वा च वेणीं प्रदीर्घिकां या कृष्णभुजङ्गैरनुहृता** । सरखावो **विराटपर्व. ३. २७. पिनद्धकंबुः पाणिभ्यां तृतीयां प्रकृतिं गतः । वेणीकृतशीरा राजन् नाम्ना चैव बृहन्नला** ॥

२७. **जमलजेट्ठ** नकुल

२८. **पधुर** मूळमां पाठ **पद्धर** छे; **दे. ना मा. ६. १०. पद्धरमज्जू** एम आपेलुं छुं. तेने अनुसरी **सरलान्** एम संस्कृतछाया करेली छे. मूळमां करेलो सुधारो **दप्पुधुर**नी साथे प्रासमेळ लाववा करेलो छे. एम सूचित छे **ज** के 'जे अश्वो दर्पने लीधे धुरामांथी छटकी जाय छे तेने बरोबर ताबेदार हुं बनावीश.' **पद्धर** उपरथी गु. पाधरो.

२१, **जोइसिउ** [ **ज्योतिषी** ] सहदेव.

३०. **धणु** सरखावो गु. धण.

३८. **दणुदेहवियारणइं** आ पंक्ति दूषित छे कारण के **दनु**मांथी **दनुज** अर्थ घटाडवो पडे छे.

३९–४०. सरखावो **भविसयत्तकहा** १. ५. नी घत्ता **तहिं गय-उरु णाउं पट्टणु जणजणियच्छरिउ । णं गयणु मुएवि सग्गखंडु महि अवयरिउ ॥ मेघदूत** १. ३०. **स्वल्पीभूते सुचरितफले स्व-र्गिणां गां गतानां, शेषैः पुण्यैर्हृतमिव दिवः कान्तिमत् खण्डमेकम् ।**

४६. **चलत्थु=चलार्थः** कदाच मूळपाठमां **चलित्तु=चलित्र** 'चंचळ'ना अर्थमां होय एम संभव छे.

५०. **पंचपरमेष्ठि** ते अर्हत्, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय अने साधु.

५३. **आयल्लय** जुओ टिप्पण उद्धरण. २. पं. १४.

५४. **उक्कोवणइ** स्पष्टता खातर **उत्कोपनानि** ए संस्कृत छाया सारी छे.

५४. **उज्जंगल दे. ना. ७. १३४. उज्जंगलं हढे दीहे ।**

५५. **थणयल [स्तनतल] तलनो** अर्थ सामान्य सपाटी एम लेवानो छे; संस्कृतमां **स्तनतट** ए शब्द सुप्रसिद्ध छे, अने ए छाया करीए तो पण वांधो नथी.

६१. **णवणायसहासबलु** नव हजार हाथीना बळवाळो; आ ज प्रमाणे भीमनुं पण वर्णन सदर उद्धरण पं. १५१.; पं. १८७ **णउणाय** शब्दथी कीचकना भाइओने वर्णव्या छे; अथवा पछी कीचकने पण वर्णव्यो होय कारणके पूर्वापरसंबंधे बन्ने य अर्थ बेसता छे.

६५. **णवमी कामावत्थ हुय** तेनी नवमी जडतानी कामावस्था थई.

दश कामावस्थाओ नीचे प्रमाणे छेः—

**दशावस्थः स तत्रादावभिलाषोऽथ चिन्तनम् ।**
**स्मृतिर्गुणकथोद्वेगप्रलापोन्मादसंज्वराः ।**
**जडता मरणं चेति दुरवस्थं यथोत्तरम् ॥**

**( दशरूपक. ४. ५२. )**

ते ज प्रमाणे जुओ **साहित्यदर्पण** ३. १९०. । : —

**अभिलाषश्चिन्तास्मृतिगुणकथनोद्वेगसंप्रलापाश्च**
**उन्मादोऽथ व्याधिर्जडता मृतिरिति दशात्र कामदशाः ॥**

६६. **मणु रंजहि आयहे तीमइहे** आमां **तीमइहे=स्त्रियः** छाया करी छे; कदाच लहियानी भूल के एवं कांइ होवा संभव छे. बाकी अर्थ तो छायानो ज ठीक छे.

६७. **समालहणु [समालंभन]** चंदन विगेरे देह शोभावनाना पदार्थो **वि. प.** मां सुरा अने अन्न लई द्रौपदीने मोकलवामां आवे छे.

६८–७०. पंक्ति ७०ना द्वितीय भागमां बे मात्रानी तूट छे. पोताना पुण्ये करीने केमे करी सिंह पासेथी छूटेली हरिणी जेम ज्यां कंक अने विराट हता त्यां करुण रुदन करती ते पहोंची.

७१–७२. सरखावो **वि. प. १७ तां कीचकः प्रधावंतीं केश-पाशे परामृशत्** । अथैनां पश्यतो राज्ञः पातयित्वा पदाऽवधीत् ॥१०

७३–७५ सरखावो **वि. प. १६. तस्य भीमो वधं प्रेप्सुः कीच-कस्य दुरात्मनः । दंतैर्दंतांस्तदा रोषान्निष्पिपेष महामनाः ॥ १४ ॥ + + + अथावमृद्नादंगुष्ठमंगुष्ठेन युधिष्ठिरः । प्रबोधनभयाद्राजा भीमं तं प्रत्यषेधयत् ॥ १७ ॥ तं मत्तमिव मातंगं वीक्षमाणं वन-स्पतिम् । स तमावारयामास भीमसेनं युधिष्ठिरः ॥१८॥**

७४. **मरुमारमि** छायामां **म्रिये मारयामि** एम लखेलुं छे; परन्तु ए अर्थ खरो नथी. खरी रीते मारवाचक द्वित्व होवा अत्रे संभव छे. सरखावो सदर उद्धरण पंक्ति १६९. **मरुमारिउ कीचकु केण** ।

७८. **काइंनी छाया किमपि** त्यजी किम् एम छाया करवी ठीक पडशे. " ज्यां मोटो माणस ज दुश्चरितनुं आचरण करे त्यां सामान्य माणस करे शुं ? "

८१. **नियकीलइं मच्छुडु कहि मि गय** " पोतानी क्रीडाए ( = स्वैरताथी ) एकदम क्यांक गया छे.' **मच्छुडु=मंछुडु.** सरखावो **भ.क. ९. ५. १-२. तं पिक्खंतु मुसइ मइविभउ " अत्थि किंपि सुहकम्महो संभउ । सच्चउ संविहाणु फलु दोसइ लइ मंछुडु सुहिसंगमु होसइ ॥ मंछुडु, मच्छुडु=मंक्षु**

८२. **जुप्पइ [ युज्यते | सि. हे. ८ । ४। १०९।**

८४. **कउहंतरकसणीकरणखमु** दिशाओना अंतरने श्याम करवा समर्थ एवं अंधारुं.

८७. **उज्झर** प्रवाह; **वल्लर=वन दे. ना. ७. ३६. वल्लरमरण्णं ।**

९०. **पइं जीवंतएण महु एही भइय अवत्था** तृतीयानो सति

सप्तमीना अर्थमां प्रयोग **भइय** < सं. **भवित***; **एही** रूप पण जोवा जेवुं तो छे ज.

१००. **पुराइयरुक्खु** पूर्वजन्मरूपी वृक्ष.

११३. **नरिंदहे** युधिष्ठिर तरफथी.

११४. **अज्जोणिय-कल्लोणिय** आजनुं, कालनुं; लगाडेलो प्रत्यय जोवा जेवो छे.

११६. **तुंगि** रात्रि. **अदृश्यमानस्तस्याथ तमस्विन्यामनिंदिते** । वि. प. २२. ३७.

११७. **गय णियथलि हेलणु दुमयसुय**-आने **गय नियय-निहेलणु दुमयसुय** द्रुपद राजानी सुता पोताने गृहे गई. **निहेलणु-दे ना.** ७. ५१. **णिहेलणमगारजघणेसु** ।

१२४. **णत्थि हत्थिहयसाहणइं** आ वाक्यमां नाम बहुवचनमां छे ज्यारे **णत्थि** एकवचनमां छे; परन्तु **णत्थि**नो अव्ययात्मक प्रयोग जे अर्वाचीन गूजरातीमां रूढ छे ते अपभ्रंशमांथी आवतो देखा दे छे.

१२५. **किं कमलसमाणु ण मुहकमलु** आमां उपमान कमलनी पुनरुक्ति छे. ए दोष छे.

१२७. **लइ** आज्ञार्थ बीजो पुरुष एकवचन √**ला**

१२७. **मंठ दे. ना.** ६. १११. टीका **मंठो बंध इति केचित्पठन्ति** ।

१३१. **जं** करतां **तं** सुधारो ठीक थशे.

१३६. **जहि सीहु कुरंगहो कमु करिवि** जेम सिंह मृग तरफ फाळ मांडीने.

१३७. **घंघु. दे. ना.** २. १०५. **घरे घंघो** । घर सरखावो गु. घंघोलिउ.

१३७. **पिड्ड** '**पाइअसद्दमहण्णवो**' आ शब्दनो 'अधीनता' अर्थ नोंधे छे. **पेटकनो** अर्थ ' कांइ पकडवा माटे आंगळीओसहित लंबावेलो हाथ ' एम पण थाय छे

१४४. **वसुमइ-अवहरण** भीमनी वसुमती नामनी स्त्रीने ते वरी गयो अने तेने लीधे कीचकने भीमसेनना हाथे मरवानुं हतुं.

१४६. **मत्थाणयरुमां म्** उच्चारसरलता खातर ऊमेरवामां आवेलो छे.

१४६-१४८ पांडव अने द्रौपदीनां ओळखाण भीम कीचकने करावे छे.

१५८. आहित्थ दे. ना. १. ७६. चलियकुवियाउलेसु आहित्थो । महि शब्दना प्रयोगमां पुनरुक्तिदोष आवेलो छे.

१६१. ओहुल्लिय दे. ना. १. १५७. मां ओहुर शब्द छे; ओहुरं च खिण्णम्मि । टीकामां ओहुरं अवनतं स्रस्तं चैत्यवन्तिसुन्दरी । भ. क. १४. ११. ५. कोवि भणइं नवि बंधमि फुल्लइं जाम न वइरिमुहइ ओहल्लइं । परन्तु छंदने अनुसरी भ. क. मां ओहुल्लइं वांचवुं ठीक छे; अने 'खिन्न' अर्थ बरोबर बेसे छे आ शब्द उद्+√फुल्लना विरोधार्थी धातु अव+√फुल्लमांथी उत्तीर्ण थएल होवो जोईए. सरखावो गू. 'पाक ओलाइ गयो.'

१७०. पंचजणाहिएण पंचजन=सर्वे जन, आखुं जगत; तेना शत्रुरूप.

१७१. णिज्झाइउ [निध्यात] 'जोयुं' ना अर्थमां.

१७७. उहुनो पश्यत अर्थ कर्यो छे; परन्तु आ पाठ सुधारी इहु के एहु करी तेनो एषः अर्थ करी कीचकने लागु पाडी शकाय.

१७८. आ पंक्तिनो अर्थः–"आम त्यारे प्रभात थवानी राह जोवानी य शी जरुर छे अने वळी राजाने पूछवानी य शी जरुर छे ?" वि प. २३. ददृशुस्ते ततः कृष्णां सूतपुत्राः समागताः । अदूराच्चानवद्यांगीं स्तंभमालिंग्य तिष्ठतीम् ॥ ४ ॥ समवेतेषु सर्वेषु तामूचुरुपकीचकाः । हन्यतां शोघ्रमसतीं यत्कृते कीचको हतः ॥ ५ ॥ अथवा नैव हन्तव्या दह्यतां कामिना सह । मृतस्यापि प्रियं कार्यं सूतपुत्रस्य सर्वथा ॥ ६ ॥ ततो विराटमूचुस्ते कोचकोऽस्याः कृते हतः । सहानेनाद्य दह्येम तदनुज्ञातुमर्हसि ॥ ७ ॥ पराक्रमं तु सूतानां मत्वा राजाऽन्वमोदत । एटले वि. प. मां कीचको राजानी रजा ले छे: आपणी कथामां तेओ रजा लेवानी जरुर जोता नथी.

१८०. सवडंमुहु दे. ना. ८. २१. सवडंमुहो अहिमुहे ।

१८२. वि. प. २३. १२. जयो जयंता विजयो जयत्सेनो जयद्बलः ।

१८३. कुहिणिहि=रथ्यासु दे. ना २. ६२. कुहिणी कुप्परे रच्छासु । जुओ वि. प.२३. ततः स व्यायतं कृत्वा वेषं विपरिवर्त्य च ॥ १७ ॥ अद्वारेणाभ्यवस्कंद्य निर्जगाम बहिस्तदा । स भीमसेनः

प्राकारादाक्रम्य तरसा द्रुमम् ॥ १८ ॥ श्मशानाभिमुखः प्रायाद् यत्र ते कीचका गताः । स लंघयित्वा प्राकारं निःसृत्य च पुरोत्तमात् । जवेन पतितो भीमः सूतानामग्रतस्तदा ॥ १९ ॥

१८४. नोक्खि सि. हे. ८। ४। ४२२. नवस्य नवखः । गू. नोखी नव+स्वार्थ प्रत्यय (क्क >) क्ख = नवक्ख के नोक्ख. श्री. नरसिंहराव < प्रा. अण्णवक्खय < सं. अन्यपक्षक G. L. L. Part I. p. 371.

१८७. णवणाय पणट्ठ पइट्ठ कहि नवनागो एटले कीचकना सो भाईओ नाश पाम्या. एम वात प्रसरी. कहि 'कथा' ए विचित्ररूप छे; परन्तु आवां रूपो अपभ्रंशमां बनतां हतां.

१८८. पल्लट्ठु सि. हे. ८।२।६७. पर्यस्तं; ते उपरांत ८। २। ४७। G. P. 130, 285.

१८९. अणिहयमल्ल अनिहत एटले हार्या नथी तेओमां मल्ल एटले श्रेष्ठ.

१९०. आ पंक्तिनी छाया सुधारी वांचोः कैकेयीं शिक्षयति "सैरन्ध्रीं निवासात् प्रतिसारय" आ माटे जुओ वि. प. २४ सु· देष्णामब्रवीद्राजा महिषीं जातसाध्वसः । सैरंध्रीमागतां ब्रूया ममैव वचनाविदम् ॥

१९२. भविच्चि देवी.

१९४. पच्छण्णपउत्तिहिं गुप्तप्रवृत्तिओथी, गुप्त संज्ञाओथी.

१९५. अप्पणउ णिहेलणु जाइ = संस्कृतछाया सुधारो आत्मनः गृहं याहि । जाइ< जाहि-<सं. याहि.

१९५. सुजेट्ठ [ सुज्येष्ठा ] वि. प. मां सुदेष्णा; जिनसेनना हरिवंशपुराणमां सुदर्शना नाम छे.

२००. आ पंक्तिमां स्तंभनी मुद्रा छे.

# ॥ चतुर्थमुद्धरणम् ॥

## १. कवि अने तेनुं जीवनः—

हरिवंशपुराणनो संधि १०३ आ चोथा उद्धरण तरीके लेवामां आव्यो छे. त्रिभुवन स्वयंभुए तेना बापे अधुरुं राखेलुं हरिवंशपुराण केवी रीते पूरुं कर्युं तेनी चर्चा पण त्रीजा उद्धरणना प्रवेशकमां करेली होई तेनी पुनरुक्ति अहिं आवश्यक नथी. आ उद्धरणमां आपेली आदिगाथा अने छेवटनां समाप्तिवचन तथा गाथा, आ संधि त्रिभुवननो छे ए बतावी आपे छे. आ उद्धरणमां २५ कडवक छे. भाषावैचित्र्यनो मुद्दाथी कर्ताए आ संधि रच्यो छे. एने लीधे आ भाग झाझो कोइए वांच्यो होय एम हाथप्रत परथी लागतुं नथी. वळी भाषा अपरिचित होवाथी लहीआए जेवुं वांच्युं एवुं लख्युं; अने वधारामां पोते य अढळक प्रमादो घूसाड्या होय तो तेमां कांइ नवाई जेवुं नथी. आ उद्धरण त्यारे ज शुद्ध थशे ज्यारे आपणने आ ग्रन्थनी चार पांच हाथप्रतो मळशे. नहि तो आथी ज आपणे संतोष मानवो रह्यो.

## २. भाषावैचित्र्यः—

कडवक १–५. मागधिका भाषामां छे, एम कर्तानां कहेवाथी अने भाषाना स्वरूप उपरथी मालम पडे छे. सि. हे. ८।४।२८७।—८।४। ३०२। सुधी मागधीनी चर्चा करी छे. आ मागधीनां लक्षण संपूर्णतया आपणा कडवकमां देखा देतां नथी. खास फेरफार र् नो ल् अने प्रथमा एकवचनमां ए प्रत्यय एम छे. जेम सामान्य अपभ्रंशमां महाराष्ट्री अने शौरसेनी प्रथमा एकवचनना ओनो उ करवामां आवे छे, तेम प्रथमाना एने अहिं इमां फेरवी नाखवामां आव्यो छे; कोइ वार र् रहेवा पण दीधेलो देखा दे छे. कडवक ३. मां र्नो ल् बीलकुल करवामां आव्यो नथी. भाषावैचित्र्य खातर ज आ कडवक मूकवामां आव्यां छे ते तो देखाई ज आवे छे.

कडवक. ११. मां ढक्काभासाकडवयं एम लखेलुं छे. मृच्छकटिकना टीकाकार पृथ्वीधरे अने मार्कण्डेये प्राकृतसर्वस्व १६मां आ भाषानी चर्चा करी छे. मार्कण्डेय आ भाषाने अपभ्रंश तरीके नथी गणावतो. तेने मते तो आ विभाषा छे. परन्तु ते हरिश्चन्द्र नामना लेखकने प्रो. सि. १६. २.मां

टांके छेः हरिश्चन्द्रस्त्विमां भाषामपभ्रंश इतीच्छति । अने तेना मतनो निरास करतां कहे छे के अपभ्रंशो हि विद्वद्भिर्नाटकादौ प्रयुज्यते । पृथ्वीधर भरतनाट्यशास्त्र । १७ । ५३ । नो विभाषानी गणतरीनो श्लोक टांकी ए विभाषाओने ज अपभ्रंश तरीके गणावे छेः-अपभ्रंशे—शकाराभीर-चाण्डालशबरद्रविडोड्रजाः । होना वनेचराणां च विभाषाः सप्त कीर्तिताः ॥ त्यार पछी ते कहे छेः ढक्कभाषापाठकौ माथुरद्यूतकरौ । माथुरनो भाषानुं दृष्टांत नीचे प्रमाणे छेः —

माथुरः—अले भट्टा, दशसुवण्णाह लुद्धु जूदकरु पपलोणु पपलीणु । ता गेण्ह गेण्ह । चिट्ठ चिट्ठ दूरात्पदिट्ठोऽसि । ( मृ. क निर्णयसागर. प. ४७ )

माथुरः—अले, विप्पदीवु पादु । पडिमाशुण्णु देउलु । ( विचिन्त्य ) धुत्तु जूदकरु विप्पदीवेहिं पादेहिं देउलं पविट्ठु । ( प. ४८ )

माथुरः- एसु तुमं हु जूदअरमण्डलीए बद्धोऽसि । (प. ४९)

माथुरः—तस्स जूदकलस्स मुट्ठिपहालेण णासिका भग्गा । ( प. ५७ )

पृथ्वीधरनी ढक्कीमां (१) उकार प्रथमा अने द्वितीयामां ( २ ) र्नो ल् विकल्पे थाय छे. (३) स्नो श् विकल्पे थाय छे. (४) हु=खलु देखा दे छे. (५) स्स छट्ठीमां छे. उपरना विशेषोमां विशेष (४) अने (६) महाराष्ट्री प्राकृतमां छे; (२) अने (३) मागधीनी असर बतावे छे; ज्यारे (१) अपभ्रंशने अनुवर्ते छे. पृथ्वीधर जाते ज कहे छेः लकारप्राया ढक्कविभाषा । संस्कृत-प्रायत्वे दन्त्यतालव्यसशकारद्वययुक्ता च । पृथ्वीधरनी ढक्कीनुं मागधी तरफनु वलण आम जणाई आवे छे.

मार्कण्डेय प्रा. स. १६मां[1] ढक्कीनी विशिष्टता आ प्रमाणे बतावे छेः-(१)

---

१. मार्कण्डेय प्रा. स. १६:—

टाक्की स्यात् संस्कृतं शौरसेनी चान्योन्यमिश्रिते ।
हरिश्चन्द्रस्त्विमां भाषामपभ्रंश इतीच्छति ॥
अपभ्रंशो हि विद्वद्भिर्नाटकादौ प्रयुज्यते ।
उत्स्यात्पदान्ते बहुलं ए च टः-हं हुमौ भ्यसः ॥
आमो वा-हं किमादेः स्यात्प्राग्दीर्घश्च विधीयते ।
त्वमित्यर्थे तुङ्ग भवेत्-अहमर्थऽम्मिहुंममाः ॥
ममेत्यर्थे महुं च स्यात्-यथा जिध-तथा तिध ।
दिङ्मात्रमुक्तमुन्नेयं शेषं शिष्टप्रयोगतः ॥

उ प्रथमा अने द्वितीया एकवचनने अन्ते (२) तृतीया एकवचनने अन्ते ए दा. त. खग्गे पेहरसि; खग्गेन पण थाय (३) भ्यः=हं के हुं दा, त. घरहुं पलिदु. रुक्खहं पडिदु (४) छट्ठी बहुवचन=हं के हुं (५) किम् जेवा सर्वनामनुं हं आगळ काहं अने काणं (६) त्वम्=तुङ्ग दा. त. तुङ्ग सर्वविद्याप्रवीणु. (७) अहम्=हुं, अम्मि, मम (८) मम=मह्यं ( ९ ) यथा=जिध अने तथा=तिध. मार्कण्डेय ढक्कीनुं दृष्टांत टांके छेः-राउ असमसमरैकमल्लु मअणमणाहरदेहसोहु सकलशस्त्रास्त्रविद्याप्रवीणु । आ उदाहरण तो सामान्य अपभ्रंश जेवु ज छे. बे चार विशिष्ट प्रयोगो सिवाय खास अपभ्रंशथी जुदी पडती कोइ भाषा होय एवी विशिष्टताओ तो टाक्कीमां नथी ज. माथुरनी भाषाथी मार्कण्डेयनी टाक्की जुदी छे.

आपणा उद्धरणमां आपेली ढक्कीमां आ प्रमाणे विशिष्ट लक्षणो देखा दे छे. (१) प्रथमा एकवचनमां उ (२) भवदि अने संभवदि शौरसेनीना जेवां रूपो. (३) हु=खलु (४) छट्ठी एकवचनमां स्स रूप. (५) से=तस्य महाराष्ट्री अने अर्धमागधीमां देखा देतुं रूप. आ उपरांत बीजां लक्षणो जणातां नथी. आटला उपरथी भाषानुं स्वरूप नक्की करवुं मुश्केल छे. वळी आखुं कडवुं एक वैदग्ध्य देखाडवा खातर ज लखेलुं छे; एटले मूळगत तत्त्वो आछां सांपडे छे.

मृच्छकटिक, प्राकृतसर्वस्व के आपणा उद्धरण परथी आ भाषामां खास तत्त्वो कयां होवां जोईए ए नक्की करवुं मुश्केल छे. प्रो. पीशल G. P. Einleitung 26. मां मृच्छकटिकनी ढक्की उपर टीका करतां कहे छे, "शौरसेनी अने मागधी प्रमाणे ज, ढक्कीनी बाबतमां हाथप्रतोना पूराबा विश्वनीय नथी; अने वळी ढक्कीनुं साहित्य एटला ओछा प्रमाणमां छे के ए भाषा केवी हशे तेने माटे कोइ पण प्रकारनी चोखवट थई शके एवी नथी."

आ भाषानुं नाम ढक्की हशे ? प्रो. पीशल G. P. Ein. 26. मां कहे छे के ढक्की ए पूर्वबंगाळना ढक्का उपरथी हशे. प्रो. पीशलनुं मानवुं भूलभरेलुं छे. कदाच ते मृच्छकटिकनी ढक्कीनो मागधी असर परथी आ अनुमान बांधवा दोराई गएला होवा जोईए. ग्रीअरसने ( J. R. A. S. 1918. P. 875-883 ) एम बताव्युं के आ भाषानुं खरुं नाम टाक्की होवुं जोईए अने ते भाषा अर्वाचीन राजपुताना ना ईशान प्रदेशमां एटले जयपुर, टोंक अने पंजाबना अग्निकोणमां बोलाती होवी जोईए. ग्रीअरसनना अभिप्राये,

टाकी अने गौजर अपभ्रंश एटले के सामान्य अपभ्रंश लगभग सरखा छे; तेथी करीने पूर्वोक्त निर्णय तेमणे बांध्यो छे. राजशेखरनी काव्यमीमांसा ( G. O. S. I. P. 51. ) नो श्लोक चोक्खु कहे छेः सापभ्रंशप्रयोगाः सकलमरुभुवः टक्कभादानकाश्च । आ उपरथी फलित थाय छे के मारवाड, टक्क अने भादानक एटले के ग्वालीअर बाजुनो प्रदेश-आ देशोमां अपभ्रंशनो व्यवहार हतो अने टाकी भाषा अपभ्रंशनी एक बोली होवी जोईए ए विधानमां कल्पनातिरेक नथी. एनी उकारबहुलता आ मान्यताने टेको आपे छे.

१. उद्धरणवस्तुः—

आ उद्धरणनुं नाम बलपण्हु=बलप्रश्नः छे तीर्थंकर नेमिनाथ द्वारका आवे छे. समवसरण भराय छे. नेमिनाथ धर्मोपदेश करे छे. त्यार पछी बलदेव प्रश्न करे छे. "आ द्वारावतीनो नाश कोनाथी अने केवी रीते थशे?" नेमिनाथ भविष्य भाखे छे. " द्वैपायनना शापथी द्वारामतीनो नाश थशे अने कृष्णनुं मृत्यु जरत्कुमारना बाणथी थशे." आ भविष्यवाणी सांभळी सर्व यादवो अने यादव स्त्रीओना मनमां शोक व्यापे छे. केटलाक प्रव्रज्या ले छे अने दुष्कर तप आदरे छे. आ कथा दिगंबर परंपराने अनुसरे छे. आ कथानी श्वेतांबर परंपरा जैनागमग्रन्थोना आठमा अंग-अंतगडदसाओमां वर्णवेली छे; तेमां बलदेव नहि पण कृष्ण नेमिनाथने प्रश्न पूछे छे.

देशपरदेश विहार करी नेमिनाथ साधुसमुदाय साथे आवे छे अने रैवतक पर्वतना उद्यानमां वास करे छे ( १ ) त्यारे कृष्ण पोतानुं सिंहासन मेली शिर नमावी सात पगलां भरी नेमिनाथने प्रणाम करवा जाय छे. (२) त्यार पछी बलदेव तेमने वांदवा जाय छे. (३) एमनी पाछळ सात्यकि, चारुणि, सढरि, द्वैपायन इत्यादि यादवो, पोतानी स्त्री, मित्र अने शिष्य सहित मकरांक=प्रद्युम्न नेमिनाथने वांदवा जाय छे. (४) त्यार पछी रुक्मिणीनो पुत्र भानुकुमार वांदवा जाय छे. (५) आ कडवुं विषम छे; परन्तु कृष्णनुं वर्णन अहिं फरीथी करवा प्रयास छे. वर्षाऋतुना मेघसमा कृष्ण आगळ चाल्या; अने आ रीते कृष्ण, बलदेव अने बीजा यादवो साथे वांदवा चाल्या. (६) आ रीते समवसरण थयुं अने नेमिनाथ तेमां लक्षित थया हता तथा देवो तेमने निहाळता हता (७) बलदेव अने गोविंद नेमिनाथनी स्तुति करे छे (८) आ प्रमाणे स्तुति करी यादवो समवसरणमां मनुष्योने बेसवाना कोठामां बेठा. (९) कृष्ण अने नेमिनाथनी प्रश्नोत्तरी आ कडवामां छे. (१०) जेम जेम नेमिनाथ भगवान धर्म कहे छे, तेम तेम

यादवोने आनंद थाय छे; अने एमनां वचनामृतो सांभळी सांभळी तेमने अभाव नथी थइ जतो. (११) बलदेव प्रश्न पूछे छे, " आ द्वारकानो क्यारे विनाश थशे ? " नेमिनाथ उत्तर दे छे, " आजथी बारमे वर्षे." (१२) बलदेव फरी प्रश्न पूछे छे, " त्यारे कृष्णनुं शुं थशे ? " नेमिनाथ जवाब दे छे " मद्यने लीधे अने द्वैपायनना शापथी द्वारामतीनो विध्वंस थशे; ( १३ ) पछी कृष्ण कौशांबीवनमां जशे ज्यां जरत्कुमारना हाथे तेमनुं मृत्यु थशे." त्यार पछीना कृष्णनां जन्मांतरो अने मोक्ष क्यारे थशे ते नेमिनाथ कहे छे. ( १४ ) आ सांभळी बलदेवनुं मुख मेंस जेवुं काळुं थई गयुं अने बधा य यादवोने शोक थवा लाग्यो. (१५) प्रद्युम्न चिंता करे छे. " सर्वज्ञनुं बोल्युं मिथ्या थतुं नथी. यादवोनो तथा द्वारकानो पूरो विनाश थशे. " आम संकल्पविकल्प करी कांचनमाला सहित तेणे तप आदर्युं. (१६) भानुकुमार, बीजा यादवो अने कृष्णनी राणीओए पण प्र म्ननी पाछळ दीक्षा लीधी. ( १७ ) बधा जनोए जातजातनां व्रत लीधां, तेनुं वर्णन आ कडवामां करवामां आव्युं छे. (१८) द्वैपायनने पोता थकी आ सर्व विनाश थशे, एथी चिंता थवा लागी एटले ते पूर्वदेशमां गयो अने त्यां तप करवा लाग्यो. (१९) जरत्कुमार पोताने हाथे ज कृष्णनो घात थशे एम विचारी पोतानां धनुष्य बाण लई दूर वनमां चाल्यो गयो.(२०) आ प्रमाणे थवाथी कृष्णने बधुं शून्य लागवा मांडयुं. बलदेवना सारथि सिद्धार्थे एटलामां बलदेवनो आज्ञा मागी. (२१) बलदेवे अनुज्ञा आपी अने सिद्धार्थे घोर तप आदर्युं. बलदेव अने कृष्ण नेमिनाथने नमीने त्यांथी गया. अने राजकाज छोडी शोकनिमग्न थया. (२२) नेमिनाथनी धर्मप्रवृत्ति विविध प्रकारे वर्णवी छे. (२३) (२४) आ प्रमाणे प्र म्न इत्यादि मुनिओ नेमिनाथ समक्ष तप आचरवा लाग्या अने सर्वे जनो भविष्यना क्लेशथी पीडित थई हर्ष अने विषादने पाम्या. (२५)

## ४. छंदोरचना:—

आखुं य उद्धरण भ्रष्ट छे; एटले छंदनो मेळ वारंवार तूटे ते स्वाभाविक छे. उद्धरणने मथाळे प्राकृतगाथा छे, सामान्य रीते गाथा १२+१८। १२+१५॥ मात्राना मेळे होय छे. प्रस्तुत गाथामां १२+१६ । ११+१४ ॥ मात्राओ छे. गाथानो अर्थ तो स्पष्ट छे; पण छंदनी दृष्टिए ते भ्रष्ट होवा वधारे संभव छे.

आखा उद्धरणमां २५ कडवक छे. आखा संधिने उद्धरण तरीके लेवामां आव्यो छे. आदिमां आखा संधिनो एक ध्रुवक छे. दरेक कडवकना आदिमां

**हेला** छे. हेला ए एक प्रकारनो ध्रुवक ज छे. **हेला**नो छंद ६+४+४+४+४ =२१ मात्रानो छे. छं. शा.[1] प्रमाणे आ छंद उदाहरणमां चार पंक्तिनो छे. जे जे स्थळे **हेला**मां मात्रानी भ्रष्टता आवी छे, त्यां त्यां टिप्पणीमां नोंध लीधी छे. कडवक ११ मां हेला नथी.

**घत्ता**नो छंद[2] बात्रीसमा कडवक सुधी २२ मात्रानो सामान्यतः कही शकाय; जो के भ्रष्टताने परिणामे **हेला**नी माफक **घत्ता**मां पण मात्रानो मेळ संपूर्णतया देखातो नथी. कडवक २३नी **घत्ता** १४+१३=२७ मात्रा मेळे छे. कडवक २४नी **घत्ता** १६+१३=२९ मात्रा मेळे छे. कडवक २५नी **घत्ता** १५+१२=२७ ना मेळे छे.[3]

कडवकना देहमां केटलांक कडवकमां जुदा जुदा छंदो छे. कडवक १मां १५ मात्रानो एकम छे अने दरेक बे पंक्तिए अन्त्यानुप्रास छे. आ छंद तृतीय उद्धरणनो **पारणक** छंद होई, हेमचन्द्रना उदाहरणने पूर्ण रीते अनुगमतो नथी. कडवक २.मां १६ मात्रानो छंद होई बे पंक्तिओ अन्त्यानुप्रासे छे. ६+४+६= १६ ए प्रमाणे आ छंदनो यतिक्रम छे. एक प्रकारनी **पज्झडिआ** आ छन्दने कही शकाय. छेवटना गणने अंते (– –) बे द्विमात्रिक स्वरो छे. कडवक ३. मां १६ मात्रानो छंद छे. बे पंक्तिए अन्त्यानुप्रास छे. पण बीजा कडवकथी फेर गणने अंते(⏑ ⏑)बे एकमात्रिक स्वर ए छे. छंदनुं नाम मूळमां **मत्तमातंग** आप्युं छे. आ छंदमां पण ६+४+६=१६नो यतिक्रम छे. आने पण **पज्झडिआ**नो प्रकार कही शकाय. कडवक ४.मां पण **पज्झडिआ** ज छे. कडवक ५. मां

---

१. षश्चीर्युग्जो लीर्घा हेला । षण्मात्रचतुर्मात्रचतुष्टयं सम· स्थानगतो जा लीर्वा हेला ॥ यथा,

कोअंडं पम्णरइअं गुणो महुयरा
बाणा कामिणीण नयणा विलासगहिरा ।
समयतणू जडो सहयरो तुसारकिरणो
हेलाए तहावि भुवणं जिणेइ मयणो ॥

२. आ हेलाछंद ज कही शकाय.

३. छं. शामां आ छंदोनां नामः—४२ (अ) १४+१३=अनंगललिता; ४२ (ब) १६+११=ओहुल्लणक; १५+१२ = राजहंस.

द्विपदीसमुदायनो छंद छे. आ आखुं कडवक भ्रष्ट छे; एटले छन्दनी मात्रानो निर्णय करवो एटलो सहेलो नथी. कडवक ६.मां द्वितीय पंक्ति साथे अन्त्यानुप्रासी २२ मात्रानो छंद छे. आ कडवकमां पण भ्रष्टता बहु छे कडवक. ७. मां २० मात्रानो छंद छे. कडवक भ्रष्ट छे. कडवक. ८.मां दरेक चरणनी २८ मात्रा छे. आ कडवक पण भ्रष्ट छे. कडवक ९-१३. मां १६ मात्रानो **पज्झडिआ** छे. कडवक. १४.मां १५ मात्रानो **पारणक** छे. कडवक. १५. मां प्रतिपादयमक शब्दालंकारयुक्त १६ मात्रानो **पज्झडिआ** छे. कडवक. १६. मां १५ मात्रानो **पारणक** छे. कडवक. १७-२५.मां १६ मात्रानो **पज्झडिआ** छंद छे. हाथ-प्रतनी भ्रष्टता आ उद्धरणना छंदोविवेचनमां मोटुं विघ्न छे.

५. **टिप्पणः—**

१-२. १२+१५नी मात्रामेळयुक्त **उपगीति** आ गाथा होय एवो संभव छे; मात्रानो मेळ मूळपाठमां मळतो नथी, ए पाठनी भ्रष्टता बतावे छे. मूळ हाथप्रतमां **तिहुवणे** हतुं ते सुधारी **तिहुवणो** करेलुं छे.

३. **वम्मीसर**=कामदेव. दे.ना. ७.४२.आ शब्द प्रचलित हतो. सरखावो छं.शा.पत्र ३१ (अ) २९ मा छन्दनुं दृष्टान्तः-**वम्मीसरकंचणतोमरललिया दिट्ठा छुडु सुंदरि चंपयकलिआ । घुलिओ छुडु दक्खिणओ गंधवहो विललिओ ता पहियाण मणोरहो ॥**

५-६. आ प्रथम कडवकना देहनी माफक मागधीमां छे ध्रुवा कडवकना देहनी माफक ज मागधीमां ज छे. ध्रुवानो अर्थ **जिनसेन हरिवंशपुराण** सर्ग. ६१. श्लो. ११-१३ ने अनुसरी कर्यो छे; ते श्लोक नीचे प्रमाणे छेः—

**ततः सुरवराभ्यर्च्यो नानाजनपदान् जिनः ।**
**विजहार महाभूत्या भव्यराजौ प्रबोधयन् ॥**
**उदीच्यान्नृपशार्दूलान्मध्यदेशनिवासिनः ।**
**प्राच्यानपि प्रजायुक्तान् स धर्मे स्थापयन् बहून् ॥**
**विहृत्य चिरमीशानः पुनरागत्य पूर्ववत् ।**
**गिरौ रैवतिके तस्थौ समवस्थानमंडनः ॥**

प्रस्तुत ध्रुवानुं मुख्य क्रियापद तो घत्तामां छे. ध्रुवानो अर्थ आ प्रमाणे छेः-" मध्यदेशमां प्रवेशी अने मध्यदेशमांथी पूर्वदेशमां सर्वे राजाओने, वैश्य,

द्विज अने क्षत्रियने धर्म संभळावी...(घत्ता) (१५-१६) बहु काळे पोताना मुनिओ साथे भ्रमण करी पुनः पाछा रैवतकना उद्यानमां नेमिजिनेश्वर आव्या.'' कडवकना देहमां तो बधां नेमिनाथनां विशेषणो छे. नेमिनाथ यादवकुलना हता अने कृष्ण बळदेव इत्यादिना वडेरा हता.

७. **हर** ११. **उद्धरिय** १४. **तामरसि** आ स्थळोए **र**नो **ल** करवो जोईए. १४. मां तो **तामलसि**नी साथे ज **कलसि**नो अनुप्रासराग बराबर जामे. केटलेक स्थळे प्रथमा एकवचननो रहेलो **ए**, **इ** समान ज लघु वांचवो.

१३. **थेलासण=स्थविरासन** ब्रह्मानुं आसन एटले कमळ. **दे.ना.**५.२९. **गोलव=गौरव**, अभिमान अभिमानरूपी कमळना निर्मळ चंद्र जेवा; एटले के जेम चंद्रने जोतां कमळ वीलाइ जाय तेम अभिमान मात्र नेमिनाथने जोतां वीलाई जतुं.

१३. **सल्लत्तय**-आधि, व्याधि, उपाधि.

१५. **बहविं कालेण=बहुना कालेन, बहविं** ए खास रूप छे **भ. क.** संधि. १७. कडवक ४. नी घत्ताः-**बहविं कालेण पइविरहमहादुह-खेविय**।

१८. २२ मात्राने बदले १९ मात्रा छे. ३ मात्रानी तूट छे.

२१. **पायसणिप्पेहुणकलणाए** अस्पष्ट छे. अर्थ समजातो नथी. **णिप्पेहुण=मयूर** अर्थ **लई** छायामां मात्र अर्थनिर्वाह कर्यो छे.

२२ **धुल<धउल=धवल**; सामान्यतः कृष्णनां वस्त्र धवल नहि परन्तु पीत कहेवाय छे.

२२. आ पंक्तिमां अने आखा कडवकमां वर्णवेलां कृष्णनां बाल्यकालनां पराक्रम जैन तेमज अजैन परंपरामां सरखां ज छे. विशेष जिज्ञासुए जिनसेननुं हरिवंशपुराण अथवा श्रीमद्भागवतपुराणनो दशमो स्कंध जोवो.

२९. आ पंक्तिमां कृष्णनी सामान्य बाल्यकाळनी क्रीडा वर्णवी छे. **लंगदि=रंगति** क्रीडाना अर्थमां; कमळ तोडवानी क्रीडा माटे सरखावो **जिनसेन-हरिवंशपुराण** ३६. ८-१०.

३०. **माउल** = मामो कंस.

३७. **णिमल्लि** ने बदले **णिम्मलि** वांचो.

३९. **वेणुदारि** एक राजानुं नाम छे. **ह. पु.** ५०. श्लोक ८५.

**वेणुदारी च विक्रान्तः** । बलदेव जेणे रणयुद्धमां वेणुदारी नामना शत्रुने भयभीत कर्यो हतो.

४३-४४ **घत्ता** २३ मात्रानी छे. आखी घत्तामां श्लेष छे. रेवती अने रोहिणी (नक्षत्रनां नाम) थी विभूषित तथा मघा अने हस्त नक्षत्रथी युत चंद्र जेवो पत्नी रेवती अने माता रोहिणी साथे मोटा हाथी पर जतो बळदेव लोकोथी गणायो.

४५-५६. आखुं कडवक. ४. प्रद्युम्नने लागु पडे छे. संस्कृतछायामां बधा य यादवोने लागु पाडी जे अर्थ करवामां आव्यो छे ते तद्दन अघटित अने खोटो छे. **अण्णु=अन्यः**-प्रद्युम्न. **जे=यः** (मागधी). जे पराक्रमो कडवकना देहमां वर्णववामां आव्यां छे ते प्रद्युम्नने लागु पडे छे.

४६. **सच्चइ-चारुणि-सढरी-दीवायणाऽणिरुद्धा** — यादववीरोनां नाम-सात्यकि, सारण, [चारुणि (?) भ्रष्टपाठ] सढरी (?), द्वैपायन, अनिरुद्ध.

४७. **मरंकि**=' स्मित सहित ' अर्थ छायामां लीधो छे ते खोटो समजवो; मूळ **मयरंकि = मकरांकः**, कामदेव, प्रद्युम्न अर्थमां ए शब्द लेवो सुसंगत छे. सरखावो सदर उद्धरण पं. २०६. आ प्रमाणे पाठ लेवाथी मात्रानी भ्रष्टता दूर थई चरणनो मात्रामेळ मळशे.

४८. प्रद्युम्न रुक्मिणीनो पुत्र तेथी ज रुक्मिणीना मनरूपी भुवनने आनंद आपनार ए विशेषण मूकवामां आव्युं छे.

४९. **जे कंचणमालापरिहरणें**—कंचनमाला प्रद्युम्ननी स्त्रीनुं नाम छे. सरखावो सदर उद्धरण पंक्ति. २०५.

५०. **जे सोलसमहलंभावण्णि**—कालसंबर विद्याधरने त्यां प्रद्युम्नने थएल सोल लाभ; जुओ **जिनसेन. ह पु ४७** श्लो. ३०-४४. **षोडशेष्वपि चैतेषु लाभस्थानेषु मन्मथम् लब्धानेकमहालाभं दृष्ट्वा विस्मितमानसाः॥**

५१. **जे कुरुखंधावारविणासि**—ह. पु. ४७. श्लो. ९८. **ततः शाबरसेनाभिः विद्यया विकृतात्मभिः । दुर्योधनबलं जित्वा कन्यामादाय खं ततः ॥** आ रीते दुर्योधननी सेनानो पराजय करी तेनी उदधि नामनी कन्याने प्रद्युम्न परण्यो.

५२. **जे दुज्जोहणपहुसंफासि**—जेणे दुर्योधनने मदद करी हती. कृष्ण पांडवोना पक्षमां हता ज्यारे कौरवोना पक्षमां आखुं य यादवकुळ हतुं.

५१. **तवसुय** [ तपःसुत ] युधिष्ठिर. **णर**=अर्जुन.

५४. **बंदिणजणअब्भुद्धरणि** जेणे केद थएला जनोने छूटा कर्या हता.

५७. प्रथम पंक्ति भ्रष्ट छे; एक मात्रा खूटे छे; एटले प्रथम पंक्तिनो कांइक भाग अस्पष्ट रहे छे. **ताव हियोलियहिं** अस्पष्ट छे.

५८. **भाणुकुमार** सत्यभामानो पुत्र.

५९–६२. कडवक ५.ना देहनो भाग घणो ज अस्पष्ट अने भ्रष्ट छे. मात्रामेळ कोइ पंक्तिनो बरोबर मळतो नथी. **द्विपदी**मां १२ मात्रा होवा संभव छे, अने त्यार पछीना छंदमां एटले पं.६१–६२मां १४ मात्रा होय. मूळमां आ छन्दने **मागधिका** छन्द तरीके ओळखाव्यो छे. केटलोक भाग अस्पष्ट छे. संस्कृतछाया एमांथी अर्थ काढवानी प्रकाशदिशा तरीके ज गणवानी छे.

६७–६८. घत्ता श्लेषात्मक छे. ध्रुवकमां भानुकुमारने चंद्र साथे सरखावी, कडवकमां अनेक विशेषणोथी तेनी प्रशंसा करी छे. घत्तामां प्रद्युम्ननां वखाण करी तेने सूर्य साथे सरखावी भानुकुमारनी संगतिए मूक्यो छे. **कमलाणंदणु**=(१) कमला–रुक्मिणीने आनंद आपनार (२) कमळने आनंद आपनार; **वर-दीहरकरु**=(१) उत्तम दीर्घ हस्त युक्त (२) उत्तम दीर्घ कोरण युक्त.

६९–७०. **हेला** ज भ्रष्ट छे. एटले ७१–७८ पंक्तिओ कोने लागु पडे छे ते ज समजवुं मुश्केल छे. आम तो कृष्णने लागु पडती होय तेम लागे छे. जो के ए तो छन्दने अनुकूल लढण आपवा खातर होय तेम लागे छे.

७१. **नारायण=नारा** पाणी + **अयन** स्थान. पाणीमां वास करनार विष्णुने (=कृष्णने पोताने) प्रिय एवी कमलनी मालाने धारण करता; अष्टमीना चंद्र समा विशाल अने उन्नत भालयुक्त.

७३. **हेमल-दल**=हेमल कोइ राक्षसनुं नाम लागे छे, हेमलनुं सैन्य.

७४. **वलग्ग=आरूढ; वलग्ग** < **अवलग्न** । छायामां **विलग्न** बताव्युं छे ते खोटुं समजवुं.

७५. जे देशो जीत्या तेनां नाम गणाव्यां छे.

७९. **हरि** ने छूटा पाडो. **तो हरि रामकामपमुहएहिं** इ०

७१–७८ आखुं कडवक भ्रष्ट थएल छे. सामान्यतः २२ मात्रानुं एक चरण छे. छेवटमां एनो संगीत अर्पतो अनुप्रास छे. ७८–७९ कदाच जुदो छंद होय; कारण के तेमां एनो अनुप्रास देखातो नथी. मात्रामेळ बहु त्रुटीयुक्त छे.

८१-८२. प्रथम पंक्तिमां मात्रामेळ लाववा **जगज्जणिय** वांचवुं ठीक पडशे. बीजी पंक्ति घणी ज अस्पष्ट छे. संस्कृत छाया बीलकुल संतोषकारक नथी.

८३. **भामंडल** (१) तेजमंडल (२) भामंडल नामनो योद्धो.

८३. **सीहासण** (१) सिंहासन (२) सिंहनी गुहा.

८४. **जट्ठमाला** (१) मुनिओनो समूह (२) काव्यनी पंक्तिनी वचमां अटकवानां स्थळोनो समूह (The group of caesura). आ पंक्तिमां छन्दनो मेळ लाववा आदि **णावट्ठ** ने बदले **णं** वांचो.

८९-९०. बीजी पंक्तिमां २१ मात्रा छे, जे खरी रीते २१ जोईए.

९१-१०१. नेमिनाथनी स्तुति. छन्द २८ मात्रानो छे.

९२. ४ मात्रा कमी छे; एटले छेवटना भागनो अर्थ बेसतो नथी.

९३. **कुवइ** कु=पृथ्वी+**पति**=राजा.

९४. **खवण** ने बदले **खवणय** वांचो; नहि तो एक मात्रा तूटशे. जेना यतिवर्गमांथी कामदेव दूर थयो छे ' एम अर्थ कराशे.

९५. ९. मात्रा वधारे छे. पंक्ति बहु ज भ्रष्ट छे. **जय**थी पंक्ति आरंभाती थी ए वळी तेना दूषणनो पूरावो छे.

९८. मात्रामेळ लाववा **वलय** अथवा **जडिल** दूर करवुं पडशे. तेम ज **मलिणिंदियाण** वांचीशुं तो वधारे स्पष्टता आवशे.

९९. **ईसि** वांचवुं; नहि तो एक मात्रा खूटशे, पंक्ति अस्पष्ट छे; परंतु नेमिनाथनो श्यामदेह आछां कुसुमथी समुज्ज्वलित थयो हतो तेनुं वर्णन छे.

१०० **कमलाभव** वांचो, नहि तो मात्रा खूटशे. पंक्ति अस्पष्ट छे.

१०५. **णरकोट्ठइ** समवसरणमां माणसोने बेसवानो कोठो.

१०६. **भूरिसउ=भूरिश्रवाः** एक राजा जेने यादवोए संहार्यो हतो.

१११. **चक्केसरु** = चक्रवर्ती जरासंधने उद्देशी ए शब्द वापर्यो होवो जोईए.

११५. **कोडिसिल** एक योजन उंची कोटीशिला कृष्णे केवल चार अंगुलीना बळथी उछाळी हती. जुओ. **ह. पु. सर्ग.** १५. श्लो. ३२-४०

११५. **सठ्ठवण्ह** सरखावो **सदर** उद्धरण पं. ११५. अर्वाचीन हींदीमां **दिन्हा** < प्रा. **दिन्न.**

११९. **केवलवरलोयण**–कैवल्य ए ज जेनुं उत्तम नेत्र छे, अथवा कैवल्य तरफ ज जेनुं उत्तम नेत्र छे ते.

११५–१४१. टाक्की भाषानुं कडवुं. चर्चा माटे आ उद्धरणनी प्रस्तावना जुओ. आखा कडवकमां यादवोनां नामो गणाव्यां छे. केटलांक नामो बीजा ग्रन्थोमांथी शोधी कढातां नथी. केटलांक नामो **ह. पु.** ५०. ११३–१३३ अने **त्रि. श. पु.** ( हेमचन्द्र ) मां मळे छे.

१३७. **जउणसिदस्स दिवायणस्स** यमुनामां रहेला द्वैपायनने; जैन-परंपरा द्वैपायनने यादवोमां गणे छे. **कुसुमसर**=प्रद्युम्न; अने तेनो पुत्र ते अनिरुद्ध.

१४३. **सस्स**=श्वास, प्राणायम; **शश्वत्** ए छाया प्रमाणे ' सतत. '

१४४. मात्राभंग **तेव** त्यजी निवारी शकाय. **जिहं=यत्र** अर्थ करवो पडे. संस्कृतछायामां सुधारो करवो.

१४६. **णाहि** नेमिनाथने. आ हेलामां २१ मात्रा छे; ज्यारे आवश्यक छे २२ मात्रा.

१४७. रोहिणी अने दशार्ह ( =यादवो ) नो लघु भ्राता वसुदेव – ते बन्नेनो पुत्र बलदेव. दश दशार्हो:–**समुद्दविजयो अक्खोभो थिमिओ सागरो हिमवं । अयलो धरणो पूरणो अभिचंदो वसुदेवो त्ति ॥**

१५२. **जिण सत्थेण** हे जिनदेव शस्त्रथी द्वारिकानो विनाश ज नथी थवानो. **सत्थ=शस्त्र, शास्त्र, सार्थ, शस्तृ** एम अनेक संस्कृत शब्दोनुं ते प्राकृतरूप थाय छे. उपरनो अर्थ योग्य लागवाथी स्वीकार्यो छे.

१५५. **दारहो** अने **दारहो**नो अन्त्ययमक.

१५६–१५७. घत्तानी प्रथम पंक्तिमां पूरी २२ मात्रा छे; ज्यारे बीजी पंक्तिमां बे मात्रा खूटे छे.

१५८–१५९ हेला २२ मात्रानी छे. बीजी पंक्तिनो छेल्लो अक्षर हाथप्रतमां नथी.

१६७. **पासहो**–मारफते–through ना अर्थमां

१६७–१६८ घत्तानी प्रथम पंक्तिमां २२ मात्रा छे; ज्यारे बीजी पंक्तिमां २१ मात्रा छे.

१६९. **चंडकंड–काण्ड**नो अर्थ 'शर' 'सोटो' एम बे छे. 'सोटो' अर्थ लईए तो धनुषनी पणछ बांधवानो सोटो.

१६९–१७०. आ हेलानी प्रथम पंक्तिमां २२ अने बीजी पंक्तिमां १९ मात्रा छे एटले ३ मात्रा खूटे छे.

१७१. **परमाउ** इ० आ चरणमां एक मात्रा खूटे छे. **णिरुहणि** वांचीए तो मात्रा मळी रहे. **पसुणिरुहणि**=पशुनुं निरोधन करनार एवा जरा-कुमारथी. **परमाउपवण्णु**=पोताना परम आयुने पामेला एवा कृष्ण.

१७४. **विच्छोइं** < **विच्छोह** ( दे. ना. मा. ४. ६२. ) = सं. **विक्षोभ**. भविसयत्तकहामां **विच्छोअ** शब्द प्रयुक्त छे. महाप्राणलोप–Disaspirationनुं दृष्टान्त. पूर्वगत सोष्मव्यंजननी अग्रथी आ लोप थवो संभवित छे.

१७७. **पंचमइं**ने बदले **पंचमए** अन्त्यानुप्रासने अनुकूल थशे.

१७८. **अट्ठमउ रामु** आठमा राम. जैनपुराणो प्रमाणे बलदेव.

१७९. आ वचन सांभळी नरेन्द्र कालोमेंश पडी गयो.

१७९–१८०. आ हेलामां पूरी २२ मात्रा छे. १८० मां **थियउ** ने बदले **थिउ** वांचो; **गिंभयालेमां** छेल्लो ह्रस्व छे.

१८१–१९१ आखुं कडवक प्रतिपादयमक छे.

१८४ **काम** प्रद्युम्न; आ पछीनी बधी पंक्तिओमां सुभानु, भानु, शंब, अनिरुद्ध, निषध, नंद, द्वैपायन, पञ्जर, सारण, सात्यकि, इ० यादवो छे. जुओ जिनसेन. ह. पु. ५०. नंद अने पंजरनां नाम शोधी शकायां नथी.

१८४. **सरामहो रामहो** = पत्नीसहित (सह + रामा) बलभद्रनो देह कंपे छे.

१८५. **असुभाणुहिं** संस्कृत छायामां **अ=च** अर्थ लीधो छे; अमे 'सुभानु' एक यादवनुं नाम, एम अर्थ कर्यो छे. **असवः एव भानवः यस्य सः** एम अर्थ पण करी शकाय. 'आत्मा एज जेना प्रकाशरूप छे.'

१८५. **सविलासंबहा** । **अंब=ताम्र** अर्थ दूराकृष्ट छे. **अंब=**

**आम्ल** खाटा मनवाळो. आ प्रकारनो अर्थ प्राकृतमां थाय छे. आ अर्थ लेई **स्वविलासाम्लस्य** पोताना विलासो प्रत्ये जेनुं मन क्षुब्ध थई गयुं छे तेवो.

१८६. **अवलुअ** जुओ. **दे. ना. मा. १. ३६. अवलुआ=क्रोध.** प्रथम **अणिरुद्ध** = जे पोताने वारी शकतो नथी ते अनिरुद्धने क्रोध थवा लाग्यो.

१८६. **णिसढ=निःश्रद्ध** अने **निषण्ण** एम बे अर्थ थई शके.

१८७. **धक्कुद्धुअ** जुओ. **दे. ना. मा. ५,६०. 'उल्लसित' धुक्कुध्धुअंत** मंदगति, कंपना अर्थमां **भ. क.** मां छे. **गोणंद=गो** इंद्रिय+णंद आनंद=इन्द्रिओमां ज जेनो आनंद छे तेवा नंदने कंप थयो.

१८८. **दुहलु दे. ना. ५. ४३.** दुर्भाग्य; द्वीपमां निवास करता द्वैपायनने पोतानुं दुर्भाग्य लाग्युं.

१८८. जेनी भुजा ज (शत्रु माटे) **पंजर** समी छे, एवा पंजरने पण विकलता लागवा मांडी.

१९०. कृष्णनी राणीओनां नाम पद्मावती, गौरी, लक्ष्मणा. जुओ. **अंतगडदसाओ** ( Ed. M. C. Modi ) P. 25. line 11-12 **पउमावई य गोरी गंधारी लक्खणा सुसीमा अ। जंबवइ-सच्च-भामा रूप्पिणि-मूलसिरि मूलदत्ता वि॥**

१९२. **जउ** पछी **उल** वांचो नहि तो बे मात्रा **खूटशे.**

१९३-१९४. **हेला**नी बन्ने य पंक्तिओ २१ मात्रानी छे. **सुसद्दने** बदले **सूसद्द** वांचो.

१९९. **दिणिहिं** खरी रीते **दिण्ण=दैन्य** होय; परन्तु छन्दोविघ्न टाळवा **दिण.**

२०१. सरखावो जिनसेन. **ह. पु. सर्ग ६३. श्लोक ४४. इत्यनेक-दिनरात्रियापनैः सोऽत्यतंद्रितमनोवचोवपुः। प्रत्यहं हरिवपुर्वहन् भ्रमन् प्रत्यपद्यत रतिं न कानने॥**

२०४ **उहयहिंने** बदले **उहय** वांचो: नहि तो एकमात्रा वधी जशे. **माल** राजानी पुत्री कांचनमाला अने कुरुपति दुर्योधननी पुत्री उदधि ए बन्ने ए.

२०५ **णरणन्दणि**–जनोने आनंद आपनार. **दूसिय** वांचो. घत्ता २२ मात्रानी छे.

२०७ **भाणुकुमरु** वांचो. भानुकुमार सत्यभामानो पुत्र.

२०९–२१२. सुभानु, यदु, सुन्दर, सात्यकि, जयंत, पुरन्दर, कृपवर्मा, सार, सारण, दुंदुभि, वृकोदर, धर, धारण, देवसेन, शिबि, तेनो पुत्र, अपराजित, चिह्न, उद्धव, कांचन, नंद, रुद्र–ए यादवोनी नामावली आपी छे.

२०९. मूळमां **सारणु** छे; ज्यारे छायामां **सुंदर** छे. एटले छाया सुधारवी.

२१४–२१६ कृष्णनी राणीओनां नाम, रोहिणी एकलीने **बाद** करतां.

२१६ **संबलि**=श्यामला वांचो.

२१९–२२० प्रथम पंक्तिमां २३ मात्रा छे; ज्यारे बीजी पंक्ति **गय असेस सुरय-राग रूव-विब्भमस्स** एम वांचवुं. अर्थः–तपश्चरणथी महाव्रतयुक्त स्त्रीजनोनां रूप अने विभ्रमनी सुरतपरनी सघळी आसक्ति जती रही.

२२३ **विरत्तं, सम्मत्तं**नी साथे लेवुं. **विरत्तं**मां छेवटनो **त्तं** अन्त्यप्रासमेळ माटे होय एम धारी **विरक्ताः** छायामां लखेलुं छे.

२२६. **साणत्थावियाइं** ' **साण**=**शाण** कसोटीनो पत्थर ' ए अर्थ छायामां लीधो छे. परन्तु **संज्ञा**=**साण** अपभ्रंशनी छेवटनी कक्षामां थाय छे. अथवा सारामां सारो मार्ग तो **सवणत्थावियाइं**=**श्रवणस्थापितानि** ए प्रमाणे सुधारो करीने अर्थ करवो ए छे.

२२७ **उण्णय-इत्ता**=**उन्नतचित्ताः** के **उन्नतवृत्ताः** एम संस्कृत छाया थई शके.

२३२ **कंज** केश; केशनुं उत्पाटन करे छे.

२३३–२३४. घत्तामां २४ मात्रा छे.

२४५ **दसवावालंकिउ**=अस्पष्ट अर्थ छे.

२५२ **उवलद्ध**=ग्रहण करेलो छे, दाबी दीधो छे.

२५३ **खगिंदगमणु** गरुडवाहन विष्णु.

२५४ **सइ**=**स्वयं सदा**, छायामां **सदा** छे; **स्वयं** वधारे ठीक छे.

२५६ **थक्क+अंगणइं** त्यां (कौशांबीवनमां) कृष्णने एकलुं जवुं पडशे; ज्यां पोतानी अंगनाओनो मेलाप कोइ पण रीते थई शकशे नहि. आम अर्थ

निर्वाह थाय. छायामां एक्कंकाणइ=एकाकिनी एम अर्थ कर्यो छे. परंतु तेने माटे कांइ प्रमाण नथी.

२५७ तत्ति त्रिप्त. हे. ना. ५. २०, तत्ती=तप्तता.

२५८–२५९ पद्धा २२ मात्रानी छे. सोयवरुने बदले सोयवरु= शोकपरः वांचीशुं तो एक मात्रा वधे छे ते नहि वधे.

२६२ संस्कृतछायामां सुधारो; गुरुभ्रातुः सत्केन वांचो.

२६४ सोयविओयमइंद भयावणु एम छूटुं वांचीए तो वाक्यनो अर्थ पूरो थशे.

२६५ पासावय आपदने अनुलक्षी (१) ते नाशमां आवी पड्यां छे ते पाश+आ√पद् (२) पार्श्व+आपद् श्रावक अने यादवोने अनुलक्षी–जेने आपद पासे आवी पडी छे ते.

२६७ सिद्धार्थसारथिः भ्राता बलदेवनयान्वितः । बोधनं व्यसने स्वस्य प्रतिपाद्य तपोऽग्रहीत् ॥ जिनसेन ह. पु. ६१. श्लो. ४१. सिद्धार्थ बलदेवनो सारथि तेम ज भाइ हतो.

२७९–२८० बलदेव अने वासुदेव साथे जाय छे.

२८१–२८२ नो एक संबंध छे.

२८६ पंचवग्गेण प्रहोना पांच भेद सामान्य रीते मानवामां आवे छे. सरखावो जिनसेन. ह. पु. सर्ग. २. श्लोक. ८४. सप्रकीर्णकनक्षत्रसूर्याचन्द्रमसो ग्रहाः । पंचभेदास्तदानल्पवपुषो ज्यातिषो बभुः ॥

२८५–२८६. बन्ने पंक्तिओ भ्रष्ट छे. हेला एटले सामान्य रीते २१ मात्रा होवी जोईए. एटले आ बे पंक्तिओ नीचे प्रमाणे वांचवी योग्य छेः—

समवसरणमंडिउ विहरेइ जिणवरिंदो ।
जिह पंचवग्गउडुगणजुओ णिसियरिंदो ॥

बीजी पंक्तिमां पंचवग्गेण जुदुं पाडवाथी कांइ पण अर्थ थई शकतो नथी; एटले गेरसमजथी ज कोइए ए फेरफार कर्यो हशे.

२८८ चउविह संघ ' साधु, साध्वो, श्रावक अने श्राविका–ए चार तीर्थोनो बनेलो संघ.

२९० वसुविहपाडिहेर आठ प्रकारनां प्रातिहार्य–एटले के समवसरणमां जिनेश्वरने सेवती वस्तुओः—

अशोकवृक्षः १ सुरपुष्पवृष्टि २ दिव्यध्वनि ३ श्चामर ४ मासनं ५ च । भामण्डलं ६ दुन्दुभि ७ रातपत्रं ८ सत्प्रातिहार्याणि जिनेश्वराणाम् ॥ वसु संज्ञाथी 'आठ' समजवानुं छे.

२९१ वसुदहदोस वसु=८+१० एटले १८ प्रकारना दोषथी विमुक्त.

२९३ दंसण जुओ तत्त्वार्थ १. २. तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्। एना उपरथी टीका.

२९३ वयपासाए व्रतरूपी प्रासाद उपर. बार व्रतो–५ अणुव्रत + ३ गुणव्रत + ४ शिक्षाव्रत.

२९४ सामाइउ–सामायिकव्रत जुओ तत्त्वार्थ. ७. १६. ( भाष्य ) सामायिकं नामाभिगृह्य कालं सर्वसावद्ययोगनिक्षेपः । ते ज प्रमाणे पोसहुः–पौषधोपवासव्रतम् । सदर भाष्यः–पौषधोपवासो नाम पौषधे उपवासः । पौषधः पर्वेत्यनर्थान्तरम् । सोऽष्टमीं चतुर्दशीं पञ्चदशीमन्यतमां वा तिथिमभिगृह्य चतुर्थाद्युपवासिना + + + धर्मजागरिकापरेणानुष्ठेयो भवति ॥

२९५ सचित्तचाउ जेमां जैनमत प्रमाणे जीव छे एवा पदार्थोना भोजननो त्याग.

२९८ आरम्भाइवज्जणु–आरंभः प्राणिवधः । इत्यादिनो त्याग जुओ तत्त्वार्थ० ६. ९. अने भाष्य.

२९९ उद्दिट्ठाहारविवज्जणु–साधुने उद्दिष्ट करीने एटले तेने निमित्ते बनावेला एवा आहारनो त्याग. साधुने आ प्रकारनो आहार जैनमतानुसारे त्याज्य छे.

३०० सावयवय अणुव्रतो जुओ तत्त्वार्थ ७. १–२.

३०१ महव्वय साधुने पाळवानां पांच महाव्रत. तत्त्वार्थ० ७. १–२.

३०१ चउगइ नरक, तिर्यंगू, मानुष अने देवगति. आम चार प्रकारनी गति.

३०२ दहलक्खणभेयइं णेयाणेयइं पांच प्रकारनां ज्ञानः–१ मतिज्ञान २ श्रुतज्ञान. ३ अवधिज्ञान. ४ मनःपर्ययज्ञान. ५ केवलज्ञान. आथी विरुद्धनां पांच अज्ञान. अने ते ज प्रमाणे ज्ञेय अने अज्ञेय.

३०३ चक्किक सामान्य रीते कृष्णनुं विशेषण होय छे; परंतु अहिं तो

नेमिनाथना विशेषण तरीके मूकवामां आव्युं छे. आ विशेषण जिनसेन ह. पु. मां घणे स्थळे चक्रवर्ती राजा अथवा प्रभावशाळी व्यक्तिने माटे वापरे छे.

३०६ **महुमहाणिसंतु**–संस्कृतछाया प्रमाणे विष्णुथी असेव्यमान.

३०६–३०७. २९ मात्रानी घत्ता छे.

३०९ **ते** अने **दुद्धरु** मात्रामेळ खातर त्याज्य छे.

३११ **आसण्ण** ने बदले **ओसण्ण=अवसन्न** पूरो कर्यो छे ए अर्थमां. हाथप्रतमां तो **आ** छे; परन्तु संभव छे के उपरनी मात्रा रही गई होय.

३१२. पंक्ति ३११मां 'दुर्नयनो पण त्याग कर्यो छे एवा भव्यजनो' एम आव्युं; ज्यारे आ पंक्तिनो 'दुर्नयथी आवतां व्यसनादिथी पण जे विरक्त थया छे' एम अर्थ छे. एटले पुनरुक्तिदोष नथी.

३१५ **पंचपयइं** ने बदले **पंचवयइं=पंचव्रतानि** एम वांचो.

३३७ **अट्टरउद्द** जुओ **तत्त्वार्थ० ९. २९. आर्त** अने **रौद्र** ध्यान खराब वस्तुना अध्यवसायथी करायला ध्याननां प्रकार छे अने संसारहेतुक छे; ज्यारे **धर्म** अने **शुक्ल** ध्यान शुभहेतुक छे अने मोक्ष अपावे छे.

३१९–३२० २७ मात्रानी घत्ता छे. स्वयंभूनी **नाममुद्र** छे.

३१९ **विहणंतउ=विहन्यमानः** ।

३१० स्थिरभावथी हर्ष अने आकुलरसथी विषाद, ए प्रमाणे जनो पाम्या.

## ॥ पञ्चममुद्धरणम् ॥

### १. कवि अने तेनुं जीवनः—

कविना जीवननी घणी माहिती छूटा छूटा लेखोमां अने कविनी प्रसिद्ध थएल कृतिओनां पुरोवचनमां विस्तारथी आपेली मळी रहे छे. कविना जीवन अने समयनी चर्चा माटे आ लखाणो वांचवाः—(१) C. P. & Berar Mss. Catalogue Ed. Hiralal–Introduction and Extracts from Puspadanta's works in the Appendix, ( २ ) जैन साहित्य संशोधक. ग्रंथ. २. पा. ५७–८०, १४६–१५६. (३) Jasaharachariu of Puspadanta Ed. Dr. P. L. Vaidya, Karanja Series, Karanja, Berar, (४) Nayakumarachariu of Puspadanta Ed. Prof. Hiralal Jain Devendrakirti Series,

Karanja, Berar. उपर जणावेलां लखाणोना आधारे नीचे आपेली हकीकत तारवी काढेली छे.

पुष्पदन्तना पितानुं नाम केशवभट्ट अने मातानुं नाम मुग्धादेवी हतुं. एनां मातापिता शैवधर्मी हतां अने पाछळथी तेमणे जैनधर्मनो अंगीकार कर्यो हतो. पुष्पदन्त क्यांकथी आवी मान्यखेट ( निझामना राज्यमां आ नगर आवेलुं; हाल आ स्थळे नानुं गामडुं छे. ) वस्यो. मान्यखेटना राष्ट्रकूट वंशना कृष्णराज त्रीजाना प्रधान भरते अने तेना पुत्र नन्ने तेने आश्रय आप्यो हतो; अने प्राकृत काव्यो लखवा उत्तेजन आप्युं हतुं. अत्यार सुधीमां पुष्पदन्तनी त्रण कृतिओ हाथ आवी छे: (१) **जसहरचरिउ** Ed. Dr. P. L. Vaidya (२) **णायकुमारचरिउ** Ed. Prof. Hiralal Jain (३) **महापुराण** हजु अप्रसिद्ध परन्तु डॉ. वैद्य तेनुं संपादन करे छे.

प्रस्तुत उद्धरण **महापुराण** के **तिअट्ठिपुरिसगुणालंकार**मांथी लीधुं छे. भांडारकर ओरीएन्टल रीचर्स इन्स्टीटयुटनी हाथप्रतपरथी श्रीजिनविजयजीए नकल करावी लीधेली जे तेमणे अमने वापरवा आपी हती. तेमांथी आखो संधि ८३ प्रस्तुत उद्धरणमां लेवामां आव्यो छे. त्यारबाद डॉ. पी. एल वैद्ये पण कृपा करी तेमनी पासे जे प्रतो हती तेनी साथे तुलना करी आपी सूचनो अने पाठांतरो जणाव्यां हतां. कवि पुष्पदन्तना पोताना जणाव्या प्रमाणे तेणे **महापुराण** सिद्धार्थ संवत्सरमां आरंभ्युं अने क्रोधन संवत्सर आषाढ शुद १० ने सोमवारे = जुन इ. स. ९६५ = वि० सं० १०२१मां पूरुं कर्युं.

२. उद्धरणवस्तुः—

आ उद्धरणमां जे वस्तु चर्चवामां आवी छे ते ज वस्तु **वसुदेवहिंडि** ( सं० श्रीचतुरविजयजी अने पुण्यविजयजी ) मां विस्तरशः आपवामां आवी छे. **जिनसेनना हरिवंशपुराण**मां पण ते आपवामां आवी छे.

द्वारिकामां समुद्रविजय राजा राज्य करतो हतो. वासुदेव तेमनो कनिष्ठ भ्राता हतो. ते बहु ज रूपाळो हतो. एक दिवस ते उत्तम गज पर स्वारी करी नगरमां फरवा नीकळ्यो. एने जोई स्त्रीओ प्रेमविवश बनी गई. ( १ ) भान भूलेली स्त्रीओनी प्रेमविवशतानुं वर्णन कवि करे छे. नगरनो पुरुषवर्ग स्त्रीओनी आवी विवशता जोई समुद्रविजयने फरियाद करे छे. समुद्रविजय वसुदेवने समझावे छे " शा माटे धूळ अने तापमां शरीर खराब करे छे ? तारे जे क्रीडाओ करवी होय ते प्रासादमां कर." कुलस्वामी समुद्रविजयना आ बोलने वसुदेवे केटलाक दिवस मान आप्युं,

एक दिवस तेना सहाध्यके तेने समझण पाडी के, "तुं तो निरोधनमां छे. अने नगरलोकोए तने बंधनमां नंखाव्यो छे." आ वचन सांभळी तेणे राजमहेलमांथी नीकळवा यत्न कर्यो; पण प्रतिहारोए तेने अटकाव्यो अने कयुं, "तमारा हित माटे तमारुं निर्गमन राजाए अटकाव्युं छे." ( ५ ) वसुदेव रात्रे महेल छोडी श्मशानमां आवी पहोंचे छे. श्मशाननुं वर्णन कवि करे छे. (६) श्मसानमां वसुदेवे एक बळतुं मृतशरीर जोयुं. तेणे पोतानां वस्त्राभरणो ते मृतदेह पर नाख्यां. एक पत्रमां पोताना मरणनी वात लखी, ते पत्र पोताना घोडाना गळे बांध्यो; अने पछी ते यथेष्ट चाली नीकळ्यो. सवारमां तो महेलमां खबर पडी. राजाए बधे य वसुदेवनी शोध करावी. छेवटे श्मशानमां राजाना एक चरे घोडो अने तेने गळे बांधेलो पत्र जोयो. तेणे ते लावी राजाने आप्यो. राजाए ते वांच्यो. स्वजनोए श्मशानमां मडदुं बाळ्युं; अने हाहाकार थयो. (६) नव दशार्ह बंधुओ शोक करवा लाग्या. समुद्रविजयनी पत्नी शिवादेवीनो विलाप आपवामां आव्यो छे. नैमित्तिको राजा समक्ष जोष भाखे छे के सो वर्षे वसुदेवकुमारनो मेळो थशे. (७) आ तरफ वसुदेव विजयनगर आवी पहोंचे छे. अने उद्यानमां आराम ले छे. उद्याननुं श्लेषात्मक वर्णन. वसुदेवना पुण्यसामर्थ्यथी सूकां वृक्षोने पान आवे छे. राजाना जोषीए भविष्य भाख्युं हतुं के जेना तळे बेसवाथी सूकुं वृक्ष लीलुं थई जाय, ते युवान राजकुमारीनो वर थशे. आ बनेलुं उद्यानपाले जोयुं अने तेणे ते राजाने जणाव्युं. (८) आ सांभळी राजा जाते त्यां आव्यो; अने तेणे युवान राजकुमारने नगरमां प्रवेश कराव्यो. पोतानी दीकरी श्यामादेवीने राजाए वसुदेव साथे परणावी. केटलाक दिवस पोतानी प्रिया साथे रही, वसुदेव बहार नीकळ्यो अने देवदारुना वनमां प्रवेश्यो. वननुं वर्णन. त्यां तेणे एक सरोवर जोयुं. (९) सरोवरनुं वर्णन. क्षीरसमुद्रमां रहेला मेरुपर्वतसमा हाथीने तेणे सरोवरमां निहाळ्यो. (१०) हाथीनुं वर्णन; वसुदेवनुं तेनी साथे युद्ध; वसुदेवनी जीत. विद्याधरे अंधकवृष्णिना पुत्र वसुदेवनुं आ पराक्रम जोयुं; अने तेणे वसुदेवने उंचकी लीधो. (११) पछी विद्याधर वसुदेवने अशनिवेग नामे यक्षराज पासे लई गयो; अने तेणे तेने जणाव्युं " आने विंध्यगज हराव्यो छे; माटे ज्ञानीओए कह्या प्रमाणे आपनी कुहितानो आ वर छे. " अशनिवेगे पोतानी राणी पवनवेगाथी जन्मेली सामरी नामनी कन्या साथे वसुदेवने परणाव्यो. वसुदेवे बहु दिवस प्रेममां आसक्त थई गाळ्या. एक वार ते सूतो हतो त्यारे अंगारक नामना विद्याधरे तेने जोयो. " विवेकहीन मामाए आ भूमिचर जनने पोतानी सुता आपी छे ! " आम बोली तेने पोतानी बाथमां लई ते ऊड्यो अने सामरी तेनी पाछळ ऊडी. वसुदेवना हाथमां वसुनंदक नामनी अजेय तरवार

हती. (१२) आ तरकार जेवी अंगारक उपर वसुदेवे खेंची के तरत ज वसुदेवने अंगारकने छोडी दीधो. श्यामरीए पोताना पतिने नीचे पडतो देख्यो के तरतज पर्णलघुक विद्याथी वसुदेवनी तेणे प्रतीक्षा करी. बीजी बाजुए सामरीए वैरी अंगारक उपर हल्लो कर्यो. वैरी नाशी गयो. मदनसमान वसुदेव चंपापुरनगरनी बहार पड्यो. वसुदेवे नगरजनने नगरनुं नाम पूछ्युं. लोको आ प्रसिद्ध नगरना नामना तेना अज्ञानने माटे एने मुग्ध कही हसवा लाग्या. तेमणे तेने कह्युं "वासुपूज्य जिनना जन्मथी समृद्ध एवी आ चम्पापुरी छे." आ सांभळी वसुदेवे नगर जोयुं अने नगरनो विद्वज्जनोथी शोभतो सभामंडप पण जोयो. त्यां चारुदत्त नामे एक वणिक्पुत्र रहेतो हतो तेने गंधर्वदत्ता नामे एक पुत्री हती. ए कन्याए विद्याधर तेमज मानवने वीणावादनमां जित्या हता. (१३) वसुदेवकुमार त्यां गयो. कन्या एने जोतांवेंत मन्मथबाणथी विद्ध थई. वसुदेव हस्यो अने कह्युं, "जो के मारो हाथ स्वरस्थान पर सारी रीते चाली शकशे नहि छतां य वीणा हुं वगाडीश." पछीथी पांच दश वीणा रजु करवामां आवी. वसुदेवे बधी य वीणामां खोड बतावता मांडी. उत्तम वीणा क्यां छे ते संबंधी तेणे आख्यान कहेवा मांड्युः—

"हस्तिनापुरमां एक राजा हतो. तेने पद्मावती नामे राणी हती. तेने विष्णु नामे ज्येष्ठ पुत्र हतो, (१४) अने पद्मरथ नामे नानो पुत्र हतो. अर्हतने नमी राजा तेना मोटा दीकरा साथे ऋषि थवा माटे वनमां गयो. पद्मरथ राज्य करवा लाग्यो. तेने बलि नामे निपुण मंत्री हतो. एक दिवस राजाए तुष्ट थई तेने वर मागवा कह्यु. बलिए कह्युं, "कोइ दिवस हुं कांइ मागुं तो तमे ते आपजो." थोडोक समय गयो. एटलामां अकंपन नामे मुनिवर त्यां आव्या. पहेलां बलिने आ मुनिए वादविवादथी हराव्यो हतो, एटले तेणे वैर लेवानो निश्चय कर्यो. (१५) बलिए पोताने राजाए आपेलो वर सम्भारी राजा पासे तेणे सात दिवसनुं राज्य मागुं. राजाए ते आप्युं. वैदिक कर्मकांड बलिए चलाव्यो. मांसमदिरा पीवावा लाग्यां. साधुसंघ ते पापिष्ठ बलिए पीडवा मांड्यो. (१६) श्रुतिवचनोथी श्रवण पूरावा लाग्या. धूमाडाथी धूळ वधवा लागी. दररोज भीषण दुःखोथी धीर जनो पीडाता हता, छतां तेओ पिशुन जन पर रोष करता नहि; आ बाजुए, पेला पिता अने तेनो पुत्र विष्णु तप करता हता. तेमणे श्रवणनक्षत्र कंपतुं जोयुं. विष्णुए पोताना पिता घनरथऋषिने आनुं कारण पूछ्युं. ऋषिए जणाव्युं के, "गजपुरमां बलि मुनिओने दुःख दे छे. सज्जनोनी पीडा बधायने भारे लागे छे; तेथी ज नक्षत्र थरथरे छे." विष्णुए पूछ्युं "आनो कांइ उपाय?" बापे कह्युं, "तुं गजपुर जा, अने तारा चम-

रकारनी समृद्धिथी ऋषिना उपसर्गनो नाश कर. (१७) अद्‌भुत वामनरूप धारी तुं त्यां जजे, अने बलि पासे निवासस्थान मागजे. ए तने निवासस्थान आपवा वचन आपे के तुं आकाशे अडजे." पछी तो ते विप्र मुनिना वेषमां बलि पासे गयो. नवा राजाए तेने जोयो अने वर मागवा कह्युं. विष्णुए त्रण पगलां जेटली जगा मागी. आटलुं ज माग्युं एथी बलि हसवा लाग्यो. परन्तु विष्णुए तो वधवा ज मांडयुं. एक पगलुं तेमणे मंदर पर्वत उपर मूक्युं. बीजुं पगलुं मानुषोत्तर पर मूक्युं. (१८) त्रीजुं पगलुं उंचुं कर्युं पण ते मूकवा माटे स्थान न हतुं. देवो अने विद्याधरोए तेनी अर्चना करी त्यारे त्रीजुं पगलुं तेणे खेंची लीधुं. आ समये तेणे देवोए आपेली घोषवती वीणा वगाडी हती. पद्मरथे पोताना ज्येष्ठ भ्राताने संतुष्ट कर्यो अने बलि-द्विजकिंकरने मारी नाखवा कह्युं. विष्णुए रोष न करवा कह्युं. आ प्रमाणे ऋषिसंघने उपद्रवमांथी मुक्त करी विष्णु वनमां चाल्यो गयो. (१९)

—विष्णुए वगाडी हती ते वीणा मने लावी आपो; अने गन्धर्वदत्ता जो ते मारी आगळ वगाडे तो बीजाओना अपवादने ते दूर करी शके." वणिकपुत्र हस्यो अने गजपुरथी तेणे ते राजाना वंशज पासेथी वीणा मंगावी आपी. वसुदेवना हाथथी ज ते वीणा वागी; अने तेना संगीतथी गन्धर्वदत्ताना हृदयमां तीखुं कामदेवनुं बाण पेठुं. (२०) गन्धर्वदत्ता साथे वसुदेव परण्यो. आ उपरांत बीजी सातसें विद्याधर कन्याने ते परण्यो. थोडाक समयमां ते अरिष्टनगर आव्यो. त्यां हिरण्यवर्मा नामे राजा राज्य करतो हतो. तेने पद्मावती नामे राणी हती. तेमने रोहिणी नामे पुत्री हती. रोहिणीए जरासंध इत्यादि राजाओने त्यजी वसुदेवने वरमाला आरोपी. बीजा राजाओए हिरण्यवर्माने जरासंध साथे कन्या मोकली दई तेनी साथे वैर न बांधवा समजाव्यो. (२१) हिरण्यवर्माए मान्युं नहि. युद्ध थयुं. युद्धमां समुद्रविजय राजा जरासंध तरफथी वसुदेव सामे आव्यो. बन्ने वच्चे तुमुल युद्ध थयुं. वसुदेवे पछीथी पोताना नामथी अंकित बाण समुद्रविजय प्रति फेंक्युं. ते समुद्रविजयना पग आगळ पडयुं. तेणे ते उपाडी लीधुं; अने ते परना अक्षरो वांच्या. (२२) समुद्रविजय जो के बळवान हतो, छतां पण रथ परथी ऊतर्यो अने आम वसुदेव पण सत्त्वर ऊतर्यो. तेओ मळ्या अने एक बीजाने भेट्या. वसुदेवना पराक्रमनां वखाण समुद्रविजये कर्यां. दशे य दशार्हो पोताने नगर गया. वसुदेवे अनेक खेचर अने मानुषी कन्याओ साथे भोग भोगव्या. रोहिणीए बलदेवने जन्म आप्यो. बलदेव पूर्वे शंख नामे ऋषि हतो; जे मृत्यु पछी महाशुककल्पना देव तरीके भोग भोगवी अने पछी च्यवी नवमा सीरी = राम तरीके जन्म्यो हतो. पुष्पदंतना (नवमा तीर्थंकरना) तेजमांथी तेणे तेज मेळव्युं हतुं.

३. छंदोरचनाः—

आ उद्धरणमां २३ कडवक छे. कडवकनी पंक्तिसंख्या निर्णीत नथी. आदिमां आखा कडवकनुं एक ध्रुवक छे; दरेक कडवकने अन्ते घत्ता छे. घत्ता अने ध्रुवक ११+१२=२३ मात्रानी बे पंक्तिनां छे. छं. शा. ६. पत्र ४० (अ)मां आ छंदने **अरविन्दक** कह्यो छेः **ओजे एकादश समे द्वादश अरविन्दकम्।** यथा,

**प्रिअहि मुहु अरविंदु चलनयण इंदिंदिरु**
**दंतकंति केसरउ लच्छिविलासह मंदिरु ॥**

कडवक ५ मां **भुजंगप्रयात** छंद छे. ते गणवृत्त छे. य गण (⏑ – –) नी चार फेरो आवृत्ति थतां एक चरण बने छे. जुओ **प्रा० पिं०** पान. ४४०:–

**धओ चामरो रूअओ सेस सारो ठए कंठए मुद्धए जत्थ हारो**
**चउच्छंद किज्जे तहा सुद्धदेहं भुअंगापआअं पए वीसरेहं ॥**

ध्वज (⏑ –) + चामर (– ) = ⏑ – – ने चार वार पुनरावृत्त करी एक पादमां वीस मात्रा करीए तो जेम हार कंठे बेसे छे तेवो हे मुग्धे भुजंगप्रयात थाय.

कडवक १०मां **स्खलित** छंद छे; ते गणवृत्त छे. छं. शा. २. पत्र १० (अ) **भजस्नादृगौ स्खलितम्।** भ (– ⏑ ⏑) ज (⏑ – ⏑) स (⏑ ⏑ –) न (⏑ ⏑ ⏑) परो गौ (– –) यथा,

**पुष्पशर रम्यतनुता सलवणत्वं वाङ्माधुरता चतुरता बहुकलत्वम्।**
**सर्वमपि चास्य सुभगस्य रतये मे केवलमिदं व्यथयति स्खलितगोत्रम्।**
**महिता कांता वनमयूरश्चेत्यन्ये ।**

चरणनो छेल्लो ह्रस्व दीर्घ तरीके ज गणाय छे एटले प्रस्तुत कडवकना चरणोना ह्रस्वने दीर्घ तरीके गणवामां बाध नथी. सामान्य रीते गणवृत्तमां पण प्राकृतमां एक गुरुने बदले बे लघु मूकवानी पद्धति छे. आने लीधे केटलीक अनियमितता कडवक १० नी छंदोरचनामां आवी छे.

बाकीनां कडवकमां चरणचतुष्क एटले १६ मात्राओ पज्झडिआ छे, जेनुं विवेचन प्रथम उद्धरणमां करेलुं छे.

प्रस्तुत उद्धरण छपाया पछी डॉ. पी. एल. वैद्ये पोतानी प्रेस कोपी साथे सरखावी, जे खास स्थळे तेमनी कोपीमांथी पाठान्तर आपवां ठीक जणायां, ते स्थळे ते नोंधी मोकली आपवा कृपा करी हती. तेमनां पाठान्तर टिप्पणमां (प.) तरीके नोंध्यां छे.

४. टिप्पणः—

१ णायाणाय [ज्ञाताज्ञातं] संस्कृतछाया न्यायान्यायं पण थई शके. सरखावो. चारैः पश्यन्ति राजानः ।

३ उइय ए मूलना उइउ उपर सुधारो छे (प.) उयय वांचे छे, जे मूळ परना सुधाराने अनुमोदन आपतो पाठ छे अने ग्राह्य छे.

४–६ व्यतिरेकालंकारे करी कवि वसुदेवनी उत्कृष्टता वर्णवे छे. " जाणे सहस्रनेत्र विनानो इन्द्र, कुसुमना शर विनानो जाणे जाते ज कुसुमायुध (=कामदेव), जाणे खाराश विनानो लावण्ययुक्त रत्नाकर (=समुद्र), कपट विनानो जाणे दामोदर, राहुथी अग्रस्त जाणे सूर्य, आखा जगतूने संक्षोभ पमाडनार जाणे जिनदेव.

५. णं अक्खारु सलवणु रयणायरु मूळमां अखारु करी सलवणुने घटित कर्युं छे. जो अक्खारु करीए तो सलोणु के सलुणु वांचवुं जोईए. आ पंक्तिमां व्यतिरेक अने विरोधाभास ए बे अलंकारोनो संकर छे.

६. अमलदेहु णावइ उज्जोयणु – (प.) अमलदेहु णावइ उग्गउ इणु वांचे छे. छापेला मूळ पाठनो अर्थ " जाणे राहुथी (मलदेहथी) अग्रस्त सूर्य." एम अर्थ थशे. (प०) प्रमाणे अर्थमां तो कांइ फेर पडतो नथी; ' जाणे राहुथी अग्रस्त सूर्य ऊगेलो होय तेवो. इणु=इनः सूर्य. उज्जोयणु = सूर्य जुओ. पा. स. म.

७. सिरि (प०) सिर. परन्तु सिरि अर्थमी दृष्टिए उत्तम छे.

८. चत्तरि (प०) चच्चरि.

९ एकावली अलंकार. ' ए पुरुष नहि के जेणे दृष्टि नाखी नथी अने ए दृष्टि नथी के जे एना तरफ वळी नथी.'

१० मणुअ सुधारेलो पाठ. मूळ अने (प०) मणुउ. सचरंतु ने बदले संचरंतु वांचो.

१२ तिलु तिलु – 'जरा जरा' आ शब्दनो बीजे क्यांय पण अपराश मळ्यो नथी.

१३ कालंबिणि (प०) कालंबिणि सरखावो दे. ना. २. ५९. तणुघणेसु कालिंबा । सरखावो मदीयमतिचुंबिनी भवतु काऽपि कादंबिनी । कादंबिनी = मेघलेखा.

१४ वम्मइं आदि म् = व्

१५. णीसासि (प०) णीसासें

१६. मि = (प०) वि बधा ठ स्थले (प०) वि ज राखे छे.

१७. पयंधणु=(प०) परंधणु=प्रबंधन.

१८. पियविओअयखेएं कंपइ; मूळमां पियविओअजखेएं, (प०) पियविओअजरवेएं वांचे छे. पियविओअजरखेएं=प्रियवियोगज्वरखेदेन आम करी जने कायम राखी मात्राभंग दूर करी छंद सचवाय.

१२. बिउणावेदु णियंबहो दिण्णउ कारण के एक फेरो वस्त्र भीनुं थवाथी पारदर्शक बनतां ते ढांकवा ए ज भीना वस्त्र उपर ए ज वस्त्रनो बीजो छेडो वींटाळ्यो.

२४. मुअ=मृता मरी गई (प०)=मुअ; मुअइ सुधाराथी तो उलटी एक मात्रा वधी जाय छे एटले मुअ ए ज पाठ वांचवो उत्तम छे.

२५. (प०) विसरेवि; परन्तु वीसार( =रि )विथी अर्थभ्रष्टता थती नथी.

२६. संत्यज्य काचित्तरुणी रुदंतं स्वपोतमोतुं च करे विधृत्य।
निवेश्य कट्यां त्वरया व्रजंती हासावकाशं न चकार केषाम्

३०. एक तहिं=तत्र अने बीजुं तहिं=तस्मै, वसुदेवाय.

३४. (प०) कूवारें=कुमारैः । जो के तृतीया एकवचनने बहुवचनमां लेवुं पडे छे. विहुवारेंमां पण ए ज संकट आवे छे. जुओ जिनसेननुं ह. पु. १९. १४. अन्यदा पुरवृद्धास्ते समुद्रविजयं नृपम् । नत्वा व्यजिज्ञपन्नित्थमुपांशु पिहितान्तरा ॥

३७. जाउ जाउ पय कहि मि पयावइ = यावत् यावत् पदं कुत्रापि प्रदापयति । " हे भट्टारक ज्यारे ज्यारे क्यांय पण ते कुमार पगलुं मांडे छे त्यारे त्यारे दुःखथी जीवाय छे. " आ प्रमाणे पण अर्थ घटावाय.

४२. झेंडुय-कंदुकनुं प्राकृतमां गेंदुय अने मराठीमां चेंडुय रूप छे. झेंडुय पण ते ज प्रकारनुं रूप होवा संभव छे. झंडुय मुद्रित थयुं छे ते सुधारी झेंडुय करो. (प०) प्रंगणि वांचे छे.

४३. णिद्ध ने बदले (प०) णिद्ध वांचे छे. ते ज पाठ प्राय छे. णिद्ध =स्निग्ध, वळी आज पंक्तिमां रमणीने बदले (प०) रमणीय वांचे छे परन्तु ते पाठ स्वीकारवाथी एक मात्रा वधी जशे.

४६. दिअसेहिं (प०) दिअहेहिं

४७. अहिं वार्तामां बीजा वृत्तांतो करतां फेर छे. बीजा वृत्तांतोमां च-

न्दनादि समालम्भन एक दासी लई जाय छे. ए दासीने वसुदेव जुवे छे. वसुदेव समालम्भन मागे छे; परन्तु दासी तेने उपालम्भ दई कहे छे के, "तुं तो केदी छे." वसुदेव ते छूटवी ले छे. आ वृत्तान्तमां **सद्दाय** एटले कोइ दास मारफते खबर पडवानुं कहेवामां आव्युं छे.

५०. **जोक्खिउ** मुद्रादोष छे. **जोक्खिउ** वांचो.

५३. (प०) **वूढमाणो**

५६. (प०) **ललंतंतमालं** । परन्तु पाठ स्वीकारायं तेवो नथी.

५८. (प०) तेम ज मूळ **विहिंडंत वीरे.**

६०. (प०) **नृकंकाल**; मूळ **णिकंकाल** मनुष्यनुं हाडपिंजर. संस्कृत छाया **निष्कंकाल** खोटी छे ते **नृकंकाल** करी सुधारवी.

६१. (प०) **कीलाणुरायं** पाठ सारो छे; कारण के **वायं**नी साथे तेनो प्रास मळे छे. **क्रीडानुरागं** एम छाया करवी.

६३-६४. **कुलं कुण्डलिनी नाडी अकुलं तु सदाशिवम्** । आ प्रमाणे **कुल** अने **अकुल**ना संयोगथी व्यक्तिशरीर बनेलुं मालम पडे छे-आ प्रमाणे पोताना संप्रदायनुं तत्त्व कौलाचार्योए पोताना शिष्योने ज्यां कहुं हतुं. छायामां **अकुलकुलानां संयोगे कुलशरीरमुपलक्षितम्** । एम वांचो. कौलाचार्य=तान्त्रिकोना आचार्य (प०) **कउलायरियहिं** । घत्तामां ११+११= २४ मात्रानी छे.

६८. (प०) **सयणाणंदिरु=स्वजनानन्दकः**

७०. **कणय** बाण दे. ना. २.५६. **कुसुमच्चअइसुसु कणओ य**। संस्कृतछाया **कनक** सुधारवी.

७१. **पिउवण** श्मशान.

७४. (प०) **वाहाउण्णइं=बाष्पपूर्णानि** ।

७५. **पयवई** ने बदले (प०) नो **पय चिरु=प्रजा चिरं** ए पाठ सरळ अने ठीक छे.

७७-७८. (प०) **दट्ठु** ने बदले **दट्ठुं** अने **हाहाकारिवि जोइयउ** । खरी रीते मूळमां क्रियापदनी तूट तो हती ज. (प०) नो पाठ उत्तम छे तेमां **हाहाकारिवि जोइउ=हाहाकार करीने** भूषणयुक्त बळेलुं मृतशरीर तेमणे जोयुं-ए स्वीकार्य छे.

८१. (प०) तृणु (प०) कोमलबउमे बदले कोमलंगु.

८५. णरुने बदले (प०) पुरु

८८. आपिक्खविने बदले (प०) आवेक्खवि । आ पंक्ति पछी (प०) नीचेनी पंक्ति वांचे छेः—

हा पइं विणु हियउल्लउं भुल्लउं को रक्खइ मेरउ कडउल्लउं
छाररासि हूयउ पविलोयउ एम बंधुवग्गें संसोइउं ॥

९०. पइं विणु सुण्णु हिमग्घलि माणिउ = तारा विना हिमगृहे आनन्द करवो ते शून्य छे, आम अर्थ थाय. पंजलीहि मीणावलि माणिउ (प०) आ बन्ने य पाठांतरो अने तेपाथी नीतरता अर्थ सुद्धां अस्पष्ट छे.

९२. छायामां नैमित्तिकैः वांचो.

९४–९६. विजयनगरना नंदनवनने रामायण साथे सरखाव्युं छे. श्लेषात्मक सरखामणी छेः—त्यां नंदनवन केवुं दीठुं ? मने जेवुं रामायण गमे छे तेवुं! ज्यां भयङ्कर रजनीचरो ( =राक्षसो ) फरे छे; चारे य दिशामां बगलाना ( लक्ष्मणना ) स्वर ज्यां छळे छे; ज्यां शीत जवाने लीधे ( सीताना विरहने लीधे) पूंछडुं हलावतो वानर, (हनुमान) पोतानी स्त्री साथे (राम साथे) आकाश ओळंगे छे.

९७–९९. उपवनने भारत साथे सरखाव्युं छेः–ज्यां मोर ( = शिव ) रोमांचित थई नाचे छे; ज्यां अर्जुन वृक्षने ( = अर्जुन ) घडाथी ( =द्रोणथी ) पाणी सिंचवामां आवे छे ( = स्नातक तरीके संसिक्त कराय छे. ); ते ज अर्जुन ज्यां नोळीआथी ( = नकुल ) सेवायलो छे;—भाइ कोने प्रिय नथी होतो ? आ प्रमाणे वेलोथी ढंकायलुं अने रविना तेजने ढांकतुं उपवन भारतसमुं शोभे छे.

१००. सोहइने बदले णिवडइ वांचो. जड उपर श्लेष छे. डलयोरभेदः ए नियम प्रमाणे. 'जडने अनंगथी कोण प्रकटावे ?'

१०२. (प०) महुथेंभहिं=मधुबिन्दुभिः पाठ आपे छे.

११५. (प०) रुहचुहंति.

११६. (प०) गोंदि. मूळ पाठ गोंजि=मञ्जर्यः । दे. ना. २.९५. गोच्छागोंटीगोंडीगोंजीओ मंजरीए य । (प०) नो पण अर्थ 'मंजरी' होवा संभव छे.

११७. णाहल [लाहल] म्लेच्छनी एक जाति सि. हे. ८।१।२६६.

११८. (प०) **जहिं तमालतमअविलक्खियरह**—ज्यां तमालना अंधकारथी रथ पण जणातो नथी ए रस्ता पर औषधिना तेजथी मार्ग देखाडाय छे.

११९. **संबरहिने** बदले **सबरहि** वांचो.

१२०. **छण्णउ** ने बदले **संछण्णउ** वांचो. मात्रामेळ तो ज मळशे.

१२२. (प०) **सग्गह.**

१२३. (प०) **झसमालि** ए, मूळपाठ **डसणालि** करतां उत्तम अने स्वीकार्य छे. आ पंक्तिनो अर्थः-" जेनाथी मकरादि बीतां हतां, ते मत्त जल-हस्तीनी सूंढ पाणी छोडती कोइ नवीन नालिका समी शोभती हती." अपभ्रंशमां समास बांधवामां अने तेनी श्लिष्टता साचववानी जे बेदरकारी राखवामां आवे छे तेनुं आ पंक्ति दृष्टांत छे.

१२६. **खुड्डुवियने** बदले (प०) **रवुड्डुवियं** वांचे छे; परन्तु (प०) नी वाचना छंदोभंगने कारणे अस्वीकार्य छे. ' लक्ष्मीना नूपुरने ज्यां कलहंसे पाछुं पाडयुं हतुं.' एम आपणी वाचना प्रमाणे अर्थ थशे. (प०) ना **नेऊर** पाठने बदले **नेउर** वांचीए तो ते बेसे. तेनो अर्थ " लक्ष्मीनां नूपुरना रवथी ज्यां कलहंसो ऊडावतां हतां."

१५४. (प०) **अब्भिड्ड** सरखावो. **दे. ना. १. ७८.** अर्थमां फेरफार थतो नथी.

१६३. (प०) **तरुकुसुमोद्ददिसोद्दपसाद्दिरि.** आ पाठथी अर्थ स्पष्ट थाय छे.

१६५. (प०) **भणंति** ।

१७२. (प०) **कुमारु** ।

१८३. **अवरु पउमरहु सुउ लहुआरउनो** संबंध पं. १८२नी साथे छे; त्यार पछी नवुं वाक्य शरू थाय छे.

१८४. (प०) **मृगपरिपुण्णहु**

१८८. **बुद्धिउ** ने वदले **बुद्धिए** वांचो.

१९४. पहेलां अकम्पन नामे मुनि उज्जयिनी गएला. त्यांनो अजैन राजा पोताना बलि, बृहस्पति, नमुचि अने प्रह्लाद नामना मंत्रीओने लई तेमनी साथे विवाद करवा गएलो. परन्तु तेना प्रधानो वादमां हार्या. राजा

वैरतृप्ति माटे मुनिने चारे य मंत्रीओ मारवा गया; परन्तु देवताना प्रतापथी तेओ स्तंभित थई गया. राजाए सवारमां आ जोयुं अने ते सर्वेने देशपार कर्या. नागपुर=हस्तिनागपुरमां बलि आ वखते पद्मरथ राजानो मंत्री थयो हतो. त्यां अकंपन मुनि आव्या. पूर्वनुं अपमान संभारी तेमनो नाश करवा ते तैयार थयो. आखा वृत्तांत माटे जुओ जिनसेननुं **हरिवंशपुराण**. सर्ग. २०. थोडा फेरफार साथे आ वृत्तांत **वसुदेवहिंडि अंश**. १. पान १२८.

१९६. **णियमइणियमणु** पोतानी बुद्धिने कुंठित करनार.

१९७. **(प०) हउं उज्जमु खवमि किं दुज्जणि ।**

२००. **ओलग्गिउ** जुओ **दे. ना.** १. १६४. **सेवयअपहाबलेसु ओलुग्गो ।** आ **ओलुग्ग** शब्द परथी नाम-क्रियापद बनावी तेनुं कर्मणि भूत-कृदन्त **ओलग्गिउ** थवा सम्भव छे. तेनो अर्थ सेवा. मूळ शब्द **अवलग्न** होवा संभव छे. **ओलग्ग=सेवा पा. स. म.** नोंधे छे. अहिं **ओलग्गिउ** = वचनना अर्थमां पण होई शके.

२०४. **(प०) मृगवहु.**

२०६. **जंगलु**=मांस. **(प०) अडुवि अडुइ ।** मूळनो अर्थ बंधबेसतो वधारे छे.

२०८. **(प०) जणउच्छिट्ठउ** पाठ सारो छे.

२०९. **बहलिय-रेणु** ने बदले **(प०) बहलयरेण ।**

२१०. **पयडिय भीसणवसणहं** ने बदले **पयडियभीसणवसणहं** ए पाठ उत्तम छे.

२१७. **जंपाण** पालखी.

२११. सरखावो. **ह. पु.** २०. ५३. **मेरावेकक्रमो न्यस्तो द्वितीयो मानुषोत्तरे । अभावादवकाशस्य तृतीयोऽभ्रमदंबरे ॥** मानुषोत्तर पर्वत के जे पुष्करार्धने फरतो छे अने तेनी अढी द्वीपनी सीमा गणावे छे. तेना पछी मनुष्यवास नथी. ते १७२१ योजन उंचो १४१० योजन १ गाउ उंडो अने १०३२ योजन पहोळो छे.

२३७. पद्मरथ राजा सत्ताथी छकेला द्विजकिंकर बलिने मारवा कहे छे. परन्तु विष्णु तेने क्षमा आपे छे अने रोष न करवा कहे छे.

२१९. **णरयविवरि पइसिज्जइ । (प०) सत्तममहि पाविज्जइ**

१४८-१५१. संगीतनी परिभाषानुं विवेचन करे छेः—

२२. श्रुतिभेदः—

हृदि द्वाविंशतिर्नाड्यस्तिरश्चयः पवनाहताः
एवं कंठे मुर्ध्नि ताभ्यस्तावत्यः श्रुतयोऽभवन् ॥

७. स्वरः—

ताभ्योऽभवन्स्वराः षड्जर्षभगांधारमध्यमाः
पंचमो धैवतश्चैव निषाद इति सप्त ते ॥

श्रुतयः स्युः स्वराभिन्नाः श्रावणत्वेन हेतुना
अहिकुंडलवत्तत्र भेदोक्तिः शास्त्रसंमता ॥

१८. जातिः—

षड्जमध्या तथा चैव षड्जग्रामसमाश्रयाः
जातयोऽष्टादशोद्दिष्टा मध्यमग्राममाश्रिताः ॥

१४१ अंशः—रागमां वारंवार आवनार प्रधान अथवा मुख्य स्वरने अंश अथवा स्थायी स्वर कहे छे. आनी १४१ संख्या प्रस्तुत स्थळे बताववामां आवी छे; परन्तु शास्त्रग्रन्थोमां ते मळती नथी.

५. गीतिः—

गीतयः स्युः पंच शुद्धा भिन्ना गौडी च वेसरा
साधारणी च शुद्धा स्यात्षड्भिर्लक्षितैः स्वरैः ॥

२५१. आ पंक्तिमां बतावेली संगीत परिभाषाना उल्लेखो शास्त्रग्रन्थोमां मळी शकता नथी. त्रीश ग्रामशत, अने तेना पर आश्रित सेंकडो ४० भाषा अने ६ विभाषा.

२५२. १. ग्रामः—ग्रामास्त्रयः स्युर्विशिष्टस्वरसंदोहलक्षिताः
षड्जमध्यमगांधारसंज्ञका मूर्छनाश्रयाः ॥

२१. मूर्छनाः—सप्तस्वरक्रमारोहावरोहौ मूर्छनोदिता
ताश्च प्रोक्ताः सत्रिग्रामं सप्तसंख्या मुनीश्वरैः ॥

४९. तानः—शुद्धप्रयोग स्वर सात छे, आ स्वरो पैकी एक के एकथी वधारे स्वरोनुं एक ज क्रमथी त्वरित गतिए आरोहण करवुं तेने तान कहे छे. संगीतशास्त्रकारोए सात

सप्तकनी घटना कहेली छे. आ प्रमाणे ७ सप्तकनां कुल ७ × ७ = ४९ तान थई शके.

२६१. **ससिणेसर**=शशीश्वराः एटले चंद्र अने सूर्य. शशिन्+इन+ईश्वर एवा पण विग्रह थई शके.

२७०. (प.) **मा संधहि धणुगुणि सरु.** धनुषनी मणछ पर बाण चढावीश नहि. मूळनो पाठ खोटो छे माटे त्यजघो. मूळनी संस्कृतछाया पण खोटी छे.

२७१. (ब०) **वहु** ने बदले **बहु.**

२७४. तमे पण ए अभिमानी राजानी आज सेवा करी रह्या छो अमां सुधी युद्धमां ते नमतो नथी.

२७५. (प०) **गेहिणी, रोहिणीने स्थळे**

२०८. (प०) **विधंतें**, शर वींधतानी साथे. **वृद्धत्वेन** एम छाया आपी छे ते खोटी छे.

२८१. वसुदेवे पोताना नामथी अङ्कित बाण फेंक्युं.

२८२. **सउरीणाह**=शौरिनाथ, समुद्रविजय.

२८३. (प०) **बाहुजलोल्लिय** वाचना सारी छे.

२८५. (प०) **सइ, सयने** बदले. ( प० ) नो पाठ सप्तमी बरोबर बतावे छे.

२८७. **कोडिसरु**=कोटीश्वर, करोडोनो अधिपति.

२९८. सरखावो **च्युत्वा कल्पान्महाशुक्रान्महासामानिकः सुरः । गर्भेऽभूदिह रोहिण्या धरण्या इव सन्मणिः ॥ ह. पु. २२. ७.** मूळनो अर्थः—शंख नामे ऋषि जे हतो ते महाशुक्र नामना कल्पस्वर्गनो शशिप्रभ नामे देव थई त्यांथी च्यवी रोहिणीना पुत्र भरतक्षेत्रना राजाओना पूज्य नवमा रामारूपे उत्पन्न थयो. पुष्पदंत( नवमा तीर्थङ्कर )ना तेजमांथी तेणे पोतानुं तेज मेळव्युं.

३००. कविनी नाममुद्रा छे.

## ॥ षष्ठमुद्धरणम् ॥

१. **कवि अने तेनुं जीवनः—**

प्रस्तुत उद्धरण **धनपाल** कविना **भविसयत्तकहा** नामे अपभ्रंश काव्यमांथी लेवामां आव्युं छे. भ. क. २२ संधिनुं काव्य छे, जेमांनो आखो

संधि. ४. प्रस्तुत उद्धरण तरीके लेवामां आव्यो छे. **भविसयत्तकहानां** वे सम्पादनो प्रसिद्ध थयां छे. एक प्रो.याकोबीनी जर्मन आवृत्ति जे इ. स. १९१८मां प्रसिद्ध थई हती; अने बीजी सद्. चिमनलाल दलाल अने सद्. डो. पी. डी. गुणेनी सहसंपादित आवृत्ति जे इ. स. १९२३मां गायकवाड ओरीएन्टल सीरीझना २०मा मणका तरीके प्रसिद्ध थई हती. आ बन्ने आवृत्तिओ एक-बीजानी पूरक छे; कारण के प्रो. याकोबीनी आवृत्ति अने डो. गुणेनी आवृत्ति जुदी जुदी हाथप्रतो परथी रचायली छे. डो. गुणेनी हाथप्रत, प्रो. याकोबीनी हाथप्रत करतां सारी हती; ज्यारे डो. गुणेनी आवृत्तिमां प्रो. याकोबीनी आवृत्ति जेटली चोकसाई नथी. परन्तु डो. गुणेनी आवृत्तिमां एक गुण ए छे जे तेमणे तेमना पुरोगामी संपादक प्रो. याकोबीनी आवृत्तिनो लाभ लीधो छे.

**भविसयत्तकहाना** कर्ता **धणवाल=धनपाल** विषे तेणे आपेली हकीकत उपरांत कांइ पण वधारे आपणे जाणी शकता नथी. काव्यना छेल्ला २२मा संधिना कडवक ९मां पोताना संबंधी नीचेनी माहिती तेणे आपी छे:—

**धक्कडवणिवंसे माएसरहो समुब्भविण**
**धणसिरिहो वि सुएण विरइउ सरसइसंभविण ॥**

एटले के धक्कड वाणिआना वंशमां पिता माएसर अने माता धनश्रीनो ते पुत्र हतो; अने ते पोताने 'सरस्वतीसंभव' कहेवडावतो हतो. धक्कड वाणिआनो उल्लेख लावण्यसमयना **विमलप्रबंध** (सं. मणिलाल. ब. व्यास) मां ८४ जातना वाणीआनी गणतरीमां करवामां आव्यो छे:—

**धाकडीया भडिया भूंगडा, ब्रह्माणा, वीधू, वायडा।** (पान. ४९.)

आथी विशेष कविसम्बन्धी हकीकत मळती नथी. आ **धनपाल**, ऋषभ-पंचाशिका, तिलकमंजरी अने पाइअलच्छीनाममालाना कर्ता **धनपाल** (इ. स. नुं ११मुं शतक) करतां जुदो छे. आपणी कविनी भाषाना पूरावाथी तेने आपणे विक्रमना १०मा शतक पूर्वेनो सहज कही शकीए. धनपालनुं अपभ्रंश बोलाती भाषाने वधारे समीपवर्ती छे; जो के धनपालनी मेधा संस्कृत अने प्राकृत साहित्यमां विचरी होय तेना अनेक पूरावा काव्यमां देखा दे छे. **धनपाल** दिगम्बर जैन होवो जोईए, कारण के भ. क. प. २०. ३. मां **भंजिवि तेण दियंबरि लाइउ**। एम लखे छे, अने अच्युतस्वर्गने ते १६ मा स्वर्ग तरीके गणे छे.

२. उद्धरणवस्तुः—

**भविसयत्तकहा** एटले भविष्यदत्तनी कथा. गजपुर नाम नगर हतु. त्यां धनपति नामे नगरशेठ ( **रायसिट्ठि** ) रहेतो हतो. ते ज नगरमां हरिबल नामे बीजो वणिक रहेतो हतो. एक दिवस धनपति हरिबलने घेर गयो अने त्यां हरिबलनी दीकरी कमलश्री प्रति तेनी दृष्टि गई. हरिबलनी पासे धनपतिए तेनी दीकरी माटे मागुं मोकल्युं जे स्वीकारायुं, अने कमलश्री अने धनपतिनां लग्न थयां. तेमने भविष्यदत्त नामे पुत्र थयो. केटलोक समय वीत्यो; अने पूर्वजन्मनां कोई कर्मथी धनपतिनो प्रेम कमलश्री परथी ओसरी गयो. एक दिवस धनपतिए कमलश्रीने कडवां वेण कह्यां अने तेने तेना पिएर चाली जवा कह्युं. ते पोताना पितृगृहे गई. धनपति सरूपा नामे धनदत्तशेठनी दीकरीने परण्यो. तेनाथी तेने बंधुदत्त नामे पुत्र थयो. बंधुदत्त यौवनमां आव्यो त्यारे ते धंधा माटे परदेश नीकळ्यो. भविष्यदत्त पण माताने नहि गमवा छतां तेनी साथे वेपार माटे नीकळ्यो. तेओ तिलकद्वीप नामे द्वीप पर आवी पहोंच्या. भविष्यदत्तने दूर गएलो जोई, बंधुदत्त पोतानां वहाण हंकारी गयो. आ चोथा संधिमां भविष्यदत्तने तिलकद्वीपमां केवी रीते लाभ थयो तेनी कथा कहेवामां आवी छे.

भविष्यदत्त हाथपग धोई, कमल लई आवी जुवे छे त्यारे ते वहाण चाल्यां गएलां देखे छे. तेने बहु ज शोक थाय छे. (१) भविष्यदत्त पोताना भाई बंधुदत्तनी हीणी वंचना उपर विचार करे छे. पोताना हृदयने दृढ करी, खलदैवने पडकार करी ते वनमां चालवा मांडे छे. (२) भविष्यदत्त गहन वनमां प्रवेशे छे. ते वन पंखी अने सावजथी भरपूर छे. छेवटे अतिमुक्तलताना मण्डपमां वृक्ष नीचे शिलातल उपर ते बेसे छे. (३) सूर्य आथमे छे; संध्या थाय छे; एटले हाथ पग धोई, कुसुम लई, जिननी ते अर्चना करे छे. भयंकर रात्रिनुं वर्णन कवि करे छे. (४) सवार पडे छे. भविष्यदत्त एक जूनो मार्ग जुवे छे. तेने शुभ शुकनो थाय छे. ते मार्गे जवानो ते निश्चय करे छे. (५) आ प्रमाणे गिरिकन्दरानो प्रदेश अने श्यामतमालपूर्ण वनने ओळंगी प्रासाद, प्रतोली इत्यादिथी सुशोभित अने धवलित गृहोथी विराजित छतां निर्ध्वनिक एक नगर ते जुवे छे. (६) नगरनुं वर्णन कवि करे छे. त्यां मंदिर हतां पण पूजक कोइ न हता. कुसुम हतां परन्तु वास लेनार कोइ न हता. आ प्रकारनुं नगर जोई भविष्यदत्त विस्मित थाय छे. (७) आ प्रकारनुं ज वर्णन चालु. अर्ध उघाडां बारणां अने बारीओवाळां गृहो, पण्य वस्तुओथी भरपूर बजारो ते जुवे छे; परन्तु त्यां कोइ रहेनार के खरीदनार नथी. आखो देखाव शोकजनक लागे छे. परन्तु ते शुभचिह्नो जुवे

छे; अने तेना मनमां उत्साह आवे छे. (८) भविष्यदत्त नगरमां भमे छे; पण आ घोर शून्यतानुं कारण तेने समझातुं नथी. (९) फरतो फरतो ते यशोधन राजाना प्रासाद आगळ आवी पहोंचे छे. ते प्रासाद अने तेनां उपगृहोने ते शून्य देखे छे. (१०) ते आयुधशाळा इत्यादि स्थानोए भटकतो चन्द्रप्रभजिनना मंदिरे आवी पहोंचे छे. (११) विशाल, सुघटित अने अलंकृत मंदिरमां ते प्रवेशे छे. तेनी आगळ आवेला सुन्दर कमल-सरोवरमां ते स्नान करे छे अने चन्द्रप्रभजिननी स्तुति करे छे. (१२) चन्द्रप्रभजिननी तेणे करेली स्तुति आपवामां आवेली छे. (१३)

३. छंदोरचना:—

प्रस्तुत उद्धरणमां १३ कडवक छे. समस्त संधिना आदिमां त्रण ध्रुवक छे. प्रथम ध्रुवक संधिवस्तुसूचक छे. बीजां बे आ कडवकनो बोध तार-वर्ता ध्रुवक छे. आ उद्धरणनी पं. ३. त्रण खरी रीते चार पंक्तिनी बनेली छे. कडवक ७. अने ११. नी घत्ता बाद करतां बीजी बधी घत्ताओनो छन्द आदि ध्रुवकना जेवो ज छे; एटले के तेमनुं मात्रामान १५+१३=२८ नुं छे. प्रा.पिं. (पा. २०५) प्रमाणे आ उल्लाल छन्द छे: तिण्णि तुरंगम तिअल तह छह चउ तिअ तह अंत । एम उल्लाला उट्ठवहु बिहु दल छप्पण मत्त ॥ ४ + ४ + ४ (त्रण तुरगम) + ३ = १५; ६ + ४ + ३ = १३; कुल्ले अठ्ठावन छन्दमां ५६ मात्राओ, मात्राजूथनो बंध प्रस्तुत उद्धरणनी घत्तामां सचवातो नथी. सामान्यतः १५+१३नो मेळ ज अहिं तो इष्ट छे. छं. शा ४२ (ब) सर्वे चतुर्दश ओजे षोडश मन्मथविलसितम् । यथा,

मयवसतरुणिविलोअणतरलु कलेवरु संपइ जीविउ
मेल्हहु रमणीअणि सहु संगु चयउ हयवम्महविलसिउ ॥

एटले १५+१३=२८. हेमचन्द्रना अभिप्राये प्रस्तुत घत्तानो मन्मथविल-सित छन्द छे.

कडवक ११. मां मारकृति छंद छे. छं. शा. ४३ (अ) चपला-भ्रातौ वा मारकृतिः ॥ चतुर्मात्रपञ्चमात्रद्विमात्राः । चतुर्मात्रद्वय-त्रिमात्रौ वा मारकृतिः । यथा,

तुङ्ग मारु मारकिवी कञ्चि वह नवल्लिअ ।
दूमि स: वालहं भल्लि जं हिअडइ सल्लिअ ॥

कडवक. ७ मां सामान्य वज्जडिआ ज घत्ताना छंद तरीके छे. संधिना आदिनी बीजां बे ध्रुवक मंदर छन्दमां छे. प्रा. पिं. पा.२५१

प्रमाणे – ⌣ ⌣ = भगणनां बे जूथनुं एक चरण एवां बे चरणोनो आ छन्द छे. प्रस्तुत उद्धरणना दृष्टांतमां **अहो जिणु अंचहु, मं परु वंचहु** । मां आदि **अ** धारानो छे.

कडवकना देहना छन्दमां, कडवक. १. पं. ४–६, कडवक. ३., कडवक. ७., कडवक. ८., कडवक. ९., कडवक. १३. बाद करतां अन्य कडवकोमां १६ मात्रानो **फज्जहडिआ** छे, जेनुं लक्षण प्रथम उद्धरणमां निरूपित कर्युं छे.

कडवक. १. पं. ४–६. १५ मात्रानो **पारणक.**

कडवक. ३. **भुजंगप्रयात** चार चगण = ४ ( ⌣ – – )

कडवक. ७.–**चामर** आदिमां गुरु पछी लघु एम २३ मात्रा सुधी होवुं जोईए. एक चरणमां १५ अक्षर होवा जोईए. (जुओ. **प्रा पिं. पा. ४८४**) एटले छन्दोरचनाः— –⌣ – ⌣ – ⌣ – ⌣ – ⌣ – ⌣ – ⌣ – = गालगालगालगालगालगालगालगा ॥

आ छन्दमां कवि बे लघुने केटलीक वार गुरु तरीके गणे छे; एटले **प्रा. पिं.** प्रमाणे आ छंदमां १५ अक्षर होवा जोईए ए बन्धन त्यजे छे. सरखावोः– कडवक. ७. पं. ७७. ८०. आदि दीर्घस्वरने बदले बे लघु स्वर; पं. ८४, **सरव, भमिर, भमर,** इ०.

कडवक. ८.मां **किंनरमिथुनविलास** १०+१४=२४ मात्रानो छन्द छे. **छं. शा. ४०** (अ.) **ओजे एकादश समे पञ्चदश किंनरमिथुन-विलासः । यथा,**

**अविरहियइं मुइअहं, हरिणहं जि रइसुहु सलीसइ**
**पर एम्वइ किम्वइ, जसु किंनरमिहुणविलासइ ॥**

प्रो. याकोबी आने **कलहंस** कहे छे. ते छं. शा. प्रमाणे खोटुं छे.

कडवक. ९ मां **पारणक** छे.

कडवक. १३मां **लक्ष्मीधर** छन्द छे. रगण एटले ( – ⌣ – )नां ४ जूथनो आ छन्द बनेलो छे. **प्रा. पिं.पा.४४४.** मां आ छन्दनी व्याख्या आपी छे. आमां पण बे गुरुने बदले एक लघु मूकाय छे. दा त. **तिलयद्दी** ( १ ) **भरहखे** । (२) **सिसिरका** (३)

४. टिप्पणः—

२. **णिरु** मूळमां **णरु=नरः** छे. जो ते स्वीकारीए तो **भविसत्तुनी** साथे ते पाठ लेवो पडे. **णिरु**=निश्चित.

६. **कोइ** द्वितीया एकवचन, **पिक्खइनुं** कर्म.

४–६. पंदर मात्राओनो छन्द छे; कडवकना देहमां सामान्यतः एक ज छन्द होवो जोईए. कविनो प्रमाद होय के गमे ते बीजुं कारण होय, पण कविनी आ रीत असाधारण तो छे ज.

७. **सुहावइ** [ **सुखापयति** ] मूळमां **सुहाइ** छे; परन्तु मूळनो पाठ स्वीकारवामां एक मात्रानी तूट पडे छे अने अन्त्यानुप्रास बेसतो नथी.

९. **दुक्खहो भरिउ** तृतीयाने बदले षष्ठीनो प्रयोग. अर्वाचीन गूजरातीमां आवो प्रयोग दृष्टिगोचर थाय छे. दा. त. दूधनो दाझ्यो, दुःखनो मार्यो इ०. आवा प्रयोग रूढ थवानुं कारण ए होय छे के बोलनार 'दाझ्यो' 'मार्यो' नो कृदन्तार्थ भूली जई विशेषणार्थ उपर ज एकलो भार मूके छे

१३. **दइउ परम्मुहु** सामान्यतः सति सप्तमी आवे स्थळे होय; परन्तु अवान्तरागत वाक्य ( Parenthetical clause ) तरीके आ बे शब्दो कविए अहिं मूक्या छे.

१५. **संवारिउ** डॉ. गुणेनी **भ. क.ना** शब्दकोषमां **संवारइ=संवृणोति**नो 'संताडवुं, ढांकवुं, अटकावबुं" ए अर्थ थाय छे, जे संदर्भनी दृष्टिए अयुक्त अने अनर्थक छे. जो **संवृणोति** लईए तो **सं** द्विमात्रिक बने अने मात्रातिरेकनी अनिष्टापत्ति आवी पडे. **संनो** अनुस्वार ध्वन्यात्मक छे अने **संवारिउ** <**प्रा. समारइउ** <सं. **समारचित** ए अर्थ, मात्रा अने व्युत्पत्तिनी दृष्टिए स्वीकार्य छे. "दुर्जनजनमां खोटी वायका पेदा करी छे." सरखावो **सि. हे. ८।४।९५। समार**=सं. **सम्**+**आ**+√**रच्**.

२०. आ पंक्तिनो वाक्यरचनाः—**जइ तं तेम घडिउ, तो तेण इ (घडिउ); तो किर काइं (मइं) एणइ विसूरइ** ॥ जो ते प्रमाणे अपयश कराव्यो छे, तो ते तेनाथी कराव्यो छे; तो पछी खरेखर मारे एनाथी शा माटे उद्विग्न थवुं ?"

२४. प्रथम भागमां १६ मात्रा छे; **संचल्लिउ संमुहु काणणहो** एम वांचीए तो वनथी थतो पुनरुक्तिदोष दूर थाय अने मात्रा मळे.

२५. **खयाल** बीजा कोइ ग्रन्थ के कोषमां आ देश्य शब्द मळतो नथी. 'झाडी' ए अर्थ ठीक छे.

२९. डॉ. गुणे अर्थ काढवा माटे व्याकरणनी भांगतोड करे छे. **निघउं** हेत्वर्थकृदन्त ते मुख्य क्रियापदनी गरज सारे छे अने **नरिंदं** छन्दोमेळ खातर **नरिंदो**ने स्थळे मूकवामां आव्युं छे; एटले **नरिंदं** तेमने अभिप्राये प्रथमामां छे. आ तद्दन खोटुं छे. २८–३२ सुधी वर्णवेला, गजेन्द्र, मृगेन्द्र, वराह, हुताश अने मयूर पं. ३१ मां **मुणेविनां** कर्म छे. "कोइक स्थळे नरेन्द्रने (= भविष्यदत्तने) जोवाने, नासेलो नहि अने रुष्ट थएलो नहि एवा अभिमानी सिंहने जोईने."

३०. गुणे अने दलाल **कज्जलाहं गयं** एम बे अक्षर छूटा पाडे छे; तेमां कांइ अर्थ नथी. ते भेगा करी संस्कृतछाया प्रमाणे अर्थ करवो.

३१. **हुयासो** द्वितीया, सरखावो **कोइ** आज उद्धरण पं. ६.

३२. **अप्पाणयं विण्णडंतं** (भविष्यदत्तना) आत्माने व्याकुल करतो संस्कृत छायामां **विगोपायन्तं** ने बदले **विनटन्तं** वांचो.

३३. **हिंडंतु थिउ हींडनो** थयो. गूजरातीमां प्रचलित रचना.

३५, **धुएविमां ए** एकमात्रिक छे.

३७. गुणे **संझतेयतंबिरसराय** इत्यादि भेगां लई पं. ३६ना **दिणमणिनुं** विशेषण बनावे छे. ज्यारे प्रो. याकोबो **संझने** कर्ता गणे छे. याकोबीनी अर्थसंकलना अहिं स्वीकारी छे प्रो. गुणेनी सूचनामां (१) **हुअ**, 'थई' अने **आय** एटले 'आवी' ए समजावबुं मुश्केल छे; कारण के पं. ३६ मां **दुक्कु** एटले 'गयो' क्रियापद तरीके मक्युं छे. (२) **संध्यानी** नायिका तरीकेनी कल्पना अने तेनो प्रवेश – आ बाबतो समजावाती नथी. प्रो. याकोबीनी वाचनामां आ स्पष्ट रीते आवी शके छे.

४०. **रहंग** चक्रवाक.

४७. **परमिट्ठि पंच** अर्हत्, सिद्ध, गणधर, उपाध्याय, साधु.

४७. **दुविहें पच्चक्खाणु** बे रीते – एटले भावथी – विचारथी अने द्रव्यतः–कार्यथी – प्रत्याख्यान=सावद्य एटले पापयुक्त आचरणमांथी निवृत्ति.

४८. **मंत सत्तक्खरउ–नमो अरिहन्ताणम्** । ए सात अक्षरनो मन्त्र.

५१. **पयहिणंति** वरोवर जमणी बाजुए. **साम** काळो कागडो.

५१. कामदो चरणांगणे बोले तो प्रियजनने मेळाप करावे; ए शुकन गणाय छे.

५६. वग्ग होमि ' आ रस्ते जईश ' पछीथी ते विचार करे छे के आ मार्ग माणसना चालवाथी ज थएलो होवो जोईए; कारण के ' विद्याधर अने सुर जमीन पर पग मूकी चालता नथी.' संस्कृतमां ' अनेन तावद् भवामि त्यारे तो आव जईश ' एवो प्रयोग मालम पडे छे.

६०. निव्वडिउ कज्जु किं वित्थरेण—बहु लांबुं कांत्ये कयुं कार्य थयुं छे ? एटले बहु चिंता करवा करतां आगळ ज जवुं; बहु चिंता कर्ये शुं कार्य थवानुं छे ? प्रो. गुणे निव्वडउ सुधारवा कहे छे पण तेनी कांई जरूर जणाती नथी. आ ज विचार ६१-६२ (घत्ता)मां भारपूर्वक प्रतिपादित करवामां आव्यो छे:-ज्यां सुधी (जनो) (कार्य प्रति)सांचरता नथी, त्यां सुधी (कार्य) दुस्तर दुर्लघ अने दुरंतरित छे; पौरुषयुक्त अने मरणना भयनी अवगणना करता ( पुरुषोनुं ) शुं सिद्ध थतुं नथी, बोलो ! "

६१-६२. आ पंक्तिओ प्रो. गुणेने व्याकरणदृष्टिए समजाई नथी तेथी ज अवगणंतहं बहुवचनने अपभ्रंशनी बहुलतानो आश्रय लई एकवचन तरीके गणाववा यत्न करे छे; कारण के सउरिसहं=सुपुरुषस्य अर्थ करवा तेमनो अभिप्राय छे. वळी संचरहिं=संचरन्ति ए बहुवचनरूप छे तेनी समजावट एकवचन तरीके तेमणे करी छे. आ बधा व्याकरणदृष्टिए प्रमादो छे. ध्यान अर्थ माटे संस्कृतछाया जुओ.

६३ सुहिसयण बे शब्दो मूलमां छूटा पाड्या छे; न छूटा पाडीए तो पण चाले. तेथी तेना अर्थमांथी कांइ व्याकृति नहि थाय. " मित्र अने स्वजनने छोडी " एटले के मित्र अने स्वजनने हवे मळाय के न मळाय एम करी, तेमना प्रत्येना प्रेमनो अवरोध करी. प्रो. गुणे सुहि=सुधीः, सयण=सज्जन एम अर्थ करी भविष्यदत्तना विशेषण तरीके आ शब्दोने ले छे तेनो स्वीकार करवो मुश्केल छे. वळी प्रो. गुणे कहुले छे तेम सुहिसयण ए अपभ्रंश सुहृत्स्वजनना अर्थमां सामान्य जोडकुं छे, तेनाथी पण विपरीत अर्थ प्रो. गुणेने लेवो पडे छे.

६५. अंतरिउ कालेमं कालु काल जेम कालथी अंतरित थाय छे एटले जेम एक पळ पछी बीजी पळ एक पछी एक आव्या करे छे, तेम एक पछी एक तेवां पगलां पडतां हतां अने भविष्यदत्त आगळ चालतो हतो.

७४. कर्तरि वर्तमानकृदंतने स्थळे कर्मणि वर्तमानकृदन्त एटले के **प्रविशता** ने बदले **प्रविश्यमान>पविस्समाण.**

७९. हेत्वर्थने बदले संबंधकभूतकृदन्त-**पूज्जिऊण.** त्यां ते ( मनुष्य ) न हतो जे पूजवाने माटे ( तेनो अंदर ) दृष्टि करे.

८०. **पसूण** प्रसून; गुणे-याकोबी **पसूअ; पसूअ** स्वीकार्य छे. दे. ना. ६. ९. **कुसुमे पसूअ** ।

८७. संबंधक भूतकृदन्तने स्थाने हेत्वर्थ **तोडिउं.**

८९. प्रो. गुणे " There was no one who would be affected by others' riches, covet it, take it to himself and think about doubters " उपरना अर्थमां **ण लुब्भए ना ण** =not नो अर्थ क्यां ? वळी **अप्पणम्मि अप्पए**नी छाया प्रो. गुणेनी दृष्टिए **"आत्मनि अर्पयेत्** "थाय. **वियप्पएसु** एक शब्द तरीके वांचवानुं सूचन ते करे छे. आ प्रमाणे करेलो अर्थनी कल्पना दूराकृष्ट छे. अर्थः-"पारकानुं धन जोईने भविष्यदत्त क्षुब्ध थाय छे पण लोभातो नथी; पोतानी मेळे विकल्पो करे छे अने ते चिंते छे." **अप्पए**मां चोथीनो **ए** प्रत्यय **आत्मने**नो अवशेष; अने **आत्मन्**नुं **अप्प** अने **अप्पण**मांथी **अप्प**नो स्वीकार; आमांथी **अप्पए** रूप बन्युं.

९०. **पुत्तिचोज्जु-चोज्जु**=आश्चर्य दे. ना. ३. १४ गू. मां ' मारुं बेटुं'-' मारी बेटीनुं ! ' एम आश्चर्यवाचक उद्गार वपराय छे. तेवो ज आ उद्गार छे. **'पुत्तिए' ' अम्मए** ' ए आश्चर्यदर्शक उद्गारो अपभ्रंशमां सामान्य छे. जुओ **पाहुडदोहा. १०८.**

९१. **वाहि मिच्छ तं जणं दुरक्खसेण खद्धयं** । दलाल - गुणेनी वाचना बरोबर नथी; तेमज प्रो. गुणेए तेमनी टिप्पणमां के कोषमां कांइ समजाव्युं नथी. ' व्याधि, म्लेच्छ, खराब राक्षसथी ते माणस खवाई गया हशे ! ' आश्चर्योद्गार होवाथी **वाहि** अने **मिच्छ**ना तृतीया प्रत्ययो त्यजी दई **दुरक्खसेण**ना प्रत्ययथी चलावी लीधुं होवुं जोईए.

९३. **याणिमोनुं** आखुं वाक्य कर्म होवाथी **जं पहुं** अने **कहं गयं** मां कर्ताविभक्ति होवा छतां तेनी कर्मविभक्ति करी अव्यवस्था आणी छे. **इत्थु जु पहु आसि सु कहं गउ - ण याणिमो** एम खरी रीते होवुं जोईए. अथवा तो छन्द खातर पण **पहु**नी जाति बदली होय.

९८. छन्द साचववा **फलअद्धुग्घाडियगवक्खइं** । **गवने गु** जेवो वांचो.

१०२–१०७ आपण = बजारनुं श्लेषात्मक वर्णन छे.

१०४. **रंधि पलित्तइं** (बीजानी) भूख थतां गुस्से थता, धन ए ज जेनो अभिलाष छे तेवा पुरुषोनी माफक, हाट तेमनां छिद्रोमांथी पण प्रकाश आपतां हतां. बंध दुकानोनां छिद्रोमांथी अंदरनां रत्नो अने एवा बीजा चळकता पदार्थोंने लीधे प्रकाश आवतो हतो.

१०५. **वरइत्तजुवाणइं णं वड्ढकुमारिहु चित्तइं** वर थता जुवानोनां चित्त जेम उत्तम कुमारिवाओ तरफ होय छे तेम सुन्दर कुमारीवाओनां चित्रोथी भरपूर हाट हतां. खरी रीते **वड्ढकुमारिहु चित्तइं** एनो बहुव्रीहि समास होय तो ज **आवणाइना** विशेषण तरीके तेने लई शकाय. शुं आ पण अपभ्रंशनी अराजकतानुं परिणाम हशे? **हु** ने बदले **सु** करीए तो एकमां विशिष्ट शब्दो अने बीजामां एटले चित्रपक्षे समास एम लईए तो मुश्केली टळे.

१०६. योगीजनोना विवादनां साधन, जेमां यौगिक रीते प्रतिपक्षीने स्तब्ध करवानुं समायलुं छे, तेवां हाट, जेमां सघळुं स्तब्ध थएलुं देखातुं हतुं प्रो. गुणेनुं विवेचन जरा अस्पष्ट छे.

११०. दलालनो पाठ प्रो. गुणेना सूचन करतां सारो छे; वळी प्रो. गुणे छन्दोमेळ खातर **व** छोडी **सुरइं** पाठ करवा कहे छे ते खोटुं छे; उलटुं तेथी तो एक मात्रा खूटशे. दलालना पाठमां **व** श्रुति छे ज्यारे प्रस्तुत उद्धरणमां **य** श्रुति मूकी छे एटली ज फेरफार छे.

१११. प्रो. गुणे **तित्थ<तोर्थ** 'पवित्र स्थान' ए अर्थ ले छे, ते यथार्थ नथी. तीर्थ=ओवारो ए अर्थ लेवानो छे. 'जे पाणीभारीओना घाट पहेलां खीचोखीच हता ते भाग्यवशात् निःशब्द अने दयाजनक स्थितिना थया छे."

११९. **टिंटा के टेंटा** द्यूतस्थान. दे. ना. ४. ३. **टेंटा जूयपयम्मि**; आ उपरथी ज **टिंटाउत्त** एटले जुगारी. **मयरट्ठा** आ शब्द **मदरक्ता** उप थी होवा संभव छे. दे. ना. मां नथी. वारवनिता, वेश्या ए अर्थ बेसतो अने अनुरूप छे.

१२०. **आहोय=आभोग** खुल्लो जमीननो विस्तार; " खुल्ला जमीनना विस्तार, सुन्दर घरनां आंगणांथी युक्त होवा छतां, लोकोथी त्यक्त होवाने लीधे, शोभा आपता नथी."

१२३. जे क्षयकालथी अंतर्हित थयुं होय ते केवी रीते तेथी उलटी एटले सारी स्थितिमां मळे ? एटले के जे वस्तु नाश पामी होय ते आखी अने साजीसमी केवी रीते मळे ? **पडीवउ**=तेथी उलटुं.

१२४. जेम काल क्षयकाले करेला विनाश तरफ जुए तेवी रीते भविष्यदत्ते ते नगर तरफ दृष्टि करी.

१२५. महाइउ=महात्मन्; आय=आत्मन् ए रूप मागधीमां अने तदनुसार महाराष्ट्रीमां देखा दे छे.

१२६. सोहदुवारहो सुधारी उपमान साथे मेळ लाववा सोहदुवारइं 'जाणे शरमातां होय अने तेथी अर्धां उघाडां रह्यां होय एवां राजमहेलनां सिंहद्वारने ते जोतो हतो.'

१२७. णिग्गय (१) निर्गज=हाथी विनानी (२) निर्गत = बहार रखडती. आ शब्द पर श्लेष करी उपमा अहिं मूकी छे.

१२८. विगयासइं (१) जेमांथी घोडा जता रह्या छे एवी तुरगशाला ओ (२) जेमांथी आशा विनष्ट थई छे एवा प्रार्थनाभंग. उपरना जेवी ज श्लेषोपमा.

१२९. सहु पंगणउ आ वाचना सुधारी सह-पंगणउ=सभापांगणं सभामंडपनुं आंगणुं ए अर्थ करवो बरोबर छे. सहुनो सर्व अर्थ हेमचन्द्रे विहित कर्यो नथी. सि. हे. ८।४।३६६. सर्व=सह विहित करे छे; जो के पाछळथी सहु वपराशमां तो आवे छे.

१३०. चामर, पोशाक सहित अने सजचिह्न साथे छत्र अने कनकपीठ सहित सिंहासन तेणे त्यां जोयुं.

१३१. णिप्पहु गहु अने विलक्खु अलज्जिउथी विरोधाभास अलंकार आवेलो छे. विलक्खु=विलक्षः 'गांडो.'

१३८. वीणालावणिवंसविसेसइं वीणा, आलापनी (जुओ पा. स. म. एक वाद्यविशेष) वंशी जेमां मुख्य छे ए.

१३९. अच्छंतइं समत्तइंनी साथे लइ समाप्ते सति एम करी सप्तमीनो अर्थ करवानो

१४६. भविष्यदत्तने नरेन्द्र एटले मानवोमां उत्तम कहेवामां आव्यो छे. नरेन्द्र एटले राजा ए अर्थ नथी लेवानो. नंदीसरदीउ नंदीश्वर नामनो आठमो द्वीप जुओ तत्त्वार्थ० ३. ७.

१४९. विढवद्धकडिल्लउ रह सीतो जेना बोझ बांध्या छे एवुं वित्त

१५०. **आगमजुत्तिपमाणविहंजिउ** शास्त्रमां बतावेली युक्ति अने प्रमाणोथी विभक्त करेलुं.

१५१. **सुहलक्खणलक्खणचच्चंकिउ** शुभ लक्षणथी युक्त एवी सुखडनी चर्चाथी अंकित थएलुं.

१५२. **सच्छायपओहर** (१) शोभायुक्त अथवा स्वच्छ पाणीने धारण करती वाव (२) शोभायुक्त जेना स्तन छे तेवी कामिनी.

१५५. **परिअंचिवि अंचिवि** प्रदक्षिणा करी तेम ज अर्चना करी.

१५६. **सामाइउ** सामायिक करीने.

१५८. **काले चउत्थे** अवसर्पिणीनो चोथो आरो एटले सुषमदुःषमामां. जओ **तत्त्वार्थ**. ४. १५.

१५०. **तस्सेव** ते ज काळना; प्रो. गुणे तस्सने विशेषनाम ले छे; परन्तु तेनो आधार कशो य नथी. **तित्थेसए** मागधीना अनुकरणमां प्रथमा होवी जोईए.

१५९. **दसलक्खपुव्वाउसे** त्यारे मनुष्यनुं आयुष्य दश लाख पूर्वनुं हतुं **पूर्व** माटे जुओ **तत्त्वार्थ०** ४. १५. भाष्यः—**वर्षशतसहस्रं चतुरशीतिगुणितं पूर्वांगम् । पूर्वाङ्गशतसहस्रं चतुरशीतिगुणितं पूर्वम् ॥** आ पण मागधीना अनुकरणमां प्रथमा.

१६०. जेमनी उंचाइ दोढसो धनुष्नी हती.

१६१. जेमणे आठमुं तीर्थ पवित्रित कर्युं हतुं. चंद्रप्रभ आठमा तीर्थंकर हता.

१६७. **तक्कुओ** जुओ **पा. स. म.** स्वजन.

१६८. **माणम्मि काउं** गणतरीमां लईने. **काउं** हेत्वर्थकृदंत संबंधक भूतकृदंत तरीके.

## ॥ सप्तममुद्धरणम् ॥

१. **कवि अने तेनुं जीवनः—**

प्रस्तुत उद्धरण **जोइंदु=योगीन्द्रना परमात्मप्रकाश** नामे ३२३ दुहा +१ छप्पय अने १ मालिनी एम बे श्लोक छेवटे मळी ३४३ गीतिकाओनो

आ ग्रन्थ छे. रायचन्द्र जैन शास्त्रमालाना एक मणका तरीके ते इ स. १९१६ मां प्रसिद्ध करवामां आव्यो हतो; परन्तु एक तो अपभ्रंशभाषाना एक अमोल रत्न तरीके नहि पण एक धर्मग्रन्थ तरीके अने ते य हिंदीमां प्रसिद्ध करवामां आवेलो होई, तेना तरफ कोइ विद्वाननुं ध्यान गएलुं नहि. प्रो याकोबी तेमनी इ.स १९१८ मां प्रसिद्ध थएल **भविसयत्तकहा**मां **जोइन्दु**नो उल्लेख करता नथी; तेम ज प्रो. गुणे **भ. क.** नी तेमनी १९२३ नी आवृत्तिमां पण **जोइन्दु**नो उल्लेख करता नथी. इ. स. १९२७मां जिनदत्तसूरिनां त्रण अपभ्रंश काव्यो ( **अपभ्रंशकाव्यत्रयी** G. O. S: XXXV. ) ना संपादनमां प्रथम वार **जोइन्दु**नो उल्लेख करी, **परमात्मप्रकाश**ना केटलाक दुहा टांकी, चण्ड अने हेमचन्द्रना प्राकृत व्याकरणमां उदाहरण तरीके आवेला केटलाक दुहा साथे साम्य बतावी, **जोइन्दु**ने चंडथी प्राचीनतर ठरावया, ते ग्रन्थना विद्वान सम्पादक पं लालचंद्र भगवानदास गांधी यत्न करे छे. (जुओ **अ. का. त्र.** नी संस्कृत भूमिका पान. १०२–१०३). आ ज अभिप्रायनुं समर्थन श्री उपाध्ये ' Joindu and his Apabhramsa works.' नामे लेखमां सविस्तर करे छे. प्रस्तुत लेख सने १९३१मां Annals of the Bhandarkar Oriental Research Institutemां प्रसिद्ध थयो हतो. ते लेखमां तेमणे **जोइन्दु**ना बीजा ग्रन्थोनो पण उल्लेख कर्यो छे, जेवा के **योगसार** ( माणिक्यचन्द्र दिगम्बर ग्रंथमाला नं. ५१. पा. ५५–७४. ) **सावयधम्मदोहा**, **पाहुडदोहा** इ० छेल्ला बे ग्रन्थोनुं विवेचन आठमा नवमा उद्धरणमां करवामां आवशे.

पं. लालचन्द्र अने श्री. उपाध्येनो आधार:–

**कालु लहेविणु जोइया जिमु जिमु मोहु गलेइ**

**तिमु तिमु दंसणु लहइ जिउ णिगमें अप्पु मुणेइ ॥**

मूळ दोहा ८६. सदर उद्धरण. ३०. आ दुहो **यथा तथा अनयोः स्थाने जिमतिमौ ॥** ए सूत्रना उदाहरण तरीके **चण्ड**ना **प्राकृतलक्षण** ( Ed. Hoernle P. 37. ) मां टांकेलो छे. **चण्ड**ने छट्ठा सैका पछीनो ज गणी शकाय, कारण के अपभ्रंश साहित्यभाषा बने त्यार पछी ज सामान्यतः तेनी सूत्ररचना थाय. ( **भ क.** Intro. P. 63. Gune ) ( Pischel: G. P. Ein. §. 35 ) ( **चण्ड**, हेमचन्द्रनो पुरोगामी छे ए विधान माटे **सर्वे विद्वान संमत छे.** ). एटले जो **चण्ड**ने छट्ठा, सातमा सैकानो गणीए तो

जोइन्दुने तेनी पूर्वे मूकवो जोईए आ प्रमाणे श्री. उपाध्ये छेवटे चण्डना समयनी पूर्वे जोइन्दुने थएलो माने छे. परन्तु आ दलीलनी सामे तेटली ज सबळ विरोधी दलीलो छे.

(१) प्रा. ल.मां आ एकलो ज दुहो उदाहरण तरीके आपवामां आव्यो छे; बीजां अपभ्रंशनां सूत्रो छे तेना पर प्रा. ल. मां उदाहरण नथी. प्रा. ल. नी एक ज हाथप्रतमां एक बीजो अपभ्रंश दुहो छे. परन्तु डो. हर्नले तेने पाछळना उमेरा तरीके गण्यो छे. प्रथम दुहो के जेना आधारे चण्डथी जोइन्दुने प्राचीनतर ठरावववा प्रयत्न करवामां आवे छे, ते हेमचन्द्रनी उदाहरणनी पद्धतिने अनुसरीने पाछळथी उमेरायो होय तो कांइ नवाइ नथी.

(२) उपरनी दलीलने वधारे टेको तो जोइन्दुनी भाषानो छे. भाषा तो आम सरल छे. परन्तु झीणवटथी जोईए तो वेटलाक प्रयोगो दा. त. अणु=अने (सदर उद्धरण. दु. ४६, ५१.) जवला=पासे पासे (उद्धरण. दु. ६५.) अर्वाचीनता तरफ वधारे वळे छे. अणु=अने; प्रा. गु. का. जंबु-सामिचरिय (पा. ४१-४६) कडी ३९. (वि. सं. १२६६) पंचमहव्वयभार मेरुसमणाउ अंगमइ ए। अनु तेतउ परिवार सोहमसामिहिं दिक्खिउ ओ॥ ते ज प्रमाणे सप्तक्षेत्रिरासु (पा. ४७-४८,) कडी ३८. बउलि सिरोवालउ वेअलु अनु करणो पाडल। (वि. सं. १३२७) इ. आ प्रयोग हेमचन्द्रे विहित कर्यो नथी; तेम बीजां जूनां अपभ्रंश लखाणोमां दृष्टिगोचर थतो नथी. जवला = भेगा, साथे साथे' ए अर्थमां जूना गूजरातीमां मालम पडे छे. श्री. नरसिंहराव G. L. L. II. P. 117 " The periods covered by this word जमलो range from Narasimha Mehta down to Akho; the word is however in frequent use upto about V. S. 1900. " अर्वाचीन मराठी जवळ=पासेना अर्थमां छे. आ उपरांत केटलां य तत्त्वो छे जे जोइन्दुना अपभ्रंशने प्रांतीय भाषाओनी समीपतर लावे छे.

(३) सि. हे. ना उदाहरण साथेनुं साम्य अमने कबुल छे. अने हेमचन्द्रनी पूर्वे जोइन्दु मूकाय; पण एक तो चण्डना समयनुं ज ठेकाणु नथी. अने तेने सामान्यतः छठ्ठा, सातमा शतकनो धारी तेनी पूर्वे जोइन्दुने मूकवो ते यथार्थ नथी.

| जोइन्दु-परमात्मप्रकाश ॥ | हेमचंद्र-सि. हे. ॥ |
|---|---|
| संता विसय जु परिहरइ | संता भोग जु परिहरइ |
| बलि किज्जउं हउं तासु । | तसु कन्तहो बलि कीसु । |
| सो दृढ्वेण जि मुंडियउ | तसु दृढ्वेण वि मुण्डियउं |
| सीसु खडिल्लउ जासु ॥ २७० ॥ | जसु खल्लिहडउं सीसु ॥८।४।३८९। |
| पंचहं णायकु वसि करहु | जिब्भिन्दिउ नायगु वसि करहु |
| जेण होंति वसि अण्ण । | जसु अधिन्नइं अन्नइं । |
| मूल विणट्ठइं तरुवरहं | मूलि विणट्ठइ तुंविणिहे |
| अवसइं सुक्कहिं पण्ण ॥२७१॥ | अवसें सुक्कइं पण्णइं ॥८।४।४२७। |

उपरनां कारणोथी **जोइन्दु**ने हेमचन्द्रनी पूर्वे मूकी शकाय; परन्तु विक्रमना दशमा अगीआरमा शतकनी पूर्वे तेने लई जवो वरोबर नथी.

**जोइन्दु**ना परमात्मप्रकाश पर एक संस्कृत टीका छे. टीकाकारनुं नाम **ब्रह्मदेव** छे; अने वि. सं. सोळमा सैकाना मध्य भागमां ते थई गयो (जुओ, प्रस्तावना - परमात्मप्रकाश )

२. उद्धरणवस्तुः—

आपणे जोयुं के आ ग्रन्थनो मूळ कर्ता **योगीन्द्रदेव** छे. आ ग्रन्थ एने **भट्टप्रभाकर** नामे श्रोताने उद्देशीने कह्यो होय एवी रीते रच्यो छे. ( जुओ सदर उद्धरण दोहा. ४. ) जैनोना अनेकांतवाद करतां, उपदेश परमात्मवाद के परब्रह्मवाद जे उपनिषदोमां उपदेशायलो छे तेना तरफ वळे छे. केटलाकवार तो उपनिषद्ना मन्त्रो अने भगवद्गीताना श्लोकना अपभ्रंश भाषांतर जेवा केटलाक दुहाओ छे परमात्मप्रकाशना ३७५ दुहामांथी १४ दुहाओ सदर उद्धरणमां लीधा छे. उपनिषद्ना परब्रह्मवादने जैन तत्त्वज्ञाननी परिभाषामां घटाववा पण अत्रे यत्न करवामां आव्यो छे.

३. छंदोरचनाः—

आखा य उद्धरणमां दोहा-छन्द छे; **प्रा पिं.** पान १३८ पर नीचे प्रमाणे दोहानी व्याख्या आपे छेः-**तेरह मत्ता पढम पअ पुणु एआरह देह । पुणु तेरह एआरहिं दोहा लक्खण एह ॥** एटले १३+११ । १३+११॥ एम दोहानी मात्राओ छे.

४. टिप्पणः—

१-४. आ बे दुहा साथे लई वाक्यार्थ करवानो छे. सरखावो **ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन ॥ भ. गी. ४. ३७.**

३. **अच्छहिं=सन्ति** । छापेली आवृत्तिमां **अत्थहिं=टीका तिष्ठन्ति** ।

५. **णियंति=पश्यन्ति** । सि. हे. ८।४। १८१ । छापेली आवृत्तिनी छाया **निर्यान्ति** अने टीकाकारनुं **निर्गच्छन्ति** अस्वीकार्य छे.

६. **तिण्णि** आचार्य, उपाध्याय अने साधु ए त्रण.

७. **पंचगुरु** अर्हंत, सिद्ध, गणधर, उपाध्याय अने साधु, ए पांचने भट्ट प्रभाकर नमस्कार करे छे अने ते योगीन्द्रने अरज करे छे **सिरिजोइन्दुजिणाउ** "श्रीयोगीन्द्रजिनः" एम टीकाकार अने छायाकार भेगुं ले छे, ते तद्दन खोटुं छे. अमारी संस्कृतछाया जुओ.

११. **चउगइ** नरक, तिर्यक्, मनुज, अने देव ए चार गति.

१३-२२ आत्माने त्रण प्रकारनो गणावे छेः मूढ, विचक्षण अने परब्रह्म. वस्तुतः आत्मा अभेद्य छे परन्तु अज्ञानने लीधे ज विभक्तानो अध्यास थाय छे. १९-४४ सुधी परमात्माने ज लक्षित करी विवेचन करेलुं छे.

३७. **कोइ**नी छाया **कंचित्** करी छे ते सुधारी **कश्चित् करो. स्फुरति=संवित्तिमायाति.**

३९-४० **मुक्कहं**=एकवचनमां वपरायुं छे; आ पण जोइन्दुनी अर्वाचीनतानी नीशानी छे. "अनंत गगनमां एक नक्षत्रनी माफक त्रणे भुवन जे मुक्तना केवलज्ञानरूपी पदमां बिंबित थयां छे, ते अनादि परमात्मा छे." अनंत गगनमां विकल्प पेदा करतो सूर्य ए परम सत्त्व जे गगन तेनी यथार्थताने हानि करी शकतो नथी, तेवी ज रीते, त्रणे य भुवननुं अस्तित्व केवल प्रतिबिंबात्मक अने अयथार्थ होई अनंत केवलज्ञानना सत्त्वनु अबाधक नथी. आम जे समजे छे ते परमात्मा ज छे; आ दुहाना स्पष्टार्थ माटे जुओ सदर उद्धरण. दुहा. ३१.

५९-६० आ श्लोक **चण्डना प्रा. ल.** मां छे.

८०. एक म्यानमां बे खांडां क्यांथी रहे ?

१०३-१०४. **या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी । यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः ॥ भ. गी. २.६९.**

१२१-१२२. **अहो दुर्जनसंसर्गान्मानहानिः पदे पदे । पावको लोहसंगेन मुद्गरैरभिहन्यते ॥** सुभाषित.

११५-११८. हेमचन्द्रना दुहाओ साथे सरखामणी. जुओ १. कवि अने तेना जीवनमां करेलुं विवेचन.

## ॥ अष्टममुद्धरणम् ॥

**१. कवि अने तेनुं जीवनः—**

प्रस्तुत उद्धरण माटे 'Joindu and his Apabhramsa Works' J. Bhand. O.R. I. 1931मां **दोहाप्राभृत**मांथी उतारा आवेला ते अमे लखी लीधेला. त्यार पछी इ. स. १९३३मां प्रो. हीरालाले **'पाहुडदोहा'** ग्रन्थ श्री. अम्बादास चवरे दिगम्बर जैन ग्रन्थमालाना मणका. ३. तरीके प्रसिद्ध कर्यो. आ बन्ने मूळना आधारे अमे प्रस्तुत उद्धरण तैयार कर्युं छे. आने माटे अमे श्री. उपाध्ये तेम ज प्रो. हीरालालना ऋणी छीए.

प्रो. हीरालाल आ काव्यना कर्ताने **रामसिंहमुनि** ओळखावे छे. तेमणे वापरेली श्री.जुगलकिशोर मुख्तारे मोकली आपेली दील्हीनी प्रतना अन्तमां लखेलुं छे केः—**इति श्रीमुनिरामसीहविरचिता समाप्तम्** । कोल्हापुरनी श्री. उपाध्ये वाळी प्रतने अन्तेः-**इति श्रीयोगेन्द्रदेवविरचितदोहापाहुडं नाम समाप्तम्** ॥ प्रो. हीरालाल दलील करे छे के सामान्य रीते **जोइन्दु** पोतानुं नाम ग्रंथमां मूके छे ते आ ग्रन्थमां नथी. परन्तु आ दलील एटली बधी सबळ नथी. **जोइन्दु**नुं नाम अमे पसंद कर्युं तेनुं कारण तो कोल्हापुरनी प्रतनो आधार अने प्रस्तुत ग्रन्थनुं **परमात्मप्रकाश** साथे असाधारण साम्य ए ज छे. बाकी आ ग्रन्थना कर्तानो प्रश्न प्रो. हीरालाल कहे छे तेम खरेखर जटिल ज छे.

**पाहुड-दोहा** अने **सि. हे.**नां केटलांक अपभ्रंश उदाहरणो वच्चे साम्य छे. (प्रो. हीरालालनी भूमिका. पा.२२-२५) तेमां हेमचन्द्र ज **पाहुडदोहा**मांथी उदाहरण माटे लेनार जणाय छे. एटले विक्रमना बारमा शतकना मध्यमां थएला हेमचन्द्रनी पहेलां आ ग्रन्थनो कर्ता थयो होवो जोईए.

**२. उद्धरणवस्तुः—**

**परमात्मप्रकाश**नी जेम आमां अध्यात्मवादने अग्रस्थान आपी इन्द्रिय-

सुख, क्रियाकांड अने आ जगतनी प्रवृत्तिओने अज्ञानरूप अने अयथार्थ गणावी छे. आ ग्रन्थमां कुल २२२ दुहा छे. तेमांथी प्रस्तुत उद्धरणमां फक्त १३ दुहा लीधा छे.

३. छंदोरचनाः—

दुहा. १३+११ । १३+११ ॥

३. टिप्पणः—

३–६. सरखावो.

कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन् ।
इन्द्रियार्थान्विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते ॥
यस्त्विन्द्रियाणि मनसा नियम्यारभतेऽर्जुन ।
कर्मेन्द्रियैः कर्मयोगमसक्तः स विशिष्यते ॥
भ. गी. ३. ६–७.

६. **सालसित्थु** आने माटे एक वार्ता छे. काकीन्दी नामे नगरीमां एक राजा हतो. ते श्रावक होवा छतां एक वेदानुयायीनो संगतिथी मांसभोजन करवा तेने इच्छा थई. परन्तु लोकापवादना भयथी प्रकट रीते तो ते मांस खाई शक्यो नहि. तेणे एक मांसनी वानीओ बनावनार रसोईओ राख्यो. पेलो मांसनी रसोई बनावे परन्तु राजा हृदयमां भाव होवा छतां एक या बीजा कारणथी ते खाई न शके. आम करतां रसोईओ सर्पदंशथी मरण पाम्यो अने स्वयंभूरमण समुद्रमां महामत्स्य थयो. राजाए द्रव्यतः व्रतभंग नहोतो कर्यो छतां भावथी तो कर्यो हतो. ते **शालिसिक्थ** नामे कीडो बनी पेला महामत्स्यना कानमां जन्म्यो. महामत्स्यना मुखमां अनेक जलचरो प्रवेश करी बहार नीकळतां जोई शालिसिक्थना मनमां विचार थयो के, "खरेखर आ मत्स्य मूर्ख छे; हुं जो मत्स्य होउं तो एक पण प्राणीने जीवतुं न मूकुं." आ प्रमाणे हृदयमां मलिन भाव धरतो ते शालिसिक्थ मरण पाम्यो अने सातमा नरकने पाम्यो.

९–१०. पं. ९ मां **कम्मह हेउ करंतु** ए शब्दसमूहने **सो मुणि** (पं. १०) ना विशेषण तरीके लेवो. अर्थ–" जेना मनमां ज्ञान उत्पन्न थतुं नथी ते मुनि कर्मनो हेतु उत्पन्न करतो होई सुख पामतो नथी–एम बधां शास्त्रो कहे छे." ज्ञानना अभावे कदाच देखादेखी कर्म न करे तो पण तेना मनना कर्मना भाव तो जता ज नथी; एटले के एना कर्मनो हेतु तो नाश पामतो नथी, अने तेथी ज मिथ्याचार बनी ते सुख पामतो नथी. **मुणंतु**= वर्तमानकृदंत क्रियापद तरीके.

१२. अत्थइ-अच्छइ ए खरु अपभ्रंश छे. प्रो. हीरालाल अच्छइ वांचे छे.

१४-१५. **तमेव धीरो विज्ञाय प्रज्ञां कुर्वीत ब्राह्मणः । नानुध्यायान्बहूञ् शब्दान् वाचो विग्लापनं हि तत् ॥** बृहदारण्यकोपनिषद् ४, ४, ५. अहिं एक अक्षरनो उल्लेख छे ते ॐ छे. सरखावो **ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन् मामनुस्मरन् । यः प्रयाति त्यजन् देहं स याति परमां गतिम्॥** भ. गी. ८.१३.

२५-२६. जेओ वादविवाद करे छे, जेमनी भ्रान्ति तूटी नथी अने जे पोताना आत्माने भ्रान्त करे छे, ते जुगुप्सित ( =भ्रान्त ) थाय छे. प्रो. हीरालाल **रत्ता** वांचे छे, परंतु ते पाठ **अत्ता** होवा वकी छे.

## ॥ नवममुद्धरणम् ॥

### १. कवि अने तेमुं जावनः—

आ उद्धरणना त्रण आधार छे. (१) भांडारकर इन्स्टीट्युटनी हाथप्रत (२) प्रो. उपाध्येनो **जोइंदु** परनो लेख अने (३) प्रो. हीरालाल जैने संपादित करेली '**सावयधम्मदोहा**' नी आवृत्ति ( अम्बादास चवरे दिगंबर ग्रन्थमाला-२.). भाण्डारकर इन्स्टीट्युट पूना. नं. १३०८।१८९१-९५ नी प्रतमां छेवटेः **मूलं योगीन्द्रदेवस्य लक्ष्मीचन्द्रस्य पंजिका । वृत्तिः प्रभाचन्द्रमुनेर्महती तत्त्वदीपिका ॥** श्लोक छे. आ उपरथी **जोइन्दु** ना नाम हेठळ आ उद्धरण मूकयुं छे. परंतु आ काव्यना कर्ता विषे छेल्लो निर्णय नथी. प्रो. हीरालाल जैन एक प्रतिना अंतिम दोहाने आधारे अने परंपरागत कहाणीने आधारे **देवसेनने** आ कृतिना कर्ता तरीके गणावे छे. देवसेनने आ कृतिना कर्ता तरीके ठरावता तेओए आपेली दलीलो सबळ तो नथी ज. गमे तेम हो, परंतु कृति दशमा अगीआरमा विक्रमशतकनी होवा संभव छे.

### २. उद्धरणवस्तु:-

सातमा अने आठमा उद्धरणमां सामान्यतः अभेदवाद अने तत्त्वज्ञानने लगता दुहाओ छे; ज्यारे आ उद्धरणमां श्रावकोना आचारने लगता दुहाओ छे. आ त्रणे य उद्धरणना दुहामां एक वस्तु खास ध्यान खेंचे छे. लौकिक उक्तिओ अने दृष्टान्तोथी आ दुहाओ भरपूर छे. आ सत्य तो सामान्य वांचनारने पण प्रतीत थशे. मूळ ग्रंथमां २२८ दुहाओ छे; तेमांथी आ उद्धरणमां २४ दुहाओ लेवामां आवया छे.

३. **छंदोरचनाः-**

दुहा १३+११ । १३+११ ॥

४. **टिप्पणः—**

५-६. तपाववुं, कापवुं, कसोटीपर चढावबुं, टीपवुं—आ चारे य परीक्षामां सोनुं पार उतरे छे. ते ज प्रमाणे जे मुनि संयम, शील, शौच अने तप ए चारे य मां बरोबर पार उतरेलो होय ते ज गुरु थवा योग्य छे.

८. **पिंडि = पिण्डे** भ० हाथप्रत टिप्पण= **पथि** 'मार्गमां' एम नोंधे छे. **पिण्ड=समूह**

९-१०. सात व्यसन+पांच उदुंबरनो त्याग=आठ त्याज्य वस्तुओ. सात व्यसनो ते द्यूत, मांस, सुरा, वेश्यागमन, आखेट, चौर्य अने परस्त्रीगमन साते य व्यसनो दुहामां गणाव्यां नथी, जो के पं. १०मां **अट्ठ** शब्दनो प्रयोग कर्यो छे. पांच उदुंबर एटले वड, पीपळो पीपळी, **उंबरडो** अने कोठिंबडी ए पांच जातनां फळोनो समूह. **त्रस** बे-इन्द्रिय आदि जीव.

११. **मद्दु** प्रथम व्यसन 'मद्य' तेनी चर्चा करे छे. **तिडिक्क**=तणखो प्रो. हीरालालः **तिडिक्किकडउ.**

१३-१४. 'सूका भेगुं लीलुं बळे' ए गूजराती कहेवत सरखावो. प्रो. हीरालालः '**वसणासत्त**=व्यसनासक्त जनो' एम अर्थ करे छे. पं. १४मां (ही.) नो पाठ **डज्झंत** छे.

१५-१६. 'दूध पाईने साप उछेरवो नहि' ए कहेवत सरखावो.

१७-१८. **कायउ=कामपि** रूप जूनुं देखातुं नथी. **जहिं साहसु तहिं सिद्धि** । आ चरण लई जूना गूजरातीमां घणा दुहा बनावेला मालम पडे छे. दा. त. **सींह ण जोयइ चंदबल नवि जोयइ घणरिद्धि । एक्कलडो बहु आभिडइ जां साहस तिहां सिद्धि ॥**

१९-२०. दानने माटे त्रण योग्य जन- १ मुनीन्द्र, २ श्रावक ३. अविरत सम्यग्दृष्टि पुरुष. आ प्रमाणे दान करनारने पांच कल्याणनो लाभ थाय छे.

२१-२२. कुपात्रने आपेला दाननुं विपरीत परिणाम समजावे छे.

२९-३०. धर्मने लीधे माणस वाहनमां जाय छे; पापने लीधे माणसने वाहन खेंचवुं पडे छे. घर बांधनारा घर पर चढे छे; ज्यारे कुवो खोदनारा नीचे जाय छे.

३१-३२. सेंकडो शास्त्रो जाणवा छतां, विचारीने ते धर्म आचरतो नथी;

सो सूरज उगे तो पण घूवड तो आंधळुं ज रहेवानुं. (ही.) **वियाणियहं++ चढइ मणे वि** । आपणा पाठ **चरइने** कोइ हाथप्रतनो टेको नथी. (ही.) नी द. हाथप्रत **चडइ** वांचे छे.

४१-४२. जिनपूजाने लगतो आ दुहो छे. गंधोदकप्रक्षालनना विधिनी अत्रे श्लाघा छेः-जिनवरने गंधोदकथी स्नान कराव्याथी बहु पुण्य थाय छे; विमल जलमां पडेला तेलना बिंदुने पसरतां कोण अटकावी शके ?

८५ **असिआउसा** आ पांच वर्ण अनुक्रमे अर्हत्, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय अने साधु **एम** पांचना द्योतक छे...आ पांच जेना हृदयमां छे, **तेने** पाप पहोंची शकतुं नथी; उंडा पाणीमां ऊभेलाने दावानल शुं करी शके ?

## ॥ दशममुद्धरणम् ॥

### १. कवि अने तेनुं जीवनः—

**उद्द्योतन**नी **कुवलयमाला** हजु अप्रसिद्ध छे. श्रीजिनविजयजी शांतिनिकेतनथी बहार पडती संघी ग्रन्थमालामां आ ग्रन्थनुं संपादन करी रह्या छे. आ ग्रंथनी बे प्रतो मळे छे. एक भांडारकर इन्स्टीटयूटनी कागळनी हाथप्रत अने बीजी जेसलमीरना भण्डारनी ताडपत्रनी हाथप्रत. बन्ने हाथप्रतोनी वाचना फरकवाळी छे अने एकबीजानी केटलीक वार पूरक छे. श्रीजिनविजयजीए कृपा करी तेमना सम्पादनना आदिनो मुद्रित भाग अमने आप्यो हतो. तेना परथी प्रस्तुत उद्धरण लेवामां आव्युं छे.

**उद्द्योतन**नी जीवनमाहिती माटे अत्यारे त्रण लेख उपलब्ध छेः (१) वसन्तरजतमहोत्सवस्मारकग्रंथमां श्री. जिनविजयजीनो **उद्द्योतननी कुवलयमाला** नामे लेख; (२) रत्नप्रभसूरिनो **कुवलयमाला**नो संस्कृतसंक्षेप श्री. चतुरविजयजी महाराजे भावनगर जैनसाहित्यप्रसारक सभा तरफथी संपादित कर्यो छे; तेनी संस्कृतप्रस्तावना; (३) अपभ्रंशकाव्यत्रयी ( G.O.S.No.37 ) नी पं. लालचंद्रनी संस्कृतप्रस्तावना, पा. ८९-९४. **उद्द्योतने** पोताना जीवननी सर्व माहिती **कुवलयमाला**ना आरंभमां ज आपी छे. तेना उपर ज आधार राखी उपरना लेखकोए तेना विषे वृत्तांत लख्यां छे. जेसलमीरनी हाथप्रतनी फोटो-कोपी बरोडा ओरीअन्टल इन्स्टीटयूट पासे छे.

**उद्द्योतन** उर्फे दाक्षिण्यचिह्ने **कुवलयमाला**कथा वि. सं. ८३५ मां लखी. तेना पितानुं नाम **वडेसर**=वटेश्वर हतुं. तत्त्वाचार्य-जेना गुरु वटेश्वर हता-ते ज उद्द्योतनना गुरु हता आचार्य वीरभद्र अने समरादित्यकथाना

रचयिता प्रख्यात आचार्य हरिभद्रसूरि उद्द्योतनना विद्यागुरु हता. उद्द्योतनना गुरु अने तेमनी परंपरानुं मुख्य निवासस्थान भिन्नमाल नामे नगर हतुं. उद्द्योतन लखे छे के ते समये गूर्जरदेशने जैनमुनिओए देवमंदिरो बंधावी रम्य बनाव्यो हतो. जाबालिपुर ( जालोर ए जोधपुर राज्यना दक्षिण भागना एक जिल्लानुं मुख्य स्थान छे ) त्यां उद्द्योतनना गुरु वीरभद्र-आचार्ये ऋषभ-जिननुं एक मंदिर बंधाव्युं हतुं. त्यां रही तेणे "चैत्र कृष्णपक्षनी चतुर्दशीना दिवसे भव्यजनोने बोध करनारी आ कथा पूर्ण करी." "शककालनां सातसो वर्ष व्यतीत थवामां मात्र एक दिवस न्यून हतो ते दिवसे अपराह्णवेळाए आ कथा समाप्त थई छे."

उद्द्योतनसूरिनी कुवलयमालाकथा भाषानी दृष्टिए अति उपयोगी ग्रंथ छे. उद्द्योतनसूरिना काळमां संस्कृत, प्राकृत अने अपभ्रंश ए त्रणे साहित्यभाषा तरीके एक पंक्तिए गणाती भाषा हती:-

आयण्णिऊण य चिंतियं णेण-'अरे कयलीए उण भासाए एणं उल्लवियइ केणावि किंपि । हूं अरे, सक्कअं ताव ण होइ, जेण तं अणेयपयसमासणिवाउवसग्गविभत्तिलिंगपरिअप्पणाकुवियप्पसंगदुग्गमं दुज्जणहिययं पिव विसमं ।

इमं पुण एरिसं । ता किं पाययं होज्ज । हूं । तं पि णो जेण तं सकलकलाकलावमालाजलकल्लोलसंकुलं लोयवुत्तंतमहोअहिमहापुरिसमहणुग्गयामयणीसंदबिंदुसंदोहं संघडिएक्केक्कमवण्णपयणाणारूवविरयणासहं सज्जणवयणं पिव सुहसंगयं ।

एयं पुण ण सुट्ठु । ता किं अवहंसं होहिइ । हूं। तं पि णो जेण सक्कयपाययउभयसुद्धासुद्धपयसमतरंगरंगंतवग्गिरं णवपाउसजलयपवाहपूरपव्वालियगिरिणइसरिसं समविसमं पणयकुवियपियपणइणिसमुल्लावसरिसं मणोहरं ।

एयं पुण ण सुट्ठु । किं पुण होहिइ त्ति चिंतंतयेण पुणा समायण्णिअं । अरे अत्थि चउत्थी भासा पेसाया ता पुण इमा होहि त्ति । ( ताडपत्रप्रती-पत्र ५७-५८. )

उपरना अवतरणमां अपभ्रंशनुं संस्कृत अने प्राकृतनी साथे स्थान तो हतुं एटलुं ज नहि पण उद्द्योतनना हृदयमां तेनुं स्थान संस्कृत, प्राकृत अने पैशाची करतां य उंचे आसने हतुं, ते तेनां अत्यन्त श्लाघापूर्ण वचनो कही बतावे छे.

आ उपरांत आ ग्रन्थनी आदिप्रशस्तिमां पण अपभ्रंशनो उल्लेख छे,

पाययभासारइया मरहट्ठयदेसिवण्णयणिबद्धा
सुद्धा सयलकह च्चिय तावस-जिण-सत्थवाहिल्ला ॥
कोऊहलेण कत्थइ परवयणवसेण सक्कयणिबद्धा
किंचि अवब्भंसकया का विय पेसायभासिल्ला ॥

आ प्रमाणे **अपभ्रंश** एक विकसित अने संस्कृत अने प्राकृतनी पंक्तिमां बेसवा योग्य भाषा तरीके **उद्द्योतनसूरिए** गणी छे. आ उपरांत अपभ्रंश दोहा पण आ कथामां स्थळे स्थळे देखा दे छे. प्रस्तुत अपभ्रंशपाठावलीना चौदमा उद्धरणमां अमे बे दुहाओनी नोंध लीधी छे. आ उद्धरणमां पण बे दुहाओ छे जे वाचक जोई शकशे. एटले के वि. सं. ८३५मां तो क्यारनी य अपभ्रंश साहित्यभाषा थई चुकी हती.

भाषासम्बन्धी बीजी बाबत जे आपणने **कुवलयमाला**मांथी प्राप्त थाय छे ते **देश्यभाषा**ओ सम्बन्धी माहिती. संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंशना त्रण महानदोनी आगळ पाछळनी भूमिमां **देश्यभाषा**ओना स्रोत वहेता हता. आना पूरावा आपणने **कुवलयमाला**मांथी प्राप्त थाय छे. सामान्यतः श्वेतांबर आगमग्रन्थोमां अढार देशी भाषाओना उल्लेख आवे छे. (जुओ, G.P. Ein.30.). आ अढार देश्यभाषाओने उद्द्योतने बोली-प्रकारनां टूंकां उदाहरण आपी समजावी छे. ( ताडपत्र पत्री. १३१-१३२ ) आ विषयने लगती गाथाओ बीजा लेखकोए नोंधी छे एटले अत्रे तेने टांकी विस्तार करवो अनावश्यक छे. ( जुओ. अ. का. त्र. संस्कृत प्रस्तावना पान. ९१-९४; पं. बेचरदास प्राकृतव्याकरण प्रवेशक. पान १८-२४ ). पण आ उपरांत केटलीक देश्योक्तिना आखा फकरा ने फकरा आ ग्रन्थमां मालम पडे छे. तेवुं एक दृष्टांत ताडपत्र पोथी, पत्र ५१. भांडारकर प्राच्यमन्दिरनी प्रत अने अ. का. त्र. प्रस्तावना पान. १०९-११०ने सरखावी नीचे टांक्युं छे ते जोवुंः—

तउ भणियं एक्केण गाम-महत्तरेण,

" एउ एहउं होउ मणुस्साहं सव्वु एउ आयरिउं। तुज्झा -णउ वंकु वलियउ। प्रारद्धउं एउ प्रइ सुगइ। भ्रातु चर भ्राति संप्रइ। "

तओ अण्णेण भणियं,

" जं जि विरइउ धणलवासाए सुह-लंपडेण एउ मइं दुत्थ-ट्ठमणमोहलुद्धइं तुं संप्रति बोल्लियउ । एउ एउ पारद्धु भल्लउं । "

तउ अण्णेण भणिअं चिरजराजुण्णदेहेण,

" एत्थ सुज्झइ किर सुवण्णं पि वइसाणरमुहगयउं । रे एउ पाउ मित्तस्स वंचण । कामालियव्रतधरेणं एउ एउ सुज्झेज्झ णाहिं "।

तउ सयलद्रंगसामिणा भणिअं,

" धवलवाहण-धवल-देवस्स सिरि भ्रमति जा विमलजल धवलुज्जल स भडारि यदि प्रावेसि तुंहुं मित्रद्रोज्झु तो णाम सुज्झइ ॥ "×

उपरना अवतरण उपरथी मालम पडशे के देश्यभाषा अपभ्रंशनी समीप-वर्तिनी हती; परन्तु ते तेनाथी कांईक अंशे जुदी पडती हती ए वात पण साथे साथे खरी छे. आ विषयनी वधु चर्चा अन्यत्र करवी पडशे एटले अहिं तो आटलेथी बस.

---

×ततो भणितमेकेन ग्राममहत्तरेण,

" एतद् एतादृशं भवतु मनुष्यस्य सर्वमेतदाचरितम् । तव वक्रं वलितम् । प्रारब्धमेतत् प्रति सुगतिम् । भ्रातः चर भ्रातः संप्रति । "

ततोऽन्येन भणितम्,

" यदेव विरचितं धनलवाशया सुखलंपटेन एतन्मया दुष्टा-र्थमनोमोहलुब्धेन त्वां संप्रति कथितम् । एतदेतत्प्रारब्धं भद्रम् । "

ततोऽन्येन भणितं चिरजराजीर्णदेहेन,

" अत्र शुध्यति किल सुवर्णमपि वैश्वानरमुखगतम् । रे एतत्पापं मित्रस्य वञ्चना । कार्पटिकव्रतधरेणेन एतदेतच्छुध्येन्न । "

ततः सकलद्रंगस्वामिना भणितं,

" धवलवाहनधवलदेहस्य शिरसि भ्रमति या विमलजला धवलोज्ज्वलां तां भट्टारिकां यदि प्रविशसि त्वं, मित्रद्रोहस्ततो नाम शुध्यति । "

आ छाया अर्थवाही छे. देश्यभाषाना पाठ बे प्रतोनी सरखामणी करी मूकवामां आव्यां छे. अर्थसूचन जेमांथी अधिकतर थाय तेवा पाठो लीधा छे.

प्रस्तुत उद्धरणनी भाषा महाराष्ट्री अने अपभ्रंश ए बन्नेना मिश्रणयुक्त छे. आखुं य उद्धरण गद्यमां छे सिवाय के वच्चे वच्चे ६ गाथा + २ दुहा = ८ पद्य छे. हाथप्रतोनी लखाणपद्धतिने कारणे उ अने ओमा लखवामां झाझो फेर न होवाथी, एकला प्रथमान्त ओने कारणे आ उद्धरणनी भाषाने महाराष्ट्री कहेवी युक्त नथी.

२. उद्धरणवस्तुः—

आखी य कथावस्तु नाट्यदृष्टिथी मूकवामां आवी छे. लेखक पहेला वाक्यमां कथा कहेवानी शरु करे छे; पण तरत ज तेने कांइक याद आवे छे. 'खल-जनने तो पिंड आपवानो रही गयो!' पछीथी अलंकारयुक्त गद्यमां लेखक प्रथम दुर्जननी व्याजस्तुति करे छे; (५–४१.) त्यारपछी सज्जनप्रशंसा एवा ज अलंकारयुक्त गद्यमां लेखक करे छे. (४१–७१.)

आ प्रमाणे सज्जनदुर्जनविवेक अपभ्रंशमां कविओ खास करीने करता. दा. त. जुओ भविसयत्तकहा. संधि. १. कडवक. ३. ४.

३. टिप्पणः—

८. कइसउ [कीदृशः] अपभ्रंशपरक सि. हे. ८।४।४०३। महाराष्ट्री प्राकृत केरिसो।

हुं-हुं दानपृच्छानिवारणे। सि. हे. ८। २। १९७।

सुणउ=शुनकः वांचो; श्रुणोतु छाया खोटी छे.

९. पट्ठिमांसासउ [पृष्ठिमांसाशकः] श्वानने लागु पाडतां 'पीठ खानार' दुर्जनने लागु पाडतां 'चाडीओ खावार.' सरखावो, दशवैकालिक. ८.९०. अपुच्छिओ न भासिज्जा, भासमाणस्स अंतरा। पिट्ठिमंसं न खाइज्जा मायामोसं विवज्जये॥ ते ज प्रमाणे प्राक् पादयोः पतति खादति पृष्ठमांसं कर्णे कलं किमपि रौति शनैर्विचित्रम्। छिद्रं निरूप्य सहसा प्रविशत्यशंकं, सर्वं खलस्य चरितं मशकः करोति॥ सुभाषित॥ पट्ठि=पृष्ठि। सि. हे. ८।४।३२९। टीका.

भसणसील (१) भसनार (२) बक बक करनार.

तहे सप्तमी बहुवचनतुं रूप अपभ्रंशमां नथुं ज छे. सि. हे. अथवा तो सामान्य अपभ्रंशमां ते दृष्टिगोचर थतुं नथी.

मंडल कतरो छे ना. ६. १२४. मंडलो खाणे।

१०. **मयहिं** षष्ठी बहुवचननो प्रत्यय **हं** छे. तृतीया अने सप्तमी बहुवचनो प्रत्यय **हिं** छे. (**सि. हे. ८।४।३४७।**). **मयहिं=मृतानाम्** ए नवुं ज षष्ठीनुं बहुवचननुं रूप छे.

११. **घइं** अपभ्रंशमां वपरातो अनर्थक निपात. **सि.हे.८।४।४२४।**

**मायहे** षष्ठी एकवचन नारीजाति; सरखावो **तहे=तस्याः। सि.हे. ८।४।३८२।** नुं दृष्टान्त.

षष्ठीमांथी द्वितीयामां संक्रान्ति, जेम नरजातिना षष्ठीना प्रत्यय होनी थई तेम. सरखावो **मार्कण्डेय प्रा. स. १७. ११.**

१२. दुर्जनना पक्षे 'हंमेश ककळाट करावनारो' अने 'पोला देखकर पेस जाना' ए नीतिने अनुसरनारो. सरखावो पंक्ति ९ उपर टांकेलुं सुभाषित **'छिद्रं निरूप्य सहसा प्रविशत्यशंकम्।'**

१३–१६. कागडाना कर्कश ध्वाननी उत्तमता ए छे जे प्रोषितपतिकाने कागडो तेनाथी शुभ आगमनना शुकन आपे छे; अने छिद्रोमांथी तो कागडो पोताना आहारपूरतुं ज ले छे; ज्यारे दुर्जन प्रोषितपतिका व्याकुल स्त्रीओने पोताना कर्कशध्वनिथी शारी नाखी दुःख पेदा करे छे, अने ते बीचारीओनां कांइ पण छिद्र के दूषण न होय छतां य तेमना जीवितने हणे छे.

१६–२१. दुर्जननी अने गर्दभनी सरखामणी करे छे. **अइमुत्तय=** सामान्य रीते अतिमुक्तलता एटले मोगरो; परन्तु कोइ कोइ स्थळे 'द्राक्षनो वेलो' पण अर्थ थाय छे. गर्दभ तेने खाई शकतो नथी तेथी मनमां ज बळ्या करे छे. **जायल्लिय=जाता** रूप जोवा जेवुं छे.

२१–२४. कालसर्पनी साथे दुर्जनने कवि सरखावे छे. दुर्जन अने साप बन्ने य पारकानां छिद्र (दुर्जनपक्षे, अन्यनां दूषणो, सर्पपक्षे, बीजां प्राणीए खोदेलां दर) शोधे छे अने बन्नेयनो कुटिलगतियुक्त (दुर्जनपक्षे-कपटनीतिथी भरपूर जीवनचर्या वाळो; सर्पपक्षे-वांकीचूंकी रीते सरकी पूरो करातो) मार्ग छे. छतां य दुर्जन करतां एक रीते सर्प उत्तम छे; कारण के सर्प तो पारकानां खोदेलां दर शोधे छे, पोते दर खोदतो नथी; अने कुटिल गतिथी चाले छे पण पोतानी गतिथी शरमातो होय एम पेटथी चाले छे—ज्यारे दुर्जन तो पोते ज बीजामां छिद्रो उत्पन्न करे छे अने जाणे अभिमानी (**थड्ढो=स्तब्धः** भूत कृदन्त< √**स्तम्भ्** अभिमान करवुं) होय तेम चाले छे.

२५–२७. दुर्जनने विषनी साथे सरखावे छे.

२६. **महुरउ=झेर विषं तु मधुरं प्रोक्तं ।।** (वळी जुओ आप्टे–संस्कृत–अंग्रेजी कोष.) विष तो मुखे (=स्वादमां) मधुरं होय अने मन्त्रोवडे तो तेनुं उत्तम रसायण बनावाय. खल तो पहेला अनुभवथी ज कडवो होय छे, अने घडेली मन्त्रणाओने पण तोडी नाखे छे.

२८–२१ दुर्जनने (=खलने) खोळनी साथे सरखाव्यो छे. बन्ने य त्यक्त-स्नेह ( खोळने पक्षे–तैल विनानो; दुर्जनपक्षे–प्रेमविनानो ) अने पशुभक्त (खोळने पक्षे–पशुना भोजनरूप; दुर्जनपक्षे–पशुनुं भोजन करे छे ते, एटले मांसाहारी); वळी खोळ तो ज्यारे पीलाय त्यारे ज स्नेह (=तैल) त्यजी दे छे अने बिचारो अजाण स्थितिमां पशुथी खवाय छे; ज्यारे दुर्जन तो पहेलेथी ज स्नेह विनानो होय छे अने जाणे छे छतां य पशुओने (=पशुओना मांसने) खाय छे.

सामान्यतः जैनग्रन्थोमां 'मांसाहारी' कोइने कहेवो ए अपशब्द छे. दा. त. सरखावो. भ. क. १. क. ३. पं. ९.–१०. **दुव्वयणवियड्ढु एक्कु वि दुम्मइ सुयणसय । जो भक्खइ मंसु तासु कहिं मि किं होइ दय ॥**

२१–२८ दुर्जनने विष्टा साथे सरखावे छे. दुर्जन अने विष्टा बन्नेयने विशिष्ट ( =दुर्जनपक्षे–उमदा, विष्टापक्षे–पवित्र) माणस त्यजे छे; अने बन्नेयनी आगळ पाछळ अस्फुट शब्दथी क्षुद्र( दुर्जनपक्षे–छूपी रीते अस्पष्ट उक्तिथी मंत्रणा करता हलका माणसो, विष्टापक्षे–अस्पष्ट बमणाट करती माखीओ )नी मंडली गगणे छे. तो य विष्टा दुर्जन करतां सारी; कारण के ए तो कोइ अन्य वस्तुनो फेरफार करे छे ज्यारे दुर्जन तो पोते ज भातभातना विकारोथी भरपूर छे. एटले के विष्टा बीजी वस्तुना विकारथी उत्पन्न थएली छे; ज्यारे दुर्जन तो पोते ज विकारनुं स्थान छे.

३६. **महुनं भणंतस्स** वर्तमानकृदन्त विशेषण छे. बन्ने य शब्दो षष्ठी विभक्तिमां छे. परन्तु छायामां संस्कृतनी दृष्टिए ते बन्नेने सप्तमीमां मूक्या छे.

३८–३९. दुहो छे. प्रथम पंक्तिमां **ज्जाअहो** अने **ज्जि** छन्दखातर बेवडाव्या छे. बीजी पंक्तिमां '**जेण**=जेथी करीने' आ दुहाने पाछली गाथा साथे जोडे छे. तेथी करीने तेनुं समान्तर दर्शक सर्वनाम आ दुहामां नथी. **मग्गउ**=पाछळ; जुओ **दे. ना. ६. १११. मग्गो पच्छा** । मराठी–मागे. आखा दुहानो अर्थः

–जेथी जारपुत्र, दुर्जन अने दुष्ट घोडो एनी आगळ के पाछळ जवानुं शक्य थतुं नथी.

४८–५२. दुर्जननिंदा पूरी करी, सज्जनप्रशंसा कवि आरंभे छे, अ पंक्तिओमां सज्जनमी सरखामणी राजहंस साथे करी छे; राजहंस अने सज्जन बन्ने य विशुद्धोभयपक्ष ( राजहंसपक्षे–जेनी बने य पांख सफेद होय–छे; सज्जनपक्षे–जेनुं पिता अने माता बन्नेयनुं कुल विशुद्ध होय–छे. ) अने ( सज्जन पक्षे–शब्दने छूटा करी समजवानी शक्तियुक्त, अने राजहंसपक्षे–क्षीरनीरविवेकनी शक्तियुक्त, अर्थ छे); तो य एकाएक भयंकर मेघाडम्बर चडी आवे तो मानस सरोवर पहोंचवानुं दुःख हंसने थाय छे [ अत्रे मानसिक दुःख थाय छे एवा पण अर्थनो ध्वनि छे ]. ज्यारे सज्जन तो मेघ जेवा श्याम अने आडम्बरी खलोनो स्वभाव जाणे छे एटले तो ते ज्यारे तेमनां आक्रमण थाय त्यारे तेनो मायनो समजी हसतो ज बेसे छे.

५०–५१ दुहो छे अने पं.४७–४८ अने पं. ५२नी साथे ते एक ज वाक्य बनावे छे. तेना संबंधे मूळनी नीचे आपेली टीप जुओ.

५२–५५. आ पंक्तिमां सज्जनने पूर्णिमाचन्द्र साथे सरखाववामां आव्यो छे. ते बन्ने य सकल कलाथी ( सज्जनपक्षे–कलाओ Arts. चंद्रपक्षे–तेनी सोळ कलाओ Digits ) पूर्ण अने माणसोना मनने आनंद आपनार होय छे. तो य चन्द्र तो कलंकथी दूषित होय छे अने अभिसारिकाओना मनने पीडा आपनार होय छे ( कारण के चन्द्र कामोत्पादक तो होय छे अने अभिसारिका चन्द्रना प्रकाशमां देखाई जवाना भये पोताना प्रियतमने मळवा जई शकती नथी. ); ज्यारे सज्जन तो निष्कलङ्क अने सर्व जनने सुख आपनार होय छे. दिट्ठि=धृति सुख, सरखावो उद्धरण ३. पं. १६.

५५–५८. सज्जनने मृणाळ ( =कमळनो वेलो ) साथे सरखाव्यो छे. बन्नेय ने पीळे तो य तेमना स्नेह–तंतु (मृणालपक्षे–तेनी चीकट रेषाओ; सज्जनपक्षे–प्रेमनो बंध )नो चळे थतो नथी अने बन्ने य खूब शीतळ होय छे; छतां य मृणाळ तो कडवी लगाडे तेवा स्वभावने, अने जड (='जळ' पद श्लेष सरखावो. उद्धरण ५. पंक्ति १००)ना संसर्गमां उछर्यो छे; ज्यारे सज्जन तो मधुर स्वभावने अने जेणे रस विदग्धजने वर्धित कर्यो छे तेवो छे.

५९–६२. सज्जनने दिशागज साथे सरखाव्यो छे. बन्ने य स्वभावे उन्नत (गजपक्षे–उंचो, सज्जनपक्षे–उमदा) छे, अने बन्नेयमांथी अटकया विना

दान ( गजपक्षे–मद; सज्जनपक्षे–दान )नो प्रसर थतो ज करे छे; तेमां य दिशागजनुं तो मदविकारथी ( श्लेषे करीने–मदनुं आगमन थाय ते समये ) वदन श्याम थाय छे; पण सज्जनने तो मद थतो नथी, अने दान देतां तो तेनुं वदनकमल विकसे छे.

६२–६५. सज्जनने मुक्ताहार साथे सरखाव्यो छे. बन्नेय स्वभावे विमल ( मोतीपक्षे–श्वेत; सज्जनपक्षे–शुद्ध ) होय छे; अने बन्ने बहु उत्तम गुण (मोतीनी माळाना पक्षे–दोरा) युक्त छे. पण मुक्ताहार तो सेंकडो छिद्रोथी भरचक अने वनमां (=पाणी; श्लेषे 'वनमां उछरेलो ' एम अर्थ आ वाक्यना छेल्ला भागमां लेवानो छे ) उछरेलो छे; ज्यारे सज्जन तो कोइ पण छिद्र (=दूषण) विनाना गुणथी भरपूर छे अने नगरमां उछरेलो नागरिक छे.

६५–६९. सज्जनने समुद्र साथे सरखाव्यो छे. बन्ने य गंभीर (समुद्र पक्षे–उंडा) स्वभावना अने मोटा अर्थ ( समुद्रपक्षे–रत्नोथी भरेलो, महाद्रव्यवान; सज्जनपक्षे–महान हेतुवाळो ) वाळा छे. पण समुद्र तो उत्कलिका-(वीचिओ, चिंताओ )शतथी भरपूर छे अने नित्य कलकल–अवाजथी ( ककळाटथी ) बाहुए उभेला जनोने दुःख आपे छे;–एम जाणे दुःखी स्थितिए पामेला कुटुंबनुं अनुकरण करे छे. सज्जन तो धीर स्वभावनो होय छे अने मध जेवां मधुरां वचनोथी लोकोने आनंद आपे छे.

७०–७१. सज्जनगुणप्रशंसाना उपसंहारनी गाथा छे.

## ॥ एकादशमुद्धरणम् ॥

प्रस्तुत उद्धरण माटे नीचेनां प्रमाणो लीधां छे. तेना संकेतशब्द पण कौंसमां आप्या छे:—

(1) S. P. Pundit's Edition of विक्रमोर्वशीय (पं.)

(2) R. Pischel: Materialien zur Kenntnis des Apabhramsa. P. 57–64, (पी.)

(3) Nirnayasagar Edition with Ranganath's Commentary (रं.)

(४) दि. ब. के. ह. ध्रुव : पराक्रमश्री प्रबंधादी (ध्रुव.)

## १. प्रस्तुत गीतोनी समीक्षाः-

आ उद्धरणमां **कालिदासना** प्रख्यात नाटक **विक्रमोर्वशीयना** चोथा अंकमांथी अपभ्रंश गीतो लेवामां आव्यां छे. आ अपभ्रंश गीतो **कालिदासनां** छे एम तो कोइ कही शके ज नहि. एने माटे अनेक कारणो छे. (१) आ गीतो उत्तरनी हाथप्रतोमां मालम पडे छे; अने दक्षिणनी हाथप्रतोमां बीलकुल मालम पडतां नथी. (२) आ गीतो अने मूळनी संस्कृत उक्तिओ वच्चे मेळ नथी. (३) केटलांक बीजां कारणसर-दा. त. बंगाळाना अखात तरफना पूर्वदिशाना पवननो उल्लेख (प्रस्तुत उद्धरण पं. ३९ जुओ ) **तव्वे=तावत्** (प्रस्तुत उद्धरण पं. ६ S. K. Chatterji. O. D. B. L Intro § 61. ) जेवां बंगाळीरूप. आ प्रयोगो बतावे छे के बंगाळ बाजुए आनो उमेरो थएलो होवो जोईए. एटले दक्षिणनी हाथप्रतोमां आनो उल्लेख नथी. (४) बे टीकाकारोमांथी काशीमां रही टीका करनार रंगनाथ आ अपभ्रंश गीतो पर टीका करे छे; ज्यारे काटयवेमने तो तेनो ख्याल सरखो य नथी.

दि. बा. केशवलाल हर्षदराय ध्रुवे आ क्षेपक अपभ्रंश भाग विषे विस्तारथी विवेचन, प्रस्तावना पा. ४०-४२ मां कर्युं छे. ते विवेचन आ विषय परत्वे विशेष द्योतक होवाथी, तेनो निष्कर्ष अमे आपवा यत्न करीए छीए कालिदासनां कोइ पण नाटकोमां नहि अने तेना विक्रमोर्वशीयना चोथा अंकमां ज अपभ्रंशगीत प्रक्षिप्त थवानुं कारण ए छे जे ते अंकनो मोटो भाग संस्कृत बोलनार पात्रनो अने लोकोत्तर कल्पनामय वृत्तान्तवाळो होई अपभ्रंश समजनारा लोकोने केवळ दुर्गम नीवडे एवो हतो. आथी भारत नाट्यशास्त्रना बत्रीसमा अध्यायनी ध्रुवानी युक्ति वापरी अन्योक्तिद्वारा राजाना संचारथी प्रेक्षकने वाकेफ राखवानुं कोइने सूझ्युं. ध्रुवाओ उमेराई अने तेनी पाछळ अपभ्रंश पद्यात्मक कृतिओ पण रचाई. आम रसिक प्रेक्षकनी जिज्ञासा तृप्त करवा क्षेपक अपभ्रंशभाग अस्तित्वमां आव्यो. अपभ्रंश कविता कालिदासनी कृतिने पडछे झांखी लागे छे. एनुं सौन्दर्य रसमां नहि पण संगीतमां समायुं छे.

आ क्षेपक अपभ्रंशभाग हेमचन्द्रना अरसामां के जरा पहेलां अने प्राकृत पिङ्गलनी पूर्वे उमेरायो हशे, एम भाषा परथी लागे छे. आम आने लगभग ११ के १२मा सैकानुं अपभ्रंश कहेवाय.

आ अपभ्रंश भाग छन्द अने भाषानी दृष्टिए घणो भ्रष्ट छे. प्रस्तुत उद्धरणमां विक्रमोर्वशीयनां बधां अपभ्रंश गीत लेवामां नथी आव्यां. आ उद्ध-

रणमां कुल १६ गीत छे. आ सोळ गीतमां ३, ८, ९, ११, १३ उक्तिओ नथी, ज्यारे बाकीनां १२ गीत पुरुरवा राजानां उन्मादवचनो छे. आखी परिस्थितिनुं वातावरण अने उक्तिनी परमताने लईने ज 'पुरुरवानां उन्मादवचनो' ए अभिधान उद्धरणने आपवामां आव्युं छे.

२. टिप्पणः—

१–२ उपदोहक ॥ १२+११ ॥ छं. शा. पा. ४२ (अ); बीजी पंक्तिमां रं. अने तेने अनुसरी पं. 'णु.' टीकामां रं. **नु निश्चयार्थे** । लखी आ प्रमाणे अर्थ करे छे "ज्यारे खरेखर नूतन विद्युत्थी विराजित श्यामल मेघ वरसे छे, त्यारे मृगलोचनी उर्वशीने कोइ राक्षस हरी जाय छे एम में जाण्युं." प्रो. पीशल **नु** वधले **न** वांचे छे. एक तो आ गीत विभावना पछीनी स्थितिने वर्णवतुं छे अने वळी **जाव=यावत्** ने घटाववानुं छे. एने मेघनी विभावना अने उर्वशीने हरी जता राक्षसनी भ्रान्तिनो निरास 'फोरां शरीरे अडतां' थाय छे. एटले ज "ज्यां सुधी नव विद्युत्थी विराजित श्यामल मेघ वरस्यो नहि त्यां सुधी तो में जाण्युं के कोइक निशाचर मृगलोचनाने हरी जाय छे!"

३–६. **अनन्तरे चर्चरी** एम नाटकमां निर्देश करी, आ अपभ्रंश गीत लखवामां आव्युं छे. **चर्चरी**नी व्याख्या रं. प्रमाणेः–**द्रुतमध्यलयं समाश्रिता पठति प्रेभभरान्नटी यदि। प्रतिमण्ठकरासकेन या द्रुतमध्या प्रथमा हि चर्चरी** ॥ आम ते एक प्रकारनो नृत्तविशेष छे. **प्रा.पिं.**पा.५२३मां **चर्चरी** छन्द आप्यो छे, तेनी साथे आने कांइ लेवादेवा नथी. छन्द २० मात्राना चार चरणनो छे. पं. १मां बे मात्रा वधारे छे. **जइ** ने दूर करी मेळ लावी शकाय.

३. **एमइं** (रं.) **ए इति संबोधने एवमर्थे वा** । (पी.) **एँ मइं** वांची **अनेन मया** । खरी रीते **एमइं=इदानिम्** । अपभ्रंशमां प्रचलितरूप लेवा योग्य छे.

४. (रं) **तच्छे** वांचे छे. टीका '**मइं तच्छे जंजु इत्यादयः=अहं, तदा; यद् यद् इत्यर्थे देश्यशब्दाः** । बंगालनी हाथप्रतो **तब्बे** वांचे छे. ए ज रूप **प्रा. पिं**नां उदाहरणमां अने **दोहाकोश**मां पण आवे छे, **तच्छेना** जेवो प्रयोग कोइ अर्वाचीन देश्यभाषामां नथी एटले ते अस्वीकार्य छे.

७–१० आ उक्ति नथी पण वर्णनात्मक ध्रुवा छे. **प्रा.पिं.** (पान.२२०) मां वर्णवेलो **अडिल्ला** छन्द लागे छे. १६ मात्रानुं चरण अने छेल्ली बे मात्रा लघु ए तेनुं लक्षण छे. पं. ७, ८. नियम प्रमाणे मळे छे. कदाच एम पण

होय के बीजी बे पंक्ति २१ मात्रानो बीजा छन्दनो बनावी होय. आ छेवटनो बे पंक्ति अ का. ग्रं.ना प्रथम काव्य चर्चरीमां छे. त्यां टीकाकार ते छन्दने **एकविंशतिमात्राकलितं कुन्दनामकं छन्दः** एम कहे छे. छं. शा. ५ पा. ३७ (अ) ६ + ४ + ६ + ५ = २० मात्रानो **रासावलय** आ छन्दने कही शकाय.

वर्षानो प्रत्यावेश करतो राजा आ गीतमां वसन्तनुं वर्णन करे छे.

११–१४ आ छन्दमां कणी ज श्रेष्टता छे. छन्दनी प्रथम बे पंक्ति १५ +१० मात्रानी छे. **अन्त्यतोमियां** ए द्विमात्रिक छे. बीजी पंक्तिमां छेला भागमांथी **सा** छन्दनी दृष्टिए त्याज्य छे. बीजी बे पंक्तिओमां १३+९ मात्रानो छन्द छे. **चिण्हेमां** एहेनी एक मात्रा गणवी. प्रथम बे पंक्तिनो छन्द छं. शा. ४२. (अ) प्रमाणे **विद्याधरहास** छे. छेली बे पंक्तिओमां छं. शा. ४१ (ब) प्रमाणे **अभिनववसन्तश्री** नामे चतुष्पदी छे.

१५–१८. आमां १५ मात्रानो **पारणक** छन्द छे जेना लक्षणनुं विवेचन पूर्वे करवामां आव्युं छे. पं. १७मां **दिट्ठी** छे तेने बदले **दिट्ठि** वांचो.

१९ २२. आमां १६ मात्रानो **अडिल्ला** छे जेनुं लक्षण आ ज उद्धरण पं. ७–१०. मां निरूपित कर्युं छे.

२३–२४ आ गीतमां **शशांकवदना** नामनी चतुष्पदी छे. छं. शा. ४२ (अ)मां **चौ दः शशांकवदना** । ए लक्षण बरोबर बेसे छे. ४+४+२= १०×४=४० आखी कडीमां कुल मात्राओ. (पी.) **भणहिने** स्थाने **भणाहि** वांचे छे. ते छन्दोदृष्टिए यथार्थ छे. आपणे पण **भणाहि** वांचवुं पडशे, जो के तेथी व्याकरणदृष्टिए अर्थान्तर तो नहि ज थाय.

२५–२६. आमां पण उपरनो ज छन्द छे. (पी.) **एक्केक्कम=अन्योन्यं** । दे. ना. १.१४५. वांची, **वर्धित=वधेलो** एम अर्थ करवा मागे छे. (रं)नी समजावट दूराकृष्ट छे. **एक्कक्कम=एकक्रम युगपद्** ए अर्थ करे छे प्रो. पीशलने अनुसरी " जेमां प्रेमरस अन्योअन्यने ( पोते अने पोतानी प्रियतमानी अन्योअन्यता ) लीधे वध्यो छे, ते कामरसथी हंसयुवा सरोवरमां खेले छे. " (रं.) वियोगदशा सूचववा **वर्धित=कपाई** गएलो, एम अर्थ करे छे.

२७–२८ (रं.) **गलो भ्रमतीति शेषः** । १४ मात्रानी द्विपदी; प्रास मळतो नथी; एटले भ्रष्ट होवानो सम्भव छे. आ उक्ति नथी परन्तु मात्र वर्णनात्मक छन्दो छे.

२९–३२. प्रथम बे पंक्तिमां **अडिल्ला** ज्यारे त्रीजी अने चोथी पंक्तिमां **पज्झडिआ** छे. आ बे छन्दोमां घणी वार बहु ओछो फेर होवाने लीधे मेळ-सेळ थई जाय छे. जुओ **भ. क.** Intro. P. 29. बीजी पंक्तिमां **णामि-यतरुवरु** (ध्रुव) एम वांचीए, तो **ललियपहारें** साथे मेळ सचवाय.

३३–३४ छन्द भ्रष्ट छे. वराह=भुंडनुं वर्णन छे. आ उक्ति नथी पण ध्रुवा छे. **पेच्छहु** 'जुओ' प्रेक्षकोने उद्देशी पडदा पाछळथी आवी ध्रुवाओ बोलाती हती ते बतावे छे.

३५–३८ छन्द **अडिल्ला** । प्रथम पंक्तिमां **फलिह** अने पंक्ति. २.मां **कुसुमे** ने बदले **कुसुमहिं.**

३९–४४ आ गीत छ पदनुं छे. आदि बे पद २५+२५=५० मात्रानां छे; अने अंतनां ४ पद २१ मात्राना एक पद लेखे छे. छए पदमां वर्षाकालनुं वर्णन छे. परन्तु समुद्रनी ते समये स्थिति शी हशे तेना तरफ वर्णननुं लक्ष्य छे. पं. ३मां **रहंग** (रं.) वांचे छे; परन्तु **विहंगम** (पं.) नो पाठ छन्दनी दृष्टिए स्वीकार्यो छे. **कुंकुमसंख**=कुंकुमवर्णना शंख. पं. ४. हाथी अने मगरथी भरपूर, श्याम, अने कमळथी ढंकाएलो.

४५–४८ छन्द बहु ज भ्रष्ट छे. २६, १८, २६, १८ आ प्रमाणे मात्रायुक्त ४ पंक्तिनो छन्द थाय; पण तेमां य सुधारा तो करवा ज पडे. **दा.त.पं २. सरीरी** वांचवुं पडे; पं. ४. **विरहसमुद्दहं** वांचवुं पडे. पं. १मां मुद्रादोष सुधारी **सुंदरि** वांचो. पं. ४मां **तहने** बदले **तुह** ए प्रचलित रूप छे आ गीत मृगने उद्देशी बोलायलुं छे.

४९–५२ पूर्वसन्दर्भ आ प्रमाणे छेः **अये किं नु खलु कुसुमरहि-तामपि लतामिमां पश्यता मया रतिरुपलभ्यते । + + + + याव-दस्यां प्रियामुपकारिण्यां लतायां परिष्वंगप्रणयी भवामि ।** (रं.) प्रमाणे "हे लता, जो, हुं हृदय विना भमुं छुं. जो विद्याना जोगे फरीथी प्रिया मने मळे, तो खरेखर हुं आ अरण्यमां तेने प्रवेश करावीश नहि [ **ता रण्णें विण -करमि ( विनाकरोमि=निष्कासयामि ) णिभन्ती ( भ्रान्ति विना यथा स्यात् तथा । ]** (रं.) अने फरीथी विरहवेदना करावती तेने छूटी मूकीश नहि." आपणी वाचना प्रमाणे "लता तरफ जोईने मने हृदयमां भावना थाय छे, "जो विधिजोगे ते मने प्राप्त थाय तो हुं आ वनमां भ्रमण नहि करुं अने विरहदाह पेदा करती तेने विखूटी नहि करुं." मूळमां पाठांतरनुं टिप्पण जुओ.

५१–५६ **अडिल्ला** छन्द प्रथम बे पंक्तिमां; छेल्ली बेमां **पज्झडिआ.**

# ॥ द्वादशमुद्धरणम् ॥

## १. कवि अने तेनो समयः—

**काण्हना दोहाकोशमांथी** केटलांक गीतो उध्धृत करी प्रस्तुत उद्धरणमां लेवामां आव्यां छे **काण्हना दोहाकोशनी** वाचनानो आधार अमे बे आवृत्तिनो उपर राख्यो छे १) महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री सम्पादित "**बौद्धगान ओ दोहा**" जेमां **काण्ह** अने **सरहना दोहाकोश** आपवामां आवेला छे; अने (२) M. Shahidulla: Le Chants Mystiques de Kanha et de Saraha जेमां पण **काण्ह** अने **सरहना दोहाकोश** आपवामां आवेला छे. आ उद्धरणनी विशिष्टता ए छे जे प्रस्तुत गीत पूर्व हिन्दुस्तान –बङ्गाळ अने आसाम–बाजुथी मळे छे.

**काण्हना** समयनी चर्चाने माटे आपणी पासे त्रण साधन छेः–( १ ) **बौद्ध गान ओ दोहा**नी अंग्रेजी तेम ज बंगाळी प्रस्तावना.(२) डो. सुनीतिकुमार चेटरजीः The Origin and Development of Bengali Language: Introduction P. 120–123. (३) डो. शहिदुल्लानी Les Chants Mystiquesनी Introduction ( Chapitre II Les Auteurs des Dohakosa ). आ त्रण लखाणोने नीचेनी चर्चामां प्रमाण तरीके लेवामां आव्यां छे.

गोपीचन्दराजाना वैराग्यनां अने मत्स्येन्द्रनाथ गोरखनाथ अने भर्तृहरिनां गीत गाता, रखडता भरथरीओने आपणे घणीवार सांभळीए छीए. ए गवाती आख्यायिकाओ नाथसम्प्रदायनी छे. ते सम्प्रदायमां मुख्य ८४ सिद्ध छे. एक वार नाथधर्म्प्रदाय, पञ्जाब, टीबेट, बङ्गाळ अने लगभग आखा उत्तर हिन्दुस्तानमां प्रसरेलो हतो. **काण्ह** के **काण्हपा** ( =कृष्णपाद ) ए गोरखनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ अने गोपीचन्द्र राजानो समकालीन हतो तथा टीबेटन अने हिन्दी परम्परा प्रमाणे, ८४ सिद्धमांनो ते एक हतो. काण्ह जालंधरिनो शिष्य हतो. गोपीचन्दनी माता मेनावती पण जालंधरिनी शिष्या हती. गोपीचन्दने जालंधरि खरो योगी छे तेनी प्रतीति थाय छे अने ते राजवैभव छोडी योगी बने छे, ए आख्यायिका सर्वविदित छे. डो. शहिदुल्लाना अभिप्राये मत्स्येन्द्रनाथ इ. स ६५७ मां नरेन्द्रदेवना राज्यमां थई गयो. गोपीचन्द्र के गोविचन्द्र

टीबेटन इतिहासकार तारानाथना कहेवा प्रमाणे राजा विमलचन्द्रनो पुत्र अने माळवाना राजा भरथरी के भर्तृहरिनो मन्त्रीजो हतो. विमलचन्द्र, तारानाथना कहेवा प्रमाणे, धर्मकीर्तिनो समकालीन हतो. चाईनीस मुसाफर इत्सींग इ. स. ६७३मां "अर्वाचीन समयना" बौद्ध धर्मना महान् आचार्योमांना एक तरीके धर्मकीर्तिने गणावे छे. गोपीचन्द भर्तृहरिनो मन्त्रीजो हतो, ए दन्तकथा तो बङ्गाळनी बहार पण जाणीती छे. इत्सींगना कहेवा प्रमाणे, भर्तृहरि इ. स. ६५१ मां मरण पाम्यो. भर्तृहरिए जालंधरि पासे ज वैराग्यदीक्षा लीधी हती. जालंधरिनो गुरु, तारानाथ प्रमाणे, इन्द्रभूति धर्मकीर्तिनो समकालीन हतो. आ बधी हकीकतने ध्यानमां लेतां डो. शहिदुल्लाना मते, काण्ह=कृष्णाचार्यनो समय इ.स. ७००नी आसपास होवो जोईए. ( Intro. P. 27–28 ).

डो. सुनीतिकुमार चेटरजीना मते काण्हनो समय इ. स. १२०० नी आसपास छे तारानाथ बे काण्हनो उल्लेख करे छे, एक वृद्ध अने एक नव्य. 'चर्याचर्याविनिश्चय'नी चर्या ३६ नी एक कडीमां ते चर्यानो कवि काण्ह पोताने जालंधरिपादना शिष्य जेवो जणावे छे. वळी ए ज चर्यामां उल्लखेलो लूइ-पाद, दीपङ्कर श्रीज्ञान के अतिशनी साथे अभिसमयविभङ्ग नामे तान्त्रिक कृतिनो सहकर्ता हतो. × अतिश इ स. १०३८मां ५८ वर्षनी वये टीबेट गयो. एटले काण्ह लगभग इ. स. ११८९नी आसपास थयो हशे एम तेमनुं मानवुं छे. मराठी संत ज्ञानेश्वरनी गुरुपरम्परा पण पोताना मतनी साखमां डा. चेटरजी लावे छे

भले आ बे अभिप्रायमांथी गमे ते खरा होय; परन्तु एक वात तो देखाई ज आवे छे के भाषा, लखाणनी धाटी अने विचारवलण ज्यरथी इ स ९५०–१२०० सुधीमां ज आ ग्रन्थोने आपणे लई शकीए. वधारामां आ लखाणनी हायप्रत १४ मा सैका पछीनी छे अने लहीआनी अने आ गीतोनी परम्परा साचवनार सामान्य जनतानी भाषानी छाप आ लखाण उपर विपुल प्रमाणमां देखाई आवे छे.

---

× Shahidulla: Intro P 19. 'प्रस्तुत तंत्र लूइपाए रच्यु हतुं अने दीपंकर श्रीज्ञाने ते पर टीका करी हती' एम ते तंत्रनी टीबेटन प्रतनी अंतिम प्रशस्तिनुं भाषांतर करी ते जणावे छे आ प्रमाणे डॉ. चेटरजीए O. D. B. L. Intro §63, डॉ. हरप्रसाद शास्त्रीए Intro P. 14. मां ठरावेलो लूइपाना समय ज ते खोटो ठरावे छे. एटले तेमना मूळभूत निष्कर्ष पर ज डॉ. शहिदुल्ला घा करे छे. वांचोः Shahidulla: P. 19.–24.

## २. दोहाकोशनी भाषाः—

आ ग्रन्थनुं अपभ्रंश, जे सामान्य अपभ्रंश अत्यार सुधीनां उद्धरणोमां जोयुं ते प्रकारनुं छे के कोई बीजा प्रकारनुं ? प्रो. याकोबी ( **सनत्कुमारचरिउ** Intro P. XVIII ) ना अभिप्राये **काण्ह** अने **सरह**ना **दोहाकोश**नुं अपभ्रंश पौर्वात्य अपभ्रंश छे. तेना कारणमां ते जणावे छे के तेना व्याकरणप्रयोगो **क्रमदीश्वर, रामशर्मन्** अने **मार्कण्डेयने** अनुसरे छे. परन्तु अर्वाचीन पौर्वात्य देश्यभाषाओ जेवी के मैथिली, ओरिय, बङ्गाली, आसामी इ. आ अपभ्रंश साथे सम्बन्ध धरावती नथी. दा. त. **व्रासु=व्यास**, स्वार्थे नरजातिमां **ड** अने नारीजातिमां **डी**, **हमु=अहम्**, **मेर=मम**, **तेर=तव** इ. मार्कण्डेयादि पौर्वात्य वैयाकरणोए बतावेला विशेषो अर्वाचीन पौर्वात्य देश्य-भाषाओमां मालम पडता नथी. आम एक बाजुए मार्कण्डेयादिए नोंधेली अपभ्रंश भाषा अर्वाचीन पौर्वात्य देश्यभाषाओनी जनेत्री नथी, ए तो सिद्ध ज छे.[१] छतां बीजी बाजुए मार्कण्डेयादिए नोंधेला अपभ्रंशने पौर्वात्य अपभ्रंश तरीके जुदुं ओळखाववा प्रो. याकोबी, डो. शहिदुल्ला आदि प्रयत्न करे छे. डो. शहिदुल्ला हेमचन्द्रना अपभ्रंश अने रामतर्कवागीश, क्रमदीश्वर अने मार्कण्डेये नोंधेला अपभ्रंशनी विस्तरशः सरखामणी करे छे. (सदर Introduction P.45–53.) परन्तु अपभ्रंशना प्रयोगनी बहुलताने हिसाबे तेमणे बतावेला विशेषो एवा नथी के पौर्वात्य अपभ्रंश तरीके जुदी अपभ्रंश भाषा स्थापी शकाय. टुंकमां मार्कण्डेये बतावेवी नागर अपभ्रंश अने हेमचन्द्रना व्याकरणनी अपभ्रंश जुदी छे, एवा सिद्धान्तनुं विधान वधारे पडतुं छे. त्यारे **काण्ह** अने **सरह**नी भाषाने कया अपभ्रंश तरीके गणवी ? शहिदुल्ला **काण्ह** अने **सरह**ना अपभ्रंशने अर्वाचीन पौर्वात्य देश्यभाषाओ साथे सम्बन्ध न होवाने कारणे, प्रो. याकोबीने अनुसरी तेने पौर्वात्य अपभ्रंश कहेता नथी; परन्तु तेमने मते प्रस्तुत गीतोनुं अपभ्रंश बौद्ध अपभ्रंश छे.[२] अमारे मते तो आ पण भ्रम छे; कारण के सदर गीतो

---

१. Shahidulla; Intro. P. 33. सरखावो सुनीतिकुमार चेटरजीना शब्दो " In the East, the local patois does not seem to have been cultivated after the days of As'oka." – O. D. B. L. Intro. P. 91.

२. Shahidulla: Intro. P. 55 ( see the conclusion of the chapter ).

सामान्य जनतामां प्रचलित होवाने लीधे[३] सामान्य बोलीनी छांट मूळ अपभ्रंश पर आवी छे; दा. त. **कुच्छ नाहि** (सदर उद्धरण पं. १०) **कि** ( पं.२०. पं. ३४ ) **जव्वे-तव्वे** ( उद्ध. १३. पं. २३. २४. ) इत्यादि. प्रो. सुनीतिकुमार चेटरजी आ भाषाने पाश्चिमात्य अपभ्रंश कहे छे, ते युक्त छे. तेमना ज शब्दोमां, " The two Doha-kosas present the same dialect, which is a kind of Western ( शौरसेनी ) Apabhramsa, as its उ termination, its अह genetives, its इज्ज passives and its general agreement in forms with the literary Western Apabhramsa, amply indicate. "[४]

### ३. उद्धरणवस्तु अने परिभाषाविवेचनः—

दोहाकोशनां गीतनो विषय बौद्ध तन्त्र अने योगने लगतो छे. लेखक आ तान्त्रिक विषयने अनुरूप परंपरागत गुह्य परिभाषा वापरे छे. टीकाकार तेने **संध्याभाषा** कहे छे. आ परिभाषा, टीका अने आ विषयने लगता बीजा तान्त्रिक ग्रन्थोनी मददथी ज, समजी शकाय छे. आपणा उद्धरणमां वपरायली परिभाषा अमे नीचे प्रमाणे समजावीए छीएः—

पं. १. **निरञ्जन** टीकाकार **सहजकाय. काण्हना** अभिप्राये आ सहज स्थिति ते माध्यमिक बौद्धनी ' शून्यता ' छे. सरखावो पं. १० **कुच्छ नाहिं.** हठयोगप्रदीपिका. ४. ३-४मां निरञ्जनना पर्यायशब्दोनो समूह आप्यो छेः—

राजयोगसमाधिश्च उन्मनी च मनोन्मनी
अमृतत्वं लयस्तत्त्वं शून्याशून्यं परं पदम् ॥
अमनस्कं तथाऽद्वैतं निरालंबं निरंजनं
जीवन्मुक्तिश्च सहजा तूर्या चेत्येकवाचकाः ॥

पं. ५. **एवंकार-सुभाषितसंग्रह** (पा. ७६.) **देवेन्द्रपरिपृच्छा**-तन्त्रमांथी टांके छेः—

एकारस्तु भवेन्माता वकारस्तु पिता स्मृतः
बिन्दुस्तत्र भवेद्योगः स योगः परमाक्षरः ॥
एकारस्तु भवेत् प्रज्ञा वकारः सुरताधिपः
बिन्दुश्चानाहतं तत्त्वं तज्जातान्यक्षराणि च

---

३. **पाहुडदोहा** ग्रन्थ जे पश्चिम हिंदमां लखायो छे तेमां आ बन्ने दोहाकोशना दोहा, चरणो अने शब्दसमूह (phraseology) मालम पडे छे.

४. Chatterji, O. D. B. L. Intro. P. 112.

टीकाकारः–**एवंकारः शून्यताकरुणाऽभिन्नरूपिणी महामुद्रा**। **करुणा** शब्दनो बौद्धतन्त्रमां **स्वाधिष्ठानचित्तरूपम्** । = **शुद्ध सत्ता. शून्यता** अने **सत्ता**नो योग ते **एवंकार** ( सरखावो उद्धरण. १३. पं. १७–१८ ).

**अरविंद**=**उष्णीषकमल** एटले मेरुदण्डना शिखररूप रहेलुं **कमल** जे **शून्यता**नुं आलय छे, जेमां रहेली शून्यतानी साथे सत्तानो लय थतां परम समाधिसुख प्राप्त थाय छे. आ महासुखनुं बीज एवंकार छे.

पं. ६. **सुरतवीर**=योगी.

**मकरन्द**=टीकाकारः–**अच्युतं महारागं सुखम्** । समाधिसुखनो अनुभव.

पं. ७–८. **गअण–समीरण–सुहवासे–सुखवास**=परमशून्यता जेमां पंच महाभूत आकाश वायु इत्यादि सभर रह्यां छे. ते परमशून्यतामांथी सघळा सुर अने असुरनी उत्पत्ति छे.

पं. १४. **पवण–घरिणि** प्राणावरोध ए योगप्रक्रियानुं एक अंग छे. प्राणावरोधरूपी गृहिणी. सरखावो **हठयोगप्रदीपिका** ४. १४.

**यावान्नैव प्रविशति चरन् मारुतो मध्यमार्गे**
**यावद्बिन्दुर्न भवति दृढः प्राणवातप्रबन्धात्** ॥ ३०

पं. १५. **महागिरिकन्दर**—**गिरि** = करोडनो दण्ड; अने करोडना पोलाणमां **सुषुम्णा** नाडी आवेली छे. तेमां श्वास स्थिर थतां सकल संसार निर्मूल थाय छे.

पं. १९. **मनोरत्न**=सत्ता ( Existence ); **सहज**=शून्यता.

पं. २३. **समरस** एटले **सत्ता**नुं **सहज**मां एकरस थई जवुं ते; जेम मीठुं पाणीमां समरस थई जाय छे तेम (सरखावो प्रस्तुत उद्धरण पं. ३७–३८.).

पं. १६. **निर्वाण**=शून्यता.

पं. २७–२८. **वरगिरिशिखरउत्तुंगस्थल**=कमळ जे मस्तकमां आवेलुं छे ते; **गिरि** = करोडदंड तेनुं **शिखर**=मगज जे शून्यतानुं स्थान छे **पंचाणण**=शिव अथवा सिंह. **करिवर**=टीकाकार **चित्तगजेन्द्र** । **शबर**=शून्यता.

पं. ३१. ३२. **घरिणि**=टीकाकारः–**ज्ञानमुद्रा**=सत्ता.

पं. ३०. ३५. **सहजक्षण** = समाधिनी पळ.

आ परिभाषा समज्या पछी, **काण्हनां** आ गीतोनो निष्कर्ष समजवो मुश्केल नहि थाय. माध्यमिक बौद्धोनी शून्यताने ते परमतत्त्व माने छे.

(सदर उद्धरण. पं. ७-१०). ते शून्यताने पामवा मन्त्र, तन्त्र, वेद, पुराण इत्यादिनो अभ्यास निरर्थक छे. ( सदर. पं. २-३; पं. ३१-३४. ) खरुं तो चित्त के मन, जेने लोधे सत्ता छे, ते शून्यतामां लीन थवुं जोईए तो ज निर्वाण पमाय. श्वासने सुषुम्णामां स्थिर करो, सत्ताने शून्यतामां जेम मीठुं एकरस थाय छे तम समरस करी-एटले के एवंकार बीज रोपी-सुरतवीर योगी खीलेला कमलमां-शून्यतालयमां रहेल सहजक्षणरूपी मकरन्दनो वास ले छे.

४ छंदोरचनाः—

कडी. १-६, ८, १०-१२, १४, १५, १८-१९ । दोहा । ११+११। ११+११॥

कडी. ७, १३, १६, १७ । पादाकुलक । १६ मात्रानो छन्द. (प्रा. पिं. पा. २२३-२२४ ).

कडी. ९. द्विपदी । ( प्रा. पिं. पा. २५७. ) ६, ५×४, २(गुरु)=२८ मात्रा.

५. टिप्पणः—

१ लोअह< सप्तमी बहुवचन लोअहिं; प्रथमा एकवचन (श.) ले छे ते बरोबर नथी.

२ सिरिफल बिल्वफळ. सरखावो संस्कृत कहेवतः पक्वे बिल्वे काकस्य किम् । अथवा बङ्गाली कहेवतः 'बेल पाकले काकेर बाबार कि ?' सिरिफल=नारीएल अर्थ लईए तो पण अर्थने वांधो नहि आवे. बाहेरित भुमर्यान्ति=भुमइ (सि हे. ८।४।२६१) बाहिर (सि. हे. ८।२।१४४। ) पालीमां पण ए ज रूप. अलिअ=देश्य.

५. अरविंदए तृतीया एकवचन. लहअ=सम्बन्धक भूतकृदन्त ( प्रा. गू प्रयोग. )

६. मअरंदए वांचो; द्वितीया एकवचन; ए-प्रत्ययान्त.

७-८. सुहवासे, परिपुण्णए, सुन्नए, ए-प्रत्ययान्त प्रथमा एकवचन. देश्यभाषानी असर वढिए संबोधनविभक्ति एकवचन.

९-१०. ए प्रत्ययान्त प्रथमा. कुच्छ नाहि देश्यभाषानी असर.

११ उहें । सि. हे. ८।३।८९; ८।४।५९. उब्भ, उद्ध; उह < उब्भ, उद्ध. अर्वाचीनता तरफ ढळतो प्रयोग. उअत्ति (पं. ८) उवज्जइ, विफारिआ < विप्फारिआ ( पं. २२.); निविआर < निव्वियार ( पं. २५); आ प्रयोगो अर्वाचीन देश्यभाषा तरफ ढळे छे.

**उड्ढें=उद्धर्हि<ऊर्ध्व+स्मिन्** ; तेवी ज रीते **अहें**

**थाइ**=संस्कृतछायामां **स्थितिः** । जे **तसु=तस्य (पवनस्य)** समजाववा पूरतुं छे. ( Bendall: Le Mus'eon, 1904. P. 26I. ) **तसु** ने स्थाने **एहु** मूके छे. आ सुधारो स्वीकारीए तो (श.) अने टीकाकार साथे आपणे **थाइ=तिष्ठति** लई शकीए. टीबेटननी संस्कृतछाया–**निश्चलं तिष्ठति** थशे.

**वेण्णि-रहिअ**–ऊर्ध्वगमन अने अधोगमन विना सुषुम्णामां श्वास स्थिर थाय त्यारे.

१४. **घर**=सुषुम्णा नाडी.

१५. **गुहिर**=गभीर. खरी रीते **गहिर**; सरखावो **भुमयन्ति** (पं.४.) **मुनइ** (पं. २०) **गुहिर** ( जुओ **पा. ल. मा.** ) शहिदुल्लाः **गुहिर**मां भ्रष्ट उ (Contamination)√**गुह्** अने **कुहरने** लीधे आव्यानुं माने छे. हाथप्रतमां **कुहिर** छे.

१८. **दुरववाह<दुरवभाह<सं. दुरवगाह. अववाह** ( जुओ **वररुचिनो प्राकृतप्रकाश** ८. ३४. G. P. 233. )

२० **मुनइ** । सि. हे. ८।४।७। **कि=किम्** ( देश्यप्रयोग. )

२१–२२. **पह** = मार्ग; योगमार्गे शून्यतामां लीन थवा यत्न करता जे योगीए पोतानी बुद्धि=सत्ताने शून्यतामां बांधी दीधी छे, तेणे आखुं विस्तृत जगत् पोतानामां संकेली लीधुं छे.

२४. **भाय** (श.) क्रियापद तरीके = **बिभेति** । **जरामरणेभ्यः न बिभेति** । आपणी संस्कृतछायामां **भाय**ने नाम तरीके लई **भयम्** लीधुं छे.

२६. **मन=बुद्धि** कांइ पण मानसिक कार्य करती नथी.

३२. **पंचवण्ण** = पांच इन्द्रियोना विविध भोग. **कि=किम्** । (देश्यप्रयोग)

३७. **जिम लोण विलिज्जइ** इ० आ उपमा ठेठ उपनिषद्मां पण मालम पडे छे. ( जुओ **छांदोग्योपनिषद्** ६. १३; **सि. हे.** ८।४।४४८. सरखावो **पाहुडदोहा** । १७६ ।

**जिम लोणु विलिज्जइ पाणियहं तिम जइ चित्तु विलिज्ज ।**
**समरसि हूवइ जीवडा काइं समाहि करिज्ज ॥**

# ॥ त्रयोदशमुद्धरणम् ॥

## १. कवि अने तेनुं जीवनः—

आ उद्धरण **सरहना दोहकोशमांथी** लेवामां आव्युं छे. आ उद्धरणनां आधारभूत प्रमाणो बारमा उद्धरणमां जणावेला ग्रन्थ 'बौद्ध गान ओ दोहा' अने डॉ. शहिदुल्लासंपादित Les Chants Mystique de Kanha et de Saraha छे. **दोहाकोशनो** टीकाकार **अद्वयवज्र सरहने सरोरुहवज्र, सरोरुह के सरोजवज्र** नाम आपे छे. तारानाथना इतिहास प्रमाणे **महा-सिद्ध सरह** आर्यावर्तना पूर्व प्रदेशमां रोली नामना स्थळे जन्म्यो हतो. ते रत्नपाल नामे राजानो समकालीन हतो. आ नामना राजाए आसाममां इ. स. १०१०–१०५० सुधी राज्य कर्युं हतुं; एटले **सरह** इ. स. १००० ना आस-रामां थई गयो. **सरहे** दोहाकोश उपरांत बीजा अपभ्रंश अने संस्कृत ग्रन्थो रच्या छे; जे टीकाकारनां टांचण, सुभाषितसंग्रह इत्यादि परथी मालम पडे छे. (जुओ विस्तृत चर्चा माटे Shahidulla: Intro. P. 29.–32.).

दोहाकोशमां कुल ११४ टीबेटन वाचना प्रमाणे अने अपभ्रंश पाठ प्रमाणे कुल १०९ गीत छे. तेमांथी प्रस्तुत उद्धरणमां २२ गीत लीधां छे.

## २. उद्धरणवस्तुः—

सरह पण काण्हनी माफक शून्यतावादी छे; अने 'सहजसिद्धि' नुं ज प्रतिपादन करे छे. होम, कर्मकांड इत्यादिनां धतिंग करनार ब्राह्मण आचार्यो उपर ते सख्त कटाक्ष करे छे.(१–४) त्यार पछी क्षपणकना बाह्याचारनी कटाक्ष-पूर्वक खबर ले छे. (५–६) करुणा = स्वाधिष्ठानचित्तरूप सत्ता अने शून्यता ए बन्नेनो एकरस थाय ते ज मोक्ष छे. करुणाने छोडी जे शून्यने लागे छे, ते उत्तम मार्ग पामतो नथी; अथवा करुणा एकलीने ज समजवा यत्न करे छे ते संसारमां मोक्ष पामतो नथी. (७) मंत्र, तंत्र, ध्येय, धारण, ध्यान ए बधां य चित्तने खरडे छे. (८) ते दैत्य–समान मानवी अभिमानने लीधे तत्त्व जोई शकतो नथी अने सर्वे खरा ज्ञाननां साधनोने दूषित करे छे. (२) सत्ताने शून्यतामां लय करी समरस एवा सहजने पहोंचाय छे; तेमां शूद्र हो के पछी ब्राह्मण हो, तेनो भेद रहेतो नथी. (१०) एकली सत्ताथी उत्पत्ति थाय छे अने क्षयथी विनाश थाय छे. सत्ता (Existence) ज न होय तो पछी उत्पन्न थवानुं ज क्यांथी होय? भाव अने क्षय बन्ने य शून्यताने पामतां खरो योग प्राप्त थाय छे, एम श्री गुरुनाथ कहे छे.

(११) बधा य इन्द्रियव्यवहार कर; पण मनने तो शून्यतामां ज लीन कर; एम कर्या विना एकलो रही (शून्यताथी विमुख रही) तारो व्यवहार चलावीश नहि. (१२) गुरुनो उपदेश मरुस्थलीमां अमृत जेवो छे. (१३) शास्त्रो भणी माणस पोताने पंडित कहेवडावे छे; परंतु ते मूर्खे पोतानां जन्म-मरणने विनाश्यां नथी. (१४) गुरूपदेशथी जीवन्मुक्ति प्राप्त करनार कोइक ज होय छे. (१५) विषयोने विशुद्ध करी तेने भोगववामां बांधो नथी; कारण के तेम कर्या विना केवल शून्यना आचरणथी जेम वहाणनो कागडो समुद्र उपर ऊडवा जाय पण पाछो वहाण उपर ज आवे, तेम ते विषयने ज पुनः वळगे छे. (१६) माटे ज मीन, पतंगियुं, हाथी, भ्रमर अने हरणनुं जूथ जो. सरह कहे छे, हे मूर्ख विषयासक्तिने बंधनरूप मा कर. (१७) हे पंडितजन, आमां शंका न करशो; जे ज्ञान गुरुए मने आप्युं छे, तेमां शुं हुं एवुं सुगोप्य कहुं छुं? (१८) घोर अंधकारमां जेम चंद्ररूपी मणि प्रकाश आपे छे, तेम सहज सुख एक ज क्षणमां बधां य पाप हरी ले छे. (१९) घरमां पण न रहीश अने वनमां पण न जईश; कारण के ज्यां त्यां सत्तास्वरूप बुद्धि छे ते जाण; ज्यां बधुं य शून्यतामय छे त्यां भव क्यां अने निर्वाण क्यां? (२०) घरमां के वनमां खरूं ज्ञान नथी; ए एक भेदी वस्तु जाण. स्वभावना निर्मलत्वमां तेने शोध; ते एकलुं ज अविकल छे. (२१) आ आत्मा छे अने आ अनात्मा छे; एम जे कोइ भावना करे छे, तेणे बंध विना आत्माने बद्ध कर्यो छे; जो के आत्मा तो पण विमुक्त ज छे.

## ३ छंदोरचनाः—

कडी. १–५, ७, ९, १२. **पादाकुलक**। १६ मात्रानुं एक चरण; अने एवां चार चरण.

कडी. ६. डॉ. शहिदुल्लाना अभिप्राये, आ एक ज कडी त्रण जुदी जुदी कडीओ छे; अने ते त्रणे य कडीओने ते दोहा कहे छे. परंतु सामान्यतः दोहानुं लक्षण १३ + ११ = २४ एम होय छे. ज्यारे प्रस्तुत कडीमां 'छप्पा'नी रीतने अनुसरी, ११ मात्रा पछी यति आवे छे अने त्यार पछी १३ मात्रा आवे छे.वळी २ + ४ + ४ + ४ + ४ + ४ + २ (⏑ ⏑) = २४ मात्रा– आ प्रमाणे प्रा. पिं. पा. १७७ उपर छे. परंतु प्रा. पिं मां छप्पानी उपसंहारात्मक पंक्तिओ २८ मात्राना उल्लालानी मूकवी जोईए जे अहिं नथी. अहिं तो २४ मात्रानी बीजी पंक्तिओ प्रमाणे ज उपसंहारात्मक पंक्तिओ मूकी छे. आ उपरथी आ एक प्रकारनो 'छप्पय' होय एम लागे छे.

कडी. ८, ११, १४, **अडिल्ला** । १६ मात्रानो छंद परंतु छेल्ली बे मात्रा लघु.

कडी. १३, १५–२२. **दोहा** । १३ + ११ । १३ + ११ ॥

कडी. १० आ छन्द ११ + १३ अने छेल्ली बे मात्रा लघु-ए प्रकारनो छे; एटले स्पष्ट दोहो तो नथी ज, जो के डॉ. शहिदुल्ला तेने दोहो ज कहे छे.

**४ टिप्पणः—**

३ **विणुआ** । सि. हे. ८।१।५६। अने प्रा.स ३.६. **विण्णु** < **विज्ञ** । **हंसउवेसें** । ( श ) टीबेटन (A.) = **हंसोपदेशेन**; टीबेटन (B.) = **हंसकवेशेन**. टीकाकार = **परमहंसवेशेन** ।.

५. **अइरिय** < सं. आचार्य; प्रा. **आयरिय** के **आइरिय** (सि हे. ८ । १ । ७३ । ; G. P. 131.); **ए** < **एँ** = सं **अनेन** ( उद्धरण ११. पं. १४. ) जुओ. सि. हे, ८।४।३९९।.

६. **बइसी** = सं. **उपविश्य** । **जाली** < **जालइ** = सं. **ज्वालयति**; **चाली** < **चालइ** = सं. **चालयति**. मूळनो मुद्रादोष सुधारोः-' **बइसी घंडा चाली** ' एम वांचो.

७. **खुखखुसाइ** ध्वनिक्रियापद. गू खूसफूस करवी; बंगाळी. फुसफुशाना. **धंधी** = संबधक भूतकृदंत √ **धंध** = छेतरवुं. सरखावो **धंधा** ( दे. ना. ५. ५७. ) गू. ' धंधो ' अने 'धांधळ' < **धंध+ल्ल** स्वार्थे.

८, रांडेलीना, मुंडेलीना के बीजा कोइना वेशथी दक्षिणाना हेतुथी स्त्री-ओने दीक्षा दे छे. **दक्खिण-उवेसें**नी छाया **दक्षिणा-उद्देशेन** एम करवी. मूळनी छाया **दक्षिणापदेशेन** खोटी छे.

१—२. कर्मकांडीना प्रत्ये कटाक्ष; ३–४. परिव्राजको सामे कटाक्ष; ५–८. शैव आचार्यो सामे कटाक्ष.

९—१६, जैन क्षपणको सामे कटाक्ष.

९. **नग्गल** = **नग्ग** + **अल्ल** स्वार्थ प्रत्यय. गू नागडो. **उपाट्टिअ-केसें** केशलुंचन जैनसाधुओ करावे छे तेना संबधे.

१० **जान** = **यान** मोक्षनुं साधन; सरखावो उद्धरण. ९. पं. २९;

**मोक्ख-उएसें** = **मोक्षोद्देशेन** छाया करवी; जो के मूळनी छाया **मोक्षापदेशेन** करेली छे.

१४. **जाण** = **ज्ञान.**

१५. **भावइ** = सं. **भावयति**(Pischel, Materialen 420. 4) (श.) = सं. **भाति** । **सि. हे.** ८।४।२४०। ने अनुसरी. सरखावो '**मे भाति** = मने लागे छे' ए संस्कृत प्रयोग. ए ज प्रकारनो अहिं प्रयोग छे. '**महु भावइ.**'

१७–१८ **करुणा** अने **शून्य** ए बन्नेनुं तादात्म्य जोईए; जुओ उद्धरण १२नी प्रस्तावनामां परिभाषाविवेचन.

१९–२० **पाहुडदोहा** । २०६ । **मंत ण तंतु ण धेउ ण धारणु** इ० ध्येय = ध्याननुं प्रतीक; धारण = ध्यान.

२१–२२. **दत्त** = दैत्य. ते दैत्य बधां मोक्षनां साधनोने पोताना अभिमानथी दूषित करे छे.

२३ **मण अत्थवण जाइ** । आ शब्दसमूह, **पाहुडदोहा** । १८३ । १६८ । मां शब्दशः देखा दे छे. 'बुद्धि शून्यतामां मळी जाय.'

२५–२६. एकली सत्ता, के एकली शून्यता नकामी छे; भावाभाव ए ज खरो योग छे. आमां माध्यमिकोनो नास्तिवाद उत्तम रीते जणाव्यो छे.

२८. **आलमाल** टीकाकारः–**क्रयविक्रयादि.** जैनसंस्कृतग्रंथोमां **आलजाल** = जंजाळ ए अर्थमां आवे छे. **भरटकद्वात्रिंशिका** ( Ed. Hertel P. 21.) **आलमालं लपति** = असंबद्ध बोले छे.

३२ **अमणागमण** । **अमणा** < प्रा. **आअमण** < सं. **आगमनगमन** (श.) छायामां **गमनागमन** । लख्युं छे. सरखावो **पाहुडदोहा** । १३७ । **गमणागमणविवज्जियउ** ।

३६. **वोहित्थ** । **दे. ना.** ६. ९६. सं. **वहित्र**; हिं. **बोहित, बोहिथ,** गु. **बोयुं** (?) = खराबानी चेतवणी आपवा माटे दरियामां तरतो राखेलो लोढानो गोळो.

४६. **से उ** = **तत् तु** ।

# ॥ चतुर्दशमुद्धरणम् ॥

आ उद्धरणमां प्रकीर्ण अवतरणो आपवामां आव्यां छे.

१. वि. सं. ६४५ पहेलांनुं :—

आ गीत **वसुदेवहिंडी** नामे प्राकृतग्रंथमांथी लेवामां आव्युं छे. आ ग्रंथना अस्तित्वनी साख आचार्यश्री जिनभद्रगणि क्षमाश्रमणे तेमना **विशेषणवती** नामे अद्यावधि अप्रकाशित एक प्रकरणग्रन्थमां नीचेनी गाथाओमां आपी छे:—

**सामाइयजुत्तीए उसभस्स धणादओ भवा सत्त**
**होंति य पिंडिज्जंता बारस वसुदेवचरियम्मि ॥ ३१ ॥**
**संखेवत्था जुत्तीए, सत्त इयरे सहाणुभूय त्ति**
**सिज्जंसेणऽक्खाया, होंसु वि संपिंडिया सव्वे ॥ ३२ ॥**

**वसुदेवहिंडीने वसुदेवचरिय** पण कहेवामां आवतुं ( जुओ **व. हिं.** पा. १. पं. १६. ). श्रीजिनभद्रगणि क्षमाश्रमणना समय संबंधे श्रीजिनविजयजी लखे छे. " खास कांइ विरोधी प्रमाणो नजरे न पडे, त्यां सुधी पट्टावलियोमां जे वीरसंवत् ११११५-विक्रम संवत् ६४५ नी साल एमना माटे लखेली छे, तेनो स्वीकार करीए तो कशी हरकत नथी." (**जीतकल्पनी प्रस्तावना**,पा.१६.)

**गीतनो अर्थ** :—

धम्मिल्ल परण्यो छतां अध्ययनप्रवण चित्त राखी, विषयोपभोगमां आसक्त थतो नहि. एक दिवस धम्मिल्लनी सासु तेने घेर आवी. तेनी पत्नीए पोतानी मा आगळ पोतानुं दुःख रडवा मांडयुं:—

(धम्मिल्ल) पोतानी पासे पाटी ( = काष्ठपट्टिका, चतुरस्रिका ) गोठवी, रेवाना पाणीथी भरेली, शशीनी कान्ति समान उज्जवल खडीने लईने, उद्विग्न अने एकली सूतेली मारी प्रथ्ये पण आखी रात समान-सवर्ण गोखे छे.

**कप्पि, गेण्हेप्पि** अपभ्रंश संबंधक भूतकृदंत.

**रेवापयपुण्णियं** धम्मिल्ल कुशाग्रपुरनो हतो; कुशाग्रपुर कदाच रेवाकांठानुं नगर होय तेथी रेवानो अत्रे उल्लेख होय ए संभवित छे.

**२. वि. सं. आठमा सैकाना पूर्वार्धः—**

आ दुहो जिनदासगणिमहत्तरनी आवश्यकसूत्रचूर्णिमां आवे छे. जिनदासगणिए वि. सं. ७३३ मां पोतानी नन्दिसूत्रनी चूर्णि पूरी करी. ( जुओ **जीतकल्प**. प्रस्तावनानुं परिशिष्ट १. पान. १९. )

**गीतनो अर्थ** :—जे शकटाल करशे ते नंदराजा जाणतो नथी. नन्दराजाने मारी, श्रीयक( = चन्द्रगुप्तने )ने ते राज्य पर मूकशे.

**णंदो = णंदु** मात्रा प्रमाणे; एटले अपभ्रंशरूप.

**मारेविणु** संबंधकभूतकृदंत ( अपभ्रंश ).

आ परंपरागत दुहो वि. सं. १०५५ मां वर्धमानसूरि ( उपदेशपदव्याख्या ), वि. सं. ११७४ मां मुनिचन्द्रसूरि ( उपदेशपदव्याख्याटीका ), तेम ज भद्रेश्वरसूरी जे आ ज अरसामां थई गया ते तेमनी कथावली ( अप्रसिद्ध ) मां नोंधे छे.

हरिभद्रसूरि तेमनी **आवश्यकवृत्ति**. पान. ६९४ पर पण आ दुहो नोंधे छे. आ माटे जुओ **अ का.त्र.** नी प्रस्तावना. पा. १०३—१०४; अने ते पान नीचेनी नोंधो.

३-४ **उद्द्योतनसूरिनी कुवलयमाला**( वि. सं. ८३५ )मांथी नीचेना बे दोहा लेवामां आव्या छे. प्रस्तुत लेखकनी माहिती उद्धरण. १० नी प्रस्तावनामां आपवामां आपी छे.

**गीत ३ नो अर्थ** :—" पछी ग्रामनटीए आ गीत गायुंः—जे जेने वहालुं जन होय तेनी साथे जो बीजुं कोइ क्रीडा करे, अने जो ते जाणे अने ( ते अन्यजन ) जीवतुं होय तो पेलो तेना प्राण ले ज."

रत्नप्रभसूरिना कुवलयमालाना संस्कृतसंक्षेप ( पा. ३८. सं. चतुरविजयजी) मां नीचे प्रमाणे संस्कृत छाया छे :—

**तावदिदं नटया गीतम्। इष्टं यन्मानुषं यस्य तदन्येन रमेत चेत्। स जानन्नेवमिर्ष्यालुरादत्ते तस्य जीवितम् ॥**

भाण्डारकर इन्स्टीटयुटनी प्रत :—पं. २. **वि तो**। जेसलमीरभण्डारनी प्रत **वत्तो**; ( भं. ) **पाण** । ( जे. ) **प्राण**.

**गीत ४ नो अर्थ :**—रात्रिना पाछला यामे कोइक गुर्जरपथिके बळदनी खेंचवानी मुश्केली संबंधी गायुं :—धवल ( बळद ) जेम ज सगो असहाय ( बळदपक्षे–धुरा धारण न करी शके तेवानो ) जननो भार न खेंचे, तो ते कोढ अने आंगणानी शोभा जेवो, नकामो रह्या जेवो, अने दम वगरनो छे.

छेल्ली पंक्तिमां ( जे. ) **सेसउ वज्जं( = वज्जिय ? ) सारु** । (भं.) **सेसउ तद्धियसारु** ।

रत्नप्रभसूरिनो संक्षेप ( पा. ५३ ) :—

**पाश्चात्ययामे केनापि गूर्जरपथिकेन गीतम् ।–**
**धवल इव योऽत्र विधुरे स्वजनो नो भारकर्षणे प्रवणः**
**स च गोष्ठांगणभूतलविभूषणं केवलं भवति ॥**

५. **आनन्दवर्धन** ना **ध्वन्यालोक**मांथी :—( वि. सं. नवमा सैकानो मध्यभाग ). आ दुहो निर्णयसागरनी आवृत्तिमां अतिभ्रष्ट छे.

६, शीलांकाचार्यनी सूत्रकृतांगनी टीकामांथी. ( वि. सं. १० मा सैकाना प्रथमार्धमां ) जुओ. **जीतकल्प** ( सं. जिनविजयजी ) नी प्रस्तावना पा. २९; वळी जेसलमेरभंडारनी सूचि ( G.O.S. ) नं. ४३, ४४.

नीचे प्रमाणे आगमोदयसमितिनी आवृत्तिमां प्रस्तुत गीत माटे पूर्वापर संबंध छे:—

४. **स्त्रीपरिज्ञा** । उद्देश. १ । १०.

**अह सेऽणुतप्पई पच्छा, भोच्चा पायसं व विसमिस्सं ।**
**एवं विवेगमादाय, संवासो नवि कप्पए दविए ॥ १० ॥**

इत्येवं बहुप्रकारं महामोहात्मके कुटुम्बकूटके पतितो अनुतप्यते ॥

किं च—'अह से' इत्यादि । अथासौ साधुः स्त्रीपाशावबद्धो मृगवत् कूटके पतितः सन् कुटुम्बकृते अहर्निशं क्लिश्यमानः पश्चादनुतप्यते, तथाहि–गृहान्तर्गतानामेतदवश्यं संभाव्यते तद्यथा—

**" कोद्धायओ को समचित्तु**
**काहोवणाहिं काहो दिज्जउ वित्त ।**
**को उग्घाडउ परिहियउ परिणीयउ को व कुमारउ**

पडियतो जीव खडप्फडेहि पर बंधइ पावइ भारओ ॥१॥‡

शीलांकनी सूयगडांगनी टीका ( आ. स. आवृत्ति पा. १०७ ) मां नीचे प्रमाणे बीजो दुहो पण छे :—

वरि विस खइयं न विसयसुहु इक्कसि विसिण मरंति ।
विसयामिस पुण घारिया णर णरयहिं विपडंति ॥

---

‡आगमोदय समितिनी आवृत्तिमां नीचे प्रमाणे छाया आपी छे:—

क्रोधिकः कः समचित्तः । कथं उपनय कथं ददातु वित्तं ॥
कः उद्घाटकः परिहृतः परिणीतः को वा कुमारकः ।
पतितो जीव खटस्फेटः प्रबध्नाति पापानां भारम् ॥

# ॥ शब्दकोशः ॥

# ॥ शब्दकोशः ॥

शब्द पछीना बे अङ्क अनुक्रमे उद्धरण अने पंक्ति बतावे छे.

विशेषनाम, केटलाक अपवाद सिवायना तत्सम शब्दो इ० लेवामां आव्या नथी. देशी शब्दोनो तथा अर्वाचीन देश्यभाषा अने खास करीने गूजराती शब्दो साथे सम्बन्ध धरावता शब्दोनी ध्यानपूर्वक नोंध लेवामां आवी छे.

संकेतशब्दोः—सरखावो ( स.= ); गूजराती ( गू. ); हिंदी (हिं ); मराठी (म.); बङ्गाली ( बं. ); देशीनाममाला ( दे. ना. ); सिद्धहेमचन्द्र ( सि. हे. ); पाइयलच्छिनाममाला (पा. मा.); पाइयसद्दमहण्णवो (पा.स॒द्द॒म.); टिप्पणी ( टि. ); प्रा. गू. = प्राचीन गूजराती; प्रा. गू. ग्राम्य गूजराती; द्राविडीभाषाओ(द्रा.); पाली (पाली.); मारवाडी (मा.)

अ [च, अपि] २. १५९. गू. य
अइरिअ [आचार्य] १३. ५.
अइस [ ईदृश ] १२. १३. हिं. ऐसा; म. असा. प्रा. गू. इस्यूं.
अक्खाड [अक्षवाट] ३. १५०. गू. अखाडो; म. हिं. अखाडा
√अक्ख [आ+ख्या] ११. २९.
अक्खाण [आख्यान] ५. १००.
अक्खि [अक्षिन् ] १. ३१. गू. म. हिं. आंख
अग्ग [अग्र] ३. १५. गू. म. हिं. आगे; आगळ
अग्गि [ अग्नि ] १३. १. गू. म. हिं.आग; प्रा गू .अग्गि हिं. आगि
अग्घ [ अर्घ्य ] ५. १२१.
अंघ [ अंघ्रि ] ४. ६६.
अच्चब्भुय [अत्यद्भुत] ५. २२१.
अच्चंत [अत्यन्त] ३. ५.
√अच्छ् [अस् ] २. ९३. गू. छे; प्रा. गू. आछि; ब. आछे.
अज्जुत्त [ अयुक्त] ६. १४. गू. अजुगतु
अज्ज [अद्य] १. ९५. गू. म. हिं. आज.
अज्जोणिय [अद्यतन] ३. ११४. स.=पाली. अज्जण्हो, अज्जुण्हो प्रा. गू. आजुनऊ गू. आजनुं.
अच्छेरय [आश्चर्यक] ६. ११६. गू. हिं. अचरज.
√अंच [अर्च् के अञ्चू ] १. ८८.
अंचल ५. ११. गू. आंचळो
अडवि [अटवी] ५. २०६. द्रा. अडवि
अट्ठम [ अष्टम ] ४. १७९. गू. आठमो; म. आठवा
अट्ठवीस [अष्टाविंशति] ३. १२७. गू. अठावीस. म. अठावीस.
अट्ठारह [अष्टादश] ५. २४९. गू. अढार, अराढ (व्यत्यय). हिं. अठारह
अण्णेक्क [ अन्यद्+एक] २. ५. म आणिक
अण्णेत्त [अन्यत्र] २. १७३.
अत्थक्कु [ अस्ताघ ] २. १३५. गू. अथाग; म. अथाक, अथांग
अत्थमउ [ अर्थवत् ] ३. १२६.
अत्थवण [अस्तमन] ७. १४८. गू. आथमणुं
अंतेउर [ अन्तःपुर ] १. १४.
√अंदोल [ आंदोल् ] १. २०.
अंधल [ अंध+ल] ५. ४८. गू. आंधळुं म. अंदळा
अद्ध [ अर्ध ] १. ४७. गू. अरधुं, अध. हिं. आधा
अप्पा [ आत्मन् ] ७. १४, गू. म. हिं. आप
अप्पाण [आत्मन् ] ६. २४. गू. म. हिं. आपण
अब्भंतर [ अभ्यन्तर ] १. ४५. गू. भितर
अब्भिट्ठ [ दे. ] ५. १५४. (टि.)

√अब्भिड [ दे. ] ५. १७७. संगति करवी सि. हे. ८. ४. १६४.;पा.मा.;दे.ना. १. ७८ ;प्रा. गू. आभडइ गू. भिडवुं; (अर्थान्तरे ) आभडवुं.

अमणागमण [ गमनागमन ] १३. ३२.

अमिय [ अमृत ] १. १६. गू. अमी.

अलत्तअ [ अलक्तक ] २. १०. गू. अळतो बं. आळता

अल्लीण [ आलीन ] १.३३.आसक्त

अवक्खडी [ दे. ] ७. ७२. चिन्ता. गू. आखडी

अवर [ अपर ] ४. २१३. गू. अवर, ओर; हिं. और

अवर [अपर ] २.४१.पश्चिमदिशा

अवरेक्क [अपर+एक] ३. ४५.

अवरुंड [ दे. ] १. ४६. भेटवुं पा. मा.; दे. ना. १. ११.

अवरुप्परु [ परस्पर ] ६. ७४.

अवलुआ [ दे. ] ४. १८६. क्रोध दे. ना. १. ३६.

अवहेरि [दे] ३. ६६. अपमान स.=अवखेरइ (भवि.)

अंसु [ अश्रु ] ६. १०४. . आंसु

असमत्तण [ असपत्नत्व ]५.२०३.

असमलं [ अश्यामल ] १३.२०.

अहरुल्ल [ अधर + उल्ल स्वार्थे ] २. ११.

अह व [ अथ + वा के च ] ९. ४. गू. हवे; स.=सि. हे. ८. ४. ४१९. अहवइ; प्रा. गू. हिव

अहिणव [ अभिनव ] १. १९. गू. अवनवुं

अहिरणि [ अधिकरणी] ७.१११. गू. एरण

अहें [ अधः ] २२. १२.

अहोरण [ दे. ] १. ७३. गू. ओढणुं, होरणुं.

अहोरत्ती [ अहोरात्र ] १. १२ गू. अहोरात

आअ [ आयात ] १. ४६. प्रा. गू. आयो; हिं आया. म. आला

आअ [ अदस् ] २. ३०. गू आ.

आइअ [ आयात ] १. १०६

आउस [ आयुस् ] ६. १५९. गू. आयखूं म. आउख

आएस [ आदेश ] १. ९६. प्रा. . आयस

आंखलिअ [अस्खलित] ४. १००

आचेलिय [ अ+चेलमांथी नामक्रियापद अने तेनुं कर्मणि भू. कृ. ] १. ९. (टि.)

आढत्त [ दे. ] ६. १५६. आरंभी सि.हे.८.२.१३८.

आण [ आज्ञा ] ५. २६७. गू. म. हिं. आण.

√आण [ आ+नी ] २. २३. गू. आणवुं; म. आणणें

√आदण्ण [दे.] ३. ७६. व्याकुल थवुं स.=म आधण.सि.हे. ८.४.४२२.

√आपिक्ख [ आ + प्र +ईक्ष् ] ५. ८८.

आय [ आगत ] २. ५१.हिं.आया

**आयड्ढ** [ दे. ] ३. ७५. आकर्षणं; खेंचवुं स=दे. ना. ६. २१; १. ६४. आयड्ढि

**आयरिअ** [ आचार्य ] ५.६४.

**आयल्लय** [ दे. ] २. १४; ३. १५.व्याकुलता, कामपीडा.(टि.)

**आयामिय** [ आयामित ] २.४९. नियंत्रित कर्या

**√आरक्ख** [ आ+रक्ष् ] १. ४३. गू. राखवुं. म. राखणें हिं रखना

**आलअ** [ आलय ] २. ८७.

**आवइ** [ आपद् ] ५ २८८.

**आलमाल** [दे ] १३. २८. मिथ्याप्रलाप (टि.)

**आलावणि** [आलापनी] ६. १३८. एक वाद्यविशेष

**√आव** [ आ+या ] ३. १३२. गू. आववुं.

**आवेढ** [ दे ] ५. २३, आवेष्टन, वींटाळवुं ते. स.=म. वेढणें सि हे. ८.४.२११.वेढ=वेष्ट्

**√आसंघ** [दे.] ५. १४० अपेक्षा राखवी. सि.हे ८.४ ३५ ;दे. ना.१.१६३. आसंघा=इच्छा.

**√आहल्ल** [दे ] ६ ९. गू.हालवुं;म हालणें

**आहित्थ** [दे.] ३. १५८. चलित दे.ना.१.७६

**आहोय** [आभोग] ६.१२० खाली जगा

**आहंडल** [ आखण्डल ]३.९५. इन्द्र.

**इ** [अपि] २. ६१. गू. य.

**इत्थि** [स्त्री] ४. २१९.

**इत्थु** [अत्र] ९.६८.म. इथे; मा.अठे.

**इंदिय** [इन्द्रिय] ४. ९.

**इय** [ इति ] ५. ९९.

**इलायल** [ इलातल ] ५. १३१ पृथ्वीतल.

**ईषु** [ ईषत् ] १. २१.

**उक्क** [ उल्क ] १. ५०

**उक्कोवण** [ उत्कोपन ] ३. ५४. उद्दीपक

**उ** [खलु] १२. ३३. अनर्थक निपात

**उअअ** [उदय] १२. २५.

**उअत्ति** [उत्पत्ति] १२.८.

**उग्ग** [ उग्र ] ५.५९.

**उग्गअ** [ उद्गत ] २. ६८. गू. उग्यो

**√उग्गम** [उद्+गम् ] र. ४० गू. उगवुं;म. उगवणें

**उग्गम** [ उद्गम ] १. ४७. गू. म. ऊगम

**उग्गमण** [ उद्गमण ] ७. १३१. गू. उगमणुं. म. ऊगवण

**√उग्घाड** [ उद्+घाट् ] १४. १८ गू .उघाडवुं.म.ऊघाडणें;हिं.उघाडना

**उच्चारउ** [उच्च+कार स्वार्थे] १. ९२. गू. उंचो.

**√उच्चाय** [ क्रि. उच्च] ५.१९५. गू. उचकवुं

**उच्चिट्ठ** [उच्छिष्ट] ६. २०८ गू. उजीठुं, अजीठुं, एठुं; म. ऊष्टा

**√उच्छल** [उत्+स्] ३. १९५. गू उछळवुं.

**उच्छव** [उत्सव] ४. २८४. गू. ओच्छव.

उच्छव [उत्स्पर्श] ६. ६७.

उच्छु [इक्षु] १. ९. शेरडी म. ऊस

उज्जअ [ उद्यत ] ११. ३४.

उज्जंगल [दे.] ३. ६४. दीर्घ दे. ना. १. १३५.

उज्जल [उज्ज्वल] १. १२ गू. ऊजळुं, हिं. ऊजरा म. ऊजळ

उज्जालिय [उज्ज्वालित] १. ६१.

उज्जाण [उद्यान] १. १५. स.= गू. उजाणी

उज्जोअ [ उद्द्योत ] ३. १७१.

उज्जोयण [ उद्द्योतन ] ५. ६. सूर्य.

उज्झ [उपाध्याय] ५. ६१. गू. ओझा

उज्झर [दे.] १. १०३. निर्झर, म. ओजर

√उट्ठ [उद+स्था] १३. २७. गू. ऊठवुं. म उठणें हिं ऊठना

उण्ह [उष्ण] ५. ७४. गू. ऊनुं

उण्हाल [ उष्णकाल ] ६ १५९. गू. उनाळो. म. उन्हाला

उत्त [उक्त] ५. ६१.

√उत्तार [ उद+तृ ] ११. ४८. गू. ऊतारवुं. म. ऊतरणें

उद्धुर [उध्धुर] ३. २८.

उदूहल [ उलूखल ] ५. २७. खांडणी

उध्धूलिय [ उद्धूलित ] १३. ५.

√उप्पज्ज [ उत्+पद् ] २. ३९. गू. ऊपजवुं

उप्पण्ण [उत्+पन्न] २. २५.स.= गू. ऊपन्युं

उप्परि [ उपरि ] २. ३३. गू. ऊपर

उप्पाड [उत्+पाट् ] १३.९. गू. उपाडवुं. म उपडणें

उप्पील [उत्पीड] ४. १०६.

√उब्भ [उद्+भावय] २. ९४.गू. उभवुं; म. उभणें

उब्भड [उद्भट] ६.२३ गू .म.ऊभड.

उब्भा [ दे. ] २. ३२. म. हिं.ऊभा

उम्माह [ उन्माथ ] ५. १८८.

√उम्मिल्ल [उद्+मील्] १. २८. गू. ऊमळवुं; म. उमलणें

उल्ल [उन्द्र*] १.८२.म. ओळ (टि.)

उल्लव [ उल्लाप ] १. १९.

√उल्लुक्क [दे.] < उद्+लुप्. १. ४९. संताइ जवुं

उल्लोल १. २६. गू. उल्लोल = रमतीआळ

√उल्हाव [दे. ] २.२६. गू. ओल्हववुं.

√उवज्ज [उत्+पद्] १३. २५. गू ऊपजवुं. म उबजणें

उवरि [उपरि] २. १४१.

उवल [उपल] २. ८५. पथरो

उवेस [उद्देश] १३. ४; १३. १०; १३. ३ (?)

√उव्वर [उद्+वृ] १. ७०. शेष वधेलुं म.उरणें;दे.ना.१. १३२

√उव्वल [उद्+वृत्] ७. १४३. गू. अवळूं करवुं

√उव्वेल्ल [दे.] ५. ७३. सि. हे. ८.४.२२३. उघाडवुं

उहु [दे.] ३. ११७ जुओ ! गू. ओहो !

उहें [उर्ध्व] १२, १२. उंचे.

ऊढण [दे.] १. २५.स.=गू. ओढवुं–ओढणी; हिं म. ओढणी

ऊण [ऊन] २.१२८.गू.ऊणुं;म.ऊणा

ए [एतद्] १. ९४. गू ए.

एअ [एतद्] २. १३.

एक्कक्कम [एकक्रम] ११. २५. एक साथे

एक्कमेक्क [एक+एक] २. ८. गू. एकमेक

एक्कलिय [एकाकिनी] १४. ३.गू. एकली; हिं.अकेली

एत्तड [एतावत्] १. १०७. गू. एटलुं; प्रा.गू. एतलुं

एत्तिअ [एतावत्] ६. १७. गू. एटलुं

एत्थु [अत्र] १२. ३० म. एथें

एम [एवम्] १. २०. गू. एम

एयारह [एकादश] १. ५१. गू. अगीआर

एव [एवम्] २. १६७

एवड्ड [एतावत्] २. ८८. गू. एवडुं. म. एवढा

ओट्ठ [ओष्ठ] ३. ५३. गू. ओठ.

√ओत्थर [अव+स्तृ] ११. ४४. गू ओथरवुं; दे.ना. १.१५१

√ओयर [अव+तृ] २. ११९ गू. ऊतरवुं

√ओलक्ख [उप+लक्ष्] ५. २७८ गू. ओळखवुं; म. ओळखणें

√ओलग्ग [ना. क्रि. <अवलग्न] ५. २००. सेवा करवी. प्रा. गू. ओलग =सेवा; गू. अंग-ओळगणुं; ओळगाणो.

ओलि [आवली] १. ३८. गू. ओळ

√ओसर [अप+सृ] ३.७६. गू. ओसरवुं म ओसरणे

√ओहाम [दे. आ+क्रम्] २. ४९. हुमलो करवो सि. हे. ८.४. २५. अने १६०

ओहि [अवधि] ५. १८५. जैनमतनां ५ ज्ञानमांनुं एक ज्ञान

√ओहुल्ल [दे. अव+फुल्ल*] २. १६१. खिन्न, अवनत स. = गू. पाक ओलाइ गयो. (टि.)

क [किम्] १. २ गू. को.

कइस [कीदृश] १०. ९. हिं. कैसा म. कसा. गू. कशुं प्रा. गू. किस्यूं

**कउह** [ककुभ्] ३. ८४. दिशा.

**कज्ज** [कार्य] ११. ३४. गू.म. हिं. काज

**कज्जल** १. ३१. गू. काजळ

**कडक्ख** [कटाक्ष] १. ५०.स.=गू. करडागी; कडखां

**कडउल्ल** [ कटक+उल्ल ] १. ५२. गू. कडां, कल्लां.

**कडियल** [ कटी+तट ] ५. १८ स=गू केड.म. कडिये, कडियेला (काव्य)

**कडिल्ल** [दे.] ६. २४९. कांइ पण छिद्र विनानुं दे. ना. २. ६२

**कडूय** [कटुक] १०. १७.गू. कडवुं. म. कडू

**कट्ठ** [काष्ठ] ७. ७०. गू. काट (-माळ), काठी. म. काठी

**√कंड** [कण्ड्] ५. २७; ८. २२. गू.खांडवुं म. खंडणे, खांडणें

**√कड्ढ** [ दे. कृष् ] ३.११०. गू. काढवुं, म. काढणें. हिं. काढना.सि.हे.८.४.१८७.

**कणय** [ दे. ] ५. ७०. बाण. दे. ना. २. ५६.

**कण्ण** [ कर्ण ] १. १२१. गू. कान.

**कंठ** [ कंठिका ] ३.१२७. गू.कंठो, कंठी

**कण्ह** [ कृष्ण ] ४. १८३. गू. कहान

**कत्थ** [ कुत्र ] ४. १६१. मा.कठे; म. कुठे

**कद्दम** [ कर्दम ] १. ६३. गू. कादव.

**कंत** [ कान्त ] ५. २३, गू. कंथ.

**√कप्प** [ क्लृप् ] १४. १. गोठवबुं

**कप्पडिय** [ कार्पटिक ] ३. ४३. गू. म. कापडी

**कब्बुरिय** [ कर्बुरित ] ६. ७१. गू. कावरुं; म कबरा.

**कम** [ क्रम ] ३. १६६. पगलुं.

**कंचुलिअ** [ कंचुलिका ] ४. २२.

**कंपण** [ कृपाण ] ५. ७०.

**कंबल** [दे.]३. २२. गू. कांबडी

**कम्म** [ कर्मन् ] ३. १४७. गू. हिं. काम

**करड** [करट] ३. ८७. गंडस्थल

**करंबिअ** [ कर्बूरित ] १. ६३.

**कयवय** [ कतिपय ] ५. ४६. केटलाक

**कलयल** [ कलकल ] २. १११

**कलयंठिणि** [ कलकण्ठिनी ] १. १२२. कोयल पा. मा.

**कलिय** [ कलिका ] १. ४०. गू. कली; म. कळी

**कल्लोणिय** [ कल्यतन ] ३. ११४ गू. कालनुं;प्रा. गू; कालुनउं

**कवण** [ दे ] २. ८९ गू. म. हिं. कोण.

**कसण** [ कृष्ण ] ३. २४. श्याम

**√कह** [ कथ् ] १. १८७. गृ. कहेवुं.

**कह** [ कथा * = कथम् ] १. ५. हिं. कहं, कहा,

काण्ह [ कृष्ण ] १२. १० गू. हिं. कान्हा.

कायर [ कातर ] ४. २६७. गू. हिं. कायर

कारिम [ दे. ] १. १२९. कृत्रिम. दे. ना. २. २७

काल [ दे. ] ५. १२२. गु. काळु दे. ना. २. २६.

कालंबिणि [ दे. कादंबिनी ] ५. १३. मेघमाला. (टि)

कि [ किम् ] १२. २०.; १२. १७.; प्रा. गू. कि; गू. के; म. कि; हिं. कि; की.

कित्थु [ कुत्र ] ४. १६४. मा. कठे, केथे म. कुठें हिं. कित.

किय [ कृत ] १. १, हिं. कीया

किय [ किम्+इव ] ३. १६२

किर [ किल ] १. ९० खरेखर प्रा. गू. किर, किरि.

√किलाम [ क्लम् ] ४.१७४. थाकवुं.

√किलकिंच [ ध्वनि क्रि. दे. ] ६. ५३. कलकलाट करवो. सि. हे. ८. ४. १६८.=रम्

किलेस [ क्लेश ] ३. ३.

किविण [ कृपण ] १. १२८.

किस [ कृश ] ४. १४२.

√कील [ क्रीड् ] ११. १६.

कील [ क्रीडा ] ३. ८१.

कुच्छ [ किञ्चित् ] १२. १०. कांइ हिं कुछ

कुहाडि [ कुठार ] ७. १३४. गू. कुहाडी हिं. कुहाडा;

कुहिणि [ दे. ] ३. १७६. मोहोल्लो, मार्ग.

कूय [ कूप ] ६. ७६. गू. कुवो

केत्तड [कियत्+ड स्वार्थे] ३.१२९. गू. केटलुं; प्रा. गू. केतुं; म. किति हिं. कितो.

केत्तिअ [ कियत् ] ३.१०८.

केम, केम्व [ कथम् ] २. ७८. गू. केम. हिं. किमि

केयइ [ केतकी ] १. ११. गू. हिं. केवडा.

केयार [ केदार ] १. ११. गू. क्यारो, क्यारडो हिं. क्यारा

केरड [ दे सत्क ] २. २९. सम्बन्ध विभक्तिनो अनुसर्ग. गू. केरो--री--रु.

केहउं [ कीदृशं ] ५. ९४. प्रा. गू. केहुं; गू केवुं; हिं. केहूं, केहु

कोइल [ कोकिल ] ५. ११४. गू. हिं. कोयल प्रा. गू. कोईल. म. कोयाळ

√कोक्क [दे.] ५ १३६. बोलावबुं. म. कोकणें; सि हे. ८. ४. ७६.

कोट्ठ [ कोष्ठक ] ४. १०५. गू. म. कोठा; कोठो

**कोदूमिउ** [दे,] १ १३ सुरतक्रीडा स=म. कोदवणें, कोदावणें (अर्थान्तरे) सि. हे. ८. ४. ११८. कोदुम=रम्

**कोंपल** [ कुड्मल ] ४. १४८ कळी गू. कुंपळ सि हे ८. १. २९.=कुंपल.

**√खंच** [ दे कृष् ] ३ १०. गू खेंचवुं म खेंचणे हिं खंचना

**खड** [ दे ] २. ८१ तृण गू. म. हिं खड. दे ना. २. ६७.

**खडप्फड** [ दे. ] १४. २३. भांति गू म. हिं खटपट

**खडिल्लउ** [ खल्वाट ] ७. १३६ स=सि हे ८. ४. १२६ खड्=मृद्+इल्ल स्वार्थे

**खणय** [ खनक ] २. १०४.

**खंड** [ खड्ग ] ७. ८०. गू. खांडु; हिं. खाँडा.

**खंत** [ खात ] १. २६.

**खंध** [स्कंध] ७. १३४. गू. म. हिं. खांध

**खंधावर** [ स्कन्धावार ]१. १०७. सेना

**खप्पर** [ कर्पर ] ६. ४२. गू. हिं. खप्पर; म. खपरी

**खयाल** [ दे. ] ६. २६. झाडी

**√खरड** [ दे ] १३. २०. गू म. हिं. खरडवुं दे ना. २ ७९. ( खर+ड स्वार्थे )

**√खल** [ स्खल् ] १ २६. गू खलवुं, खाळवुं हिं. खलाना

**खल** [ दे ] १०. २८. गू खोळ

**खवण** [ क्षपणक ] ४ ९४; १३. १० जैन साधु.

**खार** [ क्षार ] २.८२. गु. म. हिं. खार

**√खिज्ज** [ खिद् ] ५. १२. गू खीजवुं; . खीजणें;हिं खीजना; सि. हे. ८. ४. २२४.

**खीर** [क्षीर] १. ८८. गू. म. हिं. खीर

**√खुड** [दे.] ६. १५३. तोडवुं म. खुडणें; गू. खूंतवुं; हिं. खुंतना; सि. हे. ८.४.११६.

**खुद्द** [ क्षुद्र ] १०. ३३. हलको माणस, मक्षिका

**√खुब्भ** [ क्षुभ् ] ६. ८८. स.= म. खुबा, खुबवणें; हिं.खुभना.

**√खुसखुस** [ दे. ] १३. ७. छानी वातो करवी. गू. खुसफुस करवी; म. खुसखुसणें; बं. फुसफुशाना

**खेड** [ दे. ] ३, ९४. गू. खेल

खेत्त [ क्षेत्र ] २. १९३. गू. हिं. खेत; म. शेत

खोणी [ क्षोणी ] २. १०४. जमीन

√खोह [ क्षुभ् ] ४. ३०४. क्षोभ करवो.

गअ [ गत ] १. २. गू. गयो

गयद् [ गजेन्द्र ] ६. २९. गू. गयंद

√गंजोल्ल [ दे. ] ५. ११६. पुलकित थवुं सि. हे. ८. ४. २०२. गुंजोल्ल=उल्लस्; दे. ना. २. १००. रोमांचित.

गंठियाल [ ग्रन्थिपाल ] १.१७. भण्डारी

गग्गर [ गद्गद ] २. ८९. गू गळगळो; म. हिं गळगळा, गळगळित; पा. मा.

गग्गिर [ गद्गद ] २. ५५ गू. गळगळो. सि. हे ८.१.२१९

गरुअ [ गरुक ] ४ १३१ गू. गरवो; पली=गह; म =म = गरीयस्

गवक्ख [ गवाक्ष ] ६ ९८ गू गोख प्रा गू गुख; हिं गौख.

गविट्ठ [ गवेषित ] ३. १०२ पा. मा.

गंध [ गव्य ] ३. १४७. गायनुं

गहिर [ गभीर ] ३. १५२. गू. घेरुं. हिं. घैरा.

गहिल [ ग्रथिल ] ७. १०२. गू. घेलो स.=म. घैलट, घैलाड.

गाम [ ग्राम ] १. ७, गू. गाम. म. गांव. हिं. गाम. ५. २३९. संगीतनां ३ ग्राम.

°गारउ [ °कारक ] २. १२१. गू. हिं. °गार.

गिज्झ [ ग्राह्य ] ६. ८६.

गिणगिणाविउ [ दे. ] १०.३२. गू. °गणगणवुं; म. गिणगिणनें, गणगणनें

गिंभ [ ग्रिष्म ] ४. १८२. उनाळो म. गीम, गीह्म

गिव्वाण [ गीर्वाण ] २. १०७. देव

गु [ गो ] ३. १३६.

गुज्जर [गुर्जर] १४. १०. गू. म गूजर.

गुज्झ [गुह्य] १ ७ १ स. = गू. गूझुं; प्रा. गू. गूझ

√गुंथ [ ग्रथ् ] १.२८ गू गुंथवुं म. गुथणे. गुंथणें ( उच्चार-गुतणें ).

√गुमगम [ ध्व.क्रि.दे ] १३५ म. घुमघुमणें; स.= सि हे. ८. ४. १६१ गुम=भ्रम्

**गुहिर** [ गभीर ] १२.१५ गू. घेरुं; पा. मा.

**√गोण्ह** [ गृह् ] १४. २. म. घेणें सि. हे. ८. ४. २०९.

**गोंजि** [ दे. ] ५.११६. मजरी. दे. ना. २. ९५.

**गोट्ठ** [ गोष्ठ ] १४.१३. गू. गोठो म. गोठण. पा. मा.=गुट्ठ

**घइं** [ दे. ] १०. ११ पादपूरक अव्यय. सि.हे. ८. ४. ४२४.

**घंघ** [दे.] १. १३७. घर गू. घंघोलिवुं. दे. ना. २. ११०५.

**घण** [ घन ] ७. १२१. गू. घण (लुहारनो)

**घंडा** [घंटा] १३. ६. गू. हिं. घंट.

**घत्त** [दे. क्षिप्त] २. ११ प्रा. गू. घातवुं. सि. हे. ८. ४. १४३.=क्षिप्

**घर** [गृह] २. २२. गू. म. हिं. घर

**घरिणि** [ गृहिणी ] ४. ३१५. पत्नी गू. घरणी.

**घल्ल** [ दे. क्षिप् ] ३. १९०. गू. घालवुं; हिं. आलना; म. घालणें सि. हे. ८. ४. ३३४. ( उ. )

**√घवघव** [ दे. ध्व. क्रि. ] १. २४. घूघवावुं.

**घाअ** [घात] १,९६. अहाइ.गू .घा.

**घित्त** [दे. क्षिप्त] १. ८. जुओ घत्त स.=अ.व.

**घिंभ** [ग्रिष्म के घर्म] ५. १०२. ताप, गू. म. हिं. घाम म. गिम

**√घुज्ज** [ दे. कर्मणि अस् ] २. ८६. गू. घूंचाइ जवुं.

**√घुल** [दे.] ५. १२४. खंखेरवुं सि. हे. ८. ४. ११७. म. घोळणें; गू. घोळवुं.

**घुसिण** [घुसृण] ६. १५१ कंकु.

**घूहड** [ घूक+ड ] ९. ३२. गू. घूवड; म. गू. हिं. घूड

**√घेप्प** [ दे. = गेह्* = गृह् कर्मणिरूप ] १० ६० ग्रहण करवुं. म. घेणें सि. हे. ८. ४. २५६.

**√घोल** [दे.] १. २६. गू. घोळवुं; हिं. घोलना.

**चउ** [चतुः] २. ५३. गू. चो.

**चउ-कोणी** [चतुष्कोण] २.१०४. म. चौकोण.

**चउत्थ** [चतुर्थ] ६. १५७. गू. चोथुं; म. चौथ; हिं. चौथा

**चउपास** [चतुःपार्श्व ] २. १०६. गू. चोपास.

**चउरंसिय** [ चतुरस्रिका ] १४.१. चार खुणा काळी लखवामां जूना वखतमां वपराती स्लेट जेवी काष्ठपट्टिका.

**चक्क** [ चक्र ] ५.६२. गू. म.हिं. चाक.

**चक्का** [ चक्र ] ११.२४. चक्रवाक गू. चकलो, चकवो.

**चंग** १.२७. गू. चंग; हिं. चंगा; म. चांगला. दे. ना. ३.१.

**चट्टु उ** [ दे. ] ५.२८. गू. चाटवो म. चाटू दे.ना.३.१.

**√चड** [ दे. रह ] १. ८७. गू. चडवुं; हिं. चडना; म. चढणें

**√चडप्फड** [ द्वे. ध्वनि क्रि. ] १०.११. गू. तरफडवुं. म. तडफडणें

**चडियराय** [ गृहीतराग ] २.१०७.

**चडुयार** [ चटुकार * ] ३.५७.

**चत्त** [ त्यक्त ] ४.२९१.पा.मा.

**चत्तर** [ चत्वर ] ५.८ गू. चोतरो, चबुतरो.

**चम्म** [ चर्मन् ] ८.१३. गू. म. हिं. चाम.

**चंद** [ चन्द्र ] २.५३. गू. चंद, चांदो. म. हिं. चांद.

**चय** [ त्यज् ] ४.२२४. त्याग करवो. पा. मा.

**चालीस** [ चत्वारिंशत् ] ५. ५१ गू. चालीस; म. चाळीस.

**√चव** [ दे. ] २.१७८. कहेवुं गू. चववुं; चव चव करवुं. सि. हे. ८. ४. २.

**√चव** [ च्यु ] ४.१७९. च्युत थवुं गू. चववुं; म. चवणें

**चावल** [ दे. ] १.४२. चोखा गू. हिं चावल; दे.ना.३.८.=चाउल

**√चिक्कव** [ चमत्+कृ ] ५.२०. गू. चमकवुं.

**चिट्ठ** [ चेष्टा ] ७.१४३. गू. चेष्टा

**चित्तत्तण** [ चित्रत्व ] १.१२२.

**चिंध** [ चिह्न ] ५.७. स.=गू. चींधवुं; पा. मा.

**चिराणउ** [ चिरंतन ] ५.१८०. पुराणुं; प्रा. गू. चिराणुं.

**चिहुर** [ चिकुर ] २.१७९.केशपाश.

**√चूर** [ चृ ] २.८. गू. चूरो करवो.

**चुक्क** [ च्युत ] ३.६९. गू. म. हिं. चूक. पा. मा.

**√चुक्क** [ क्रि.< च्युत ] ४.१९७. गू. चूकवुं म चूकणें पं. चुक्कना. सि. हे ८.४.१७७ =भ्रंश

**चोज्ज** [ दे ] ५.२१४. आश्चर्य. दे. ना. ३. १४. चुज्ज, चोज्ज; पा. मा. चुज्ज

**चोप्पड** [ दे. ] ७.१४३. तैल-मर्दन करवुं गू. चोपडवुं म. चोपडणें; हिं. चोपडना. सि. हे. ८.४.१९१=चुप्पड.

**चोप्पड** [ दे. ] ७. ११२. चीकटुं गू. म. चोपड.

**छ** [ षट् ] प.५१. गू. छ. म सहा.

**छज्ज** [ दे. ] ५.२४८. गू. छाजवुं, हिं. छाजना; म. साजणें सि. हे. ८.४. १९९.=राज्

**√छड्ड** [ दे. मुच् ] २.१२७. गू. छांडवुं, हिं. छाँडना; म. सांडणें. सि. हे. ८.४.९१. पाली छड्डेति

**छण** [ क्षण ] ६.१४८. पूणमा.

**छण्ण** [ छन्न ] १.३. गू. छानुं.

**छत्तिय** [ छत्रिका ] ५.२२४. गू. म. हिं. छत्री.

**छप्पय** [ षट्पद ] २.१३५. गू. षटपद, छप्पय छप्पो (अर्थान्तरे )

**छार** [ क्षार ] ७.१४२. राख गू. छार. पाली. छारिका

**।छत्त** [ दे. ] ५.२०७. स्पृष्ट; गू. छीतवुं, हिं. गू. छूतअछूत. पा मा.

**√छिप्प** [ दे. स्पृश ] २.८५. सि. हे. ८.४.२५७. पाली. छुपति; गू. छूपवु

**√छिव** [ दे. स्पृश् ] ६ ५६. गू. छोवावुं सि हे ८ ४.१८२.

**छुड्ड** [ दे. ] १.४७; छुड्ड छुड्ड १. ७५;सि हे. ८.४.४२२ (उ.) छुड्ड=यदि

**छुद्द** [ क्षुद्र ] ३.९३. पाली. छुद्द.

**छेअ** [ छेद ] ३.१०४. गू. छेडो.

**ज** [ यत् ] १.२९.

**जअ** [ जगत् ] ६.

**जइ** [ यदि ] २.३७. प्रा. म. जइं.

**जइसउ** [ यादृश ] १०.९. हिं. जैसा; म. जसा. प्रा. गू. जिस्यूं.

**जउ** [ यत्र ] ३. ५७.

**जउण** [ यमुना ] ४. १३७.

**√जगड्ड** [ दे. ] १३.२०. गू. झघडवुं; म. झघडणें हिं. झघडना. दे. ना. ३.४४.

**जणण** [ जनक ] ९.११२.

**जणवउ** [ जानपद ] २.८. ग्रामजन,

**जणेरी** [ जनयित्री ] २.२९. माता

**जंत** [ यन्त्र ] १.९. गू. जंत, जंतर

**जंत** [ यात् ] १.३४व. कृ √जा.

**जमल** [ यमल ] ३.२७. प्रा गू. जमलो; म. जवळ (अर्थान्तरे)

**√जंप** [ दे. कथ< जल्प् ] २ ८३ म जांपणें जापण. सि हे. ८ ४ २=कथ्

**जंपण** [ जल्पन ] ३.१६३ वाच्यता निंदा दे ना ३.५१.

**जंपाण** [ दे ] ५.२२७. एक प्रकारनुं वाहन.

√जयजयकार [ 'जय' 'जय'+कृ ] २ ७. गू जेजेकार करवो

जयहर [ जगद्गृह ] १.४. जगत् रूपी घर.

जर [ ज्वर ] ३ ५३. म जर.

जलजंत [ जंलयन्त्र ] ६.८ वहाण

जवल [ यमल ] ७.१३०. पासे पासे प्रा गू. जमला म. जवळ.

जस [ यशस् ] २ ९४. गू जस.

√जा [ या ] २ ६३ गू. जवुं; हिं. जाना; म. जाणें

√जाण [ ज्ञा ] ३ ११ गू. जाणवुं; म. जाणनें; हि जानना

√जाण [ ज्ञान ] १३.१४. गू. म. हिं. जाण.

जाण [ यान ] ९.२९. गू. जान

जाणय [ जानपद ] २.१४०.

जाम [ यावत् ] ६.५. गू. जां.

जाल [ ज्वाला ] २. १२४. गू. झाळ. म. जाळ;पाली. जाल

जालडिय [ ज्वाला+डिय ] २.१११.

जाव [ यावत् ] २.१८१

जावहिं [ यावत+स्मिन् ] १.९०.

जि [ दे. ] १.२३. अनर्थक निपात गू. ज.

जिज [ दे. ]२. ३४. अनर्थक निपात

√जिघ [ घ्रा ] १२.६. वास लेवी. पा. मा.

√जिण [ जि ] ५. १९४ सि. हे. ८.४.२४१.

जिभा [ जिह्वा ] ३.८ गू म. जीभ.

जिह [ यथा ] २.९२. जेम.

जीहा [ जिह्वा ] १.१२२. पा मा.

√जुज्ज [ युज् ] ५.१७६.सि.हे.८. ४.१०९

√जुज्झ [ युध् ] १.४९. गु. झुजवुं म. जुजणें, जुंजणें हिं. झुंजना. सिं.हे ८.४.२१७.

जुज्झणअ [ योधनशील ] ३.१८. गू. झूमणुं.

जुत्ति [ युक्ति ] ५. २६५. गू. जुगत

जुत्थ [ यूथ ] १३.३८. गू. जूथ.

जुप्प [ दे. ] ३.८२. बेसतुं आववुं सि. हे. ८.४.१०९. जुंपणें

जुवाण [ युवन् ] ३.१२६ गू. जुवान.

जूधारिअ [ द्यूतकार ] ३.१६ गू. म. जुगारी.

जेट्ठ [ ज्येष्ठ ] ३.२७. गू. जेठ म. जेठा.

जेत्तहे [ यावत्+स्मात् ] १. ४२. गू. जेटले

जेहउ [ यादृश ] ५.९४. गू. जेवु

जेम [ यथा २.५३. गू. जेम

√जोअ [ दे. ] ७.१११. गू. जोवुं, म. जोवणें, पाली. जोतति (=सं. द्युत् ).

ओअण [ दे. ] ६.९६. दृष्टि, नेत्र.

जोइसिउ [ ज्योतिषिन् ] ३.२९. गू. म. हिं. जोशी.

√जोक्ख [ दे. ] ५.५०. निर्णय करवो गू. जोखवुं. म. जोखणें हिं. जोखना.

जोगि [ योगिन् ] ३.११. गू. म. हिं. जोगी.

जोव्वण [ यौवन ] १.९७. गू. जोबन.

झकार [ ध्वनि श. ] १.२४. गू. झंकार.

झत्ति [ झटिति ] २.७१.गू. झट. पा. मा.

√झडप्प [ दे. ] ४. २७९. गू. झडपवुं, म.झडपणें, हिं. झडपना

√झलक्क [ दे. ] ५.१५५. गू. झळकवुं, हिं. झळकणें

झल्लरि [ दे. ] २.४. एक वाद्य.

√झा [ ध्यै ] ६.४८.सि.हे.८.४.६

√झिज्ज [दे.] ३.५६. सूकावुं;म. झिजणें.

झुणि [ध्वनि ] ४.११० हिं. झुण.

√झुलुक्क [ दे. ] ३. ४४. म. झुळकणें

झेंडुय [ दे. ] ५.४२. दडो. गू. गेंदो; म. झेंडु द्रा. चेंडु

टिंटउ [ दे. ] ६.११९. जुगार रमवानी जगा.दे.ना.४.३=टेंटा.

√ठव [ स्थापय् ] ५.१७८. गू. ठववुं; म.ठेवणें; पाली. ठपेति

ठाण [ स्थान ] ५.१३७. गू. थानक; म. ठाण

ठाव [ स्थामन् * ] १३.२९. गू. ठाम. म. ठाव

√ठाहर [ स्था ] ९.३६. स=गू. ठरवुं; हिं. ठहरना म. ठरणें.

डसण [ दशन ] ५.१२३. दांत स.=गू. डसवुं, म. डसणें हिं. डसना; पाली डसति

√डह [ दह् ] २.९०.बाळवुं;पाली. डहति; स.=म. डाहणी, डाह.

√डहुल [ दे. ] ७.१४६. गू. डोलवुं म. डहूळण

डाइणी [ डाकिनी ] ५.३०. हिं. डायन.

डाल [ दे. ] ९.२८. शाखा गू. हिं.डाल, म. डाहला.दे.ना.४.९.

√डज्झ [ कर्मणि दह् ] २.३७. गू. दाझवुं; दाझणें

डिंडीर १.२०. फीण.

डुक्कर [ दुष्कर ] २.६१.

डोंब [ डुम्ब ]५.६१.चांडाल.पा. मा.

√डोल्ल [ दोल् ] ४.२४९. गू. डोलवुं; म. डोलणें; हिं. डोलना

√ढुक्क [ ढौक् ] २.१२५. गू. ढुंकवुं.

√ढोअ [ ढौक् ] ५.९.

णं [ दे. ] १.४५. जेम सि. हे. ८.४.४४४.

√णअ [ नृत् ] १.१०२. गू. नाचवुं; म.नाचणें; हिं. नाचना पाली. नच्चति.

णच्चण [ नर्तन ] ३.११५. गू. नाचण. पाली. नच्चन

णट्टव्वयहर [नाटयगृह] १.१२३.

णट्टावउ [नर्तापक*]३.१४६.नर्तक.

णट्ठ [ नष्ट ] १.११. गू. नाठुं, स.=म. नाट

√णड् [ दे. ] ५.१६५. हरकत थवी गू. नडवुं म. नडणें, हिं. नडना. पा. मा.

णमिर [ नम्+इर ] ३.१५५. नमनशील

णयर [ दे. ] ५.११३. केवळ.

णह [ नभस् ] १.६८.

णह [ नख ] १.१२. नख. हिं. नहँ

णहर [ नखर ] १.७४. गू. न्होर

√णा [ ज्ञा ] १.१०९ स =गू .नाणवुं

णाइ [ दे. ] १.२. जेम; सि. हे. ८.४.४४१. हिं. नाइं

णाण [ ज्ञान ] २.१९८. गू. नाणुं; नाणवुं.

णावइ [ दे. ] १.२९. जेम; सि. हे. ८.४.४४४.

णाहल [ दे. ] ५.१८. एक वन्य माणसनी जात.

णाहि [ दे. ] २.२२. गू. नाहि. म. नाहिं. सि. हे. ८. ४. ४१९=नाहिं

णि [ नृ ] ५.६०.

√णिअ [ दे. ] १.१८०. जोवुं; सि. हे. ८. ४. १४१

√णिअच्छ [ दे ] ५.१५७. जोवुं; पा. मा.

णिउड्ड [ दे. ] १. ४६. डूबकी मारवी सि. हे, ८. ४. १०१ =मज्ज्

णिक्खंत [ निष्क्रान्त ] ४.२१८.

णिग्गल [ निर्गल ] १. १२८ म. निगळ

णिच्चित [ निश्चिन्त ] ७.७१. गू. नचित.

√णिज्झाय [ नि+ध्यै ] ३.१७१. जोवुं सि. हे.८.४. ६.

**णिज्झुण** [ निर्ध्वनि ] ६.१११.

**√णिट्ठव** [ निः+स्थाप् ] ३.१६८. नीचे नाखवुं

**णिडाल** [ ललाट ] १.४८. गू. नीलवट. म. निडळ, निढळ. पा. मा.

**णिप्पेहुण** [ दे. ] ४.२१. मोर (?)

**णियल** [ निगड ] १.८. बेडी

**णियाण** [ निदान ] ६.११४ चिह्न.

**णिरारिउ** [ दे. ] ५.९८. निश्चयार्थी निपात; गू. नर्युं.

**णिरिक्क** [ दे. ] १.९. चोर दे. ना. ४.४९.

**√णिरिक्ख** [निर्+ईक्ष्] ३.१०८. गू. निरखवुं. म. निरेखणें

**णिरु** [ दे. ] १.१०४. निश्चयार्थ अव्यय; गू. नर्युं.

**णिरुत्त** [ दे. ] १. ९५; ५.४६. निश्चयार्थ अव्यय.

**णिल्ल** [ दे. ] ४.६२. ललाट.

**√णिवड** [ नि+पद् ] ३. १३३. गू. निवडवुं; म. निवटणें, निवडणें.

**√णिव्वड** [ निष्पद ] ६.६०. सि. हे. ८.४.६२=भू.

**णिस्सावण्ण** [निःसापत्न्य] २.१९६.

**णिसिक्कय** [ दे. ] ५.१४२. बहार काढी नाखेला. गू. नसीकवुं सि. हे. ८. ४. ९१–१४४. =उस्सिक्क

**णिहाय** [ दे. ] १.७. समूह. दे. ना. ४.४९.

**√णिहाल्** [ नि+भाल् ] २.१९१. गू. निहाळवुं म. निहाळणें हिं. निहालना

**निहेलण** [ दे. ] ५.२५. धर. दे. ना.४.५१; पा मा.

**√णे** [ नी ] ६.८३. पाली. नेति

**णेउर** [ नूपुर ] १.१४. गू. हिं. नेवर; म. नेउर,नेवर. पा. मा.

**णेण्ण** [ नयन ] २. १९२ गू. नेण.

**णेह** [ स्नेह ] ५.३९. गू. नेह.

**√ण्हा** [ स्ना ] १.४९. गू. न्हावुं म. नहाणें, न्हाणें; हिं. नहाना.

**त** [ तद् ] १. ३०. गू. त-ने.

**तउ** [ तत्र ] ३. ५७.

**तउ** [ ततः ] ४. १७६ गू. तो, तव.

**तक्खण** [ तत्क्षण ] ४.२३६. प्रा. गू. ताक्षणे; बं. तक्षन. हिं. ततखण.

**तक्कुअ** [ दे. ] ६. १६६ स्वजन पा.स.म.

**तण** [ दे. ] ४. २६२. षष्ठी विभक्तिनो अनुसर्ग गू. तणो–णी –णुं.

तत्ति [ दे. ] २. ५५. चिंता तत्परता, दे. ना. ५. २०.

तंब [ ताम्र ] ४. १००. गू. तांबुं म. तांबा; हिं. तांबा; पा.मा.

तंबिर [ ताम्र ] ६. ३८.

तंबोल [ ताम्बूल ] १.३०. गू.हिं. तंबोल.

तवंग [ दे. ] ६. १४१. पलंग

तव्वे [ तावत् ] ११. ६. हिं. बं. तबे. हिं. तव. गू. तव.

ता [ तावत् ] १३. ११.

ताण [ त्राण ] ४. ४१.

ताण [ तान ] ५. २५२.

ताम [ तावत् ] ६. ५१. गू. तां

ताव [ तावत् ] २. १८२.

तावहिं [ तावत्+स्मिन् ] १. ९०.

√ताव [ ताप् ] ३. ५३. गू. तावबुं; हिं. तावना,=तायना.

√तास [ त्रस् ] ४. २४०. गू. त्रास आपवो.

तिक्ख [ तीक्ष्ण ] ५. २५४. गू. तीखुं. म. हिं. तीख

तिडिक्कअ [ दे. ] ९.१२. गू. तणखो

तिण्ण [ त्रि. ] २. ९५. गू. त्रण. हिं. म. तीन

तित्ति [ [तृप्ति] ४. १३६.

√तिम्म [ दे. ] ५. १३१. आर्द्र करवुं. दे. ना. १. ३७. म. तिंबणे.

तिय [ स्त्री ] २. १७५. स्त्री. हिं. ति, तिय, तिया.

तियसिंद [ त्रिदशेन्द्र ] ४. १४. इन्द्र

तिलु तिलु [ दे. ] ५. १२. जरा जरा

तीमइ [ स्त्री ] ३. ६६. हिं.तीवई.

√तीर [ तीर् ] १०. ३९. शक्कुं सि.हे.८.४.८६.

√तुट्ट [ त्रुट् ] १. ५७. गू. तूटवुं; म. तूटणें; हिं. तूटना.

तुंगि [ दे. ] ३. ११३. रात्रि. दे. ना. ५. १४.

तुप्प [ दे. ] १. ८८. म. तूप. पा. मा.; दे. ना. ५. २२.

तुम्हारिस [ युष्मादृश ] ३. ११.

तुरंत [ त्वरत् ] १.२३. गू. तुरत.

तुरिय [ त्वरित ] १. ९४. गू. तुरत.

तुहार [ तव ] ५. १३०. गू. तहारुं

तुहुं [ त्वम् ] १. १३२. गू. तुं; म. तु.

**तेत्तहे** [ तावत् ] १. ४२. गू. तेटले.

**तेत्थहो** [ तत्र ] ३. १३३.

**तेम** [ तथा ] ४. १३५. गू. तेम

**तेत्थु** [ तत्र ] ३. ४५. म. तीथे. प्रा. गू. तीथे.

**तेरह** [ त्रयोदश ] ३. १९९. गू. तेर. म. तेरा. हिं. तेरह.

**तो** [ ततः ] १. ४२. गू. तो.

**√तोड** [ त्रोटय् ] ६. ८७. गू. तोडवुं म. तोडणें हिं. तोडना. सि. हे. ८.४.११६.

**√थक्क** [ स्थक् * ] २.८२. रहे छे. गू. थाकवुं, स.=गू. थकी; स.=सं. स्थगयति; पाली. थकेति; सि. हे. ८. ४. १६. म.थाकणें. हिं. थाकना.

**थक्क** [ स्थिर ] ५. १७. स्थिर

**थड्ढो** [ स्तब्ध ] १०. २४. गू. टाढो पाली. थड्ढ; पा.मा.

**थण** [ स्तन ] १. २८. गू. थान; हिं. थन; म. थन, थना.

**थत्ति** [ स्थिति ] ३. १९९. दे.ना. ५. २६.

**√थंभ** [ स्तम्भ् ] १. १३१. गू. थांभवुं; म. थांबणें

**√थरहर** [ ध्व. क्रि. दे. ] ५. ११७ गू. थथरवुं;पा.मा.; दे. ना.५.२७.

**√था** [ स्था ] २. १८३. गू. थवुं, थावुं

**थाण** [ स्थान ] १. १५. गू. थाणुं

**थिअ** [ स्थित ] २. ५. गू. थयुं

**थित्ति** [ स्थिति ] ५. २२०.

**√थिप्प** [ दे. ] ५. १३. झरवुं म. थिपणें.थिबणें. सि.हे.८.४. १७५.

**थुइ** [ स्तुति ] ६. १५६.

**थेलासण** [ दे. ] ४. ११. कमळ. दे. ना. ५. २९.

**थोव** [ स्तोक ] ६. ५५. पाली. थोक. सि. हे. ८. २. १२५.

**थोड** [ स्तोकं ] ३. ११०. गू. थोडुं, म. हिं. थोडा.

**थोर** [ दे. ] ३. १०६. स्थूळ म. थोरला, थोर. पाली. थेर. दे. ना. ५. ३०.

**दइअ** [ दैव ] ६. १३. नसीब, प्रा. गू. दै. 'दै जाणे'

**दउवारिय** [ दौवारिक ] ३. ४१.

**√दक्खव** [ दर्शय् ] १. ९५.

गू. दाखववुं; म. दाखविणें सि. हे.८.४.३३.

**दर** [ दे. ] ५.१९. थोडा दे. ना. ५. ३३; पा. मा.

**दवणा** [ दमनक ] १. १७. एक जातनी वनस्पति; गू. दमण; हिं. म. दवणा.

**दहि** [ दधि ] १. ३. गू. दहिं म. हिं. दहीं.

**दार** [ द्वारिका ] ४. १५५.स.=म. दार.

**दाव** [ दे. दृश् ] ६.१६५.सि. हे. ८.४.३२.

**दाहिण** [ दक्षिण ] ६. ५३. जमणो; हिं दाहिना.

**दिअह** [ दिवस ] २. ५१. प्रा. गू. दीह; गू. दी. प्रा. म. दी.

**दिट्ठ** [ दृष्ट ] १. ४७. गू. दीठो. पाली. दीट्ठ.

**दिट्ठि** [ दृष्टि ] ३. १३३. गू. द्रेठी; म. दीठ

**दिण्ण** [दत्त] १. ३३. हिं. दीना. प्रा. म. दिन्हला. पाली. दिन्न.

**दिवहडा** [ दिवसाः ] ७. १३३. दिवसो प्रा. गू. दीहडा.

**दिहि** [ धृति ] ३. १६. धैर्य,सुख. पाली. धिति

**दीउ** [ दिव्य ] २. १.

**दीव** [ दीप ] २. ८७. गू. दीवो

**दीव** [ द्वीप ] २. १९८.

**दीसु** [ कर्मणि दृश् ] १. १. गू. दीसवुं;हिं. दीखना; म.दिसणें

**दुज्जस** [ दुर्यशः ] २. २. अपकीर्ति.

**दुवार** [ द्वार ] ६. १२५ म. दार; हिं. दुवार

**दुस्सील** [ दुःशील ] २. ९६.

**दूउ** [ दूतः ? ] १. ५.

**दूहल** [ दुर्भाग्य ] ४. १८८. गू. दोहलो.दे. ना. ५.४३.

**√दे** [ दा ] २. ११. गू. देवुं. म. देणें; हिं; दे.ना.

**देवर** [ देवृ ] २. ५२. गू.दिअर; म. देवर.

**देवल** [ देवकुल ] ७. ३३. गू. म. हिं. देवळ.

**देहुर** [ देवगृह ] ६. ७७. गू. देहेरुं

**धण** [ धन ] ३. ३०. गायोनुं जूथ. गू. धण.

**धणिअ** [ दे ] ११. २६. प्रिया मा. धण; दे. ना. ५. ५८.

धत्थ [ धार्ष्ट्य ] ४. २९२.

धंध [ दे. ] ७. १२७. मोह; गू. धंधो, धांधळ. म. धंदरा, धंदर्या. दे. ना. ५.५७.

√धंध [ दे. ] १३. ७. छेतरवुं. दे. ना. ५. ५७.म. धंदरणें

धय [ ध्वज ] १. १७.

धवल [ धवल ] १४. १३. गू. धोळो.

धाइय [ धावित ] ३. १६९. गू. धाया. स.=धावडणें, धावणें (काव्य).

धाहडिय [ दे. ] २ ११२. गू. धाह

धि [ धिग् ] ३. ७७.पाली. धि.

धिट्ठ [ धृष्ट ] २. ७६. गू. धीट; म. धिट्ट.

√धीर [ धीरय् ] ३. १६३. गू. धीर, धीरो,

धुअवह [ ध्रुवपथ ] ४. २७५. सनातन मार्ग

धुक्कुधुअ [ दे. ] ४. १८७. कंप स.=गू. धक्काधुंबा. म. धुगधुगणें, धुकधुकणें; दे. ना. ५. ६०.

√धुण [ धू ] ४. २९२. गू. धणवुं: सि.हे. ८. ४. २५१.

धुयगाय [ दे. धूतकाय ? ] १.३८. भ्रमर; दे. ना. ५. ५७

धूअ [ दुहितृ ] ५ २७१. दीकरी मा. धी.

धूमंधारिअ [ धूमांधकारित ] २. गू. धूंधळुं; म. धुंडाळा.

नग्गल [ नग्न+ल ] १३. ९. गू. नागडो; म. नागडा, नागटा

नवल्ल [ नव+ल्ल ] १. ४०. गू. म. हिं.नवल.

√नास [ नश् ] १. ८. गू. नासवुं; म. नासणें ( यौगिकार्थ )

√निअ [दे.] २. ७८. जोवुं सि. हे. ८. ४. १८१.

√निउड्ड [ दे. ] १. ४६ गू. बूडवुं. सि. हे. ८.४ १०१.

नियत्थ [ निवस्त ] १. ९९. म. नेसणें

नियर [निकर] १. १६. समूह

नियरिसण [ निदर्शन ] ४. १६३. दाखलो

नियलण [ निगडन ] ५. ४७.

√नीसर [ निः+सृ १. ५. गू. नीसरवुं; म. निसरणें.

णेसण [निवसन] ६. १०७. म. नेसण

नोक्खी [ नव+क्ख ] ३. १८४. अपूर्व गू. नोखुं; सि. हे.८. ४. ४२२.

पइट्ठ [ प्रविष्टा ] ३. १८७.

पइट्ठ [ प्रविष्ट ] १. १३. गू. पेठो.

पइरिक्क [ दे. ] १. १३०. विशाळ दे. ना. ६. ७१.

√पइस [ प्र+विश् ] १. ४. गू. पेसवुं

√पइसार [ कारकरूप प्र+विश् ] २. १. गू. पेसाडवुं; स.=गू. (पग.) पेसारो; हिं. पैसारना.

पइसर [ 'पइसार' कारकरूप परथी प्रकृतिरूप ] १. १२.

पईहर [ प्रतिगृह ] १. १३. पड-शाळ, दिवानखानुं (टि.)

पउत्थवइया [प्रोषितपतिका] १०. १३. नायिका जेनो पति पर-देश गयो छे ते.

पउम [ पद्म ] ४. ८९ स.=गू. पोमलो (अर्थान्तरे), पोयणी;

पउर [ प्रचुर ] ५. ३८. पुष्कळ प्रा.गू. पो'र पां'र.

पओलि [ प्रतोली ] ६. ७०. गू. पोळ; प्रा. गू. पोलि.

पक्ख [ पक्ष ] २. ७२. गू. पख, पाखुं.

√पक्खाल [प्र+क्षाल्] ३. १९१. गू. पखाळवुं;म. पखळणें.

√पंगुर [दे.] ६.३८.म. पांघरणें स.=म.पांघरूण.दे.ना.६.३९.टीका

पच्चक्ख [ प्रत्यक्ष ] १. २१७.

√पच्चीर [दे.] ४. ३०३. शान्त करवुं.

पज्जत्त [ पर्याप्त ] २. १७६. पूरेपूरुं

√पज्जल [ प्र+ज्वालय् ] ३. ५४. गू. पजाळवुं

√पच्छव [ प्र+स्पृश् दे. ] ५. २०३. जुओ छव्

√पंचेड [ दे.] ४. २७९. कचरवुं दे. ना. ६. १५. ' पच्चेड= 'मुशल.' तेना परथी क्रियापद. स.=सि. हे. ८. ४. १७१. पच्चड=क्षुद्

पट्टण [ पत्तन ] ६. ११७. नगर प्रा. गू. पाटण.

√पट्ठव [प्रस्थापय् ] २. १७. गू. पाठववुं; म. पाठविणें; सि.हे. ८. ४. १७.

पड [ पट ] २. ३७.

पडह [ पटह ] ३. १६२. गू. पडो

पडिम [ प्रतिमा ] ३. ८६. प्रतिमा

पडियार [ प्रत्याकार ] ७. ८०. म्यान. गू. 'हथीआरपडियार.'

पडिवक्ख [ प्रतिपक्ष ] ३. १.

पडिवत्त [ प्रतिपत्ति ] १. १०६. समाचार

√पदुक्क [ प्र+ढौक् ] १. १३३.

पण्ण [ पर्ण ] १. ६९. गू. म. हिं. पान

**पण्णारह** [ पंचदश ] ३. १०४. गू. पंदर; म. पंधरा, हिं. पंदरह.

**पण्णास** [ पञ्चाशत् ] ५. २५२ गू.हिं.पचास. पाली. पञ्ञास; पन्नास

**पंडिअ** [ पंडित ] ७. १८. गू. पंडयो

**पंडित्त** [ पंडित ] १२. ३.

**√पत्तिज्ज** [ प्रति+इ ] २. ८०. विश्वास करवो; गू. पतीज पडवी

**पत्तिज्जवण** [ प्रतायन ] १. ८०. वंचना

**पत्त** [ प्राप्त ] ७. १०. प्राप्त कर्युं गू . पो'तुं; प्रा.म. पातला.

**पत्थिव** [ पार्थिव ] ५. २००. राजा

**पद्धुर** [ दे. ] ३. १८. सरळ; गू. पाधरा. दे. ना. ६. १०. पद्धर=सरल.

**पंति** [ पङ्क्ति ] १. ३३. हार. गू. पांती; पांथी.

**पंथ** [ पथिन् ] ३ १६८. गू. पंथ.

**पब्भार** [ दे. ] १. २४. समूह दे. ना. ६. ६६.

**पम्हुट्ठ** [ दे. ] १०. १. विस्मृत थयुं.सि.हे.८. ४. ७५ पम्हुस=वि+स्मृ

**पयट्ट** [ प्रवृत्त ] २. ४६.

**पयडिअ** [ प्रकटित ] ६. ४९. प्रकट थयुं स.=गू . 'सवार पडयुं.'

**पयाण** [ प्रयाण ] १. १. प्रयाण. गू. पियाणुं

**परहुय** [ परभृत ] ५. २५३. कोयल

**पराइय** [ दे. ] २. १८. भेगा थया स.=( भवि ).

**√पराण** [ प्र+आ+नय] ६. ८३.

**परायउ** [ परकीय ] ७. ५१. गू. परायो.

**परिक्ख** [ परीक्षा ] २. २३. गू. परख.

**परिट्ठिय** [परिस्थित] २. ५३.

**परिमिय** [ परिवृत ] २. ६५. वींटळायला

**परिवाडि** [ परिपाटी ] ७. १३३. परंपरा

**√परिसक्क** [ परि+स्वस्क् ] ६. १२५. परिक्रमण करवुं

**√परीस** [ स्पृश् ] १३. २७. गू. परसवुं; सि.हे.८.४.१८२=फरिस

**परोप्परु** [ परस्पर ] ३. १५१.

**पवल** [प्रवर] ४. ७. मुख्य (मागधी)

**पलित्त** [ प्रदीप्त ] २. ११३. स. =गू . पलीतो.; म.हिं.पलिता

**पलुट्टिअ** [प्रतिनिवृत्य] १३. ३६. पलटी. म. पालटणें

**पल्लट्ट** [ प्रतिनिवृत्त ] ३. १८८. निवृत्त थयो; गू. पलटयो; म. पालटणें; सि. हे. ८.४. २८०.

**√पल्लाण** [ पर्याणय् ] ५. ७२. गू. पलाणवुं

**पव** [ प्रपा ] १. ९. गू. परब

**पसाय** [ प्रसाद ] ४. २७०. गू. पसाय, पसायतु.

**पसाहिअ** [ प्रसाधित ] ५. ७.

**√पसिलाव** [ प्रश्रावय् ] ४. ५.

**पसुरुहण** [ पशुरोधन ] ४. १७१.

**पह** [ प्रभा ] ४. १९१.

**पह** [ पथिन् ] ५. ११९.

**पहाय** [ प्रभात ] १. ३ गू. प्हो.

**√पहाव** [ प्र+भावय् ] २. १३१.

**पहाव** [ प्रभाव ] २. ११३.

**पहिल्ल** [ दे. प्रथिल्ल * ] २.७२. गू. पहेलुं

**पाइक्क** [ दे. ] ५. २४६. पदाति गू पायक सि हे ८ २ १३८.

**पाउस** [ प्रावृष् ] ६. १५९. म. पाउस.

**पाडल** [ दे. ] ५. २५३ हंस. दे ना. ६. ७६.

**पाडिहेर** [ प्रातिहार्य ] ४. २९०

**पाणिअ** [ पानीय ] १. ३०. गू. पाणी

**पाणियहारि** [ पानीयहारिणी ] ५. ११. गू. पणीआरी.

**पाय** [ पाद ] ३. १६६ गू. पाय.

**पायड** [ प्रकट ] १. ६८.

**पायस** [ प्रावृष् ? ] ४. २१.

**√पाव** [ प्र+आप् ] १०. ५०. गू. पावबुं ( कवितामां ) हिं. पाना; म. पावणें.

**पावज्ज** [ प्रव्रज्या ] ४. २२४.

**पास** [ पार्श्व ] १. १०५. गू. पासे.

**√पासेइज्ज** [ प्र+स्विद् ] ५. १३. गू. परसेवो थवो

**पाहाण** [ पाषाण ] ५. १३७. गू. प्हाणो.

**पाहुड** [ प्राभृत ] १. १०५. भेट

**पाहुणउ** [ प्राघूर्णक ] ३. ७४. गू. परोणो; म पाहुणो.

**पिउवण** [ पितृवन ] ५. ७१. श्मशान

**पिक्क** [ पक्व ] ६. ८२. म. पीक.

**√पिच्छ** [ प्र+ईक्ष ] ६. ७९.

**√पिट्ट** [ दे ] ७. १२२. गू पीटवुं

**पिड** [ दे. ] ३. १३७; ९. ८; °बिड १. ९.

**पियर** [ पितृ ] ४. ८९.

पियार [ प्रियकर ] ४. २४८. गू. प्यारो.

पिहिमि [ पृथिवी ] २. ५३.

√पील [ दे. पीड् ] १. ९. गू. पीलवुं; म.पिळणें. हिं.पीलना

पुण [पुनः] २. ८६. गू. पण.

पुत्त [ पुत्र ] २. ४८. गू. पूत.

पुत्तिचोज्जु [ दे. ] ९.९०.(टि.)

पुराइउ [ पुराकृत ] २. १७०.

पेअ [ प्रेत ] ५. ७८.

√पेक्ख [ प्र+ईक्ष् ] १. २१. गू. पेखवुं; म. पेकणें, पेखणें

पेम्म [ प्रेमन् ] ५. २३. गू. पेम

पेयाहिव [ प्रेताधिप ] ३. १६८ यमराज.

पेल्लण [ दे. ] ३. ७. पीडन गू. पीलण. म. पेल्लण स =दे. ना. ६.५७.

पेसण [ दे. ] ३. ५९. < सं. प्रेषण दे. ना. ६. ५७. स. =म. पेसणें

पेसणगारी [ दे. ] २. ३१ < सं. प्रेषणकारिणी; दूती; दे. ना. ६. ५९.

पोट्ट [ दे. ] १०. २३. पेट म. पोट दे.ना. ६.६०

पोट्टल [ दे. ] २. ३७. गू.पोटळुं; म. पोटळा

पोम [ पद्म ] १.७३. गू. पोमळो.

पयंधण [ प्रबंधन ] ५. १९.

फग्गुण [ फाल्गुन ] १. ५. गू. फागण.

√फंद [ स्पंद् ] ६. ५४. फरकवुं म =फांदणें. पाली. फन्दति

√फंस [ स्पृश् ] ६. ८०. गू. फांसवुं; म. फासणें; फांसणें. पाली फस्सति; सि. हे. ८.४. १८२.

फलअ [ फलक ] ६. ९८

फलिय [ फलित ] १. ४०. गू. फळी=' विकसित थई ' ना अर्थमां

फलिह [ स्फटिक ] १. ६०.पाली. फलिक.

फार [ स्फार ] ६. ७०. म. फार

फासुय [ स्पार्श्वक ] ६.३६. पाली. फासुक.

√फिट्ट [ दे ] ८. २५. गू. फीटवु; म. फिटणें; सि. हे. ८.४ १७७

फुड [ स्फुटं ] ७. ३८. स.=गू. फुड. स =सि.हे. ८.४.२३१

√फुर [ स्फुर् ] १. ५८ गू. फुरवुं, फोरवुं

√फुल्ल [ दे. ] १३. ५२. खीलवुं गू. फूलवुं; पाली. फुल्ल.

√फेड [ दे. ] ४. २८५. गू. फेडवुं; म. फेडणें. सि. हे. ८.४.१७७=फिड

√बइस [ उप+विश् ] १३.६ गू. बेसवुं; म. बसणें; हिं.बैसना.

√बइसार [ प्रे. रू. उप+विश् ] २. १४०.गू. बेसाडवुं.

√बज्झ [ कर्म. प्र. बन्ध् ] २. गू बाझवुं.सि.हे.८.४.२८७.

बप्प [ दे. ] ५. २९५. गू. बाप. दे.ना.६.८८.

बप्पुडउ [ दे. ] ८. ६. गू. बापडो.

बंभ [ ब्रह्मन् ] ७. ९६.

बलि [ बलि ] ७. १३५. बलि किज्जउ गू. बलिहारी.

बहुत्त [ प्रभूत ] ९. २५. प्रा. गू. बहुत, हिं. बहोत. म.बहुत

बम्हण [ ब्राह्मण ] १३. २४. गू. बामण.

बार [ द्वार ] ३. ४३. गू. बार; बारणुं.

बारस [ द्वादश ] ४. १५५ प्रा. गू. बारह गू. बार.

बारह [ द्वादश ] ३. ४. गू. बार.

बारहम [ द्वादश ] ३. ५१. गू. बारमो.

बावीसम [ द्वाविंशतितम ] ४. १६५ गू. बावीसमो

बाह [ बाष्प ] ५. ७४. गू.बाफ.

बाह [ बाहु ] ५. १०४. प्रा. गू. बांह; गू. बांय.

बाहत्तरि [ द्विसप्तति ] ३.१२७. गू बोतेर; हिं. बहात्तर

बाहिर [ बहिः ] २. ७६. गू बहार; बं. बाहिर; म. बाहेर.

बाहेरित [ बाह्यतः ] १२. ४. बहारथी.

बिण्णि [ द्वि ] २. ३६. गू. बन्ने

बीया [ द्वितीया ] २. ६. गू. बीज

बुज्झणअ [ बोधनक ] ३. १८. स. =गू. बूझनार. स =म बुझणें

√बुड्ड [ दे. ] १. ५०. गू बुडवुं म. बुडणें; हिं. बुडना. दे. ना. ६. ९४. टीका

बे [ द्वि ] १. २४. गू. बे; म. दो; हिं. दो.

बोक्क [ दे. ] ५. २७२. गर्जना. स.=सि. हे. ८. ४. ९८. बुक्कइ=गर्जति

√बोल्ल [ दे. ] २. १५८. गू. बोलवुं; म. बोलणें; हिं. बोलना; सि. हे. ८. ४. २.

**बोल्ल** [ दे. ] १. ७६ गू. बोल. म. गू. हिं. बोल; दे. ना. ६. ९०.=बोल

**भइय** [ भवित * ] ३. ९०. व्रज. भयो.

**भउहा** [ भ्रू ] १. ३२. गू भमर; हिं. भँवर.

**भग्ग** [ भग्न ] ६. १५ गू. भाग्युं

**भज्ज** [ भार्या ] ४. १५८. गू. भारजा.

**भट्टि** [ भष्टि ] ४. २४२. भ्रष्टतानी गर्ता. गू. हिं. भट्ठो. म भट्टी

**भड** [ भट ] २ ७. गू. भड.

**भडारा** [ भट्टारक ] २. २०६. महापुरुष.

**भडारिआ** [ भट्टारिका ] २. ५२.

**भत्तार** [ भर्तृ ] २. ७८. गू. भरथार.

**भंति** [ भ्रान्ति ] १. २६.

**भंतर** [ अभ्यन्तर ] २. १०१. गू. भीतर हिं. म. भितर.

**√भम** [ भ्रम् ] १. २२. गू. भमवुं म. भंवणें, भोंवणें

**भमर** [ भ्रमर ] १. ३३. गू. भमरो म. भंवर, भोंवर.

**भरड** [ दे. ] ६. ९६. विस्फारित.

**भरिअ** [ भृत ] १. ६२. गू. भर्युं

**भरिअलुउ** [ भृत ] १०. ३६. गू. भरेलो

**भल्ल** [ भद्र ] ७ १०६. गू. भलुं म. भला.

**भल्लारी** [ भद्रकारिणी ] ५. २६४.

**भवित्ति** [ भवित्री ] ३. १९२. देवी.

**भाइ** [ भ्रातृ ] ३. १४१. गू. भाइ म. भाऊ

**भायर** [ भ्रातृ ] ४. २६७. भाइ

**भारह** [ भा-रह ] ५. ९९. तेज ढांकनार

**भारह** [ भारत ] ५. ९९.

**√भाव** [ भावय् के भा ] ५.१८.म. भावणें; गू. भावबुं; हि भावना.

**भिच्च** [ भृत्य ] ४. २३१.

**√भिड** [ दे. ] ५ २७. युद्ध करवुं गू. भीडबुं; हि भीडना. म. भिडणें

**भुक्खालअ** [ बुभुक्षित ] ३. १८. गू भूखाळवा; म. भूकाळू

**भुंडिणो** [ दे. ] ६. ३०. भूंडण दे. ना. ६. १०६.

**भुंज** [ भुर्ज ? भोजक ] १. १९. आगळ जमनारा, एक जातनुं वृक्ष

**भुंभल** [ दे. ] १. २२. (टि) म. भांभळ. दे. ना. ६. ११० भंभल=मूर्ख.

भुल्ल [ दे. ] ७. १३४. भ्रान्त गू. भूलो पडेलो स.=म. भुलणें सि. हे. ८. ४. १७७.

भोलो [दे] १. २२. (टि.) म. भोळा

म-म [ मा ] २. १६८; १३. २८. प्रा. गू. म

√ मइल [ दे. ] १. १०. स =सं. गू. मेलुं करवुं, मेल; म हिं. मैल, मैला. दे. ना. ६. १४१.

मइलउ [ दे. ] ७. ७८. गू. मेलुं; पा. मा.

मउड [ मुकुट ] ६. १०३. मुकुट. गू. मांड

मउर [ मयूर ] ६. ३२. गू. मोर

मउलिय [ मुकुलित ] ६. ४०. स.=गू. मोल. पा. मा.

√ मग्ग [ मार्ग् ] ३. १२९ गू. मागवुं; हि. मगना

मग्ग [ मार्ग ] ४. २९३. गू. माग.

मग्ग [ दे. ] १०. ३९. पाछळ. दे. ना. ६. १११. म. मग

मंगुल [ दे. ] १०. ५. असुंदर दे. ना. ६. १०५ पा. मा.

मच्छर [ मत्सर ] २. १९५. गू. मच्छर.

मच्छुड्ड [ मंक्षु ] ३. ८१. जलदी

मज्ज [ मद्य ] ४. १६८.

मज्जाय [ मर्याद ] ५. २१. गू. मरजाद.

मज्झ [ मध्य ] १. ३४. गू. माझ; म. माझि; हिं. मज्झ, मझ, मझला.

मंछुड्ड [ मंक्षु ] ६. १९. जलदी

मट्टी [ मृत्तिका ] १३. १. माटी; हिं. मट्टी.

मडप्फर [ दे. ] १. ६. अभिमान. दे. ना. ६. १२०. पा. मा.

मडय [ मृतक ] ३. ३६. गू. मडुं म. मड; पा. मा.

मडयाजाण [ मृतकयान ] ३. १७९. ठाठडो

मढ [ मठ ] ६. ७७. गू. मढी

मणेजर [ मनसि+ज+र स्वार्थे ] १. ३५.

√ मण्ण [ मन् ] १. ९१. भोगववुं गू. माणवुं.

मंठ [ दे. ] ३. १२७ दे ना. ६. १११. टीका.

मंडल [ दे. ] १०. ९. श्वान. दे. ना. ६. ११४. पा मा.

मंडव [ मंडप ] १. ९. गू मांडवो.

मंती [ मन्ता ] १. २१.

मयअच्छी [ मृगाक्षी ] ४. १२४.

मयगल [ मदकल ] ५. ११७. हाथी गू मेगल पा. मा.

मयरंक [ मकरांक ] ४ ४७. प्रद्युम्न

मयरट्ट [ दे. मदरक्षा ] ६ ११९ वेश्या.

मयरद्धअ [मकरध्वज] ५. १४३.

√मर [मृ] १. ५. गू मरवुं; हिं. मरना; म मरणें

मरट्ट [ दे. ] ४. ५५. गर्व दे. ६. १२०. गू. मरड. पा. मा.

√मरुमार [ मृ नुं भारप्रदर्शक द्वित्व ] ३. ७४; ३. १६९.

√मरुसिज्ज [ मृष् ] २. १६०. क्षमा करवी

√मल [ मृद् ] ३. १००; ५. १८८; सि. हे. ८. ४. १२६.

मसाण [ श्मशान ] ३. १०० गू. मसाण पा. मा.

√मह [ दे. ] ४. २९७. कहेवुं सि. हे. ८. ४. १३२=कांक्ष्

मह [ मख ] ५. २०५. यज्ञ.

माइय [ मात ] २. ८. गू. मायो

√माण [ मानय् ] १. ८५. गू. माणवुं

माणुस [ मनुष्य ] २. ५९. गू. माणस. म. माणुस.

माम [ दे. ] ५. १५१. गू. मामो. दे. ना. ६. ११२

माय [ मातृ ] १. ५४. गू. माय, मा

माहप्प [ माहात्म्य ] ४. ११७. गू. मोटप.

मिहुण [ मिथुन ] १. ८. स्त्री-पुरुषनुं युगल. म. मेहूण

मुअ [ मृत ] २ ११४. गू. मुओ.

मुक्क [ मुक्त ] १. ८५. स.=गू. मूकवुं

√मुक्कल [ दे. ] ३. १८५. गू. मोकळुं करवुं; म. मोकळा; दे. ना. ६. १४७; पा. मा.

मुट्ठि [ मुष्टि ] ५. २८७. गू. मूठी

√मुण [ दे ] ४. २२३. सि. हे. ८. ४. ७=ज्ञा.

मुद्धत्त [ मुग्धत्व ] ५. १६५.

√मुसुमूर [ दे. ] ४. १२३. मसळी नाखवुं सि. हे. ८. ४. १०६.

मुह [ मुख ] १. १०. गू. म्हों; हि. मुँह.

मेत्ति [ मैत्री ] १०. ३७.

मेलावअ [ मेलापक ४. २५६. गू. मेळावडो

√मेल्ल, मिल्ल दे. ] १.२; ६. गू. मेलवुं; हिं. मेलना. सि.हे ८. ४. ९१.

मेह [ मेघ ] २. ६२. गू. मेह

मेहाल [ मेघकाल ] ११. ४४.

मेहुणअ [ दे. ] ३. ७४. साळो म. मेहूणा दे.ना.६.१४८.

मोक्कलउ [ मुक्त+ल स्वार्थे ] ८. १२. गू. मोकळो; जुओ मुक्कल

√मोड [ दे. ] ४. २८०. म. मोडणें; गू. मोडवुं

मोत्तिय [ मौक्तिक ] १. १२१. गू. म. हिं मोती.

मोर [ मयूर ] ११. ५१. गू. म. हिं. मोर.

√याण [ ज्ञा ] ५. १४२.

√रक्ख [ रक्ष् ] २. ५०. गू. राखवुं

रक्खस [ राक्षस ] २. ५६. प्रा. गू. राखस

√रंखोल [ दे ] १. २९. सि. हे ८ ४. ४८ =दोल्

√रंग [ रञ्ज् ] १. ३०. गू. रंगवुं

रज्ज [ राज्य ] २. ३०. गू. राज

रण [ वर्ण ] १. ३०. रंग.

रणउद्ध [ रणयुध ] ४. ३९.

रण्ण [ अरण्य ] ५. १८४ गू. म. हिं. रान.

रत्त [ रक्त ] १. ५१. गू. रातुं

रत्ति [ रात्रि ] ३. १७४. गू. रात

रयण [ रत्न ] २. २७.

रयणि [ रजनी ] ३. ८४. गू. रेणी, रेण.

रवण्ण [ दे. रमण्य * ] १. ३. सुदर स.=गू. रामणदीवो; (टि.)

रसोइ [ रसवती ] ६. १२१. गू. रसोइ

रहस [ हर्ष ] २. ८.

राइत्तण [ राजत्व ] ५. २०३

राउल [ राजकुल ] ३. १९६. गू. राओल; म. राऊळ.

राणिय [ राज्ञी ] ३. ३३. गू. राणी.

राय [ राजन् ] २. ३०. गू. राय.

रिक्ख [ऋक्ष] ५.२१७.नक्षत्र.

रिच्छ [ ऋक्ष ] २. ५८. गू. रिछ; पा. मा.

रिंछोलि [ दे. ] १. ३८. हरोळ. दे. ना. ७. ७; पा मा.

रिद्धि [ ऋद्धि ] १. ६. गू. हिं. रिद्धि.

रिय [ ऋच् ] ५. २२३.

रीण [ रीण ] ५. १०१. थाकेलो

रुक्ख [ वृक्ष ] ३. १०९. गू. रुखडु; मं. रुख (कोंकणी.)

रुट्ठ [ रुष्ट ] ३. १५३. गू रूठवुं.

रुण्ण [ रुदित ] ५. ८५.

रुंद [ दे ] ७. ७१. विशाळ. म. रुंद; दे. ना. ७. १४. पा. मा.

√रुव [ रुद् ] २. ५६. गू. रोवुं सि. हे. ८. ४. २२६=रुव्व

√रुहवुह [ दे. ] ५. ११५.

√रुहुरुह [ दे. ] ६ ५२.

√रेल्ल [ दे. ] १. ९२. गू. रेलवुं

√रेह [ दे. ] ४. २८९. शोभवुं सि. हे. ८. ४.१००=राज्

लइ [ दे. ] १. ९. < सं. लात्वा, सामान्य निपात गू. ले.

लइय [ लातव्य ] २. ६६. लेवा योग्य

लक्कड [दे.] २. ८१. गू. लाकडुं. म. हिं. लकडा. दे ना. ७. १९. लक्कुड.

लक्खि [ लक्ष्मी ] ५. ११९. गू. लक्ष्मी

लच्छि [ लक्ष्मी ] ३. ४७. पा. मा.

लंगदि [ दे. रंगति * ] ४. २९. क्रीडा (?)

लडह [ लटभ ] ३. २०. गू. लाडो दे. ना. ७. १७.

लद्ध [ लब्ध ] १. ९६. गू. लाधवुं

√लह [लभ्] ७. ५९. गू. लहेवुं

√लहस [दे.] ५. १८. सि. हे. ८. ४. १९७=संस्

लाइअ [ लायित ] १. ३५. गू. लाग्यो.

√लाव [ प्रेरकरूप ला ] ३.५३. गू. लाववुं

लावण्ण [ लावण्य ] १ ११८.

लाह [ लाभ ] ६. २. गू लहावो

लिह [ लेखा ] २. ९४.

लुक्क [ लुप्त ] ४. २७८. स.=सि. हे. ८. ४. ५५=ली

लुंचोड [ दे. ] ७. १२३. खेंचवुं

√लुंच [ लुंच् ] २. ५९. लूंटवुं म लुंचणें

√लुह [ दे ] २. ९४. गू. लोहवुं, सि. हे ८. ४. १०५. मृज्

√ले [ ला ] १. २. गू. लेवुं; हिं लेना; म. लेणें

लेह [ लेखा ] २. ७२.

√लोट्ट [ लुट् ] २. ३८. गू. लोटवुं. सि हे ८. ४. २३०

√लोट्ठ [ लुठ् ] १. १३३ गू. लोथवुं.

लोण [ लवण ] १२. ३७. गू. लूण; म. लोण.

लोलि [ दे. ] २. ९२. गू लोला.

वइवस [ विवस्वत् ] ३. १६५. यमराज.

वउल्ल [ बर्तुल ] १. ६८.

वंक [ वक्र ] ५. २८६. गू. वांकुं

°वक्ख [ पक्ष ] ४. २८४.

**वक्खार** [ वक्षस्कार ] ४. ११८. म. म. हिं. वखार.

**°वच्छ** [ वृक्ष ] १. १२०.

**वच्छ** [ वक्षस् ] २. ११.

**√वज्ज** [ कर्म प्र. वद् ] २. ४. वाजवुं, वागवुं

**वज्ज** [ वाद्य ] ५. १७१. गू. वाजुं.

**√वज्जर** [ दे. ] २. २०५. कहेवुं सि. हे. ८. ४. २.

**√वट्ट** [ वृत् ] ३. ९४. म. वाटणें

**वट्टि** [ वर्ति ] २. ८८. गू. वाट; म. वात

**°वडाय** [ पताका ] २. ८९.

**वड्ड** [ दे. ] ५. २७१. गू. वडो; दे. ना. ७. २९.

**√वड्ढ** [ वृध् ] १. ४३. हिं. बढना. म. वाढणें

**वढ** [ दे. ] ७. ८०. मूर्ख

**वणप्फइ** [ वनस्पति ] १. ६.

**वत्ता** [ वार्ता ] ५. ६७. गू. वात

**वत्तिअ** [ वृत्त ] २. १०२.

**वंद** [ वृन्द ] १. १८.

**वमाल** [ दे. ] ६. ४६. दे. ना. ६. ९०. पा. मा.

**वम्म** [ मर्मन् ] १. २०.; ५. १४.

**वम्मह** [ दे. ] ५. १४. <सं. मन्मथ. पा. मा.

**वम्मीसर** [ दे. ] ४. ३. कामदेव; दे. ना. ७. ४१.

**वयण** [ वचन ] २. ९३. गू. वेण

**वरइत्त** [ वरयितृ ] ६. १०५. दे. ना. ७. ४४.

**वरि** [ वरम् ] ३. १०५.

**वरिस** [ वर्ष् ] २. ६२. गू. वरसवुं

**वरिस** [ वर्ष ] ३. ५. गू. वरस.

**√वलग्ग** [ दे ] २. ८६ <अवलग्न गू. वळगवु म. वळगणें

**वलग्ग** [ दे. ] १. ७५.

**वलुर** [ दे. ] ३. ८७. दे. ना. ७. ८६. पा. मा.

**ववगय** [ व्यपगत ] ३. ३४.

**वहु** [ वधू ] १. ४६ गू. वहु

**वाणरमालिय** [ वन्दनमालिका ] १. १८. बारणे लटकाववामां आवतां तोरण. प्रा. गू. वंदुरवाल (टि)

**वाय** [ वाचा ] २. ५५.

**√वाय** [ वाद् ] १. १०२. गू. 'स्वर वाय छे.'

**°वार** [ द्वार ] १. ३०. गू. बार; म. दार.

**वावड** [ व्यापृत ] १०. २२. गू. वावड.

**वावि** [ वापी ] ५. ४५. गू. वाव.

**वास** [ वर्ष ] २. १४२.

**वास** [ व्यास ] ५. १७७. पहोळाई

**वि** [ अपि ] २. ३५.

**विउव्वण** [ विकुर्वण ] ५. २१९. चमत्कार

**विउज्झाविअ** [ विबोधित ] ३. ८८.

**विउस** [ विद्वस् ] ५. १६७. पा. मा.

**विग** [ वृक ] २. ५८.

**√विग्गोव** [ वि+गुप् ] ३. ८०. गू. वगोवबुं

**विच्छड्ड** [ दे. ] २. १०५. समूह. दे. ना. ७. ३२.

**विच्छंड** [ दे. ] २. १३५. समूह.

**विच्छोअ** [ दे. ] ४. १७४. वियोग गू. विछोह. दे. ना. ७. ६२.

**√बिज्ज** [ वीज् ] ५. १०२. गू. वींजबुं

**विज्ज** [ विद्युत् ] १. ६५. गू. वीज.

**विज्जुल** [ विद्युत्+ल ] २. १२४. गू. वीजली.

**विट्ठु** [ विष्णु ] ५. १८२. म. विठु, विठोबा गू. विट्ठल.

**°विड** [ दे. ] १. ९. जथो.

**विड** [ विट ] ३. ८०. विषयी पुरुष

**विणट्ठ** [ विनष्ट ] ७. १३८. प्रा. गू. विणठुं. गू. वंठयुं

**वितट्ट** [ विततं ] ६. ४०. विस्तर्यो.

**√विद्ध** [ विध् ] १. २०. गू. वींधबुं

**विद्धत्त** [ विद्वत्व ] ५. २७८.

**√विन्नव** [ विज्ञापय् ] २.३६. गू. वीनववुं

**√विप्फुर** [ वि+स्फुर् ] २. ९५.

**√विब्भाड** [ दे. ] १. ६. <सं. विभ्रष्ट प्रा. गू. विभाडबुं

**विंभिअ** [ विस्मित ] ६. ६.

**वियड्ढ** [ विदग्ध ] १. ९१.

**वियप्प** [ विकल्प ] २. १५८.

**विरुआरी** [ विरूपकारिणी ] २. ११०.

**√विरोल** [ दे. ] ७. ११२. गू. वलोववुं सि. हे. ८.४.१२१.

**विलक्ख** [ विलक्ष ] ६. १३६. गू. वलखुं

**विलय** [ दे. ] ६. १०१. वनिता.

**विवरेरउ** [ विपरीत+इरउ स्वार्थे ] २. १२. उलटुं (भवि.)

**विवावड** [ दे. ] १. ९४. <सं. विव्यापृत, व्याकुल स.=गू. बावरो

**विसट्ट** [ दे. ] २. ४६. विकसेलुं; पा.मा.पाली. विसट=सं.विस्तृत स.=सि.हे. ८.४.१७६=दलू

**विसुज्झ** [ विशुद्ध ] २. ९१. स. =गू. सूझवुं; पारसी. गू.सोजु.

**√विसूर** [ दे. ] ३. ८१. खेद करवो गू. सोरवुं सि. हे.८. ४. १३२.=खिद्

**विस्सत्थ** [ विश्वस्त ] १. ९९.

**विहडप्फड** [ दे. ध्व. शब्द ] १. ९३. गू. हडफड.

**विहाणअ** [ विभानक ] १. १. गू. व्हाणुं; दे.ना,७.९०.

**विहुवार** [ व्यवहारिन् ] ५. ३४. गू. वहेवारीओ.

**विहूण** [ विहीन ] १. १३१. गू. विहोणुं.

**√वीसम** [ वि+श्रम् ] ६. ३४. वीसमवुं, विसामो लेवो

**वीसढ** [ विस्निग्ध ] ५. ५५

**√वीसार** [ वि+स्मृ ] ५. २५. गू. वीसरवुं.म. विसरणें; हिं. विसरना; पाली. विस्सरति.

**वुड्ढत्त** [ वृद्धत्व ] १. १३१. गू. बुड्ढापो.

**वुत्त** [ उक्त ] २. ५४.पाली. वुत्त

**√वे** [ दे. ] २. १९४. जोवुं

**√वेढ** [ वेष्ट् ] ३. १७०. म. वेढणें; पाली. वेठेति सि. हे. ८.४.२२१.

**वेल्लि** [ वल्ली ] २. ८८. गू. म. हिं. वेल.

**वेराउ** [ वैराग्य ] ४. ३११.

**√वेव** [ वेप् ] ५. २५७. कंपवुं

**वोहित्थ** [ दे. ] ६. ४. वहाण. गू. बोयुं; हिं. बोहित, बोहित.

**सअ** [ शत ] २. ६२. गू. सो.

**सइत्तण** [ सतीत्व ] २. १०९.

**√सक्क** [ शक् ] २. १३३. गू. सकवुं

**सग्गवच्छ** [ स्वर्गवृक्ष ] १. १२० कल्पवृक्ष.

**संखोह** [ संक्षोभ ] ५. ६.

**संगरिय** [ दे. ] ३. ३५. शींगो; गू. सांगर–री.

**सच्च** [ सत्य ] १. १२६. गू. साचुं

**सणेह** [ स्नेह ] ३. १३४. गू. स्नेह.

**संझ** [ संध्या ] ६. ३८. गू. सांज, संझा

**सण्णिय** [ संज्ञित ] ३. ७६.

**सणिउं** [ शनैः ] ६. ११५.

**संठिय** [ संस्थित ] २. १०८.

**संडस्सय** [ संदंशक ] ७. १२३. गू. सांडसो; हिं. संडसा;म. सांडस.

**सत्त** [ सप्त ] ५. ५८. गू. सात.

**सत्थ** [ सार्थ ] २. १४२. गू. साथ;

**सत्थ** [ शस्त्र ] ५. १५२.

**सत्थ** [ शास्त्र ] ४. ८४.

**सद्द** [ शब्द ] २. ३. गू. साद

**सद्दूल** [ शार्दूल ] ५. १२४. गू. सादूलो

**संत** सत् ] २ ९. छतां सारो माणस. गू. संत.

**√संदाण** [ दे. ] ५. १४२. नियन्त्रित करवुं स =सि हे. ८ ४ ६७=कृ

**√सम** [ सम्+आ+इ ] ७. ८० गू. समावुं

**समत्थिअ** [ समर्थित ] २. १०३.

**समसाण** [ श्मशान ] ३. ३७. गू. समसाण.

**√समाण** [सम्+मानय] २ १७२. मानथी भोगववुं सि हे. ८ ४ ११०=भुज़

**समाण** [सम्+आप्] ५.२५२.सि. हे.८.४.१४२

**समाण** [ समान ] ३. १९४. साथे.

**समालहण** [ समालभन ] ३ ६७ अलंकार इ०

**समील** [ सम+इल ] २. ४३.

**समु** [ सम्+उच्च ] २. १३९. ग. उंचं

**समुट्ठिय** [ समुत्थित ] १. २७.

**समुब्भिय** [ समूर्ध्वित ] २. ८९

**√समोड** [ दे. ] २. २; २. ७८.; गोठववुं; >सं.सम्+आ+वृत्

**संफास** [ संस्पर्श ] ४. ६२.

**संम** [ सम्यक्त्व ] २. २७.

**√सम्मा** [ सम्+मा ] ४. ११८. गू. समावुं म समावर्णे; हिं समाना

**संवारिअ** [ समारचित ] ६. १५. (टि.)

**सयल** [ सकल ] १ २८. कलाथी युक्त, गोळ.

**√सर** [स्मृ] ६. १२.

**सरवर** [ सरोवर ] १ ४५. गू. सरवर

**सरिस** [ सदृश ] १ ४४. गू. सरसुं=साथे

**सलवण** [ सलावण्य ] ५. ५.

**सलोणी** [ सलावण्या ] १. २२. गू. सलुणी हिं. सलूना

**√सल्ल** [ नामक्रियापद शल्याय् ] ५. १४ गू. सालवुं

**सव्व** [ श्रव्य ] १. ११६.

**सवडंमुह** [ दे. ] ३. १८०.संमुख दे. ना.८.२१.

**सवण** [ श्रमण ] ५. २०८

**सवत्ति** [ सपत्नी ] ६. ४२. म. सवत

**सवाणिअ** [ स+वर्ण+इक ] १. ३०
**सस** [ स्वस्र ] ३. ६६.
**ससुरय** [ श्वसुरक ] ६. २२. गू. सासरो; हिं. ससुर;म. सासरा.
**√सह** [ दे. ] १. १३५. शोभवुं सि. हे. ८. ४.१००=राज्
**सह** [ सभा ] ४. १३५.
**सहाव** [ स्वभाव ] २. ८७.
**सहसत्ति** [ सहसा+इति ] १. ४३.
**सहास** [ सहास ] ३. १४३.
**सहु** [ सह ] १. ४२.
**√साड** [ शात् ] १.६. विनाशवुं स.=गू. सडवुं; हिं. सडना
**साण** [ श्वन् ] २. ८३; ५. ५५.
**साण** [ संज्ञा ] ५. ५५. गू. सान.
**साण** [ श्रवण ] ४. २२६.
**सामण्ण** [ सामान्य ] ३. ७८.
**सामिसाल** [ स्वामिश्रेष्ठ ] ५. १४८. प्रा. गू. सामिसाल.
**सायर** [ सागर ] २. २८. गू. सायर
**सार** [ सार ] १. १०७. समाचार
**सार** [ दे. ] ३. १. दलन करनार. पा. स. म.
**सावय** [ श्वापद ] ४.२६५.
**सावय** [ श्रावक ] ४. २६५.
**सालण** [ स्मरणक ] ५. ३२. स्मरण.
**√साह** [ दे. ] ४. २९९. सि हे. ८.४.२=कथ्
**साहार** [ सहकार ] १. १७.
**साहुक्कार** [ साधुकार ] ५. ३४. शुभशब्द बोलवा ते.
**साहुलउ** [ दे. ] १. ध्वजानुं वस्त्र दे.ना.८ ५२. साहुली=वस्त्र, कपडुं
**साहूकार** [ साधुकार ] २. १४०. जयजयकार.
**√सिक्ख** [ शिक्ष् ] ३. १९०. गू .शीखवुं,स.=शीख. शीखामण.म. शिखविणे.
**सिग्घु** [ शीघ्रम् ] ४. २७१
**सिंग** [ शृङ्ग ] ३. १५१.
**सिर** [ शिरस् ] १. ११. गू. शिर; हिं. सिर
**सिरि** [ श्री ] १. १३. शोभा, लक्ष्मी
**सिरिखंड** [ श्रीखंड ] २. १०५. एक प्रकारनुं चंदन
**सिविण** [ स्वप्न ] ५. ३३.
**सिसिर** [ दे. ] १. ८८. दहिं दे.ना.८.३१
**सिहि** [ शिखिन् ] १. १६. मोर
**सिहि** [शिखिन् ] २.२५. अग्न.
**सिहिण** [ दे. ] ३. ११३. स्तन दे. ना. ८.३१.
**सीयल** [ शीतल ] १.३६.गू.शीळुं
**√सीस**[ दे ]२.१८९. सि.हे.८.४.२. =कथ्
**सीह** [ सिंह ] ३.६९.प्रा.गू.सीह
**सुक्क** [ शुष्क ] ५. १०५. गू.सूकुं
**√सुण** [ श्रु ] १. १०७. गू. सुणवुं; हिं. सुनना. सि. हे. ८. ४. २४१.
**सुणहुल** [ श्वानिक ] ४. २२९. कुतराना जेवुं

सुण्णउ [शून्यं] ६. ८५. गू. सूनुं
सुण्ह [स्नुषा] ४. २१८. म. सून.
सुत्त [सुप्त] १. १००. गू. सूतुं
सुंदिर [सौन्दर्य] ३. १२३.
√सुव्व [कर्म. प्र. √श्रु] ४. २५७. सि. हे. ८.४. २४३.
सुमर [स्मृ] ४. ३१५. गू. समरवुं. हिं. सुमरना. सि.हे.८.४.७४.
√सुम्म [कर्म.प्र. √श्रु] ५.२६२.
सुह-अच्छण [सुखासन] २. ५३. पालखी.
सुहअ [सुभग] ३. १२६.
सुहाव [क्रि. <सुख] ६. ७.
सुहि [सुहृद्] ५. २२.
सूयार [सूपकार] ३. ४५.
सूइ [सूचि] १.५२. गू.सोय.म. सुई
सूहव [सुभग] ५. १५.
सेज्जा [शय्या] ४. २५. गू. सेज, सज्जा. म. शेज.
सेडिय [सेटिका] १४. २. खडी. म. शेडी.
सेहर [शेखर] १. ११. हि. सेहरा.
सोत्त [श्रोत्र] ५. २०९.
सोत्तिअ [श्रोत्रिय] ५. २०५.
सोमाल [दे. सुकुमार] ६. ९७. गू. सूंवाळुं दे.ना.८.४४.
√सोव [स्वप्] ५. ३३. हिं. सोना
√सोह [शुभ्] ५.१००.गू.सोहवुं
सोहाल [शोभा+अल] ५. १५. स.=गू. सोहालुं
सोहिल्ल [शोभा+इल्ल] १. ४७. प्रा. गू. सोहेलो

√हक्कार [दे.] ३. १४९. गू. हकारवुं. म. हाकारणें
हक्कार [दे] २.१७.गू हकारो,हाक.
हक्कार [दे.] ४. २४३. बोलावनार, हकारनार
हट्ट [दे.] ५. ८. गू. हाट
हड्ड [अस्थिन्] ५. २०६. गू. म. हिं. हाड. दे. ना. ८.५९.
हत्थ [हस्त] ५. २८. गू. हिं. हाथ. म. हात
√हरिस [हृष्] १.४१.गू.हरखवुं
हलबोल [दे.] ५.१२६. कोलाहल, स.=म. हळबला. दे.ना.८. ६४.
हलि [हरि (मा.) हलिन्] ४. ८.
√हव [भू] ७.३.सि.हे.८.४.६०.
हिअवअ [हृदयक] २. १०२.
हिट्ठा [अधस्तात्] ४. १०३.पाली हेट्ठा; गू. हेठुं; म. हेट;हिं. हेटा.
हियय [हृदय] २. ५६. गू. हइडुं
हियवड [हृदय+ड] ७. ७९.
हिरणच्छि [हरिणाक्षी] ७.७९
√हिंड [हिण्ड] २. १७४. गू. हींडवुं
°हीर [धीर] ३. ९३.
हु [खलु] ४. २२६.
√हुण [हु] ७. ४. होमवुं सि. हे. ८.४. २४१.
√हो [भू] २. ७४. गू. होवुं. म. होणें; हिं. होना; पाली. होति. सि.हे.८.४.६०.

# संकेतसूचि

G.L.L.—Gujarati Language and Literature by Prof. N.B. Divatia, Vol. I, 1920 A.D. & Vol. II, 1932 A.D., University of Bombay, Bombay.

G.P.—Grammatik der Prakrit-sprachen, by Prof. R. Pischel (Encyclopaedia of Indo-Aryan Research) 1900 A.D. Strassburg.

J.A.O.S.—Journal of American Oriental Society.

J.R.A.S.—Journal of Royal Asiatic Society.

M K.A.P. or Materialien—Materialien zur Kenntnis des Apabhrams'a by Prof. R. Pischel 1902 A.D. Berlin.

O.D.B.L. or O.D.B.—The Origin and the Development of Bengali Language Part I, by Dr. Sunitikumar Chatterji 1928 A.D. Calcutta University, Calcutta.

Shahidulla—Le Chants de Mystiques de Kanha et de Saraha, Ed. M. Shahidulla 1928 A D. Paris.

अ.का.त्र.—अपभ्रंशकाव्यत्रयी (जिनदत्तसूरि) सं. पं. लालचंद गांधी, (G.O.S. XXXVII) 1927 A.D. Oriental Institute, Baroda.

अ.पा.—अपभ्रंशपाठावली.

का.मी.—काव्यमीमांसा (राजशेखर) Ed. C. D. Dalal, (G. O.S.I.) 1920 A.D., Oriental Institute, Baroda.

छं.शा.—छंदोऽनुशासन (हेमचंद्र) प्रकाशक, शेठ देवकरण मुलचंद, इ. स. १९१२, मुंबाई.

तत्वार्थ०—तत्वार्थाधिगमसूत्र (उमास्वाति) आर्हतप्रभाकरग्रन्थमाला, मयूख, २. वीरसंवत् २४५३, पूना.

दे.ना. अथवा दे.ना.मा.—देशीनाममाला ( हेमचंद्र ) Part I, Ed. Murlydhar Banerjee, 1931 A.D. Calcutta University, Calcutta.

प्रा.गु.का.—प्राचीनगुर्जरकाव्यसंग्रह Ed. C. D. Dalal, (G.O.S. XIII) 1920 A.D. Oriental Institute, Baroda.

प्रा.पिं.—प्राकृतपैंगलम् Ed. Chandra Mohan Ghosha, 1902 A.D., Bibliotheca Indica Series, Calcutta.

प्रा.स.—प्राकृतसर्वस्व ( मार्कण्डेय ) Ed. S. P. V, Bhattanath Swami, 1927, A.D. Grantha Pradarshini Series No. 4, Part I, Vizagapattam.

पा.स.म.—पाइअसद्दमहण्णवो सं.पं.हरगोविन्ददास इ. स.१९२८,कलकत्ता.

भ.क. अथवा भवि.—भविसयत्तकहा Ed. C. D. Dalal, & Dr. P. D. Gune, ( G. O. S. XX ) 1923 A.D. Oriental Institute, Baroda.

सि.हे.—सिद्धहेमचन्द्र [ प्राकृतव्याकरण ] (हेमचन्द्र ) Ed. Dr. P. L. Vaidya, (आर्हतप्रभाकरग्रन्थमाला,मयूख ६.), Poona.

वि प.—विराटपर्व ( Kumbakonam Edition. )

ह.पु.—हरिवंशपुराण ( जिनसेन ),

आ उपरांत शब्दकोशना आदिना संकेतो जे वपरायला छे, ते ते प्रमाणे समग्रे समजी लेवा. बीजा संकेतो सहेलाईथी समजाय एवा होई अत्रे नोंध्या नथी.

# । शुद्धिपत्रम् ।

अस्य शुद्धिपत्रस्य वाचने निम्नलिखिताः सूचनाः अवधेयाः ।

(१) प्रस्तुतोद्धरणेष्वेकः अशुद्धपाठः शुद्धपाठश्चेति क्रमो निम्नालेखित-शुद्धिवाचनेऽवसेयः । (२) [ ] मूलवाचनाशुद्ध्यर्थं कल्पितः पाठः । (३) + इति अवशिष्टोद्धारचिह्नम् । (४) मूलपाठशुद्धिः स्थूलाक्षरैः संस्कृतछायाशुद्धिश्च सूक्ष्माक्षरैर्निर्दिष्टा । (५) स्पष्टशुद्ध्यर्थज्ञानाय टिप्पणी द्रष्टव्यैव ।

## ॥ १ ॥

२० । विरहेन विध्यन् मन्मथगजपतौ । विरहिणः विध्यन् गतपतिकामर्मसु । २१ । **ईषु । ईसु** । ४९ । युध्यत स्नात । युध्यत रमध्वं स्नात । ६३ । कर्बूरितं । करंबितं । ६५ । बलाहकैः । बलाकाभिः । ६६ । करोति । कुर्वती ६८ । **पायड । पाडल** । ८० । प्रतायनायासेन । प्रत्यायनायासेन । ८३ । प्रविष्टः । प्राप्तः । ८६ । विरच्य । विरचय्य । ८७ । आरोह्य । आरोप्य । ८८ । अभिसिंच्य । अभिषिंच्य । ९२ । धावत् । धावयत् । १०७ । शृण्वते । शृण्वते । ११२ । परिणामिताः । परिणामितौ । ११८ । **मुयरहु । मुरयहु** । प्रेक्षनक । प्रेक्षणक । सुमनोहरम् । मनोहरम् । ११९ । **करकमल । करकमकमल** । १२१ । **सद्दंण । [संदण]** । १२३ । **समुहाभंगउ । [भमुहाभंगउ ]** । १२९ । कृत्रिमानि । कृत्रिमाणि । १३० । सज्जनचितानि । सज्जनचित्तानि । १३२ । उरुचरण । ऊरुकरचरण । १३३ । स्तब्धा...लुठयता । स्तम्भित्वा...लोठयत् ।

## ॥ २ ॥

८ । मायितः । मातः । १७ । आकरणं...अशेषानां । आकारणं... अशेषाणां । ४३ । तुल । तुला । ४४ । एतद् निश्रुत्य । तद् निश्रुत्य । ४७ । मायिताः । माताः । ५१ । **अम्ह इ । अम्हइ** । वयं अपि अयाता । वयं आयाता । ५२ । पुप्प । पुष्प । ६२ । आदर्श्यते । विध्याप्यते । ६५ । परिमिता । परिवृता । ६६ । अस्तमनि । अस्तमनं । ७५ । दापित । दर्शित । ८१ । काष्टं । काष्ठं । ९३ । श्रुत्वा उच्चत्तरः । श्रुत्वा जनः हृष्टः उच्चतरः । १०२ । कलुशं । कलुषं । १०६ । काञ्चनमञ्चः रचितः चतुःपार्श्वैः । काञ्चनमञ्चाः रचिताः चतुःपार्श्वेषु । ११५ । + **धाहाविउ भामंडलजणयहिं धाहाविउ लवणंकुसतणयहिं** । १२० । नागरिकेन । नागरिकेण । १२९ । द्रोहिनी । द्रोहिणी । १४१ । लक्ष्मी । लक्ष्मीः । १४५ । दीर्घायुः...पार्श्व । दीर्घायुः...पार्श्व १४६ । ते । तौ । १४८ । सविभीषणौ कुमुदांगदौ । सविभीषणाः कुमुदांगांगदाः । १६३ । हद । हूद । १६६ । शचिः । शची । १६७ ।

वैदेह्याः । वैदेह्या । १७९ । रोघव । राघव । १९६ । देवहं "। देवहं ।१९७। भिच्चिहिं । भिच्चिहिं "। २१० । अवराणि । अपराणि ॥

## ॥ ३ ॥

१० । आयान्ति । एतानि । २३ । करे । करयोः । ५५। स्तनतले । स्तनतटे । ६७ । समालभनं । समालंभनं । ७४ । मरु मारमि । मरुमारमि । स्त्रिये मारयामि। मारयाम्येव । ७८ । किमपि । किम्। ११५ । कृत्वा । कुरु । ११७। नियथणि हेलणु । नियथणिहेलणु। निजस्तने हेलनां । निजक-गृहे । १७४ । ण। णं। १७७ । उहु । [एहु] । पश्यत । एषः । १८४ । वइरिं । वइरि । १९० । निवासे । निवासात्। १९५ । निहेलना जायते । गृहं याहि । १९६ । जा जाहि । जाजाहि ।

## ॥ ४ ॥

३७ । णिमल्लि । णिम्मलि । ३८। वेणुदारि रिपु । वेणुदारि –रिपु । ४७ । मरंकि । म[य]रंकि । ४५–५६ । ये । 'यः' तथा च बहुवचनस्थाने एकवचनं वाच्यं; एवं च ५५–५६. । ५३ । श्रुततपः तपःसुत। ७९ । हरि-राम । हरि राम । हरिः राम । ११२ । विस्सभर । वि·स्संभर ।२०४। उहयहिं । [उहय]। उभयोः मालाकुरुपत्योः सुता । उदधिः मालकुरुपतेः सुता । २२६ । शाण । श्रवण ।३५०। सामित्ति । सोमित्ति । २६२ । विआण । विओण । गुरुणा भ्रातुः । गुरुभ्रातुः । ३११ । आसण्ण। ओसण्ण। ३१५ । पंचपयइं । पंच[व]यइं । पंचपदानि । पचव्रतानि ।

## ॥ ५ ॥

३। उइय उयय। १०। सचरंतु । संचरंतु । २४। मुअइ। मुअ । म्रियते । मृता । ४२ । झडुय । झेंडुय । ४१ । णिट्ठ । णिद्ध । निष्ठ । स्निग्ध । ५० । जीकिखउ । जोकिखउ । ६० । निष्कंकाल । नृकंकाल । ६३ । कौल । 'कुल' इति सर्वस्थानेष्वस्यां पंक्तौ । ७० । कनक । शर । ७२ । पट। पट्ट । ९२ । नमित्तिकैः । नैमित्तिकैः । ९३ । सुदरु। सुंदरु । ९७। रोमचिउ । रोमंचिउ । ९९ ।सछण्णउ । संछण्णउ । १००। सोहइ। निवडइ । १०३ । अचइ । अंचइ । ११३ । सतुट्ठउ । संतुट्ठउ । ११९ । संबरहि । सबरहि । १२० । गत्ता । घत्ता । १२१ । अर्घ्यः यथा दत्तम् । अर्घ्यः यथा दत्तः । १३१ । स्तीमित । स्तिमित । १३५ । कुंभकला । कुंभस्थल । १४० । ससि । ससि । १५२ । दीण्णी । दिण्णो । १५३ । सुहउ । सूहउ । १५४ । तावगारय । तावंगारय।

१६५ । भणंत "मुद्धत्त । भणंति "मुद्धत्तें । १६६ । चपाउरि । चंपाउरि । १७० । सपत्तउ । संपत्तउ । १८८ । बुद्धिउ । बुद्धिए । २२३ । पढतु । पढंतु । २३२ । मानसोत्तरे । मानुषोत्तरे । २४६ । वल्लकीं । वल्लकी । २५१ । रचिताश्रयः । रचिताश्रयाः । २५९ । रिष्टनगरं । अरिष्टनगरं । २७० । धणगुणिसरु । धणुगुणि सरु । धनगुणेश्वरं । धनुर्गुणे शरं । २७१ । ध्रव । ध्रुवं । २७८ । वृद्धत्वेन । विद्धत्वेन । २९९ । भरत क्षेत्रे । भरतक्षेत्रे ।

## ॥ ६ ॥

१५ । समाचरितं । समारचितं । २३ । चितंतु । चिंतंतु । ३२ । अवियल । [इश्व] अवियल । ५६ । छिवति । छिवंति । ७४ । पुर । पुरं । ८० । पसुण । पसूअ । ८२ । प्रनष्टे । प्रणष्टे । १०७ । (नि) न् । न् । ११८ । वीणालावणि वंस । वीणालावणिवंस । आलापने वंश । आलापनीवंश । १४७ । नरेन्द्रसुरेन्द्रैः । नरेन्द्रासुरेन्द्रैः ।

## ॥ ७ ॥

८ । विज्ञासः । विज्ञसः । कंचित् । कश्चित् ।

## ॥ ९ ॥

१० । अष्टानाम् । अष्टानामपि । १८ । साहसः । साहसं । २० । कल्लाणाइं । कल्लाणइं । ३९ । गुणवद्भ्यः । गुणवद्भिः ।

## ॥ १० ॥

६ । लाओ । लोओ । ८ । श्रणोतु । शुनकः । १५ । भेदसंपादनैः । वेधसंपादनै । ४६ । णइणाहं । णईणाहं । ६३ । बहु गुणसारः बहुगुणसारः ।

## ॥ ११ ॥

१४ । जाणिहिसि । जाणीहिसि । १७ । दिट्ठी । दिट्ठि । २३ । भणहि । भण्णइ । ४५ । सुदरि । सुंदरि । ४६ । सरीरि । सरीरी ।

## ॥ १२ ॥

६ । मअरन्द । मअरंदए । १८ । फरन्त फुरन्त ।

## ॥ १३ ॥

६ । बइसा घडा । बइसी घंडा । ८ । दक्षिणापदेशेन । दक्षिणो शेन । ४० । श्रतं । श्रुतं । ४६ । सहावत । सहावत्त ।

**टिप्पणीः—**

उद्धरण ५.२४७-२८९. आमां श्लिष्ट विशेषणो वापरी धनुष अने व्हाला न्हाना वाळकनुं साम्य ध्वनित छे. (१) **कोडिसरु**=१. कोटिशर २. कोटीश्वर; (२.) **सुवंशगुणेन**=१. सारा वांस अने पणछथी; २. सारावंश अने गुणथी. (३) **भज्जइ**-१. पराजीयते; २. पलायते।

उ. ५. पंक्ति ३००=**पुष्पदन्त**=(१) सूर्याचन्द्रमसौ (२) तन्नामा कविः।